निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में आधुनिकता के विविध आयाम

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

की

हिन्दी में पी० एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

शोध निर्देशक
डॉ० दिनेश चन्द्र द्विवेदी
रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग
गांधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय
उरई - (उ० प्र०)

अनुसंधित्सु
संयोगिता मिश्रा
पटेल नगर, उरई
(उ० प्र०)

वर दे वीणा वादिनी वर दे

शोध निर्देशक
डा० दिनेश चन्द्र द्विवेदी
रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग
गांधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अनुसंधित्सु
संयोगिता मिश्रा
पटेल नगर, उरई
उ०प्र०

-: प्रमाण - पत्र :-

मुझे प्रमाणित करते हुये हर्ष है कि संयोगिता मिश्रा ने निरन्तर मेरे सम्पर्क में रह कर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध-विषय "निर्मल वर्मा के कथा- साहित्य में आधुनिकता के विविध आयाम" पर मौलिक अनुसंधान कार्य सम्पन्न किया है । इस उपक्रम में इन्होंने विश्वविद्यालय शोध - परिनियमावली के समस्त उपबन्धों का पूर्ण पालन किया है । मैं इस शोध-प्रबन्ध को विशेषज्ञों के समक्ष प्रस्तुत करने की अनुशंसा करते हुए अनुसंधित्सु के ज्योतिर्मय भविष्य की कामना करता हूँ ।

डॉ. दिनेश चन्द्र द्विवेदी
रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग
गाँधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय
उरई (उ.प्र.)

"निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में आधुनिकता के विविध आयाम"

अनुक्रमणिका

निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में आधुनिकता के विविध आयाम

भूमिका

आधुनिक कथाकारो में निर्मल वर्मा का विशिष्ट स्थान है। उनकी रचना धर्मिता यथार्थ की अभिव्यक्ति का घोषणा पत्र हैं। आज प्रेम, सेक्स, घुटन, उदासी, पीढ़ा, भय आदि विभिन्न आयाम आधुनिक परिप्रेक्ष्य मे ही विवेचित हो रहे है। वर्मा जी ने मानवीय अर्थ संबन्धों की , विशेषतः आज के परिवेश में ही संश्लेषित किया है। विदेश ,प्रवास,शराब,लड़की आदि का संश्लेषण करते हुए कथा-साहित्य को नये रेशों में सुगुम्फित कर दिया है और प्रतिक्रियावादी तत्वो के आधुनिकतावादी अंशो को भी विवक्षित किया हैं। वैयक्तिक प्रेम तथा नर-नारी संबंधो की पारस्परिकता को आधुनिक परिप्रेक्ष्य मे ही आज अनुशास्य है, यह तथ्य वर्मा जी के कथ्यात्मक विश्लेषण से सहज अनुभवगम्य होता है। इस प्रकार कथाकार वर्मा जी मात्र व्यक्ति चेतना के ही नहीं, समदृष्टि चेतना के कथाकार है। संवेदना और शिल्प की दृष्टि से इनका कथा साहित्य विलक्षण है। उनके कथा साहित्य का मूल्यांकन पारम्परित प्रतिमानो के आधार पर नहीं किया जा सकता। वस्तुतः उनके कथा-साहित्य के पीछे परिवेशात्मक जीवन की गहरी समझ और सूझ का कठोर अनुशासन हैं।

प्रस्तावित शोध-प्रवंध मे निर्मल वर्मा के कथा साहित्य को आधुनिकता--बोध के विविध आयामो में अनुशीलित किया गया हैं। प्रवन्ध में कुल ६ अध्याय है । प्रथम अध्याय में आधुनिकता और परम्परा को विश्लेषित करते हुए कई दृष्टियो से आज की विचार धारा का अन्वेषण किया गया हैं। ये दृष्टियॉ है आधुनिक सम्वेदना साहित्य के सन्दर्भ मे आधुनिकता मानवमूल्य और वर्ग चेतना आदि ।

प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में निर्मल वर्मा के कथा-साहित्य का संक्षिप्त परिचय है। इनके पहले वे तीन उपन्यास --'वे दिन ' 'लाल टीन की छत '. 'एक चिथड़ा सुख' और वाद में छैः प्रकाशित संकलन इस प्रकार वर्णित है -- 'परिन्दे', जलती झाड़ी', 'पिछली गर्मियों में' 'मेरी प्रिय कहानियां', 'कौवे और काला पानी', 'वीच वहस में',।

कमानुसार प्रबन्ध का तृतीय अध्याय कथाकार के कथ्य में आधुनिकताबोधीय संकेतो आधुनिक परिवेश में मूल्यहीनता की स्थिति, पारिवारिक और सामाजिक मूल्यों में बदलाव, संबंधहीनता तथा संवंधो के नये आयाम सउदाहरण स्पष्ट किये गये हैं। इन्हीं विचार बोधो के साथ यथार्थ परिवेश में लेखकीय तटस्थतः का ध्यान राष्ट्रीय ,अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानो के वीच किया गया है। आज कथ्य विधान मे काल धर्मी संश्लेषणात्मकता नये मूल्यों को संतुलित करने में अग्रणी है इस दृष्टि से इसी अध्याय में काल का सातत्य निरूपण आधुनिकता वनाम समसामायिकता के संदर्भ में किया गया है निर्मल वर्मा का कथ्य आधुनिकता बोधीय चरणों में जितना अधिक सम्पन्न है उतना ही कथा विधान के साधन के रूप मे शैल्पिक संयोजना भी पुष्ट हैं ।

इस दृष्टि से प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में भाषिक संरचना संबंधी विविध आयामो पर प्रकाश डाला गया हैं। भाषा-शिल्प, बिम्ब विधान, प्रतीक योजना तथा अभिव्यंजना कौशल से इतना सुदृढ़ हो जाता है, कि परिवेशगत जीवंतता प्रभान्विति को लेकर ही अवतरित होती हैं। कथाकार वर्मा ने अभिनव शिल्पगत प्रयोग के द्वारा अमिट प्रभाव की सृष्टि करते हुए पात्रगत जटिल मनः स्थितियों को बारीकी से पकड़ने का भरपूर प्रयास किया है ।

प्रबंध के पंचम अध्याय में कथाकार के कथ्य और शिल्प को राजनैतिक स्तर पर, सामाजिक स्तर पर, साहित्यिक स्तर पर और युगधर्म स्तर पर वर्णित किया गया है। बल्कि यूं कहें कि समग्र प्रबंध का ''अनुसंधान बिन्दु'' (कथ्य और शिल्प संबंधी) ध्रुवान्त बनकर यहीं उद्भावित हुआ है उपयुक्त ही होगा।

प्रबंध का षष्ठ अध्याय इस तथ्य के निरूपण में सहायक है कि कथ्य एवं शिल्प परंपराओ में निर्मल वर्मा का एक विशिष्ट स्थान हैं उनके कथ्य शिल्प के प्रभाव सृष्टि एवं प्रभाव दृष्टि का इस अध्याय में भरपूर समाकलन किया गया हैं, और इसी के साथ आधुनिकता बोध के आयामों में उनके साहित्य की उपलब्धि एंव महत्व सन्निहित निष्कर्षो में यहाँ विचार किया गया हैं जिसकी स्वस्थ और प्रवल सम्भावनायें हैं। और अन्त में परिशिष्ट के अन्तर्गत उपजीव्य तथा उपस्कारक ग्रन्थों की सूची (पत्र-पत्रिकाओं सहित) अंकित है।

शोध प्रबन्ध की पूर्णता तक पहुंचाने का श्रेय मेरे ऋषिकल्प गुरूवर डॉ० दिनेश चन्द्र द्विवेदी को है। जिनकी असीम अनुकम्पा के कारण मै आधुनिकता जैसे तार्किक विषय को लिपिवद्ध कर सकी हूँ। यह डॉ० द्विवेदी के कुशल निर्देशन का ही प्रतिफल है। इस स्थल पर उनकी कृपादृष्टि स्मरणीय हैं और मैं उनके समक्ष श्रद्धावनत हूँ।

आदरणीय डॉ० एन०डी० समाधिया प्राचार्य डी० वी० कालेज उरई को सश्रद्ध याद न करना कृतघ्नता होगी। डा० समाधिया ने सदैव उत्साहवर्धन किया और शोध कार्य के दौरान उत्पन्न हताशा से मुझे उबारा ।

हर्ष के इन उत्फुल्ल क्षणों में दादा जी श्री बालकराम चतुर्वेदी जी का कृतज्ञतापूर्ण स्मरण स्वभाविक है । उनकी सदप्रेरणायें और मार्ग निर्देशन मेरे शोध कार्य का पथ प्रशस्त कर सका। मैं आदरणीय चाचा जी श्री राजेश चतुर्वेदी जी के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूं , जिनके असीम सहयोग से मैं कृतकार्य हो सकी ।

मैं अपने पिता श्री भोला नाथ मिश्रा के वात्सल्य को कैसे भूल सकती हूँ? सदा शान्त रहते हुए भी उन्होनें अपने सार्थक मौन के द्वारा मुझे इस मुकाम तक पहुंचाया। स्नेहमयी माँ अरूणा मिश्रा के सम्मान में कुछ भी कहना मातृत्व के गम्भीर अवदान की गरिमा के प्रति आगम्भीर चेष्टा होगी। अपनी अनुजा कु० नीतू मिश्रा तथा ज्येष्ठ भ्राता श्री अजय कुमार मिश्रा को इस अवसर पर याद करना अपना कर्तव्य

समझती हूँ प्रिय नीतू ने शोध कार्य के समय मेरे हिस्से के पारिवारिक दायित्वों का स्वयं वहन किया और भइया अजय ने विविध पुस्तकालयों में खोज बीन कर शोध सामग्री जुटाई ।

मैं शोध कार्य के अन्तिम उपक्रम के समय अपने पूज्य श्वसुर श्री नगेन्द्र भूषण तिवारी तथा शास माँ श्रीमती प्रभा देवी के प्रोत्साहन तथा आशीष के प्रति विनयावनत हूँ अन्त में अपने जीवन साथी श्री अनिल कुमार तिवारी को यह शोध प्रबन्ध श्रद्धातिरेक से परिप्लावित हृदय से समर्पित करती हूँ ।

संयोगिता मिश्रा
(संयोगिता मिश्रा)

प्रथम अध्याय

निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में आधुनिकता के विविध आयाम

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश :-

(क) आधुनिकता- आधुनिकता का स्वरुप निर्धारण कालगत सातत्य की सापेक्षता से सिद्व होता है । वस्तुतः क्रियाओं प्रतिक्रियाओं के जटिल जाल को बनाना और धुंधलाना मानव जीवन की एक जीवन्त और अनिवार्य शर्त है ।

मनुष्य काल की सतत प्रवाहमान धारा मे अवगाहन करता हुआ यधपि वर्तमान से प्रतिबद्व बना रहता, फिर भी भूत और भविष्य के खिचाव से जकड़ा हुआ महसूस करता है । भूत जहॅा अवचेतन से व्यक्ति की कार्य पद्वति की प्रेरणा का पुष्ट आधार बनता है वहॅा भविष्य आशावादी दृष्टि को लेकर सकारात्मक सिद्व होता चलता है।

इस प्रकार वर्तमान के आगे और पीछे के दोनो छोर मनुष्य के क्रमिक विकास में सफल सोपान है।

आज के परिवेश के दबाव में जूझता मनुष्य विगत जीवन के संदर्भो को वर्तमान की प्रसंगिकता से जोड़ लेना चाहता है।

मनुष्य की इस मानसिक यात्रा को हम आधुनिकता और परम्परा के बहुत निकट पातें हैं। परम्परा एक विकासशील प्रक्रिया है, जिसे मानव चेतना के विकास की मानसी सृष्टि कहा जा सकता है।

पाश्चात्य विचारक हारीशां के अनुसार परम्परा को नपेतुले शब्दों में पारमाणित किया गया है-

"A body of cumstoms, beliefs skills of saying handed down from generation to generation age to age."[1]

अर्थात रिवाजों, आस्थाओं, दक्षताओं या कहावतों का वह आकार जो पीढ़ी से पीढ़ी अथवा युग से युग को हस्तान्तरित किया गया हों।

परम्परा एक सहज विरासत नहीं है, उसमें संशोधन होकर ही आधुनिकता का अनिवार्य सन्दर्भ तब बन जाता हैं जब उसे मथकर समसामायिक जल से निर्मल बनाया जा सके।

डा0 नलिन विलोचन शर्मा परम्परा का व्यापक अर्थग्रहण करते हुए मानव की रचनाधर्मिता में उसका ऐतिहासिक महत्व प्रतिपादित करते है-

परम्परा का व्यापक्तम अर्थ है, वे सारी संस्कारगत रूढ़ियॅा, साहित्यक मान्यताएं और अभिव्यंजना की प्रणलियॅा-जो एक लेखक को अतीत से प्राप्त होती हैं।[2]

परम्परा का प्रमुख लक्षण और विचारधारा परक प्रतिमान डा0 शर्मा ने संस्कारगत रूढ़ियों साहित्यिक मान्यताओं और अभिव्यंजना की प्रणालियों में अनुशीलित किया है, होता यह है कि परम्परा के विकास की अनिवार्य रेखा अतीत से वर्तमान तक सतत, सहज गतिमान बनी रहती है जो सेफ टी0 सिप्ले ने यही कहा है-

"The essential line of development coming to usxtout of the past........in order way" [3]

1-Dictionary of literary terms, page no 381

2. साहित्य का इतिहास दर्शन, पृष्ठ २७६

3 D. of world P. 585

परम्परा से आशय ऐसे भाव–बोध से है जो अनुकरणशील हो, परिपक्व हो और जीवन दर्शन समंजित हो।

चूंकि मानव चिन्तनशील प्राणी है इसीलिए उसने आधुनिक काल से जीवन तथा जगत के विषय में चितंन कर उत्कृष्टम उपलब्धियाँ संजोते हुए जीवन्त इसी परम्परा, उनके रहस्यों का उद्‌धाटन किया है।

इसी चिंतन और उससे उत्पन्न विचारधाराओं के फलस्वरूप विश्व की विभिन्न संस्कृतियॉ और सभ्यताओं ने परम्परा से ही अभिनव रूप ग्रहण करते हुए मानव जीवन के सुसंचालन का मार्ग प्रशास्त किया है। डा0 विद्यानिवास मिश्र की परम्परा विषयक दृष्टिकोण इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। उनका मत है –''परम्परा का अर्थ है............... जो श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठतर हो, जो कभी भूत और न भविष्य जो सतत वर्तमान हो, जो कभी सिद्ध न हो–निरन्तर साध्य[1] हो। परम्परा का भारतीय संस्कृति के मूल मे मुख्य उपादान आस्थात्मक भावना, नैतिकता, धर्म परायणता, त्याग आदि से प्रतिबद्ध है। सामान्य रूप से सामाजिक परम्परायें, संस्कृति, और सभ्यता पर टिकी हुई है। इनमे जलवायु और देश विदेश के निवासियों के द्वारा परिर्वतन होते रहते है। दीर्धकाल से ही चिन्तकों के चिन्तन का आधार आध्यात्मिक ही रहा है। लेकिन आज के आधुनिक काल मे युद्धों की विभीषिका, जन आन्दोलनों के बाहुल्य, आर्थिक विषमता निर्धनता, मध्यवर्ग की संकटकालीन स्थिति और धार्मिक सामाजिक रूढ़िवादी की बेड़ियों में ग्रस्त मानव जीवन में विभिन्न भारतीय और पाश्चात्य विचारको को जीवन दर्शन परक चिन्तन के लिये विवश किया है। आधुनिकता बहुआयामी अभिवयंजना हैं ।

वह आज के बीच के साथ एक मिली जुली ऐसी प्रतिकिया है, जो समाज, इतिहास दर्शन आदि का विश्लेषण कर मानव जीवन को एक वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान कर रही है। वस्तुतः आधुनिकता के ग्रहण के लिये कालगत सातत्व के समानान्तर उसे ग्रहण करना न केवल आवश्यक है वरन अनिवार्य बन गया है।

पाश्चात्य विचारधाराओं के सम्पर्क में आने से आधुनिकता बोधीय चरणो का विकास भारत में बहुत अधिक हुआ।

अपनी पुरानी विरासत को नये अर्थ सन्दर्भ देने के लिये वैज्ञानिक चेतना का प्रश्रय ग्रहण करा पडा। विपिनकुमार अग्रवाल ने आधुकिता के पहलुओं पर विचार करते हुए सटीक विवचेन किया है।

आधुनिकता की प्रकृति सूक्ष्म हैं। इसकी कोई स्थूल पूर्व निश्चित और अपरिवर्तनीय दिशा नही है जिसे व्यापक ऐतिहासिक दृष्टि से खोजा जा सके।

परमाणु की तरह इसके पास कोई यादगार नही है, बल्कि हम कह सकते है कि आधुनिकता मूलतः एक खण्डित घटना है।

इसका बीती हुई धटनाओ से दूर का सम्बन्ध है। यथार्थता आधुनिकता में परिवेश का बहुत बडा योग है और परिवेश काल के समान्तर गतिशील मानवीय विकास की सांस्कृतिक प्रक्रिया से संघटित है। आधनुकिता एक संवेदना जो समसामयिक आदमी के दुखः दर्द से जुड़ने मे उपजती है और अभिनव मार्ग का द्वार खोलती हैं ।

1. आधुनिकता के पहलू, पृष्ठ 19

डा0 इन्द्रनाथ मदान ने आधुनिकता की प्रकृति पर टिप्पणी करते हुए लिखा है – आधुनिकता को अपरम्परागत परम्परा भी कहा जाता है।

ऐतिहासिक अनिरन्तरता का भी नाम दिया जाता है तथा कभी इसे अन्त के बीच की दृष्टि से पहचानने की कोशिश भी की जाती हैं ।

सच तो यह है कि आधुनिकता अपनी सरंचना में अनेक विकल्पो को संजोये रखती हैं इस प्रकार व एक प्रक्रिया होने के कारण एक से अधिक दौरों से होकर गुजरी है। जब विचारक आधुनिकता को समझने के लिए इन अन्तर्विरोधों से जूझता है तब आधुनिक प्रकृति के अन्तर्द्वन्द्वों को वह आत्मसात करता चलता है और वह अनुभव करता है कि इसमे एक और वैयक्तिता है तो दूसरी ओर सामाजिकता एक ओर मानव नियति का एहसास है। तो दूसरी ओर आत्म संघर्ष की निकट स्थिति है। इसे कहीं समसामयिक माना गया है तो कहीं समसामयिकता का अतिक्रमण करने वाली मूल्य दृष्टि।

कहीं इसे एक कालखण्ड में व्याप्तबोध की स्वीकृत माना गया है तो कहीं आधुनिकता और समसामियकता का अन्तर ही गड़वड़ा गया हैं।

तत्वतः आधुनिकता जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में पृथक–पृथक अर्थ संदर्भ रखती है और वह संस्कृति तथा सभ्यता के पारस्परिक अतिक्रमण का एक सहयोग बिन्दु है आधुनिकता किसी सरल विचारधारा या दृष्टिकोण के विकास का रूपान्तरण मात्र नहीं हैं। वरन जटिल एंव संग्रथित मानसिकता और जीवन मूल्यों से उद्‌धाटित होने वाली प्रश्नानुकूल वैज्ञानिक चेतना हैं।

आधुनिकता का ऐतिहासिक परिपेक्ष्य 18 वी शताब्दी की दो महत्वपूर्ण धटनाओं से समझा जा सकता है वे घटनाएं हैं –इग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति और फ्रॅास की प्रजातान्त्रिक क्रान्ति भारत में आधुनिकता का प्रारम्भ सन 1857 की धार्मिक सामाजिक जाग्रति से माना जाता हैं। वैज्ञानिक और तकनीकी विकास ने उत्तरोत्तर आधुनिक उपलब्धियों की गिरफ्त में जकड़ लिया हैं फिर भी वह अपनी चेतनाओं में आधुनिक नहीं हों सका है । उपयुक्त ही कहा गया है–भारत अभी पश्चिम सभ्यता से पूर्णतया ग्रस्त नही हो पाया है जिस तरह पश्चिमी देश हो रहे हैं। अतः यहाँ वे स्थितियां उत्पन्न नहीं हो पायी हैं जो पश्चिम में हैं?

वस्तुतः आधुनिकता की कोई सार्थकता हैं तो वह मानवीय सवेंदनशीलता से हैं। स्वतन्त्रोंत्तर भारत का नवलेखन आधुनिकता को एक दृष्टि के रूप में गहराई प्रदान करता है तो दूसरी ओर उस दृष्टि को सृजनात्मक साहित्य में एक क्रन्तिकारी अर्थवता को प्रदान करता है। इस प्रकार सन 50 के बाद का साहित्य एक प्रकार से आधुनिकता–बोध और उसकी सृजनात्मक समानान्तरता का है। आधुनिकता परम्परा के प्रति एक यथार्थवाद दृष्टि का नाम है। वास्तविकता यही है कि परम्परा और आधुनिकता एक दूसरे के सहयोगी ही नही वरन एक दूसरे के विवेचन करने वाले तत्व भी है। जिस प्रकार वर्तमान परम्परा पर छायें अवधि के कुहासे को हटाकर अपनी स्वचेतना से प्राण प्रतिष्ठा करता है उसी प्रकार अतीत वर्तमान की सवेंदात्मक दृष्टि को वह विन्दु देता है जहां से उसे अपनी आधुनिकता की यात्रा प्रारम्भ करनी है और वह बिन्दु अपनी सम्पूर्ण प्रासंगिक उपलब्धियों के साथ वर्तमान में संक्रमिक हो जाता है।- डॅा० धनंजय वर्मा ने आधुनिकता और परम्परा को जोड़ते हुए लिखा

1.आधुनिकता बोध और स्वतंत्रयोत्तर कहानी सुरेश चन्द्र शर्मा मेरठ विश्वविद्यालय का प्रकाशित शोध प्रबन्ध

है- आधुनिकता क्लासीकल परम्परा के प्रति जागरूकता अपनाती है-अपनी परम्परा से एक नया सम्बन्ध ज्ञान और उस सन्दर्भ में अपनी प्रतीति ही आधुनिकता की सार्थकता है आधुनिकता और परम्परा का सापेक्ष दृष्टि से बहुत महत्व हैं। समग्रतः कहा जा सकता है, कि परम्परा के प्रति निर्मम और यथार्थवादी दृष्टिकोण ही परम्परा के प्रति आधुनिकता का मूलभूत विरोध सूत्र है। यही कारण है कि परम्परा और आधुनिकता में एक जीवंत सवांद स्थिति को स्वीकार करना आवश्यक हो गया हैं।

आधुनिकता हमें एक सीमित अर्थ में मौलिक बनाती है तो परम्परा इस मौलिकता को कालगत सातत्व की विश्वसनीयता का समर्थन देती है।[1]

आधुनिकता की अपने बृहतर और रचनात्मक प्रायोजन सिद्धि के लिए परम्परा का मंथन और उसके उपयोगी अंशो का ग्रहण अत्यावश्यक हैं ।

१-आधुनिकता का समय सापेक्ष आधारः-आधुनिकता सम्बन्धी विचारधारणाओं को काल सापेक्ष चिन्तन सूत्रों में बांधना अनिवार्य है। आधुनिकता का सम्बन्ध अपने युग के समसामयिक संदर्भो से भली भांति जुडा हुआ है। इसीलिए काल सापेक्ष परिपुष्ट विचारधारा आधुनिकता में भी चिनत्य बनी हुई है आधुनिकता अपना प्राणरस अपने समसामयिक वर्तमान से करती रहती है। डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी ने बहुत ही स्पष्ट कर दिया है -आधुनिकता देशकालातीत धारणा हो ही नहीं सकती। परम्परा को ही आ ध ार मानते हुए वह अपने परिवेश के प्रति आत्यांकित रूप से प्रतिवद्ध हैं । वह अपने आयाम को कितना ही विस्तृत करले उसकी अर्थवत्ता अपने परिवेश से जुड़ने में हैं।[2] कालातीत होने का अर्थ यही हो सकता है कि हम किसी काल में अस्तित्व प्राप्त तथ्य या विचार की सीमाओं के प्रति सावधान रहें। वस्तुत अपने देश काल के प्रति तटस्थ होना आज के व्यक्ति के लिए सम्भव नही रहा वह नित्य ही परिवेश के दबावों को झेलता हुआ संघर्षरत है। यही कारण है कि किसी भी आधुनिक व्यक्ति को अपने युग के प्रति संवेदनात्मक प्रतिकिया ही व्यक्त होती है। आधुनिकता समय सापेक्षता की दृष्टि से समकालीनता की पर्याय है। डॉ० नगेन्द्र ने युग सापेक्ष आधुनिकता को सोदाहरण व्याख्यायित करते हुए लिखा है कि भारत में आधुनिकता का सूत्रपात १८ वी शताब्दी के उत्तरार्ध से माना जाता है क्योंकि देश के विभिन्न भागों में ब्रिटिश शासन की नींव पड़ चुकी थी। आधुनिक भारत की रूपरेखा १८५७ की वैज्ञानिक क्रान्ति के बाद स्पष्ट हुई। यद्यपि यह क्रान्ति सफल न हो सकी फिर भी इसने भारतीय जनता को अपने अधिकारों के प्रति सजगता प्रदान की है और वे विटिश शासन के प्रति विद्रोह करने को तैयार हो गये। इसी प्रकार यूरोप के इतिहास में आधुनिक युग का सूत्रपात १५ वीं शताब्दी में हुआ किन्तु उसका वास्तविक स्वरूप १७ वीं शताब्दी के विज्ञान के विकास के साथ ही सामने आया। समय सापेक्ष दृष्टि से आधुनिकता परिर्वतनशील है। अतः उसे बर्तमान समय तक सीमित रख पाना असम्भव हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार आधुनिकता का अर्थ है पुराने की तुलना में आपेक्षाकृत नया। -इस विचार के अनुसार बीसवी शताब्दी १९ शताब्दी की तुलना में आधुनिक है।[1]

1. हस्तक्षेप, पृष्ठ 215   2. क ख ग जनवरी 1964

:-The twentieth centuary more modern the ninthcentuay and today is more modern then yesterday"[1]

:-डॉ० विशम्भर नाथ उपाध्याय ने सापेक्षता का सम्बन्ध देश काल व्यापी अस्तित्वादी रेखा पर निर्दिष्ट करते हुए लिखा है- अस्तित्व का अर्थ ही है कि हम किसी काल में स्थित और किसी देश में स्थित तथ्य पर विचार कर रहे हैं।[2]

यह विचार दो रूपो में व्यक्त हुआ हैः-

पहले रूप में वह तटस्थ है और दूसरे रूप मे संयुक्त। दोनो ही रूपो में आज का व्यक्ति अधिक संवेदनात्मक बन गया है यद्यपि परिवेश के दबाव मे टूटना आधुनिकता का लक्षण नही है बल्कि परिवेश से जूझने की आन्तरिक व्यथा के चिन्ह उकेरने में ही आधुनिकता अपने सही अर्थ को स्पष्ट करती है। उदाहरण के लिए मध्यकालीन सामन्ती व्यवस्था में सामान्य जनता का शोषण होता था। वह अपना स्वतन्त्र आर्थिक एवं सामाजिक विकास न कर पाने के अर्थ मे परतन्त्र भी थी किन्तु उसकी जीवन व्यवस्था इतनी छितरायी हुई नहीं थी जितनी हमारी आज की जीवन व्यवस्था हैं। आज हम अपने संविधान के अनुरूप स्वतंन्त्र है किन्तु परिवेश के दबाव में स्वयं को बाह्य खण्डित और किसी अर्थवेता की तलाश में जूझता पाते हैं। हमारे आज के संघर्ष की प्रवृति नितान्त आधुनिक हैं। आधुनिकता केवल नयापन है तो अब प्रश्न यह उठता हैं कि नये और पुराने का भेद किस प्रकार किया जाये । तव स्पष्ट रूप से एक ही उत्तर सामने उछलता है कि समय सापेक्षता के आधार पर भूत और वर्तमान का आकलन किया जाये। आधुनिकता युग की मॉग को ध्यान में रखते हुए एवं भ्रष्ट परम्पराओं का परित्याग करती है और मूल्यों को अवधारित करती हैं जो वर्तमान सन्दर्भो में समाज के लिए लाभप्रद एवं स्वास्थ परक हो सकते है ।

आधुनिकता इन मूल्यों का पुनःसंस्कार करने के पश्चात इसको एक नये रूप में प्रतिष्ठित करती है। इस प्रकार जिस युग में इन विचारों की प्रमुखता हो जाती है वह युग अपने पूर्ववर्ती युग की तुलना में अधिक आधुनिक हो जाता है। कहने का यह आशय बिल्कुल नहीं है कि नये युग में पुरानी और विरोधी मान्यताएं सर्वथा लुप्त हो जाती हैं। वे भी जीवित रहती है; परन्तु उनका स्थान नयी विचारधारा की अपेक्षा गौण हो जाता है।[3]आधुनिकता की इसी काल सापेक्ष विरोध-मूलक विचारधारणाओं पर ध्यान करते हुए विपिन कुमार अग्रवाल लिखते है कि - जहॉ विरोध दीखे वहीं आसपास आधुनिकता के मिलने की सम्भावना अधिक होगी।[4]विरोध का न होना आधुनिक परम्परागत न होना, एक खण्डित क्रिया होना। आधुनिकता का स्वरूप जो कल था वह आज हो, जो आज है वह कल भी हो, यह दावा नही किया जा सकता है।

आधुनिकता का स्वरूप शाश्वतरूप से काल सापेक्ष है। आधुनिकता एक तरह की संश्लिष्ट विचार पद्धति है, उसे समय सापेक्ष समकालीन विचार पद्धति के रूप में ही ग्रहण किया जा सकता है। किसी समाजिक या व्यक्तिगत दर्शन से जोडकर विश्लेषित नही किया जा सकता ।

3-नई समीक्षा –नये सन्दर्भ, पृष्ठ 61

1.Modernity and contenporary 70

2. आधुनिकता के पहलू पृष्ठ 23

4–जलते और उगलते प्रश्न पृष्ठ 69

समकालीन चेतना और जाग्रति को ध्यान मे रखकर स्वतन्त्र रूप से आधुनिकता के सम्बन्ध मे सर्वव्यापक दृष्टि से विचार करना ही उसकी समय सापेक्षिकता है। आधुनिक एतिहासिक काल से विकसित होकर आज बीच से सम्पृक्त हो गयी है। मनुष्य अतीत की अपेक्षा वर्तमान मे अधिक जीना चाहता है। आधुनिक मनुष्य के बढते हुए ज्ञान और चिन्तन से नित्य नवीन से नवीन खोजनेकी है फलतःप्राचीन मूल्यो, सामाजिक और पारिवारिक सम्बन्धो, रूढिगत विचारों आदि का रूप बदलाव और नये मूल्यों नये सम्बन्धो तथा नये विचारो की स्थापना हुई है। बदलाव के कम में काल सापेक्ष यथार्थ धरातल उजागर होता गया है। इसी बात को डा० लक्ष्मी कांत वर्मा इस प्रकार कहा है -पूर्व निर्धारित उद्देश्य की उपेक्षा क्षण के यर्थाथ के प्रति सापेक्ष दायित्व बोध ही आधुनिकता का प्रमुख लक्षण है।

आधुनिकता के द्वारा परिवर्वन रेखांकित होता है और यह रेखाकंन समय की हम आज को कल की तुलना में आधुनिक मानने लगे। अतः आधुनिक युग विशेष का ही हो सकता है। इसमे पुरानी तथा विरोधी अवधारणओ और मान्यताओं के बीच नयी अवधारणाऐं और मान्यताए अपनी प्रमुखता प्राप्त कर लेती है आधुनिकता को हम समय सापेक्ष मानते हुए यह निर्विवाद रूप से कह सकते है कि आधुनिक युग का प्रारम्भ १५ वीं शताब्दी मे धार्मिक पुनर्जागरण के रूप मे हुआ और भारत में सन् १८५७ की सैनिक कान्ति के रूप में हुआ। दृष्टव्य यह है कि पश्चिम की १५ वीं शताब्दी की चेतना धार्मिक है और भारत की सन १८५७ की चेतना राष्ट्रीय है।ये दोनो अभिचेतन स्वरूप वैज्ञानिक चेतना से भिन्न है । अतः आधुनिकता काल सापेक्ष एक जागरूक एक परिवर्तनशील तत्व है

२-आधुनिक संवेदना और समकालीन संवेदनाः- आधुनिकता के साथ समकालीनता का प्रश्न उठाना स्वभाविक ही है आधुनिकता को समकालीनता का पर्याय मानना सर्वथा भ्रामक है । आधुनिकता समकालीनता से नितान्त अलग अर्थ रखती हैं ''समकालीनता'' अंग्रेजी शब्द''contemporary'' को कहते है जिसका सम्बन्ध समय सामयिकता से है और''आधुनिकता''को अंग्रेजी में "Modernity" कहते है जिसका सम्बन्ध प्रवृति या शैली से हैं।आधुनिक एक ऐसा शब्द है जो आधुनिक जीवन दृष्टि के निर्वाह में आधुनिक अस्तित्ववाद का निर्वाह करता है।

समसामयिकता या समकालीन से हमारा आशय देशकाल के साथ साथ उस क्षण गहरी तीव्रानुभूति की ग्राह्यता से है, जो परिस्थिति से उपजती है और बिना किसी पूर्वाग्रह के सावेग औचित्य के साथ व्यक्त होती है समकालीनता आधुनिक होने का मानदण्ड नहीं है वल्कि यह अधिक कहना उचित होगा कि आधुनिकता की सर्जनात्मक अर्थवत्ता समसामयिकता के अतिकमण करने में है। रचनाकार को देशकाल की समीपता में कालजीवी बनना पडता है। यह अर्थ उसकी अपनी घटनाओं और तथ्यों में समकालीन नहीं होता बल्कि उसकी समकालीनता वर्तमान से उस संवेदनात्मक सम्प्रक्त में होती है ।

१.नये प्रतिमान पुराने निष्कर्ष, पृष्ठ ४२

जो देश काल और प्रकृति के दिबाकाल से आबद्ध बनी रहती है ।

यही कारण है कि समकालीनता और आधुनिकता में भाव बोधीय अन्तर आ जाता है।

महादेवी वर्मा ने समसामयिकता का जूझता हुआ प्रश्न स्पष्ट किया गया है - समसामयिक और शाश्वत परस्पर विरोधी परिस्थितियाँ नहीं है, उनमें 'है' और होना चाहिये का अन्तर भाव हैं। अनेक समसामयिक अतीत बनकर ही शाश्वत का सृजन करते हैं । यह एक इतिवृत है और दूसरा अनेक इतिवृतो के संघात से निर्मित भावनात्मक लक्ष्य हैं। कोई भी व्यापक लक्ष्य स्वयं तक पहुचानें वाले साधनों का विरोध नहीं करता और साधनों का अस्तित्व परिस्थितियों में रहता है ।
आधुनिकतावादी संवेदनशील लेखक अतीत से जुडकर वर्तमान में रहकर भविष्य से जुडा रहता है।
समसामयिक लेखक केवल वर्तमान में जीता हैं। आधुनिकता के लिए संवेदनात्मक दृष्टि में बौधिक पकड़ का समावेश अपरिहार्य है आत्मबोध का कवि परम्परा को स्वीकार करते हुए भी उसे अस्वीकार करता है यह भौतिक जगत की सीमाओं से अपने को असहनीय मानता है।
डॉ० बच्चन सिंह संवेदना के धरातल पर आज के लेखकीय दृष्टि को स्वीकारते हुए लिखा है - आधुनिक बोध का कबि बन्धनो के प्रति तीखी आलोचनात्मक नजर रखता है। उनकी कड़वी तीखी अनुभूतियों से गुजरता है, उन्हें भोगता है, झेलता है, और टकराहटों से उसे काव्य में विशिष्ट ऊर्जा दिखाई देती है जो बराबर मूल्यगत होती है। आधुनिकता समकालीनता को अपने रूप में ग्रहण करती है किन्तु अपनी रचनात्मकता में वह समसामयिकता के उन संदर्भो को नकार देती जो मानव के सांस्कृतिकता के विकास को अवरूद्ध करते है । समसामायिक होना व्यक्ति में जागरूक होने का भ्रम भले ही उत्पन्न कर दे किन्तु अपने चिन्तन और सृजन को अर्थ देने के लिये उसे समसामायिक तथ्यों और घटनाओं को अपनी संवेदना की आँच में पिघलना ही होगा।

1—नई कविता के प्रतिमान पृष्ठ 263(लक्ष्मी कान्त वर्मा)
2—साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध पृष्ठ 28

नेमिचन्द्र जैन ने ठीक ही तो लिखा है- वास्तव में युगीन भाव चेतना को पहचानने का प्रयत्न प्रत्येक जागरूक व्यक्ति का धर्म है, किसी के ऊपर ऐहसान नहीं। इतिहास का महत्वपूर्ण क्षण किसी के पहचानने के लिये रूकता नही व्यक्ति की अपनी ही नियत उसकी पहचान से जुडी होती है समकालीन लेखक जीवनगत, संवेदना को बटोरते हुए अपने समय के पैगम्बर हो जाते है और उनका संवेदनशील बोध निर्लिप्ता के साथ एक का दूसरे को, दूसरे का तीसरे को दिये जाने वाला क्रम बन जाता है तत्वतः समसामयिक साहित्य के अन्दर विषय और वस्तु की व्यापकता होती है। वर्तमान स्थितियों के चित्रण और आसत विचारों को शब्दाडम्बर दे देने मात्र से आधुनिकता की रचना नही हो सकती। ऐसा प्रायः देखा गया है कि समसामयिक लिखा गया साहित्य आधुनिकता बोध से सदैव निर्लिप्ति रहता है ।

बात स्पष्ट है कि समकालीनता में ठहराव है और आधुनिकता की गतिशीलता में ठहराव का अभाव है । बल्कि यूं कहे कि परम्परा के विकास के लिए और आधाुनिकता के महत्व के प्रतिपादन के लिये समकालीनता अपरिहार्य और विशिष्ट है तो उपयुक्त होगा आधुनिकता समकालीन संवेदना से दूर एक अभिनव जीवन दृष्टि है। जो पग-पग पर सनातन संवेदनशील मूल्यो का हास करती चलती हैं। उदाहरण और समकालीन चेतना को इस प्रकार कहा जा सकता है-अंग्रेजी साहित्य के रस्किन,टेनीसन और कालीइव विक्टोरियन काल में थें। इनके काव्य में अपने समय के वैज्ञानिक और औद्योगिक चेतना का इतिहास मिलता है लेकिन वे आधाुनिक नही समसामयिक लेखक है ।

१-हिन्दी साहित्य में मैथलीशरण गुप्त रचित ''भारत भारती'' तथा माखन लाल चतुर्वेदी की अधिकांश कविताए समसामयिक ही कहलायेगी। आधुनिकता सामायिक परिवेशों,सामाजिक जीवन की बदली हुई रेखाओ, समस्याओ, मान्यताओं, विश्वासों से उत्पन्न चेतना होती है।

आधुनिकता का अभिप्राय नग्नवाद या अति यर्थाथवाद से नही है और न ही आधुनिकता कोई बाहरी साज-सज्जा बनाबट और उपकरण हैं। आधुनिकता भीतर की चीज या कहें कि ऐसी जीवन दृष्टि है जिसे हम जीवन साधन के रूप में प्रयोग करते हैं लक्ष्मी कान्त वर्मा का यह कथन विचारणीय है- आधुनिकता वर्तमान को सजग रूप से मांगने और उस भोग से नये संदर्भ में देखने और जीने की क्षमता है। समकालीन संवेदना और आधुनिकता बोध में मनुष्य के लिए कई तरह के वैचारिक संकट होते हैं। वह प्राचीनता परम्परा या स्वीकृत सामाजिकता को छोडकर जिन विकल्पो को चुनता है वे किसी चीज के बदले मे होते है। इसीलिए किसी प्रतिवाद से जुडे होते है। विज्ञान के इस युग मे यदि कोई युगसत्यों से विमुख होकर प्राचीन मूल्यों

१-समकालीन साहित्य और आलोचना की चुनौती, पृष्ठ ७७
२.आधुनिकता और मोहन राकेश पृष्ठ ६ २-बदलते परिपेक्ष्य, पृष्ठ ४६

और आस्थाओं से सम्प्रक्त है तो उसे आधुनिक नही कहा जा सकता, भले ही वह समकालीन होने का दावा करे। इसके अतिरिक्त प्रयोगधर्मी मुहावरों, प्रतीको अथवा बिम्बो के माध्यम से समकालीन सन्दर्भो को यथार्थवादी ढंग प्रस्तुत कर देने से ही कोई लेखक आधुनिक नही हो जाता।
आधुनिक को किसी संकीण और कटटर अर्थ में यर्थाथवादी कहना भी उतना ही असंगत है जितना कि प्रतीकवादी या बिम्बवादी कहना। जहा तक मुहावरों का सवाल है,वह २आकामक भी हो सकता है और उद्वेग हीन भी देखना यह है कि रचनागत सवेदना के उल्टा न पडता हो या उसे झूठ सिद्ध न करता हो । उपर से समसामयिक दीखने पर भी हो सकता है कि कोई लेखक आधुनिक न हो रचना का उपरी परख पर खरा न दीखता हुआ भी कोई लेखक आधुनिक हो आधुनिकता समकालीन मूल्यो के प्रति जागरूक भी है परन्तु उन्हे स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है इसका अर्थ यह है कि आधुनिकता का समकालीन से कोई सम्बन्ध नही आधुनिक बोध से समपन्न प्रत्येक रचना आधुनिक नहीं मानी जा सकती । समकालीन लेखक के अपने आग्रहहो सकते हैं जिनके परिणामस्वरूप उसके द्वारा किया गया युग यर्थाथ का निरूपण पक्षपात पूर्णहो सकता है- ऐसी अवस्था में समकालीनता पर आधारित लेखकीय दृष्टि से एकागी बने रहने की आशंका बनी रहती है जिससे जीवन को उसके समग्ररूप में देखना सम्भव नहीं रहता । आधुनिक लेखक सामयिक आग्रहो से युक्त होकर जीवन को उसकी समग्रता मे देखने का प्रयास करता है वह समकालीन स्थितियों के प्रति जागरूक होता हुआ भी उसकी परिधि तक सीमित नहीं रहता स्टीफन स्पैन्डर का मन्तव्य है-"the modern is actually conscieas of the contempdrary values but do not except its value"

३- <u>साहित्य के सन्दर्भ में आधुनिकता''</u>- आधुनिकता सम्बन्धी साहित्य चिन्तनीय बिडम्बना आधुनिक युग से ही शुरू होती है। भारतेन्दु युग से ही साहित्यकार ने स्वचेतना, जागृति और आधुनिकवोध के विविध रूप अंकुरित हो उठे थे । प्रत्येक कवि या साहित्यकार में इस प्रकार के बीज न्यूनाधिक रूप में पाये जाने लगे थे जब हम साहित्य में आधुनिकता के घटक तत्व के बारे में बात करते हैं तो साहित्य का उभयनिष्ठ रूप-आत्मनिष्ठ और समाजवादीय रूप मुखरित होने लगते हैं। कहा भी गया है- आधुनिकता का एक रूप अगर आत्मनिष्ठ और आत्मकेन्द्रित है तो दूसरा समानधर्मी और प्रगतिशील ।

इन दोनो के तनाव का चित्रण समकालीन भी और दोनो के संतुलन की खोज भी भारतेन्दु युग का रचनाकार अपने सांस्कृतिक परिवेश के प्रति सजग होता हुआ भी उस परिवेश का अभ्यान्तीकरण नही कर पाया है जबकि आज का रचनाकार यह स्वीकार करता है कि भले ही कोई लेखक वैचारिक दृष्टि से कोई वाह्य आकार स्वीकार कर ले तब तक

१.नये प्रतिमान और पुरानें निष्कर्ष, पृष्ठ ८७

२- आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ, पृष्ठ १२ 3- The struggle of the

उस आग्रह के तत्वों का अभ्यान्तीकरण नहीं होता, तब तक अर्न्तजगत के तत्वों में उसका रंग नही चढ जाता तब तक वह हृदय में तड़पते हुए जीवनानुभव का एक भाग नहीं बन जाता तब तक उस आग्रह के अनुरूप साहित्य निष्प्राण और कृत्रिम ही रहेगा। आधुनिकता अपनी नवीनता और विविधता के कारण प्रत्येक साहित्य में अपने संदर्भ से जुड़ी होती है। आधुनिकतावादी साहित्य के लिये वैयक्तिकता एक शर्त होती है। इसलिए आधुनिकतावादी साहित्यकार ने अनुभूति और स्वदृष्टि को अपने ढ़ग से साहित्य में प्रस्तुत करता है। आज के आधुनिकतावादी साहित्य में आत्मकेन्द्रित विचारणा की बहुत अधिक पहल है। जर्मन कवि डांट फायड ने कहा है -"there is no outer relity. There is only human conciousnesss constently viewing modiflying rebuilding new words out of it's own creativity." आधुनिकता साहित्य में तटस्थ दृष्टिकोण लेकर निन्दा नहीं है, वह अपने यथार्थ परिवेश के साथ अनवरत ढ़ग से परिवर्तित होती रही है इसीलिये आधुनिकतावादी काव्य के कुछ उपादान बन गये है जिनमें प्रमुख -है। वुद्धिवाद, वैचारिक संश्लिष्टता, सांकेतिकता, दुर्बोधता, रूखापन, अनास्था, अनुभूति अजनवीपन आदि। हिन्दी साहित्य में, विशेषकर काव्य के क्षेत्र में आधुनिकता का जन्म निराला के काव्य कुकुरमुत्ता से ही हो गया था। यद्यपि इस काव्यकृति में आधुनिकता की अपेक्षा समसमायिकता के लक्षण अधिक दिखाई देते हैं। उत्तरोतर हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों में अज्ञेय, मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, केदारनाथ सिह, कुंवर नरायण आदि का नाम वहुत उठा। आधुनिक भाववोध वाले कवि के काव्य में तत्कालीन परिस्थितियों के प्रति लगाव, देश-प्रेम और प्रकृति प्रेम जैसे स्वछन्द-वादी तत्व का प्रायः आभाव होता है।
आधुनिक कवि अभिव्यक्ति के लिये अभिनव प्रयोग करता है। वास्तव में यह तारसप्तक से मिलने लगता है। उसमे अन्वेषण की प्रवृति है और काव्य के नये धरातल का निर्माण यही से छायावाद का अन्त और छायावादी विरोधी भंगिमाओं का प्रारम्भ हुआ है आधुनिकतावादी कविता कल्पनाशील ना होकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित मन के अन्तरतमन का उद्‌गार है।

नेमिचन्द्र जैन की प्रस्तुत कविता का चरण व्यर्थता के सन्दर्भ मे आधुनिकता बोध का अनूंठा उदाहरण है----------

मैं हार जाता हूँ भयंकर मौन से
वे अपने प्राणों मे छाये हुए एकान्त से।
सतत् निर्वासित हृदय से तिरस्कृत व्यक्तित्व के
थोथे असंगत दर्द ने मन की सहज अन्जाम स्वाभाविक अनावृत धार को।
कर दिया है कुंठित ।

आज का कवि अन्तर्मन की यातना से पीडित है। वह मुक्ति का क्षण अन्तर्मन में ढूढना चाहता है।

१. आधुनिकता और समकालीन रचना सन्दर्भ, पृष्ठ १२ 2- The struggle of modern p.78
३- नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृष्ठ८८(मुक्तिबोध) ४- literary modernism p.15

आज का कवि अपने ढ़ग से जिन्दगी जीता है।
अकेलेपन के संघर्ष में टूटता है एक ऐसे कवि की रचना को मूलतः कथाकार को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है -

पी लिया
अपने आत्मदाह में
फिर एक बार
जी लिया

मोहन राकेश जिन्दगी जीते थे व्यतीत नहीं करते थे वे दर्द को पीकर जीते थे इसलिये उन्होने जो जिया वही............................लिखा है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में सभ्यता सामाजिक सम्बन्धों और मूल्यों में तीव्र गति से परिवर्तन हुआ है साथ ही शासन व्यवस्था का तानाशाही साम्राज्य चारों तरफ व्याप्त है प्रजातन्त्र लोगो के लिये मात्र झूठे वादों का साम्राज्य रह गया है व्यक्ति आजाद है यह प्रश्न हर एक के सामने लड़खड़ा रहा है आज का कवि इन विघटित स्थितियों में अजनवी व्यर्थता फूहड़ता तटस्थता और अकेलेपन का बोध करने लगा है। धर्मवीर भारती ने अपने काव्य में प्रतीक के विविघ रूपों का प्रयोग किया है जिससे आधुनिकता वैयक्तिक और सामाजिक मूल्यों में उभर कर सामने आया ।

मैं रथ का टूटा हुआ पहिया
लेकिन मुझे फेको मत
क्या जाने कब
इस दुरूह चकव्यूह में
अक्षुणनीय सेनाओं को चुनौती देता हुआ
वही दुस्साही अभिमन्यु आकर घिर जाये।

सन् १९८० के बाद की कविता अधिक दुरूह हो गयी है। आधुनिकतावादी कविता में शहरी जीवन बोध बहुत वर्णित हुआ है। किस तरह आधुनिक परिवेश में व्यक्ति का शहरी जीवन निरर्थक रूप में बीत रहा है अन्धायुग 'चांद का मुह टेडा' आदि कृतियों में यही दृष्टिकोण परिलक्षित है। मुक्तिबोध का 'चांद का मुंह टेढ़ा' का नायक अकेला है और आत्म अन्वेषण की स्थिति की झलक है दृष्टव्य है।

जितना मैं लोगो की बात को पार कर
बढ़ता हूं आगे
उतना ही पीछे रहता हूं अकेला

इन पंक्तियो में कविता का नायक आत्म निर्वासित हो गया है। इस आत्मनिर्वासन की स्थिति में आधुनिकता की अभिव्यक्ति हुई है मैं और वह का सम्बन्ध विघटित हो गया है दोनों के बीच विभक्ति की स्थिति में तनाव पैदा हो गया है जिससे मैं उदासीनता की जिन्दगी अनुभव करता हूं। आधुनिकतावादी काव्य जगत के इत्तर गद्य साहित्य की विविध विद्यायों में बदलते प्रतिमानों का संघर्ष विशेष रूप से दृष्टिपथ

१. सारिका मार्च१९७३ ,पृष्ठ २०(मोहन राकेश)

`में उतर रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात जहां एक ओर मनुष्य के बीच फैले हुये व्यापक आशुतोष ने नई कविता को जन्म दिया वहीं दूसरी ओर नई कविता के माध्यम से आधुनिकता का दौर हिन्दी कहानी में आया। आधुनिकता वादी दृष्टिकोण से ही कहानी के शाश्वत मूल्यों में परिर्वतन हुआ है जिससे पुरानी कहानी का आन्तरिक़ ढाँचा चरमराकर टूट गया।

आधुनिकता की प्रकिया में लिखी गई कहानियों में स्वानुभूति की अभिव्यक्ति की सच्चाई भोगे हुए क्षण को लिखनें की प्रतिबद्धता शाश्वत रूप से नवीनता की प्रकिया और सम्बन्धों की तलाश की संवेदना देखने को मिलती है। आज का कहानीकार बदलते मूल्यों में मानसिक और आत्मिक दृष्टि से अधिक तुष्ट रहना चाहता है, इसलिये उसने जीवन की परिस्थितियों से मोर्चा लेने के लिये टेकनीक और भाषा के तेवर को बदला है। आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रकिया में लिखी जानी वाली नई कहानियों में जहां-तहां नगर के बाहर का बाताबरण दिखाई पड़ता है। मोहन राकेश की मिस पाल नायिका नगर ,परिवेश से कटकर पहाड़ पर चित्रकला की साधना की बात सोचती है। फिर भी वह अपने अकेलेपन से टूटती है। इसी प्रकार उनकी ही एक और जिन्दगी की कहानी प्रतीकात्मक दृष्टि से आधुनिकताबोधीय ही है-

हाय हाय चिड़िया मर गयी- किसी ने कहा
मरी नहीं अभी जिन्दा है- कोई और बोला
चिड़िया नहीं चिड़िया का बच्चा है
इसे उठाकर बाहर छोड़ दो
नहीं, बाहर बिल्ली खा जायेगी,
बेचारा कैसे तड़प रहा हैं।

डॉ० विजय मोहन सिंह की कहानी में गहरी मानसिकता की अभिव्यक्ति हुई है। कहानी का प्रारम्भ ही अन्तर्विरोध से होता है, जिससे आधुनिक भावबोध सामने उभरकर आया है। इसी प्रकार टट्टू सवार कहानी में उन्होंने आज के जीवन की नकाब उतारनी चाही है।

कहानीकार अनिर्णय के द्वन्द्व मे नायक के माध्यम से कहता है-
मै किसी तरफ से हो ही नहीं सकता
मैं किसी बात के विरूद्ध हो भी कैसे सकता है।

निर्मल वर्मा के परिन्दे कहानी में आधुनिकता का वोध मनुष्य की अनिश्चितता और अज्ञात नियति में उजागर हुआ है। निर्मल वर्मा की लन्दन की एक रात कहानी आधुनिकता की दृष्टि से सफल कहानी है इस कहानी के माध्यम से शहरी अनुभव, भूख, आतंक, डर, बेकारी ,रंगभेद सभी की अभिव्यक्ति हुई है। वह सत्य भी है कि आज की दुनियाँ में मनुष्य आरक्षित होने के अनुभव से संत्रस्त रहता हैं। दूधनाथ की कहानियों में संवादहीनता और उदासीन स्थितियां पर्याप्त है।

१.एक और जिन्दगी पृष्ठ १४२ २-सातगीत वर्ष, पृष्ठ ७९

३-चाँद का मुंह टेढा ३३

इनकी एक लम्बी कहानी 'सुखान्त' में मनुष्य अपने परिवेश में किस तरह कैद है बखूबी चित्रित किया गया है।

जीवन मूल्यों को नये सन्दर्भ देने और जीवन अर्थ को गहरी संवेदना से समझनें शक्ति जितनी मन्नू भंडारी की कहानियों में व्यक्ति के मानसिक सघर्ष की अभिव्यक्ति अधिक व्याप्त है। आधुनिकता की दृष्टि से उनकी कहानियां 'अकेले' यहीं सच है, नशा 'तीसरा आदमी' विशिष्ट है। इसमें आधुनिक जीवन एवं नारी के मानसिक सघर्ष को वर्ण्य बनाया हैं। लेखिका इनमें जीवन सघर्ष की अभिव्यक्ति ही नहीं करती बल्कि नये जीवन की तलाश भी करती है। 'यही सच है' इसका प्रमाण है। इस कहानी में स्त्री पुरूष के विभिन्न सम्बंधो का रूप उजागर हुआ है प्रेम कोई प्रेम कोई निरपेक्ष सच्चाई नही है, सापेक्ष सच्चाई होती हैं। प्रेम सम्बंधो की सम्वेदनात्मक अभिव्यक्ति आधुनिकता की उपज है। इतना ही नही भंडारी ने "मजबूरी" कहानी में दादी-मॉ-बेटी के अन्तराल में पाल्लवित ममता को आज के परिवेश में बटोरकर देखा है-

> एकाएक अम्मा की चेतना लौट आयी।
> क्या कहा बेटे मुझे भूल गया।
> सच मेरी बढ़ी चिन्ता दूर हुई,
> जरूर प्रसाद चढाऊंगी।

कमलेश्वर की कहानियां 'जोखिम', 'एक सडक सत्तावन गलियॉ' ,'नीली झील', 'दिल्ली में एक मौत' आदि कहानियॉ मानसिक सघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व की पहचान करती है इन कहानियों में आधुनिकता भिन्न-भिन्न स्तरों पर पहुंची हैं लेखक ने कहानी के माध्यम से मानवीय सामाजिक और वैयक्तिक रूढ़ियों को तोड़ा है और वैयक्तिक चेतना को संश्लिष्ट रूप में अभिव्यक्त किया है। नगर जीवन के नवीन भावों विचारों अवस्थाओं का यहां यथार्थ चित्रण हुआ है 'जोखिम कहानी' का नायक व्यवस्था के संसार को झेलते हुये मृत्यु के संग्राम को भी झेल रहा हैं। नायक दोहरी अर्थ व्यवस्था के तनाव में जिन्दा है जो, आधुनिकता का परिणाम है। 'धूप का एक टुकड़ा' कहानी वर्मा जी के जीवनगत अजनबीपन, संवेदना की कहानी की नायिका का कथन ध्यातव्य है--

मैंने सुना है कुछ ऐसे देश हैं जहां तक लोग नशे में घुत नही हो जाते हैं तब तक विवाह करने का फैसला नहीं लेते ।

नई कहानी के कथ्य में अजीव सी उदासीनता और व्यंग्योक्तियां है। राजेन्द्र यादव की 'भविष्य के पास मंडराता' अतीत कहानी में सम्बन्धों के विच्छेद होने की व्यथा में आघुनिकता उभरी हैं। इस कहानी में दाम्पत्य प्रेम की अवस्था में ले जाता है, और कहता है- हां फिर बोली कि मुझे प्यार करोगी और खुश रहोगी ।

हां प्यार करूंगी और खुश रहूंगी।''?

आधुनिकता के साथ उपन्यास कारों ने व्याख्यायित किया है,

1. आवेश सन् 1968
2. मेरी प्रिय कहानियां, पृष्ठ 30
3. अमृत और विष
4. कौवे और काला पानी पृष्ठ 111

"अमृत और विष" अमृतलाल नागर की एक विशिष्ट कृति हैं उन्होनें कई कथासूत्र इसमे जोड़े हैं। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष को लेकर युग-यथार्थ का चित्रण और जीवन्त पात्रों का निरूपण इस उपन्यास की विशेषता है। आधुनिकता बोधीय अंग्रेजी माहौल का जिक करते हुये कथाकार ने लिखा है -"अंग्रेजी भाषा की जानकारी, गोरा रोबिला स्वरूप और बातें करने का ढंग राधेलाल को अंग्रेज व्यापारियों में और हुकमरा के निकट सम्पर्क में ले आया[1]।

लाला जी अपने धर्म कर्म के कट्टर रहे पर धन्धा परस्त होते-होते अंग्रेज परस्त भी हो गये। उन्हें यह विश्वास था कि जो कारोबार अंग्रेजी ढ़ग पर और अंग्रेजों के संरक्षण में चलेगा वही फलफूल सकेगा वाकी सारे धन्धे मिट जायेगे। निर्मल वर्मा का उपन्यास "वे दिन" में आधुनिक बोध कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुआ है। लेखक इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यास साहित्य के पुराने चौखटे को तोड़ता है और नये भाव विचारों का व्यापक फैलाव करता है। इस उपन्यास में सभी पात्र अकेलेपन का बोध करते है। उपन्यास के पात्र रायना , उसका पति , उसके वच्चे, गारिया,'में' टीइ सभी अकेलेपन के बोझ से पीड़ित हैं। सभी पात्र स्वजीवन में व्यर्थता का अनुभव करते हैं। सभी के जीवन में एक तरह की उदासीनता, तटस्थता, व्यर्थता और खालीपन व्याप्त है, जो एक दूसरे के सुख-दुख: और सम्बध से परिचित होना व्यर्थ समझतें हैं। उपन्यासकार ने उपन्यास के माध्यम से शहरी जिन्दगी की जटिलता और वास्तविकता को पकड़ने का प्रयास किया हैं। नगर बोध से छुटकारा पाने के लिये कथानायक पहाड़ पर जाने की सोचता है आधुनिकता नगरीकरण की प्रतिकिया से उत्पन्न एक प्रकिया है। साहित्य विशेष रूप से हिन्दी साहित्य में आधुनिकता की गहरी छाप जितनी कविता, कहानी और उपन्यास में है उतनी नाटक में नहीं। कविता कहानी का आस्वाद एकान्त में बैठकर किया जा सकता है, लेकिन नाटक के भाव को पढ़ने के लिये और सही अर्थो में नाट्यार्थ के साक्षात्कार के लिये नाटककार को पाठक, दर्शक, अभिनेता, रंगमंच और रंगशाला की दशाओं में बांधना पड़ता है। नाटक में सहसा नयापन लाने में नाटककार डरते हैं फिर भी जगदीशचन्द्र माथुर, विपिन कुमार अग्रवाल, अमृतराय, मोहन राकेश आदि ने आधुनिक वैज्ञानिक रोशनी से अन्धविश्वासों को तोड़ा हैं। विपिन कुमार अग्रवाल का नाटक "अपाहिज" नाटक देश, समाज और मनुष्य की आजादी की अवस्थाओं की तत्कालीन अवस्था के संन्दर्भ में प्रस्तुत हैं-

खल्लू- भाषण हो रहा है ।
कल्लू- हां ।
खल्लू- आराम हराम है। यह कौन है कल्लू ।
कल्लू- तुम
खल्लू- मै

इसी प्रकार मोहन राकेश ने "आधे-अधूरे" नाटक में नवीन भंगिमा और नूतन अर्थवत्ता व्यक्त की हैं इस नाटक में घर और सम्बन्धों की प्रतिबद्धता का प्रश्न है ।

१. वे दिन, पृष्ठ ६७   २. तीन अपाहिज, पृष्ठ ३६

जब व्यक्ति सम्बन्धों और कर्तव्यों के घेरे मे खड़ा होकर अपने अस्तित्व की मांग करता है, तो इससे प्रश्न सहज ही खडे होते है -

"जिसे देखो वही मुझसे उल्टे ढंग से बात करता है,

जिसे देखो वही मुझसे बदतमीजी से पेश आता है ,,

४- आधुनिक वर्ग चेतना और आन्तरिकता

विज्ञान आधुनिक समाज का सर्वाधिक गत्यात्मक पहलू हैं । विज्ञान के कारण मजदूरी और मेहनत, कार्य और चिन्तन, नगर और महानगर, कस्बा और ग्राम, उत्पाद और उपभोग सभी के मानदण्ड बदल गये। इसके साथ वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक सम्बन्धों का आधुनिकीकरण हुआ है। संयुक्त परिवार और अन्य सामाजिक सम्बन्ध आज के परिवेश में उपयोगी नहीं रह गये हैं। अर्थ के दवाव और वैज्ञानिक तर्क के कारण यथार्थ के धरातल पर सामाजिक सम्बन्धों के मानदण्ड टूटे और टूटते ही जा रहे हैं। मानव मूल्य के बदलते प्रतिमान आधुनिकता बोधीय निष्कर्षो के रूप में इतने अधिक पैने और नुकीले वन गये हैं कि हम मनुष्य को नितान्त अकेला, निष्प्राण महसूसते देख रहे हैं। भारत का शासक कानून के प्रश्रय में जीविति न रहकर धन की गोद में खेलता रहा है। सनातन मानव मूल्यों में धर्म को ऐसा शाश्वत मूल्य कहा गया है, जो भावनात्मक पक्ष को तो प्रबल करता ही है, साथ ही हमारी आचार संहिता को भी संकलित करता है। विचारक बर्टेंड रसेल ने कहा है- 'A religion is a more or less coberent cystem of beliefs and tachichs concening a super natural order of being force, places of other entities'[2]

आज आधुनिकता के परिपार्श्व में राजनैतिक और वैज्ञानिक वोध के कारण धर्म से आस्था धीरे-धीरे समाप्त हो रही है। इसका मूल कारण यह है कि आज का व्यक्ति तर्क के आधार पर जिन्दा है, क्योंकि आज हमारे जीवन की समस्याओं का धर्म समाधान नही कर पा रहा। जीवन में धर्म का स्थान विज्ञान ने लिया । विज्ञान ने हमारे खाने-पीने से लेकर रहन-सहन के तौर तरीके और सभ्यता तक को प्रभावित किया हैं। विज्ञान ने प्रकृति की अनेक अकथनीय, अविश्वसनीय शक्तियों से परिचित कराया । विज्ञान ने भौगोलिक दूरियों को समाप्त कर मनुष्य को पास-पास ला कर खड़ा कर दिया । इस प्रकार सम्पूर्ण मानवीय मूल्यों और सम्बन्धों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। धर्म के बल पर जीवन के समय में विजय दुन्दभि बजाने वाले मनुष्य के रथ चक के पहिये को विज्ञान ने तोड़ मरोड़ दिया है और कम्पयूटर पद्धति का अविष्कार किया है।प्रसिद्ध वैज्ञानिक Matinowsky ने कहा है कि विज्ञान और धर्म जीवन बोध के आधुनिकता और परम्परा जैसे चरण हैं।आज व्यक्ति रूढ़िवादी तत्वों के प्रति अधिक उदासीनता व्यक्त करने लगा है।आज ऐसे लोगों की संख्या नगरीय दृष्टि से बहुत कम है जो पुराणो और प्राचीन धर्मशास्त्रों के आश्चर्यजनक कथनों में

१.आधे अधूरे, पृष्ठ ६७ २.वैज्ञानिक परिदृष्टि, पृष्ठ ४३

3- Science and religion and other essay p.24

विश्वास करते है। आज व्यक्ति अपने जीवन में बुद्धि और विवेक के द्वारा उपयोगी धार्मिक विचारों को ही स्वीकार करता हैं, जिससे धार्मिक व्यवस्थाओं, परम्पराओं और मान्यताओं में बहुत तेजी से परिवर्तन हो रहा है। उदाहरण के लिये विधवा विवाह का प्रचलन विजातीय विवाह का प्रचलन पति पत्नी जीवित रहते हुये भी विवाह का प्रचलन, विजातीय विवाह का प्रचलन आदि सब स्वीकार हैं। आज मनुष्य इतना अधिक व्यस्त है कि वह धर्मिक संस्थाओं को अनुष्ठानों कर्मकाण्डों के लिये समय नही दे पाता क्योंकि वे उसे अन्धविश्वास समझते रहते हैं। विवाह जैसे कार्य को भी एक घण्टे में समाप्त कर दिया जाता है। वर्तमान समय में धार्मिक संस्थाओं को जीवनोंपार्जन का साधन मात्र मान लिया जाता हैं। मानव मूल्यों के विघटन की प्रक्रिया पुराने मूल्यों के जड़ होने से लगातार बढ़ी है। प्राचीन और नवीन जीवन मूल्यों के मध्य टकराहट या मुकाबला आधुनिक भावबोध का मूलाधार है। कमलेश्वर ने बदलते मूल्यों के सन्दर्भ में कहा है --. धर्म अब गति देने वाली शक्ति नही रह गया है, इसलिये एक अजीब तरह की निर्धनता है। जीवन पद्धति के मूल्यों को तय करने का काम अब धर्म नही करता है, नहीं हमारे जीवन के सवालों का जवाब देता है। आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण और नगरीकरण की प्रकिया ने सामाजिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया है। परिवार का परम्परागत स्वरूप प्रचलित मानदण्ड और यहां तक कि व्यक्ति के वैयक्तिक जीवन में भी परिवर्तन हुआ हैं। औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण के फलस्वरूप परिवारों का परम्परागत रूप तेजी से टूट रहा है। और जहां कहा जाता था सात पांच की लकड़ी और एक जने का बोझ. इसके प्रतिरोध के रूप में आज यह कहा जाने लगा है कि एक गमले में चार और एक में एक। नवीन आवश्कताओं में वृद्धि होने से जीवन में पुरानी व्यवस्था अपर्याप्त प्रतीत होने लगी है।

आज धनोपार्जन और परिवार को भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पति पत्नी दोनों घर से बाहर कार्य करते हैं। उनका जीवन इतना अधिक व्यस्त हो गया है कि बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों पर अपना ध्यान नही दे पाते।

जीवन की व्यस्तता पति -पत्नी के मधुर सम्बन्धों में एक तनाव उत्पन्न करती है। होता यह है कि वे निजी गुणों के विकास में रत रहते हैं और एक ही परिवार में रहते हुए भी एक दूसरे के परिस्थिति का बोध है, सहानुभूति बोध ,आत्मीयता का बोध आदि सब धीरे-धीरे समाप्त कर देते हैं।

अपनी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आज का हरेक आदमी नयी परिस्थति नये मूल्यों का आविष्कार करता चलता हैं। मनुष्य कभी अपने परिवेश के कट जाने का बोध करता है तो कभी परिवार से वह दिग भ्रमित होकर नये सम्बन्धों की तलाश में जीवन की विसमताओं को जोड़ लेता हैं और लगता है कि अभाव में घिरा हुआ जीवन मनुष्य को जड़वत बनाता जा रहा है। आज मनुष्य के जीवन में सहानुभूति आत्मीयता, परस्पर सहयोग आदि का अभाव हैं। डॉ० रमेश कुन्तल मेघ का कथन स्पष्ट है -मनुष्य का अभिपर्शित, मुक्त, सचेतन और सहज कार्य ही अजनबी हो गया

१. मौखिक कहावत (बुन्देलखण्ड), प्रस्तोता प्रमोद कुमार शर्मा

२- नई कहानी की भूमिका, पृष्ठ १७।

है। वह अपनी निजता खो बैठा है। इस तरह अजनबी कार्यकृति तथा निर्वैयक्तिक मनुष्य कमशः अकेली भीड़ तथा अजनबी इंसान के हेतु है। हमारा देश पाश्चात्य देशों के अपेक्षा अधिक पिछड़ा हुआ है। आज की शासन व्यवस्था और अर्थतंत्र ने पाश्चात्य मूल्यों को लें लिया, लेकिन यहाँ के व्यक्ति को असहाय अकेला छोंड़ दिया। रोजी रोटी के लिये आदमी ने आदमी की पहचान को भुला दिया। वह अलग रहकर भी परतंत्र है और निजत्व के स्तर पर लुप्त प्राय हैं। जहाँ आदमी को आदमियत के मूल्य से आँका जाता था वहाँ आज आदमी को सिपाही, अध्यापक, छात्र, गुण्डा, बदमाश आदि हिस्सों मे बाँट दिया है । बदलते मूल्यों में आज का आदमी छटपटाहट महसूस कर रहा । सच्चाई तो यहां तक है कि हिंदुस्तान का प्रजातंत्र जीवन के लिये प्रवंन्चना मात्र बन गया है। आधुनिकता के सहारे पूंजीवाद की बाढ़ जोर पकड़ती जा रही है। लोग अपने श्रंगार कपड़े और विलासता की चीजों पर पैसा पानी की तरह बहा रहे हैं, और अपने अगल-बगल आत्मीय लोगों को भी चिथड़े में लिपटे भूखे नंगे देखकर आँखे बन्द किये जा रहे हैं। देश जब आजाद हुआ था तब राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति व्यक्तियों में जितना आत्मदान था वह उतना ही विखर कर आज भ्रष्ट आचरण में लिप्त हो गया हैं। कमलेश्वर का कथन बहुत सटीक हैं- मेला उठने के तत्काल बाद ही जैसे झण्डियां, सुतलियां, बल्लिया तोरण और अल्पनाएं विखर और फैलकर छितरा जाती है, वैसे ही आजादी का यह मेला उठते देर न लगी और चारो तरफ विखराव, अव्यवस्थता, छितराव नजर आने लगा।

स्वातान्त्र्योत्तर सम्पूर्ण साहित्य चेतना का केन्द्रीयभूत शब्द आत्मिकता रहा है। इस अवधि में आधुनिक होने की आवश्यकता और अत्याधुनिक होने की और अत्याधुनिक देखने की लालसा पर [illegible] बल दिया गया हैं। सांस्कृतिक क्षेत्र में हमारे देश का प्रत्येक युगीन आन्दोलन भी प्राचीन मूल्य बोध के साथ जुडकर नये मूल्यों की स्थापना की प्रकिया से टूट गये और धीरे-धीरे उसी रूढ़ि का शिकार हो गया, जिससे वह मुक्त होना चाहता था। लेकिन स्वतन्त्रता के पश्चात सभी क्षेत्रों में विस्फोट पैदा हो गया है और ऐसा अनुभव किया जाने लगा कि स्थापित मान्यताओं को चुनौती देने का कार्य एक विशेष अवधि का किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्ति समूह का नही होता, वरन् यह एक सतत गतिशील प्रकिया हैं ।

आधुनिकता का बोध इस गतिशील प्रकिया को नैरन्तर्य प्रदान करता है । प्राचीन और नवीन मूल्यों के प्रति जितना टकराव हिन्दी की विविध विधाओं में कहानी विधा विशेष ने झेला है उतना और किसी ने नहीं। उसने कहा था (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी) हार की जीत (सुदर्शन) ताई(विशम्भर नाथ शर्मा कौशिक) नमक का दरोगा (प्रेमचन्द्र) जैसी कहानियों का झुकाव स्थापित जीवन मूल्यों के समर्पित होने का है और आजादी के बाद की लिखी हुई कहानियों में आक्रोश, विद्रोह, तनाव अलगाव घुटन, सैक्स सम्बन्धी अभिनव आयामों का दौर हैं ।

1.आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण , पृष्ठ 194
2.नयी कहानी की भूमिका , पृष्ठ 15

पेपरवेट (गिरजाकिशोर) एक दिन का मेहमान (कमलेश्वर) प्रतिज्ञा (राजेंन्द्र यादव),यही सच है (मन्नू भण्डारी) काला रजिस्टर (रवीन्द्र कालिया) आदि कहानियों मे सम्बन्ध-हीनता तथा सम्बन्धो के नये आयाम के मूल्यों के साथ चिन्हित किये गये हैं।

<u>वर्ग चेतना और यान्त्रिकता-</u> आज यन्त्रीकरण औद्यौगिकीकरण ने सामाजिक मूल्यों में युगान्तकारी क्रान्ति की है ।

वैज्ञानिक चेतना ने मनुष्य को अनुभववादी सिद्ध कर दिया है । पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण बढता जा रहा है, मनोरंजन का तरीका बदल गया है, जीवन की समस्याएं बैज्ञानिक चेतना से सुलझायी जा रही हैं । बाप-बेटा एक परिवार में एक घर में एक दूसरे के सम्बन्ध का विरोध कर रहे हैं। विज्ञान ने श्रद्धा के स्थान पर विश्लेषण की दृष्टि दी हैं । हमारा जीवन यन्त्र चालित हो गया है । जीवन के वाह्य परिर्वतन और वातावरण के चक यन्त्रों से सम्बन्धित है । विज्ञान ने जीवन में सुख सुविधा की उपलब्धि करायी है, इसलिए मनुष्य अपने जीवन में जाने अनजाने विज्ञान का महत्व स्वीकार करता चलता है। जानसन ने बहुत स्पष्ट कहा था कि- "हम उस स्थिति में आ रहे हैं कि जब मस्तिष्क को, आत्मा को और पदार्थ को एक समझा जायेगा और इस दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिये जाने पर उनके बीच वरीयता की कोई आवश्यकता नही रह जायेगी।"[1]

वर्ग चेतना और यांन्त्रिकता नें मनुष्य के मस्तिष्क का आधुनिकीकरण किया है आज व्यक्ति -व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों में वर्ग द्वन्द्व है। शासक- शासित, शोषक -शोषित , पूंजीवाद - सर्वहारा, धनी - गरीब ,सेठ - मजदूर, नेता-नागरिक,ईश्वर -आदमी , बडा-छोटा के मध्य वर्ग चेतना ने एक जेहाद छेड़ रखा है। आधुनिकता वादी प्रयोगों ने मनुष्य को बाहर भीतर असन्तुलित बना दिया है और ऐसा लगता है कि इस द्वष्टि ने हमारे रस को ही सोख लिया है।उदाहरण के लिए कहा जा सकता है कि यन्त्रिकरण और सभ्यता के विकास के सन्दर्भ में प्रकृति स्वयं ही निजी गुणों को खोती जा रही है। जिस तरह आज नारी फैशन की दुनियां में आकर अपने को अधिक आधुनिक और सभ्य सावित करने के चक्कर में अपना नारीत्व खोती जा रही है और अधिक आधुनिकता परक हो जाने पर उसमें फूहड़पन ही दृष्टिगत होता है। केवल आधुनिकता बोध या यन्त्रिकृत हो जाना ही पर्याप्त नही है,उसमें भाव सम्वेदन का उतना ही स्थान है जितना शरीर में प्राण का। डॉ० विशम्भर नाथ उपाध्याय ने आधुनिकता के सिद्धान्त और प्रयोग को सम्प्रष्टि पर ला खड़ा कर देने का सुझाव दिया है- "अभी तो इस देश में तकनीकी विकास ही पूरा नही हुआ है, न ही शिक्षा सार्वजनिक हो पायी है, तब आधुनिकता और प्राचीनता का सह-अस्तित्व जब तक रहेगा, तब तक समाज को समग्रतः हम उसी स्तर पर नहीं ले जाते, जिस पर हम विचार कर कर रहे है। २

1-A systematic introduction p.392
2.जलते उबलते प्रश्न, पृष्ठ 70

(ख) कथा साहित्य के ऐतिहासिक संदर्भ और बदलती युग चेतना-

प्रारम्भिक हिन्दी कथा साहित्य में जीवन के यथार्थ बोध से मुक्त अलौकिक व जिज्ञासावर्धक कार्य व्यापारों के चित्रण की प्रवृत्ति प्रबल रही है। तत्कालीन कथा साहित्य के अन्तर्गत गृहस्थ धर्म, पारिवारिक धर्म सामाजिक आचार-विचार आदि को महत्व देते हुए प्राचीन भारतीय मान्यताओ को आधार बनाया गया है। तत्कालीन भारतीय समाज के सुधार वादी आन्दोलनों ने आदर्श की ओर उन्मुख करते हुए कथाकारो को परम्परा की निष्ठा से जोड़ दिया है। प्रेम चन्द्र युग तक हिन्दी कथा साहित्य परम्परित मान्यताओं के घेरे से घिरा रहा है और प्रेमचन्द्र के युग में आकर गांधी वादी विचार धारा के प्रभाव से कुछ समस्याओं को उजागर करने में बल मिला है। राष्ट्रवादी नेताओं की उग्र प्रक्रिया सन १९२० के कांग्रेस के अधिवेशन से शुरू होती है। पट्टामिसीतार -भैया का यह कथन उपयुक्त ही है - नागपुर कांग्रेस से भारत के इतिहास मे एक नया युग पैदा होता है।

निर्बल क्रोध आग्रह पूर्वक प्रार्थनाओं के स्थान पर भारतीय नेता जिम्मेवारी का एक नया भाव और स्वावलम्वन की स्प्रिट ले रहे थे - ३

इस उगती बैचारिकता से आन्दोलन काल में देश को बहुत बडा बल मिला। गांधी जी के नेतृत्व में राष्ट्र ने पुनः अपने राजनैतिक उददेश्य के लिए अपनी एकता और दृढ़ संकल्प का परिचय दिया आन्दोलन जितना व्यापक तीव होता गया सरकार का दमन चक भी उतना ही नृशंस और अमानवीय होता चला गया, किन्तु स्वराज्य के लिए भारतीय जनता हर कीमत चुकाने के लिए तैयार थी। गाधी जी के असहयोग वहिष्कार के सिद्धान्त से सामाजिक जीवन में नई चेतना-संचार हुआ। युवक, संस्थायें, वकील, व्यापारी, विदेशी विकय सभी स्वतंत्रता महायज्ञ में आहुती देने के लिए निकल पड़े थे। इस स्थिति का चित्रण प्रेमचन्द की (लाल फीता) की कहानी मे हुआ है, कहानी का पात्र हरविलास अपने हर परिश्रम से मजिस्ट्रेट के पद तक पहुंचा। वह सच्चरित्र, निर्भीक और न्याय-प्रिय शासक बना, इसका परिणाम् उसे कई बार भुगतना पड़ा। जब उसे मिलता है लाल फीते में बधा हुआ एक गुप्त विदेश का पत्र जिसमें असहयोगियों के दमन के लिए आज्ञा दी गई हैं, आर्थिक कठिनाई के होते हुए भी वह बीस वर्ष की नौकरी से त्यागपत्र दे देता है ।

प्रेमचन्द ने गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के हर पक्ष को कहानी में संजोया है। प्रेमचन्द्र देशवासियों में स्वावलंबन और आत्मविश्वास की भावना को जमाना स्वाधीनता आन्दोलन को सफल बनाने के लिये आवश्यक मानते हैं ।

डॉ० रक्षापुरी ने गांधीवादी विचार धारा और उसमें उबलती हुई कांति को सुस्पष्ट शब्द दिये हैं - कालान्तर में गांधी जी के देशव्यापी आन्दोलन और जनता के त्याग, उत्सर्ग एवं दृढ़ता ने देश की रियासतों की नींव ही हिला दी थी, किन्तु इन ताकतवर और वफादार देशी रियासतों के जाल से यह (जानना) मुश्किल हो गया था कि अंग्रेजो के खिलाफ कोई आम विद्रोह पूरे देश में फैल रहा हैं। १

१.Existent ialism for and against p.24

2–सह चिन्तन पृष्ठ 36

3. कांग्रेस का इतिहास पृष्ठ 288

4. प्रेम चतुर्थी पृष्ठ 60

फिर भी अंग्रेजों के भेदनीति से तंग आकर देशी रियासतें एक जुट होने लगी। और १५ अगस्त १९४७ ई० के दिन मानव रक्त रंजित स्वतन्त्रता भारत को मिली और भारतीय द्वीप दो राजनीतिक भूखण्डों में विभाजित हो गया । तत्कालीन कहानीकारों ने समाज की घटनाओं, दुर्घटनाओं और हलचल भरे राजनैतिक जीवन को विविध रूपों में अपनी कहानियों में चित्रित किया हैं। इस काल में सुदर्शन, विशम्भर शर्मा, कौशिक ज्वालादत्त शर्मा, चण्डीप्रसाद हृदयेश पहाड़ी, चतुरसेन शास्त्री, जयशंकर प्रसाद भगवतीचरण वर्मा यशपाल, अज्ञेय, अमृतराय आदि अनेक कहानीकारों ने प्रेमचन्द्र पद्धति का अनुसरण करते हुये समाज के राजनैतिक जीवन को कहानियों में चित्रित किया है। २० वीं शताब्दी का भारतीय समाज जीवन मुक्ति आन्दोलन को विविध पक्षों से प्रभावित हुआ है। इस आन्दोंलन के विरोधी तत्व विदेशी ही नहीं स्वदेशी भी थे। सम्पूर्ण राज्य बाह्य और आन्तरिक सम्बन्धों मे उलझा रहा। राजनैतिक संघर्ष के साथ-साथ सामाजिक बुराइयों को सुधारनें के लिये सुधार आन्दोलन भी चलाये गये । कदाचित राजनैतिक क्षेत्रो में यह समझा जाने लगा था कि समाज की कुछ विशेष कुरूतियां मुक्ति आन्दोलन को शिथिल बना रही हैं। इसलिये नशा बंदी, अस्पर्शता, निवाराण और स्वावलम्बन पर विशेष बल दिया गया। समाज के जीवन के प्रति सर्वांगीण राजनौतिक दृष्टि गांधी जी की जंयती से बदलाव में आयी । इस काल में कथासाहित्य की पृष्ठभूमि मुख्यतः दो विचारधाराओं में बटी हुयी थी पहली भावधारा के समर्थक जयशंकर प्रसाद थे, जिन्होने कथासाहित्य को परम्परानुमोदित आदर्शवाद की ओर बढ़ाया और दूसरी विचारधारा के प्रर्वतक प्रेमचन्द्र थे, जिन्होंने समस्या मूलक उद्भावनाओं को जाग्रति दी । नारी और समाज सुधार , वेश्या जीवन तथा दहेज उन्मूलन , अनमेल विवाह तथा बहुपति -पत्नि विवाह आदि समस्याओं को लेकर प्रेमचन्द्र ने सामाजिक मूल्यों का निर्धारण किया।

<u>१- कथा साहित्य में उगती वैचारिकता तथा बदलता परिप्रेक्ष्यः-</u>

स्वातान्त्र्योत्तर हिन्दी कहानियों में समाज विषयक गुणात्मकता का बोध होता है। आज की कहानी चतुर्दिक दिशाओं से सामाजिक मूल्यों के प्रति यथार्थवादी वातावरण बनायें हुये है। सामाजिक परिवर्तन से प्रेरित जीवन मूल्यों के प्रति आज के कहानीकार अत्यधिक सजग एवं सचेष्ट हैं। उनके कहानी साहित्य में इन परिवर्तित जीवन मूल्यों को अभिव्यक्ति मिली है। आज का व्यक्ति वर्तमान समाज मे परिवर्तन चाहता है। आज के युग में चाहे स्त्री हो चाहे पुरूष, उनके पारस्परिक सम्बन्धों में बदलाव आता जा रहा हैं।

समकालीन कहानी साहित्य पुरानी मान्यताओं के घेरे से निकल कर व्यक्ति के बदलते हुए आयामों से आज जुड़ रहा है सच तो यह है कि समकालीन कहानी समाज के विकास में भिन्नता व समन्वय स्थापित करती है ताकि संघर्ष की स्थिति पैदा न हो, इसीलिए समाज को भिन्नता व समन्वय का गत्यात्मक संतुलन कहते है स्वतंत्रता के पश्चात नई पीढ़ी ने समाज के खुरदुरे प्रतिमानों से जिस भारत का जीता जागता रूप देखा।

१- स्वातन्त्रयोत्तर कथा साहित्य में सामान्य सन्तुलन, पृष्ठ ३८(सीताराम शर्मा)

२. प्रेमचन्द्र साहित्य में व्यक्ति और समाज पृष्ठ ६८

है उसकी इच्छा है कि उसे छूकर देखे। समाज वादी चेतना के कहानीकारों ने विशिष्ट स्वर प्रदान किये। स्वाधीनता से पहले गाँव का कैसा शोषण था, मार्कण्डेय लिखते हैं- कोई २५ वर्ष बीते होगें जब दुखना का पति जीवित था १० बीघे का काश्तकार था किन्तु वह चलबसा और दूसरे दिन ठाकुर ने बेदखली का हुकुमनामा भेज दिया[1] गाँधी वादी स्वराज की उपलब्धि केवल इतनी ही नही कि किसान को शोषण से मुक्त, कराया, जाये उसमें पंचायत राज की कल्पना भी विशिष्ट थी मार्कण्डेय ने रियासती और सरकारी हुक्मनामा का अन्तर समझाते हुए यही कहा है कि पहले जमीदार का कारिन्दा वारंट लेकर पंचायत राज पर व्यंग्य दृष्टि पर प्रहार करते हुए उन्होने कहा है "हमी को तो पिंसना है'' दादा मरेगे, जरेगे हम, अन्न उपजायेगें पर मजा दूसरे पा रहे है। पंचायत बनी थी किसानों के फायदे के लिए, और सरपंच हो गये गयादीन ठाकुर। उनकी खूब मुट्ठी गर्म होती है। आज का मनुष्य पुरानी रीतियों और आस्थाओं में झुलस रहा है २० वीं सदी के वर्तमानदशक में भी गाँव के बीच जमीदारी अभी भी कायम है। शिवप्रसाद सिंह ने लिखा है -''राम सुगम तिवारी गाँव के जमीदार थे। जमीदारी भले ही छूट गई पर उनके घर अब भी ४०० बीघे पक्के सीर होती है । सामाजिक विद्रूपतायें आज भी अपना सिर उठा रही है । डॉ० सिंह की कहानी का पात्र कम्बो नारी जीवन की मार्मिक कहानी का उद्‌घाटन है। यद्यपि अन्याय और शोषण चिरजीवी नही होते, लेकिन फिर भी आज गाँव से लेकर शहर तक भटकती नारी की स्थिति दुखद है ।

"चिड़ियों को जाल में फंसाने वाले बहेलिये भी इतनी फुर्ती से अपना काम न कर पाते होगे जैसी फुर्ती जमीदार के गुन्डे मासूम औरतों को पकड़ने में दिखाते है[1] -१ शहरो में नारी यातना की कहानी और अधिक बेजोड है कमलेश्वर ने ''एक थी विमला'' कहानी में उस नारी का चित्रण किया है जो महानगर में चारो तरफ की यातनाएं भुगत रही हैं -२ नारी संकट की कहानी यहीं नही खत्म होती, क्योंकि इसके आगे कुछ हुआ ही नही है। दरअसल आज के समाज में नारी की स्थिति उस सुन्दर खिलौने सी है, जिसे पुरुष लेने की हठ करता है और ग्रहण करते ही धड़ाम से तोड़ देता है। मध्यवर्ग की सामाजिक संस्कृति अवधारणाओं के प्रति कहानीकारो ने मानवीय सम्बन्धो के सन्दर्भ में बदलते मूल्यों के साथ इन धारणाओं को उजागर किया है। प्रतिगामी पीढी, जो भूत को आदर्श मानकर चल रही है उससे आगामी पीढ़ी का बोझ बढ़ता ही जा रहा हैं। आज आवश्यकता है इस बात की कि नई पीढ़ी परिवेश में अपने हस्ताक्षर बनाये । आज समाजिक समवाय इतनी संकुल और जटिल है कि उगती हुयी वैचारिकता ही ग्रहण करने मे समर्थ हो सकती हैं।

अतः आज के कहानीकार ने जिन्दगी का मुहावरा समझ कर आत्मसात करने का प्रयास किया है। आज के जीवन के रास्ते में विरोध के पहाड़ भी आ सकते है और खाई भी, पर पहाड़ों को लांघकर और खाइयों को पाटकर हमें अपना जीवन रास्ता चुनना ही होगा। मानव एक स्वतन्त्र व्यक्ति के पुनःनिर्माण के लिये सतत्

1–हरामी के बच्चे –महुए का पेड़ ,पृष्ठ 39
2–हंसा जाये अकेला ,पृष्ठ 54
4–कर्मनाशा की हार ,पृष्ठ 105
5–खोयी हुई दिशाये, पृष्ठ 101

प्रयत्नशील रहा। मानवतावाद का अभिप्राय यह है कि मनुष्य का आधुनिक जीवन केवल बुद्धि के अर्थ मे ही सार्थक नहीं, अपितु उसमें भाव संवेदना का भी प्रबल स्थान बने। स्वातन्त्र्योत्तर कहानीकारों ने पारम्परित मूल्यों का मूल्यांकन किया और उनमें नये-नये मूल्यों का समावेश किया। मानव जीवन दिन - प्रतिदिन बदलता जा रहा है। उसके सोच विचार, रहन-सहन में काफी फर्क आ गया है। डॉ० बच्चन सिंह ने लिखा है -''मानव मूल्य अपेक्षाकृत अधिक व्यापक और दुरूह हैं। इससे जाहिर है कि यथार्थ के बदल जाने से मूल्य भी बदल जाते है[1]? मानव समाज में परिर्वतन आता है और जीवन मूल्य बदलते रहते हैं। सच-मुच यह यथार्थ परिवर्तन जगत का यथार्थ है। मानवीय सभ्यता के आदि युग से आज तक परिर्वतनो में विभिन्न स्थलों का विवेचन यह सिद्ध करता है कि भौतिक परिस्थितियों के बदल जाने से विचार धारा में भी परिर्वतन आता है। इन आवश्यकताओं के फलस्वरूप मानवीय आचार विचार तथा आध्यात्मिक आदर्शों का उदय और विलय और नवीनीकरण होता रहता है। यही आचार विचार और आदर्श किंचित अर्थ भेद के साथ मानव-मूल्य कहे जाते है।

डा० रमेश चन्द्र ने स्वातन्त्र्योत्तर बदलते परिप्रेक्ष्य में मानव मूल्यो को स्वीकारते हुए लिखा है कि अब तक की स्थिति से यह स्पष्ट है कि व्यक्ति स्वातन्त्र्य बन्धुत्व, मानव समनता, न्याय, प्रेम और युग विचार सम्बन्धी वे मूल्य है जिनकी ओर नये कहानीकारों का ध्यान आकर्षित हुआ है। समाज की यथार्थ स्थिति में इनका विशेष महत्व न होने के कारण व्यंगपरक विद्वता का चित्रण बहुत हुआ है। और यही नवीन मूल्यों का संकेत कर रहा है -२

वस्तुतः इन जीवन मूल्यों का बौद्धिक और भावनात्मक दोनों स्तरों पर विकास हुआ है। स्वातन्त्रोत्तर कहानी आचरण के मूल्यों को नकारती गई है। मध्यवर्ग की प्रेमजनित कुण्ठायें आज के कहानीकारों का आधार बनी हुई है। आज प्रेम मूलतः ऐन्द्रिक बन गया है; आकर्षण इसकी धुरी है। आज के कहानीकार मे प्रेम की समस्या कथ्य का रूप लेकर समाविष्ट होती जा रही है। प्रेम और समाज दो विरोधी बातें लगने लगीं है, जिसके कारण पति-पत्नी और प्रेयसी या पति-पत्नी या प्रेमी दो न होकर तीन हो गये है। बदलते परिप्रेक्ष्य में मानव मूल्यों का यह विखरा रूप ही कहा जा सकता है।'खेल खिलौने' में राजेन्द्र यादव की यह धारणा बहुत स्पष्ट है -तन ने मन को निगल लिया। आत्मसात कर लिया।
केवल तन की दीवारे सामने है जो छूने पर विजली के करेन्ट की तरह झटका देती हैं। प्रेम की समस्या को सिर्फ मध्यवर्गीय मानसिकता का विकृत और कुण्ठित प्रतिबिम्ब बताकर एक तरफ उठा फेंकना सारे सामाजिक ढ़ाचे को नजर अन्दाज करना है। प्रेम सूत्र में विगड़ने वाले मानव मूल्य अपने आप के लिये नये तस्वीर के रूप में है। निर्मल वर्मा की कहानियों में वैयक्तिक चेतना के मूल्यवादी रूप सामने उभर कर आये है। 'जलती झाड़ी की' लवर्स कहानी में

1. समकालीन साहित्य,पृष्ठ 129
2.हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य,पृष्ठ 55

आत्मकेन्द्रीयता का उफान है । कहानी का पात्र में परिवेश को भोगता है । पुरूष और नारी के सम्बन्ध का मूल्य जैसे उसके पास हो ही नही। नारी उसके लिये आज भी भोग्या है ।अपनी गरज के निमित्त तो वह उसकी चप्पले अपने हाथो में पकड़ सकता है। अपने रूमाल में बांध सकता है और कहिये तो उसके तलवे भी चाट सकता है। बदलते परिप्रेक्ष्य में विचारधारापरक मानव मूल्यों में सांस्कृतिक परिवेश का पर्याप्त प्रवाह दिखाया है। यदि कोई कहानीकार भावुकता का सहारा लेकर आज को अबूझ स्थिति से आरोपित अर्थ भर देने की चेष्टा करता है, तो वह उसकी जल्दवाजी ही है ।

'सितम्बर की एक शाम' इसी यथार्थ की सम्भावना और व्यर्थता का अन्तर्विरोध दिखाते हुए चित्रित की गयी कहानी है। अतीत के प्रेम से छुटकारा पाकर मुक्तावस्था मे व्यक्ति की चेतना को यथासम्भव प्रकाशन बनाया गया है । जिन्दगी के सन्दर्भ में व्यर्थता का उसे आभास है, लेकिन अतीत के प्रति उसका लगाव इतना भीतरी होता है, जिससे छुटकारा पाना सम्भव नहीं । निर्मल वर्मा की कहानी का नायक कहता है - आज तुम सोचती हो कि मैं इससे भिन्न हो सकता था जो आज हूँ वह उन दिनो मेरे भीतर था ।-3

आज के कहानीकारो की कहानियों मे व्यक्तिगत चेतना परक स्थितियों का अधिक तकाजा है। यह व्यक्गित परिवेश अलगाव को पैदा करता जा रहा है, और इधर कहानी कला चिन्तन सृजन की बेईमानी में इधर-उधर भटकती जा रही है लिवलिजी भावना से रौंदी हुई जीवन की वास्तविकता उसके मन पर किस प्रकार प्रतिक्रिया करती है दृष्टव्य है -"मै पहली बार इस घर में आया घर मे कोई परदा करने वाला तो नहीं था पर वड़ी झिझक लग रही थी मैं गौर से भाभी को ताक रहा था...............वे जान गईं कि मै उन्हे देख रहा हूँ पर जैसे इसमे सकुचाने या सिमटने की कोई वात ही नही थी कहानी में बढ़ती सहधर्मी सूत्रता आज फूटती वैचारिकता को साथ लिए हुएं हैं। और लगता है कि आजकल मानव खण्डित व्यक्त्तिव से ढके दोहरेपन को ढो रहा है। तमाम कहानियों मे रचना प्रकिया की एंवं, आज के व्यक्त्तिव की कुण्ठाऐं, एंव दमित वासनाएं अभिव्यक्ति पाने के लिए छटपटा रही हैं। भोगा हुआ मानव मुल्य भी आज की कहानियों का विवेच्य विषय है। सैद्धान्तिक दृष्टि से मोह भंग में डूबा हुआ कथाकार केवल दमित वासनाओं को ही नहीं ओढ़ रहा है, बल्कि सामाजिक संदर्भो में मृत्युगामी शक्तियों से जूझते हुए दायित्व के निर्वाह की अपेक्षा भी कर रहा है । मार्कण्डेय जैसे कहानीकार के लिए यह बात निर्विवाद सत्य है। पौरूस्तय के आस्था की सीधी अभिव्यक्ति उनकी कहानी मे हैं। 'प्रलय और मृत्यु' कहानी का कथ्य की पुष्टि करता है मनुष्य अजेय है, उसकी चिन्ताग्रस्त आंखे बता रही है कि वह सोच रहा है। क्षणभर को वह हस्तबुद्धि हो गया है पर उसकी शक्तियॉ तो अपनी जगह हैं-2 ।

1–खेल खिलौने, पृष्ठ 4 2. जलती झाडी, पृष्ठ 28 3. परिन्दे, पृष्ठ 118

कथा सहित्य में उगती वैचारिकता ने बदलते मूल्यों को अभिनव दिशाएं दी है । समग्रत:आज के परिवेश का दायित्व व्यक्ति के निजी जीवन दर्शन से ओत-प्रोत है । प्राचीन आचरण सम्बन्धी मूल्यों का विघटन हो ही गया है । आज के कथाकार के सामने प्राचीन मूल्यों का चश्मा नही है, इसलिए वह भी पूराने मूल्यों का अर्थ बदलना चाहता है। उदाहरण के लिए ऊषा प्रियम्बदा की कहानी को लिया जा सकता है। माता-पिता की सेवा का अब कोई अर्थ नही रह गया है। वृद्धावस्था में सुख की कामना करने वाले पिता को आज का परिवार वर्दास्त नही कर पा रहा हैं। -१ ।

नर-नारी के जीवन में बनते बिगडते मूल्य निजता के परिचायक बन गये हैं ! आज के अर्थ में संकुल समाज में धन और पद दोनों वस्तुएं सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए मेरुदण्ड है।

धन का मोह कई बार पति को इतना पतित बना देता है कि वह अपनी पत्नी को धनी, सम्पन्न और उच्च पदासीन अफसरों से सम्बन्ध बनाने की प्रेरणा देता है। मन्नू भण्डारी की 'नई नौकरी' का पात्र कुन्दन अपनी पत्नी के बल पर उच्च शिखर पर चढ़ना चाहता है। कुन्दन के कानों में डा० फिशर के शब्द प्रायः गूंजते रहते हैं - " यू विल हैव टू वी वेरी सोशल, लवली यौर वाइफ" २

इन बातों में निहित संकेत और आश्वासनों को समझकर कुन्दन आश्वस्त होता है। डायरेक्टर के स्वागत के लिये वह अपना घर सजाता है और चाहता है कि किसी तरह अपने और फिशर के बीच हुई ताजा बातें रमा को सुनाये। पति-पत्नी के सम्बन्धों के विघटन के लिए प्रत्येक स्थान पर केवल पति को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, पत्नी भी है।

विष्णु प्रभाकर की 'ठेका' कहानी का पति-पत्नी से इसलिए नाराज है कि वह उसे बिना बताये किसी व्यक्ति के पास क्यों गयी, परन्तु ज्यों ही पत्नी उसे ठेका मिलने की सूचना देती है वह प्रंसन्न हो जाता है इधर गिरिराज किशोर की कहानी में पति पत्नी के अतिरिक्त तीसरे आदमी की परिकल्पना की गई है।

पत्नी रीता ऊंची अफसर है और पति क्लर्क है।

पत्नी का अवैध सम्बन्ध डिप्टी सेकेटरी से है। पति मामुली क्लर्क होने के कारण चाहते हुए दोनों का बोध करने में असमर्थ है और मन ही मन कुढ़ता रहता है। पति के मन मे हीन भावना प्रवेश पा जाती है और वह पत्नी द्वारा की गयी साधारण सी बात में भी दूसरे अर्थ खोजने लगता है।

'प्रतीक्षा' राजेन्द्र प्रसाद की कहानी में हर्ष नाम का पात्र पत्नी के रहते हुए भी नन्दा से सम्बन्ध बनाये हुए है और चाहता है कि उसकी पत्नी को कोई प्राणलेवा बीमारी हो जाये ताकि उसके मरने की स्थिति में वह नन्दा से विवाह कर सके। विजय मोहन सिंह कि 'वे दोनों' कहानी का पति अनिल पत्नी से कार्यालय को कहकर घर से चला जाता है, लेकिन कार्यालय से अवकाश लेकर वह पार्क में लेटा हुआ 'प्रीती' नामक लड़की से चुहल करता रहता है और इधर पत्नी उसे चौंकाने के विचार से बिना

1.राजा निरवंशिया (कमलेश्वर),पृष्ठ 70 — 2.वापसी, पृष्ठ 56
3.–हंसा जाये अकेला,पृष्ठ 171 — 4.मेरी प्रिय कहानियॉं,पृष्ठ 42

सूचना दिये मिसेज शुक्ला के साथ कार्यालय चली जाती है। आधुनिकता की चेतना देहात के स्त्री वर्ग में भी कहीं-कहीं दिखाई दे रही है। अन्धविश्वासों का कुहासा धीरे-धीरे हट रहा है और स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो रही है।

वह पुरुष केन्द्रित समाज में अपने बल पर जीने का अधिकार मांगने लगी है। धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो' पात्र 'सती' इसी चेतना से सम्पन्न है। वह साबुन बेचकर अजीविका चलाती है और गांव के परम्परागत समाज के मध्य अपनी आसीमता बनाये रखती है।

पति द्वारा प्रताडित 'गुल' को दुर्दिन में वह सहारा देती है और उसे समझाती है कि अत्याचारी पति के सामने उसे कभी सर नहीं झुकाना चाहिए।

"अच्छा किया तुमने।

मेहनत से दुकान करो। अब कभी थूकनें भी मत जाना उसके यहॉ। हरामजादा दूसरी और कर ले चाहे दस और कर ले। सबका खून उसी के मत्थे चढ़ेगा। यहां कभी आये तो कहलाना मुझसे, इसी चाकू से दोनो आंखे निकाल लूंगी।"

यान्त्रिक सभ्यता ने मानव को इतना आत्मकेन्द्रित और स्वार्थी बना दिया है कि आस पास घटित होने वाली बड़ी से बड़ी घटना उसे द्रवित नहीं कर सकती कमलेश्वर की कहानी 'दिल्ली में एक मौत' का 'मैं' पात्र और उस बिल्डिंग में रहने वाले दूसरे लोग सेठ दीवानचन्द्र की मृत्यु का समाचार पाकर भी उससे अप्रभावित रहते है, उनका दैनिक जीवन सामान्य गति से चलता रहता है।

वैसे कुछ हुआ ही न हो। 'मैं' अपने कमरे में छिपा रहता है और उधर आंख पर संकित होकर इधर-उधर देखता है कि उसे ठंड में सुबह-सुबह शव यात्रा पर चलने का कोई आग्रह न करे ?

यान्त्रिक सभ्यता ने मानवीय संवेदना को इतना कुण्ठित कर दिया है कि श्रद्धा, सहानभूति और प्रेम जैसी उदास भावनाएं मन को स्पर्श तक नहीं कर पातीं। आज की कहानियां 'आज' को बुन रही है।

आज अभिनव धारणाएं अभिनव मार्ग पर अभिनव दिशा लेकर गतिमान हो रही है, जिससे समाज के आधार-भूत प्रश्न आज की मानसिकता के साथ लटके हुए हैं। वस्तु सत्य से परे आज के समाज में एक ऐसी आन्तरिक सूक्ष्म अनुभूति काम कर रही है, जो व्यक्तित्व को रेशे-रेशे में बिखेरना चाहती है।

आज के व्यक्ति के लिये सबसे बड़ी चिन्ता है समाज सापेक्ष भाव संवेदन के वैज्ञानिक यांत्रिकी की जो मानव को विन्यस्त करती जा रही है। आज के कथाकार ने जीवन में सन्दर्भ और प्रवृति को परखने तथा चित्रित करने के लिये सामान्य एवं विशेष पात्रों की सृष्टि की है। मनहर चौहान कृत 'मत छुओ' कहानी में पात्र के उन जीवन क्षणुओं का वर्णन है जो लौट नही सकते और उनकी स्मृति मात्र शेष रह गई। मन्नू भण्डारी :: 'चस्में' कहानी में मनुष्य के विविध पात्रगत दृष्टिकोणों का परिचय

1. टट्टू सवार पृष्ठ 47 2. बन्द गली का आखिरी मकान पृष्ठ,77

दिया है, जहां एक ही वस्तु को पात्रगत विचारणां से भिन्न भिन्न देखा जाता है तथा एक पात्र एक ही वस्तु को विचार के विविध दृष्टिकोणों से देखने का प्रयास करता है। मि० वर्मा और मिसेज वर्मा दोनो सामान्य एवं विशेष पात्र के कमशः परिचायक है। मि० वर्मा चश्में का प्रयोग नही कर रहे थे। उनकी धुंधली आंखो के सामने एक और ही अस्पस्ट सा पत्र उभरने लगता है । धीरे धीरे इसका प्रत्येक शब्द बिना चश्में के स्पष्ट तर होता गया '।' स्वतन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानियों ने उगती वैचारिकता के साथ साथ बदलते परिप्रेक्ष्य की पहचान की है। टूटते हुये पारिवारिक सम्बन्ध,बनते हुये नवीन सम्बन्ध, नारी का आज संघर्ष, नारी का प्राचीन भाव से मिलकर नवीन विचारभूमि में प्रयोग, बदलता हुआ परिवेश मानव के अस्तित्व का प्रश्न, प्रेम और यौन सम्बन्धी समस्याये एवं मनुष्य का विश्रंखल होता हुआ व्यक्तित्व आदि कथा व्यथा के नये आयाम है। नयी कहानी जीवन मूल्यों एवं जीवन दर्शन का नवीन संन्दर्भ में पर्याय है। उसने पुराने सांचे और ढांचे को तोड कर नया मुहावरा खोज निकाला है। उसमें आधुनिकता की चुनौती स्वीकारने की क्षमता है जीवन के विरूद्ध पहलुओं, सूक्ष्म स्तरों को छूने तथा पकडने की लालसा है, उसने आधुनिक जीवन की विषमताओं, कुंठाओं से गृसित मानव के हृदय की रोमानी स्थिति का वड़ा सूक्ष्म विवेचन किया है। और इन सारी आधुनिक जीवन की परिस्थितयों से उत्पन्न मानव बोध ही आधुनिक वोध है इस युग के सजग कहानीकार ने बदलते मूल्यों के साथ भोगे हुये यथार्थ को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

२- <u>ऐतिहासिक परिदृश्य और आधुनिकताः-</u> आज का कथाकार मनुष्य के चेतना प्रवाह में निमन्जित होकर यथार्थ का अनवेषण कर रहा है। यह तथ्य कम आश्चर्यजनक नही है, कि हिन्दी का कथा साहित्य जो किस्सा, कहानी के दौर से गुजर रहा था वह आधुनिकताबोधीय सापेक्षता को लेकर आज सीना तान कर खड़ा है। आज की हिन्दी कहानी की अपनी रचना सापेक्षता में जिस विन्दु पर रेखांकित है, वह बिन्दु कहानी की विकास यात्रा का अगला पड़ाव न होकर एक और शुरूआत है। इस यात्रा में जिस रास्तों से होकर वह आज गुजरी है वे नये होने के साथ-साथ वे उसके अपने खोजे हुये है। इसलिये किसी भी बिन्दु पर खड़े होकर कहानी का इतिहास नही लिखा जाता यह बात बिल्कुल ही सटीक है, कि जहां ऐतिहासिक परिदृश्यों में कहानी विधा ने आदर्श के ताने बाने की शुरूआत की थी वहां आज वही विधा रचनाधर्मिता को ईमानदारी से आत्मसात करते हुये जीवन, समाज, परिवेश से स्वतः ही जुड़ गयी है । प्रमाण सापेक्ष वास्तविकता और प्रमाण निरपेक्ष जीवन दृष्टि ये दो ऐसे प्रसंग रहे है जिनके बीच कथा रचना टकराती रहती है। डॉ० धनंजय ने लिखा है -,,इस बात को तब आसानी से समझा जा सकता है जब इस वैशिष्टय को भी ध्यान में रखा जाये कि आज की हिन्दी कहानी समसामयिक आनिवार्यताओं के बीच से उद्भूत होकर उन्ही के साथ साथ कमशः बढती गयी है....................स्पष्ट है कि इसका उन्मेष उसी

1.मेरी प्रिय कहानियां, पृष्ठ 79 2.मत छुओ, पृष्ठ 60
3.मन्नू भन्डारी की श्रेष्ठ कहानियां, पृष्ठ 43

चरम सीमा तक जाता है जिस सीमा तक ऐतिहासिक परिदृश्य अन्ततोगत्वा सपाट सरल पृष्ठभूमि बन जाता है। परिवेश की ऐतिहासिकता कहानी की रचनात्मकता को ग्राहता के स्तर तक लाती है, यह ऐतिहासिकता उसकी केन्द्रिय स्थिति को पुष्ट तथा कला शिल्प को समृद्ध करती है ?

आजादी के वाद का नवलेखन एक और आधुनिकता को एक दृष्टि के रूप में गहराई प्रदान करता है, तो दूसरी और सृजनात्मक साहित्य को घुलनशील वनाता रहा हैं। आधुनिकता का विवेचन जिस प्रार्थमिक एंव मुख्य समस्या के रूप में उभरता है वह उसका विकल्पात्मक स्वभाव है। और यह उसकी अनिवार्य निर्मित है। आधुनिकता कतिपय परिदृश्यों को साथ लेकर एक ऐतिहासिक दौर से गुजरी है और आज भी जारी है उसकी पहचान उतरते चढते, गिरते-पड़ते, अनेक पहलुओं से की गई है तभी तो डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने इसे ऐतिहासिक अनिरन्तरता कहा है[2]: निर्विवाद सत्य है कि न तो आधुनिकता को एक दृष्टि के रूप में अर्जित किया जा सकता है और न उसे नपे तुले शब्दों में ही कहा जा सकता है। उसमें तो टूटते विश्वास और वढते चरण सभी समाहार हो जाते हैं। यह एक ऐसा वोध है जो टिकने या रमने की छूट नहीं देता है। जो इससे छूट जाना चाहता वह सही अर्थो में आधुनिक नही हो सकता इसे कही टूटते बनते सम्बन्धों से स्पष्ट किया जाता है तो कही अन्तर्विरोधोंकी पहचान वताया जाता है। आलोचक आधुनिकता को समझने के लिये भीतर व वाह्य वैयक्तिक परिवेशों का आंकलन करता है और कहता है कि इसमें एक और वैयक्तिकता है तो दूसरी ओर समाजिकता है, एक ओर नैराश्य है तो दूसरी ओर जीवन का यथार्थ भाष्य है एक ओर मानव नियति का अहसास तो दूसरी ओर आत्म संघर्ष की विकट स्थिति है। आधुनिकता अपने अनेक जटिल सन्दर्भो में अनूठी और विलक्षण है। आज आधुनिकता की प्रवृत्ति ने ऐसी परिवर्तनीय दिशा का निर्धारण किया है जो पारिवारिक सामाजिक और बिगड़तें सम्बन्धों को अपने कंधों पर ढोती जा रही हैं। ऐसा कहने में भी कोई हिचक नही है कि आधुनिकता की वजह से जीवनगत इतिहास का पल्लवन हुआ है। १९ वीं शताब्दी में सामाजिक परिवेश में परिवर्तन हुआ। नयें औद्योगिक नगरों की नींव पड़ी। आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन हुए जिससे जनता की विचारधारा भी प्रभावित हुई। दूसरी ओर समानता प्रचारक शिक्षा पद्धति ने जनमानस को प्रभावित किया, जिससे समाजिक परिवर्तन होने लगे। यह परिवर्तन व्यक्ति और समाज ईश्वर और व्यक्ति, पुरूष और स्त्री, मालिक और नौकर के सम्बन्धों में विशेष रूप से देखा गया। इतिहास, दर्शन की व्याख्या अव मात्र रोमांटिक नहीं रही। अपितु इसका परीक्षण वैज्ञानिक एवं कान्तिकारी दृष्टि से किया गया; इतिहास की दृष्टि से नहीं। व्याख्या करने वाले दार्शनिकों में हरवर्ट स्पेन्सर, मार्क्स, जान स्टर्ट, मिल, चार्ल्स डारविन आदि मुख्य है। बहुत ही स्पष्ट है, कि ऐतिहासिक परिदृश्यों में मनुष्य के अस्तित्व के लिये विचारकों ने बार-बार ध्यान दिया है। डॉ० शिवप्रसाद सिंह का मत है- "आधुनिक कल्याणकारी शासन के विशाल मशीनी संयंत्र में मनुष्य मामूली वन चुका है[3] व्यापक पैमाने पर मनुष्य के हाथों का काम छीन लिया गया है। तकनीकी पद्धति हमारे जीवन को इतना प्रभावित करती चली जा रही है। कि उसके आभाव में कदम आगें बढ़ाना नहीं चाहते।

१ समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि पृष्ठ११ २ आधुनिकता और हिन्दी साहित्य पृष्ठ १९
३ आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद पृष्ठ ७१

तकनीकी के प्रभाव से मनुष्य के रहन-सहन, तौर-तरीके और सम्बन्धों मे ही परिवर्तन नहीं आया बल्कि तकनीकी ने साहित्य, दर्शन, संगीत, चित्रकला सभी को परिवर्तित कर के रख दिया है। इस प्रकार मशीनी सभ्यता ने जीवन और जगत में विषमता और अलगाव भर दिया है। कुछ एक प्रचारक इन अलगाववादी पद्धतियों के बीच भी अपनी अवधारणा अलग रखते है। उनके मतानुसार प्रत्येक युग जिसमें परम्परागत धारणाओं और मूल्यों के प्रति विद्रोह हुआ और नये मूल्यों की स्थापना हुई, अपने पूर्ववर्ती युग की तुलना में आधुनिक ही हुआ है। ऐतिहासिक परिदृश्यों में आधुनिकता को समझनें के लिए कह सकते है कि केवल आज का युग ही आधुनिक नहीं है, इससें पूर्व भी आधुनिक युग और आधुनिक मानव हुए है। डॉ० रमेश कुन्तल मेघ का कथन विचारणीय है -आधुनिक होना केवल आधुनिक मनुष्य का ही एकाधिकार नहीं है। लगभग सभी कालों में आधुनिक मनुष्य (अर्जुन, कौटिल्य, कबीर) भी हुए हैं और इससे पहले भी आधुनिक युगों की उपज हुई है।[1] जब-जब पवित्र आस्था की चेतना को तार्किक चेतना के विवेक ने अपदस्थ किया है, तब-तब आधुनिकता की झुंझलाहट हुई है।

प्रागैतिहासिक काल में बुद्धमत ने अपने समय की सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासो का विरोध किया ।

बुद्धमत का काल अपने पूर्ववर्ती काल की अपेक्षा निश्चय ही आधुनिक रहा होगा। यह अलग बात है कि आज के संदर्भ में वह पुराना पड़ गया हो कबीर ने अपनी परम्परा के विरूध विरोध किया और एक नये जीवन दर्शन को सामने रखा।

२० वीं शताब्दी, १९ वीं शताब्दी की अपेक्षा आधुनिक ही है, लेकिन इस गतिमान आधुनिकता बोध को सभी विचारक एक जैसा ही नहीं मानते। इस वर्ग में उन विद्वानो का विशेष योग है, जो आधुनिकता को आधुनिक युग की देन ही स्वीकार करते हैं ।

आधुनिकता को सनातन मानने वाले विद्वानों का विरोध करते हुए डॉ० लक्ष्मीकान्त वर्मा ने लिखा है- जो लोग यह मानते है कि प्रत्येक युग आधुनिक रहा है,- शायद वे 'आधुनिक' का नितान्त चलाऊ अर्थ समझते है।[2]

यदि पिछले युगों की मूल चेतना पर गहराई से विचार किया जाये तो प्रतीत होता है कि प्रत्येक देश की जीवनगत संबंधी तार्किक दृष्टि भिन्न भिन्न रही है।

आज वैज्ञानिक अन्वेषणो का संसार है, जिसे सभी देश समान रूप से आगे पीछे अपना रहे हैं; परन्तु मानव मूल्यों और सामाजिक जीवन संबंधी विचारधाराओं में तालमेल नही हैं।

खास तौर पर दो विचारधाराएं पूरी दुनियां में प्रवाहित है (१) सामन्तवादी विचारधारा (२)समाजवादी विचारधारा।

सामन्तवादी विचारधारा व्यक्ति की स्वतंत्रता को सामाज सापेक्ष मानकर व्यक्ति के

१ आधुनिकता और आधुनिकीकरण, पृष्ठ ५६ २ नये प्रतिमान पुराने निष्कर्ष,पृष्ठ३८

स्वतंत्र अस्तित्व का हनन करती है और इधर साम्राज्यवादी देश समाजवादी विचारधारा का विरोध इस विचार पर करते है कि इसके अर्न्तगत मनुष्य का अस्तित्व मशीन में पुर्जे की भांति होता है। इस प्रकार आज विश्व में एक ओर व्यक्ति स्वातंत्र्य और प्रजातांत्रिक अधिकारों का स्वर प्रधान हो रहा है तो दूसरी ओर समाजवाद और राष्ट्रवाद का।

प्रत्येक देश की आधुनिकता संबंधी दृष्टि अपनी है। अगर इनमें समानता है तो केवल एक ही है, वह है वैज्ञानिक दृष्टि, जो विश्व को निरन्तर सत्य के आयामों के अन्वेषण की ओर उत्साहित करती है और मानव मूल्यों को निरन्तर गतिशीलता प्रदान करती है। आधुनिकता के मूल्य में वैज्ञानिक जीवन दृष्टि उसे कहते है जो समसामयिक जीवन को उसके गति में ग्रहण करें।''[1] साहित्य के सन्दर्भ में आधुनिकता का अर्थ तो जुड़ा ही है, साथ ही साथ कलागत प्रभाव को भी देखा जा सकता है। डॉ० गंगा प्रसाद का विचार है- चिन्तन का कला पर प्रभाव या कला का चिन्तन पर प्रभाव ये दोनों बाते अन्योन्याश्रित है। ~~यूरोपीय कला आन्दोलन~~ यदि यूरोपीय कला आन्दोलन यदि चिन्तन धाराओं को प्रभावित करता है, तो भारत में मोक्ष के चिन्तन ने विविध कलाओं पर भी प्रभाव डाला है। आधुनिक समय में आकर प्रत्येक चिन्तन धारा को जिस वैज्ञानिक दृष्टि से बनाया गया है, वह वैज्ञानिक दृष्टि वस्तुतः चिन्तन की पद्धति कही जा सकती है। यह विचित्र तथ्य है कि आधुनिकता चिन्तन का कोई नियत अनुशासन नही है। और वह अनेक प्रकार से चिन्तन पद्धति की एकरूपता का विनियोजन करती है। आधुनिकता का ऐतिहासिक परिदृश्य साहित्य सृजन की सम्पूर्ण प्रक्रिया के साथ है। साहित्य जीवन से प्रभावित होता है और जीवन पर परिवेशजन्य परिस्थितियों, घटनाओं एवं तथ्यों का प्रभाव पडता है। तथ्य जगत के अन्तर्गत सारा मानविक व्यापार प्रभावित होता है। वस्तुतः मानवीय संवेदना का सम्बंध अन्तर्मन के सत्यों से है। इस रूप में मानवीय संवेदना बाह्य परिस्थितियों, तथ्यों तथा वैज्ञानिक अविष्कारों से अवश्य प्रभावित होती है। इससे जीवन मूल्य परिवर्तित होते है तथा नयें जीवन मूल्यों का निर्माण होता है और मनुष्य का रागबोध, सौन्दर्य बोध प्रभावित होता चलता है। मानवीय संवेदना नवीन तथ्यों को समेटने के अनन्तर पुरानी संवेदनाओं से संदिग्ध होती रहती है और मूल्यों का सही बोध सृजक को तत्कालीन जीवन सन्दर्भो से प्राप्त होता है। डॉ० रामदरश मिश्र ने लिखा है - "बहुत मर्यादायें", मूल्य समानतायें किसी युग मे आकर पुरानी पड़ जाती है, सारहीन सिद्ध हो जाती है, फिर नये मूल्यों की खोज करती है। दर्शन, मूल्य-बोध आदि की नवीनता साहित्य में उभरती है, किन्तु साहित्य संवेदना के माध्यम से प्राचीन और नवीन को एक श्रृंखला मे बांधे रखता है।''[3]

१.आधुनिकता और हिन्दी कहानी(डा० इन्दनाथ मदान) पृष्ठ १८४
२.आधुनिकता साहित्य के सन्दर्भ में, पृष्ठ ३८
३ आज का हिन्दी साहित्य- संवेदना और दृष्टि पृष्ठ २३

आधुनिकता बोध का अर्थ केवल वैज्ञानिक उपलब्धियों से ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक, बदलते मनोविज्ञान की दृष्टि से है। उदाहरण के लिये आज मानव वैज्ञानिक उपलब्धियों के सहयोग से चांद और मंगल ग्रह तक पदार्पण कर चुका है और यहां पर जीवन की खोज कर रहा है।

यदि कोई रचनाकार इन खोजो से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर कविता या कहानी की रचना करे तो वह रचना विषय-बोध के स्तर पर न कविता है और न कहानी क्योंकि इन खोजो से प्राप्त तथ्य उसके जीवन का अभिन्न अंग नही बन सकें। इनके साथ इनका सम्बन्ध स्थापित नही हो पाया। वैज्ञानिक उपलब्धियों का बोध वैज्ञानिकों के लिए अपने क्षेत्र का आधुनिक बोध हो सकता है परन्तु रचनाकार का आधुनिक बोध यह तब तक नही हो सकता जब तक कि उसके जीवन के सम्पृक्त होकर उसके अनुभव का बोध नहीं बनता और उसकी संवेदना को प्रभावित नही करता।

समकालीन साहित्य बदलते मूल्यों के साथ ऐतिहासिक परिदृश्यों को झुठला नही सकता इसलिए समकालीन साहित्य में मूल्यों के सम्बन्ध मे अराजकता की स्थिति के प्रति हताशा और कटुता की झलक मिलती है। आधुनिकता के मध्यकालीन धार्मिक मूल्यों को विश्रृंखलन कर जिन भौतिकतावादी जीवन मूल्यों की स्थापना की वे सही रूप में पनप नही सके। ये मूल्य धनी वर्ग के भोग विलास और स्वार्थ सिद्धि का साधन बन गये है हमने आधुनिक वैज्ञानिक उपलब्धियों को तो अपना लिया परन्तु अपनी चेतना में आधुनिक नही हो सकें है। ऊपर से आधुनिक लगने वाले लोग अन्दर ही अन्दर मध्यकालीन नहीं हो सके है। ऊपर से आधुनिक लगने वाले लोग अन्दर से मध्यकालीन रूढियों से ग्रस्त है और दोहरी जिन्दगी जीने को विवश है ये अवसरवादी लोग आगे आने पर धर्म की ओट लेते है और जब चाहते है तब धर्म का मुखौटा हटा कर आधुनिक हो जाते है। समकालीन साहित्यकार नये मूल्यों की स्थापना नही कर रहा है अपितु समकालीन जीवन की विसंगतियों को उद्घाटित कर कर रहा है ऐसे हालात में जब परिस्थितियां तेजी के साथ बदलाव ले रही है। और मानव मूल्य भी उसी तेजी से टूट रहे है, साहित्यकार और कर भी क्या सकता है ? कदाचित वह विघटन की प्रक्रिया को सामायिक मानकर इससे उबरने को लालायित है, इसलिए आदर्शो की विसंगतियों के उद्घाटन द्वारा सामाजिक यथार्थ को उसके सम्पूर्ण परिवेश में पाठक के समक्ष प्रस्तुत कर रहा है।

3- बदलते सन्दर्भ और आधुनिकता बोधः- स्वतंत्रयोत्तर भारत में साहित्य के बदलते प्रतिमान इस तथ्य की ओर संकेत करते है कि विज्ञान और समाज ने सारे मानदण्ड ही बदल दिये कहा जाता है, ''यांत्रिकी की इस निविड़ वन में सतत् वेगमय जीवन की अवकाशहीनता, निरर्थकता, अजनबीपन, संत्रास, घुटन,

मृत्युबोध और अनेक कुण्ठाऐं तथा विकृतियों में जन्म ले रही है"[१]

सामाजिक यथार्थ की गहराइयों की सच्ची पहचान स्वतांत्रयोत्तर साहित्य में उभरकर सामने लेकर सृजनशीलता को जो नये आयाम दिये है। उनमें निश्चित ही उद्भावनाओं का परिवेशगत चित्रण हुआ है। राजनीतिज्ञ, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पारिवारिक जीवन सत्य को पहचानने की इन कहानियों में विशेषता है। स्वतंत्रयोत्तर काल में भारतीय जीवन की पद्धतियों का अमूल-चूल परिवर्तन देखा गया है। कहानीकार मानव जीवन से जुड़कर एक विशाल चित्रपट बुनना चाहते है। समष्टिगत जीवन चिन्तन के आधार पर वे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को उपलब्धि मानते हैं। मानवमन जीवन की पूर्ण समस्याओं से घिरा हुआ है, इसलिये सामाजिक दायित्वबोध के निर्वाह की उसमें भावना नहीं हैं। आज कहानी में मनुष्य के उसके यथार्थ परिवेश में देखने और चित्रित करने के लिये प्रयत्नशील हैं। उनमे समष्टिगत चिन्तन की अभिव्यक्ति है और परम्परा के प्रति विद्रोह है। स्वतंत्रयोत्तर कथाकार बदलते परिप्रेक्ष्य में सेक्स के छिछले से छिछले स्तर को उठाने में संकोच नहीं करते। विभिन्न प्रतीकों एवं प्रतिकियाओं के माध्यम से स्त्रैव भावना को इन कहानीकारों ने कहानियों मे उद्भावित किया है। नारियों में आज स्वतंन्त्र चेतना जाग्रत हुई है। अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के रक्षण के लिये उन्होंने पुरूष के अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठायी और वैयक्तिक, सामाजिक तथा राजनीतिक स्तर पर समानता की माँग की युग-युग से उपेक्षित नारी ने अपने अहम की पुष्टि के लिये पुरूष के समान ही मैत्री भाव को स्वीकार किया है। स्थिति यहाँ तक आ गयी है कि युवक, युवतियों से जब प्रेम सम्बन्धी इच्छा प्रकट करते हैं तो युवतियां उनके सम्बन्ध को पिक्चर हाउस, पार्क तक ले जाने मे नहीं हिचकती। आज की कहानी में भले ही स्त्री-पुरूष के लिये पूरक है डॉ० सीताराम जयसवाल का कथन विचारणीय है "पुरूष और स्त्री में समानता सम्भव है, क्योकि दोनो की आंगिक और मनोवैज्ञानिक संरचना में भेद है, जिससे स्त्री और पुरूष के स्वभाव में भी भेद होता है। वास्तव में स्त्री पुरूष समान न होकर एक दूसरे के पूरक है"[२] बदलते मूल्यों के साथ आधुनिकता परिपार्श्व में स्त्रैण भावना का जिस अबोध गति से संक्रमण हुआ है, उससे नैतिक मूल्यों और सामाजिक मर्यादाओं का बाँध टूटा है। स्त्री वर्ग में जहाँ क्रान्ति चेतना से स्वस्थ परिणाम निकले है वहाँ परम्परा, नैतिक और सामाजिक मूल्यों का ह्रास हुआ। आज की नारी अपनी भावना यें दमन के त्याग के आवरण में छिपाने के लिये तैयार नहीं है, उसे हर स्थिति में परम्परागत नारी की तरह धर्म का अनुसरण करना और जल-जल कर पुरूष के प्रति मंगल कामना करके जीवन काटना अभीष्ट नहीं हैं। नारी उत्क्रान्ति ने आज स्वेच्छाधारी नारियों का दामन पकड़ रखा है, जिससे मानव जीवन का स्वस्थ विकास अवरूद्ध हो गया है। रमेश चन्द्र शाह का यह कथन उपयुक्त ही हैं -

१.हिन्दी कहानी-दो दशक यात्रा,पृष्ठ ५६
२.मनोविज्ञान की रूपरेखा, पृष्ठ ४६६
३.समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि, पृष्ठ १८५

कहानी में रूपायित आज की व्यक्तिमता गहराइयों से विचक्षणीय और स्त्रैण भावना से परिणित है। यथार्थ की किसी एक परिभाषा पर न टिक सकने की व्यग्रता दिलो-दिमाग को वेचैन किये रहती है। बौद्धिक जीवाणुओं को अनवरत सकियता चेतना पर स्नायुओं पर रेंगता हुआ एक संकमक भाव है। अपनी कलात्मक मानसिक चेतना-संवेदना को इन संकमको के वीच निष्काम छोड़ दिया जाये तो उपयुक्त ही हैं।''[1]

आज के रचनाशील सन्दर्भ स्त्रैण भाव से अधिक जूझते जा रहे हैं। कहानीकार अन्तर्विरोधों भावनाओं से घिरा रह कर यह सव लिखने को वाध्य रह गया है। आज कहानीकार जिस ऐन्द्रिक जालिक वास्तविकता के भीतर कहानियों का जो रूप दे रहा है। उसमे विवशता के साथ उसकी आत्मकेन्द्रित भावना ही कार्य कर रही है सामाजिक व्यवस्था के भीतर असंतोष की मनःस्थितियाँ जितनी स्पष्ट है उनसे अधिक स्पष्ट्ता की मांग आज स्त्रैव भावना से प्रयुक्त कहानी में की जा रही है। अधिकाशतः कहानियाँ एक व्यापक अनिश्चय के भीतर लिखी आत्मकथाएं हैं। कथाकार अपनी अकथ व्यथाओं को भुलाने के लिए स्त्रैण भावना से संवन्ध जोड़ देना चाहता हैं। डॉ० भगवानदास वर्मा का मत है- ''जहाँ जिन्दगी के वस्तुसत्य अन्यभूति की वास्तविकता और विषय की तथ्यात्मकता में गौण हो जाते हैं तथा वातावरण के साथ उत्कट जीवन जीने का राग वनकर प्रकट होती है''[2]

नई कहानी ने स्त्री पुरुष के अन्तरंग में झांकने का प्रयास किया है आज की फैशन परस्ती और सेक्स की उद्दामता ने नये-नये लक्ष्य प्रमाता वर्ग के सामने प्रस्तुत किये हैं।

परिणामतः काम प्रसंग अनुभूति की सच्ची अभिव्यक्ति पाते जा रहे हैं। स्त्री-पुरुष के वदलते संबंधो को लेकर आज कहानी जगत में नया फैशन शुरू हो गया है।

एक नये कहानीकार ने परिगणना करते हुए यह स्पष्ट किया है कि ''तमाम दुनियां की भाषा को कुल मिलाकर दो स्त्री-पुरुषों की वातचीत कहा जा सकता है, जो साहित्य में उनके सम्बंधो के मुताबिक बदलती रहती है।''२

नई कहानियों में इस प्रकार स्त्री-पुरुषों के संवंधों को व्याख्यायित करने का फैशन आया है। नारी-पुरुष के वनते विगड़ते रिश्ते उनसे निभिन्न जीवनगत अवधारणा को इनमे उभारा गया है। पिछले २५ वर्षो में प्रणय सम्वन्ध का फैशन कहानियों में इतना अधिक उभरा है कि वासनात्मक प्रेम लोकप्रिय प्रेम वन गया है। अव प्रेम सम्वन्धों मे स्वार्थ, वासना, उद्देश्य तथा अपने-अपने व्यक्तियों के परस्पर उन्मूलन की सफलता या असफलता ही परिलक्षित है इन कहानियों में वर्णित प्रणय से अभिप्राय उस सामाजिक परिवर्तन से है जिसमे नारी इतनी आधुनिक और प्रगतिशील वन गयी है

१. कहानी की संवेदनशीलता-सिद्धान्त और प्रयोग, पृष्ठ २४५
२. स्वतंत्रयोत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन, पृष्ठ ८४

कि नारियों को अफसरों, मन्त्रियों और दूसरे अधिकार प्राप्त लोगों से प्रेम करने में और नारीत्व बेचने में स्वार्थपूर्ति का साधन बनाया गया हैं।
वदलते फैशन परस्त प्रणयगाथा की कहानियां आज कहानीकारों ने वहुत गढ़ी है और ऐसा लगता है कि बदलते मूल्यो में भी प्रेम अपनी जीवन्तता वनाये हुए है। ''प्रेम अव भी एक जीवित शव्द है और उसे सुनते ही अव भी हमारी धड़कन में एक और धड़कन सुनाई पड़ जाती है, अन्तर केवल इतना ही है कि अव वह भावुकता से भरा हुआ एक पीला, वीमार और एकांगी शव्द नहीं है वल्कि वह एक भयानक मगर मनुष्य के सवसे कीमती अनुभव के रूप में स्पष्ट होता जा रहा है''[1]

आज के फैशन के अनुरूप ही समकालीन कहानीकार जीवन के लगभग सभी संवदेनशील चित्रों के प्रति उन्मुख होता जा रहा है। वह कहानी के संवेदन के केन्द्र में इन दूरियों को भली-भॉति पहचानता है। समकालीन फैशनपरस्त स्थिति में केवल प्रवाह नहीं है, उनमे द्वन्द्वात्मक रूप में वह काल के संन्दर्भ को जन्म देती है। इसलिए आज की कहानियों में रचना संदर्भ का महत्व वढ़ता जा रहा है ये कहानियां मध्यवर्ग की जीवन संकुलिता के पूरे क्षेत्र को घेर कर खड़ी है। उनकी पार्श्व योजना में किसी न किसी रूप में आज का क्षण बोध स्पष्ट होता जा रहा है। वस्तुतः कहानी का बदलाव जीवन प्रकिया का ही वदलाव है। जीवन का संकट चूंकि अव दूसरी तरह का है, इसीलिए कहानी की केन्द्रीय स्थिति तथा उसकी पद्धति में वदलाव आया है। वदले हुए परिवेश तथा नयी संवेदना का मतलव आज की कहानी को नये सिरे से निकालना पड़ा है। फैशन परस्ती की तात्कालिकता का प्रभाव जिन सन्दर्भो में रचनाकार पर पड़ी है। कहानीकार ने इस सार्थक और अनिवार्य वदलाव को अपने चेतना स्तरों में घटित किया है। तात्कालिक सार्थकता और तात्कालिक सत्य निश्चित सीमा तक रचनाकार की मदद करते है। डॉ० वार्ष्णेय ने आधुनिकता बोधीय बदलाव पर टिप्पणी करते हुए नयी कहानियों का आंकलन किया है- ''किसी पुराने जमे जमाये कहानीकार ने अपनी उभरती हुई काम पिपासा को शाब्दिक पीड़ा में वांधने के लिए ७ कहानियों की रचना कर दी,अभिव्यक्ति के लिये उसने टेढ़े-मेढ़े प्रतीको का सहारा लिया और संग्रह का नामकरण भी प्रतीतात्मक किया।, ''बस एक नया फैसंन'' ,[2]

आज का कहानीकार महानगरीय परिवेश से जूझ रहा है स्वतान्त्रयोत्तर भारत मे परिवर्तन का दौर अपेक्षाकृत नगरों में तेजी से हुआ। आज का कहानीकार उसी परिवर्तित दौड़ में नगरों का प्रवासीय बना है। इसलिए लगभग सभी स्वतांत्रयोत्तर कहानीकारों ने बदलते नगरीय परिवेश को अपनी कहानी का विषय वनाया हैं। उन्होने भावनात्मक सम्बन्धों में द्वन्द्व, यथार्थ की अपेक्षा नगरीय संदर्भो में सम्वंधों, स्थितियों में तनाव और त्रास को तरजीह दी है। अक्सर यह होता है कि आज का कहानीकार

१-नई कहानी -दिशा और संम्भावना,पृष्ठ२३९
२-हिन्दी कहानी- बदलते प्रतिमान,पृष्ठ १४१

महानगर का एक कल्पित संसार रच लेता है और उस संसार में कस्बाई बोध तथा ग्राम्य संस्कार सभी प्रबल होते रहते हैं। बात यह है कि शहर में आया हुआ व्यक्ति गांव मे पुनः पहुचने पर दिखावे को प्रमुखता देने लगता है उसमें नगर बोध का अहं शक्ति सम्पन्न हो उठता है। नगर में रहने वाला व्यक्ति पग-पग पर भय से आक्रान्त है। भय आज नगर के यांत्रिक जीवन को उजागर करता है, भय हमें एक जडता की स्थिति पर पहुंचा देता है, जिससे मानवीय संवेदनायें तेजी से भरती जा रही है। किसी लावारिस लाश को खरीदकर उसे अपना निकटतम सम्बन्धी बताकर उसके कफन के लिए किस प्रकार पीट-पीट कर पैसे मांगे जाते है''[1]

महानगरीय जिन्दगी पर पिछले दो दशकों में ढेर सारी रचनायें लिखी गयी है शहर में रह रहे व्यक्ति की चेतना पर दोहरे-तिहरे दवाव है महानगर का जीवन निर्वैयक्तिक है। विशाल भीड़ में ठहरा हुआ व्यक्ति अपने को अकेला महसूस करता है। सामाजिकता की भिन्नता के साथ व्यक्ति मनोजन्य प्रतिक्रियाओं में भी अन्तर पाता है, इसलिए महानगर, नगर, कस्वा के विविध रूपों में आज का कहानीकार नये रूप में प्रभावित किया है। आज का सौ रूपया वेतन वाला व्यक्ति महानगर में रहकर जीवन स्तर में अभावग्रस्त कहकर स्वयं पर हंसता है महानगरीय वातावरण नई सभ्यता के केन्द्र में बोझिल होते जा रहे है। वहां के जीवन में अत्यन्त दुःखद गति है, इसलिए आत्मीयता भरी पहचान के लिए तरस रहा है । आस पास के सैकड़ो लोग गुजरते है पर उसे कोई नही पहचानता । इस प्रकार के चेतन स्तर को अवचेतन की दिशा में ढूंढने का प्रयास नया कहानीकार करता जा रहा है। स्वतंत्र भारत वस्तु स्थिति में नये आकर्षण से बंधता जा रहा है। परिणामतः राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों में एक दिलचस्प परिवर्तन हुआ चूंकि साहित्य परिस्थितियों से जुड़ा हुआ है, इसलिए हिन्दी कहानी मे आज का कहानीकार जीवन राग के प्रति पूर्ण आशक्त है वह नयेपन के कारण रागवश: पीड़ा अथवा संवेदना को आत्मनिष्ठ बनाता हुआ जा रहा है वर्तमान में अस्तित्व बोध की खोज नया मुहावरा प्रकट हुयी है इस स्वभाविकता में नया शब्द स्वतः ही कहानी के साथ जुड़ता जा रहा है। समकालीन कहानी में नया मुहावरा सामाजिक स्थितियों और समस्याओं को ऐतिहासिक अर्थ में समझने के लिए प्रकट हुआ है। साठोत्तरी कहानियों में नया मुहावरा उपयुक्त हो जाने से एक विशेष बात दिखने में आ रही है, वह इनमें सामाजिक स्थिति और मानव स्थिति का परस्पर मिलते जाना। यह स्थिति आज के युग में कहानी का केन्द्र बिन्दु वन गयी है। आज के व्यक्ति में कोमलता अनुभूतियां प्रायः लुप्त हो गयी है। इसलिए कहानी, अकहानी, सचेतन तथा समांतर कहानी वनकर अवतरित हुयी है। इसके बीच वसा हुआ कथ्यात्मक लगाव, सद्भाव, प्रेम और सहिष्णुता के बदलते प्रतिरूपों में निरूपित हो रहा है।[2]

1– हिन्दी की कहानी–दो दशक यात्रा–पृष्ठ 144 2- हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान,पृष्ठ 141

कमलेश्वर लिखते है- ''प्रेम जैसा शब्द इन बदली हुयी परिस्थितियों में प्रेम की अनुभूति नही देता। पिता आदरणीय और अनुभवी व्यक्ति का प्रतीक नहीं रहा। परम्परा गौरव की वस्तु नही रही। विश्वास अर्थहीन हो गया बहन-और भाई का रिश्ता राखी का ही रह गया। आधुनिक औरत का समर्पण का सम्बन्ध. ही बदल गया।''[1]

आधुनिक युग एक संक्रमणधारा है, जिसमें राजनैतिक प्रयोग धर्मिता, यांत्रिक सभ्यता, बौद्धिक जटिलता, राष्ट्रीयता, अर्न्तराष्ट्रीयता आदि की उहात्मक स्थितियां एक साथ जुड़ी रहती है। आज के प्रजातंत्र ने नेता परस्ती के संदर्भ मानव मन में गूंथ दिये। फलतः जीवन परिवेशगत उन्मेष में राजनैतिक धुरी बन गया है स्वतांत्रयोत्तर भारत के सामाजिक परिवर्तन में राजनैतिक परिवेश का महत्वपूर्ण गुण है। स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर अब तक इस राजनैतिक परिवेश को आधार बनाकर इस क्षेत्र में पाये परिवर्तनों को स्वतंत्रयोत्तर कहानीकारों ने उजागर करने का प्रयास किया है। कहा गया है-''प्रजातंत्रीय संस्कारों का प्रभाव अन्ततः राजनीतिक संरचना तक ही सीमित नही है। पारिवारिक और सामाजिक संरचनाओं को भी उन्होने प्रभावित किया है। आज पुत्र अपने पिता से अथवा कर्मचारी अपने मालिक से दोस्ताना सम्बन्ध की अपेक्षा करता है। साठोत्तरी कहानीकार देश की प्रजातंत्रीय संरचना के अनुकूल बदले और बदलते सम्बन्धों को अति सच्चाई से परिभाषित करने को उन्मुख हुआ है।''२

स्वतांत्रयोत्तर हिन्दी कहानीकारों ने समाज की विषम परिस्थितियों के द्वारा मनुष्य के मस्तिष्क में अन्तर्द्वन्द्व अवभूत उद्भावनाओं को उजागर किया है। व्यक्ति आज भरसक प्रयत्न के पश्चात भी उसे सुलझा नहीं पाता, तब वह आन्दोलन सृष्टि पर विश्वास करके अन्य माध्यमों में अपने परिवार की आवश्यक सामग्री जुटाने का प्रयास करता है। क्रान्तिकारी विचारणा बदलते परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता बोधीय बन गयी है। अज्ञेय ने क्रान्ति को आन्दोलन सुधार न बताते हुए केवल शासन प्रणाली की एक प्रकिया बताया। यह तो घातक विनाशकारी भयंकर विस्फोट है, इसका न आदर्श है न ध्येय''? आज की कहानियों में इसी प्रकार के आन्दोलित गत्यात्मक जीवन का वर्णन होता है। आन्दोलन के लिए हुई विस्फोटात्मक प्रकिया को भी कहानीकारों ने अपना कथ्य बनाया है। साथ ही पुरातन परम्पराओ, धार्मिक विश्वासो एवं राजनैतिक मान्यताओं के प्रति विरोध एवं विद्रोह को साधन रूप में चित्रित करके लक्ष्य निर्धारित किया है। डॉ० सुरेश सिन्हा ने कहा है कि- ''सजग सामाजिक चेतना और आस्था ने जीवन जी सकने की क्षमता और वातावरण के ऊपर उठ सकने की समर्थता ही उन्हें प्रदान की है। नव मानवतावाद एवं आधुनिकता का समिष्टगत आधार पुनः उस नये धरातल पर प्रतिष्ठित करता है जहां उनकी कहानियों में नये मानव मूल्यों, सम्बन्धों एवं प्रगतिशील मापदण्डों की स्थापना विकसित हुयी है।''३

१-नई कहानी की भूमिका,पृष्ठ २०३
२-हिन्दी कहानी की दो दशक यात्रा ,पृष्ठ ७२

आज के परिवेश में नैराश्य एवं अवसाद का वातावरण घुल मिल गया है। जिसे नयी कहानी में नाना कोणों, नाना सन्दर्भों में उठाया है। परिवेश का बलात आरोपण व्यक्ति को नैराश्य की ओर उन्मुख कर रहा है। फलतः व्यक्ति अन्दर ही अन्दर खण्डित होता जा रहा है परिवेश और व्यक्ति के वीच वैषम्य इतना अधिक वढ़ गया है कि वह जिन्दगी को स्वर्ग कहे जाने वाले घर की ओर वढ़ता है तव उसमें घवराहट होती है। और उसकी प्रसन्नता ठिठक जाती है, और कभी-कभी लगता है कि व्यक्ति तथा परिवेश के सभी सन्धि सेतु टूट चुके है और अवसाद में परिणित हो गये है। सचमुच परिवेश की क्षमता व्यक्ति को अवसाद की ओर उन्मुख कर रही है। परिवेश की यह जड़ता व्यक्ति को इतना सम्वेदन शून्य कर देती है कि वह निराश होकर अन्तःमुखी वन जाता है।

नई कहानियों में व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक भावों को समझने की पहल है। शताब्दियों की मानसिक गुलामी ने भारतीय जनता का मानसिक ह्रास करके उसे अवसाद और नैराश्य की ओर ढकेल दिया है। और राजनैतिक दल स्वार्थ के अखाड़े बन गये है। फिर रोजमर्रा से जूझता हुआ व्यक्ति प्रजातांत्रिक देश में क्यों न जूझता रहे। सभी अपने पेट और जीवन की खातिर ठण्ड़े और दरिद्र हो चुके है। राजेन्द्र यादव का मत है कि कहानी विद्या ने आज के सोच सम्वेदना को तो समझाया है विचारणीय है कि -"आज की कहानी व्यक्ति और परिवेश का वह सम्वन्ध क्षण है, जो ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में युग की एक-एक नव्ज छूता है और उसे नाम देने तथा समझने की कोशिश करता है"[1]?

आधुनिकता वोध के साथ वदलता हुआ परिवेश आज एक चिन्तनीय विड़म्वना वन गया है। आधुनिकता एक जीवन्त और गतिशील प्रकिया है, उसको रूढ़िग्रस्त मानसिकता से नही समझा जा सकता है। आधुनिकता को ग्रहण करने और आधुनिक होने के लिये उस कालगत सातत्व के सामानान्तर अर्जित करना होगा, जिसके लिए सहज मानवीय संवेग का होना अनिवार्य है।

<u>४- स्वतांत्रयोत्तर कथा साहित्य के प्रमुख आन्दोलन :-</u> आधुनिक हिन्दी कहानी की कथा चेतना निरंतर बदलती रही है। आज की कहानी उत्तरोत्तर प्रगति परक सृजनशीलता का पूर्ण स्पष्टीकरण है।

आज की कहानी जिस सीमा तक पहुंची है उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि कहानी विद्या उलझे हुए मानव जीवन के साथ सुदूर वोधता का वर्णन करती चलती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ। विचारों की एक नई कान्ति नये उदभावना के साथ जुड़ती चली गयी। परिणामतः पुराने के प्रति उपेक्षा और नये के प्रति आकर्षण का प्रभाव वढ़ता ही चला गया। हिन्दी कथा साहित्य में नयेपन को लेकर काफी विवाद चला और नया विश्लेषण विशेषण के साथ कहानी मे जुड़ गया।

१-विपथगा, पृष्ठ ७३ २-नई कहानी की मूल संवेदना पृष्ठ २२ ३ एक दुनियां समानान्तर पृष्ठ २९

इलाचन्द्र जोशी ने लिखा है कि साहित्य में वैचारिक स्तर पर नये पुराने का संघर्ष हर काल में रहा है। पिछले युगों मे भी कालीदास और भवभूति को अपनी नवीनता पर वल देने के लिए पुरानी प्रवृत्तियों के अन्धकोषकों से जूझना पड़ा था।"[1]? वस्तु स्थिति यह है कि नये कहानीकारो ने नयी अनुभूतियों का अविष्कार किया। फलतः नये-नये प्रयोग प्रतिस्पर्धा के साथ एक होकर मानव निष्ठा का परिचायक वनते जा रहे है आधुनिकता की इस प्रकिया में नये के प्रति सहज आकर्षण था, जिससे प्रतीत होता है कि नवीन और आधुनिकता में पारस्परिक सम्बन्ध भी है, क्योंकि नया अपने गत्यात्मक रूप से परम्परा को स्वीकारता हुआ आगे बढ़ता है, बदलती हुयी परिस्थितियों से उत्पन्न संवेदना को वह समेटता हुआ चलता है। नयी कहानी ने जब जीते जागते व्यक्तित्व को अपने सम्पूर्ण परिवेश में प्रस्तुत किया तो स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि बदलती परिस्थितियों, परिवेश की अनिवार्यता का दवाव नयी कहानियों में था।

डा० नामवर सिंह ने पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के कथाकारों में अन्तर करते हुए स्पष्ट लिखा है- "यह सत्य है कि पुरानी पीढ़ी के अनेक लेखक नये स्वाधीन भारत के सन्दर्भ को पूरी तरह समझने तथा समझकर उसके साथ अपने आपको जोड़ने में असमर्थ रहे है।"-२

सन १९५० के आस पास हिन्दी कहानी में नवीन वोध प्रारम्भ हो गया था। परिवर्तन से उद्‌भुत मानवीय चेतना यथार्थ वोध के अधिक निकट हो चुकी थी। नई कहानी के बदलते परिवेश ने पाठकों को शीघ्र ही अपनी ओर आकृष्ट किया सन १९५० में आकर नयी कहानी सिर और कथ्य की दृष्टि से कहानी से विल्कुल अलग हो गयी। श्री पतिराय लिखते है कि इस अवधि में नयी कहानी ने यह चरितार्थ कर दिया कि हिन्दी कहानी में गतिरोध की बात करना नितान्त भ्रामक है[3]? इस वर्ष की उल्लेखनीय कहानियों में महत्वपूर्ण उपलब्धि की थी विसंगतियों का निरूपण। इन कहानियों में झाँकते हुए पात्र अपने परिवेश की सच्चाई को अपेक्षित मानते गये,[3] आरोपित मान्यताओं से नये कहानीकारों ने विद्रोह किया और ऐतिहासिक परिदृश्य के रूप में व्यक्ति का सम्बन्ध स्थितियों, घटनाओं, विवाद-चर्चाओ, स्तम्भों एंव परिसम्वादों से जुड़ गया। साहित्य में किसी भी विधा का नामकरण आकस्मिक रूप से नहीं होता है। जब कविता को काल विशेष ने नयी कविता कह दिया तो कुछ अन्तराल के बाद कहानी को नयी कहानी कह दिया गया। कथाकार सुरेन्द्र का यह व्यक्तव्य स्पष्ट है -"नई कविता के काफी बाद कहानी चर्चा शुरू हुई। सन् १९५४ और ५५ के पास यह चर्चा तूल पकड़ने लगी। ५६ में इसे नयी कहानी नाम देने की सिफारिश की गई। ५७-५८ तक यह सृजन स्तर पर यह अपना अस्तित्व प्रमाणित करने लगी।[4] कहानी, कल्पना, बिनोद, लहर, ज्ञानोदय आदि पत्रिकाओं ने नयी कहानी की चर्चा और उसके उन्मेष में पर्याप्त योग दिया-२

1—ज्ञानोदय,अक्टूबर 1964 2—कहानी,नई कहानी पृष्ठ 224
3—कहानी जनवरी 1955 4—नई कहानी, दिशा,दशा, संभावनायें (भूमिका)

स्वतंत्रयोत्तर कहानी प्रधानता आचरण के मूल्यों को नकारती चली है। समसामायिक हिन्दी कहानी मे प्रमुख रूप से परम्परागत संज्ञा रूपों के विघटन का स्वर दिखायी देता है। वैयक्तिक मूल्यों की पक्षधरता से नयी कहानी विधा को अकहानी की ओर प्रेरित किया है। परिवेशगत यथार्थ के साथ नयी कहानी विधा कहानी की भूमि पर उतर कर खड़ी हो गयी है। सन् १९६० के वाद के कहानीकारों ने अपेक्षाकृत नये सृंजनात्मक कृतित्व से कहानी को रेखाचित्र, संस्मरण पत्र और डायरी बना दिया।' नये भाव वोध और तथा कथित आत्मिकता के लिये इन कहानीकारों को लगा कि नयी कहानी का संज्ञारूप उनकी छटपटाहट को दूर करने में असमर्थ है और सन् ७० के वाद नयी कहानी को अकहानी की संज्ञा दी गई। गंगा प्रसाद विमल ने इस विधा को स्पष्ट करते हूए लिखा है- ''वस्तुतः मैं जव अकहानी या ऐन्टी कहानी की वात करता हूं,तब मेरा अर्थमेटिक से अवयक्त उस कहानी से होता है जिससे प्रेक्षण के नाम पर स्पष्ट संदेश या वक्तव्य या नही होता अपितु विभिन्न अवयवों, स्थितियों तथा मानसिक संगति के क्षणों में हम उसके अनेक अर्थो को पकड़कर एक समानान्तर कहानी के साथ-साथ अन्य कहानियों के साथ चलते है।''[1]

शिल्प प्रयोग के स्तर पर अकहानी की धारणा गति प्रवृत्ति प्रकाश में आयी। लेखकों ने समकालीन भाषा वैविध्य के अनुभवों को तरासने का प्रयास किया संकेतों, प्रतीकों के प्रतीक आग्रह नहीं वल्कि वाक्य विदिग्धता ही रही।

अधिकता के कारण अकहानियां न तो नयी कहानी के दायित्व का निर्वाह कर सकी और न नये दायित्व के प्रति आत्मसजग ही रही। विचारक का मत है कि इन कथाकारों ने अपने को अलग-अलग दायरों में वन्द कर रखा है और उन्ही के अनुकूल वे कथासृष्टि किया करते हैं । इसीलिए किसी ने दर्शन विशेष से तो किसी ने मनोविज्ञान विशेष से अपने को चिपकाये रखा है''[2] समाज की यथार्थ स्थिति में सचेतन दृष्टि पारदर्शी दृष्टि होती है। सचेतन कलाकार विचार धारा का समर्थन करता हुआ मानवीय विश्वास को छू लिया करता है। महीप सिंह लिखते है-''सचेतन एक दृष्टि है,जिसमें जीवन जिया भी जाता है और जाना भी जाता है । सचेतन दृष्टि जिन्दगी को नकारती नही,स्वीकारती है। सचेतन कथाकार जीवन को समग्र रूप में जीना चाहता है। सन १९५० के वाद हिन्दी की कहानियों में अनास्था का दौर रहा है। इसके वाद सन १९६० तक यथार्थ पर समसायिकता को रोपा गया है और सन १९६० के वाद कलाकारों ने इस यथार्थ को अधिक भोगा है, जिसमें जीवन वोध सचेतना के साथ उजागर हुआ है। संचेतन कहानी में व्यक्ति ओर समाज ने उन अछूती स्थितियों की संवेदनाओं का उद्घाटन किया है। जिनमें मानव मस्तिस्क के भीषण संकट का प्रतीक है।[3]

सातवें दशक में सचेतन कथा का उभरकर सामने आते हैं।

1–हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान पृष्ठ–153 2–लहर,जुलाई 1964

3–हिन्दी कहानी–एक अतरंग परिचय,पृष्ठ–269

संचेतन कहानी यथार्थ परक कहानियों का नया आंदोलन है। इसके कहानी कार मानवता के टूटते, उलझतें मूल्यों, जीवन की ढहती वनती धारणाओ और व्यक्ति समाज की अपराजेय आस्थाओं को वाणी देने के पक्षपाती हैं।

इस प्रकार सचेतन कहानी एक नये परिवेश को ग्रहण करने की ओर प्रयत्नशील है।

चेतना के स्तर के बदलाव की पूर्ति जैसी नई कहानी और अकहानी में है, ठीक वैसी ही सचेतन कहानी में है।

इन कहानियों में आधुनिकता का बोध जीवन के अनुभूत सत्य के रूप में उभरने लगा है।

डाक्टर महीप सिंह का यह मनतव्य स्मरणीय है- "सचेतन कहानी कारों का दृष्टिकोण सापेक्ष व्यक्तित्व और सापेक्ष जनजीवन को देश और काल के साथ संयुक्त रहता है-------------------------------

यह संतुलित दर्शन है, जिसमें प्रत्येक देश काल में क्रांतिकारी साहित्यकार पैदा हुए है।"१

आज की कहानी में नये परिवेश का यह चित्रण समकालीन जीवनधारा की बात कहता है। आज का रचनाकार अपने जीवन अनुभव को एक व्यापक मानवीय अर्थ सें भी जोड़ता है वह सामाजिक और राष्ट्र मूल्यों को जिन परिस्थितियों को जिन सन्दर्भ में अनुभव करता है, उस अनुभूति को सच्चाई के साथ उतारता है। दूधनाथ सिंह का कथन है कि आज का कहानीकार स्थितियों में भागीदारी की नियत के कारण की कहानी की खोज में नहीं भटकता है। उसके सामने मूल समस्या अभिव्यक्ति की सच्चाई की समस्या है"२

सचेतन कहानीकार की चेतना राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियो में हर तरह से [illegible] व्यक्ति की विवशताओं और पीड़ाओं से सम्पृक्त हैं । वह जीवन बोध I की हर स्थिति और यथार्थ के प्रत्येक रूप को स्वीकारता है तथा साहस के साथ उसे अभिव्यक्ति देता है। स्वतन्त्रता के पश्चात् जिस प्रकार समाज बोध विकसित हुआ है। उसी प्रकार हिन्दी कहानियो में सक्रियता दृष्टिगत हुई है। आज की सक्रिय कहानी ईमानदारी की परते पर परते उघाडती हुई वढ़ती चली गई हैं ।

१-उजाले के उल्लू,भूमिका
२-नई धारा,मार्च १९६६

समाज का यथार्थ परिस्थिति मे सक्रिय कहानी का प्रतिबद्ध होना हकीकत हैं। सक्रिय कहानी की यह सार्थकता है कि वह निरन्तर गत्यात्मक जीवन को उकेरती चलती है । राजेन्द्र यादव का यह कथन मान्य है-"आज कहानी निरन्तर अपने को समृद्ध करती रही हैं। वस्तुतः उसके पीछे किसी सुनिश्चित दार्शनिक सिद्धान्त की अपेक्षा बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप एक दृष्टि की तलाश ही अधिक थी, इसीलिए साहित्य की यह प्रवृति अपने को नित्य नया बनाये रखने की प्रक्रिया के रूप में अधिक आयी है"[1]।

सक्रिय कहानी में होने वाले रूपात्मक परिर्वतन विविध है। विषयवस्तु और वाह्य यथार्थ का परिर्वतन तो कहानी के लिए उतना महत्व नही रखना जितनी कि कहानीकार की दृष्टि। अतएव आज का कथाकार सक्रिय जीवन दृष्टि से बंधा हुआ है, जिससे उनमें कही आदर्श और नैतिकता का रूप नही मिलता वरन यथार्थ रूप में भी आज की कहानियों मैं मौन भावनाओं से पीड़ित कृत्रिम परिवेश का निर्माण मिलता है। और ऐसी ही अधिक सक्रिय कहानियॉं लिखी जा रही है सन १९७० के बाद कहानियों में यह प्रवृति अधिक रूप से मुखरित हुई है। ऐसी ही कहानियों का विश्लेषण करतें हुए कमलेश्वर ने लिखा है -"किन स्थितियों को कहांनियो के भोगीं झेल रहे हैं वे स्थितियॉं भी दारूण मानवीय संकट, प्रताणना या अपमान बोध की स्थितियां नही है। एक कथा पुरूष किसी भी केन्द्रीय संकट पूर्ण स्थिति के आरे के नीचे चिरते हुए लोग नही है, वे मात्र रात्रि शय्याओं की मराली चादरे कोने मे दबे हुए गन्दे कपड़ो के लिजलिजे गिलगिले आभास भर है "[2]
सचेतन कहानी के बाद समानान्तर कहानी का आन्दोलन भी विशेष चर्चा का विषय बना रहा है। सक्रिय कहानी में आन्दोलन की कोई वैचारिक पृष्ठभूमि न होने से यह दीर्घजीवी न बन सका और थोडी बहुत चर्चा के साथ ही समाप्त हो लिया सक्रिय कहानी का आन्दोलन नई कहानी के विरोध में ही खड़ा हुआ है। सक्रिय कथागत विचारधाराओं मे विभिन्न विचार धाराओं का समावेश है और यह सब मिश्रण सम्वेदनशीलता को जिन्दगी प्रदान करता है। इन कहानियों में जीवन की बांझ स्थितियों का डरावना चित्रण बहुत हुआ है। सातवें एवं आठवे दशक की कहानियों को समानान्तर कहानी की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। इन दशकों की कहानियां बदले हुए भावलोक की कहानियां है जिनका केन्द्रीय स्वर्ग अतीत एवं भविष्य युक्त होकर वर्तमान में जीने का आग्रह स्वर है। "समान्तर" शब्द का अभिप्राय एक समूचे परिवेश में आरोपित सामायिक अनुशीलन से है, जिसमें रचना दृष्टि का विस्तार व्यापकत्व के साथ एकत्व में अनुप्राणित है। आज की कहानी की प्रतिबद्धता और अलगाववादी विचारदर्शन विशेष उभरा है।

१-कहानी-रूप और संवेदना,पृष्ठ ४३   २-धर्मयुग,जून १९६४

औद्योगीकरण, यांत्रिकता, अन्तर्राष्ट्रीय, वैज्ञानिकता एवं विश्व राजनीति की सक्रियता से आज सारा विश्व भौगोलिक इकाई होता जा रहा है। अतः कहानी में आज का परिवेश आज के यथार्थ से जुड़ा हुआ है, और राष्ट्रीय - अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति बोध का उसके मध्य प्रकारान्तर है। बदले हुए यथार्थ सम्बन्धों को सम्प्रेषित करना आज के समानान्तर कहानीकार का अभीष्ट बन गया है। परिणामतः कहानी में चिन्तन और संवेदना के स्तर भी बदलते प्रतिमानो में दृष्टिगत होने लगे है समान्तर कहानी की पहचान में सामाजिक स्थितियों और समस्याओं को ऐतिहासिक अर्थ में समझने और उनके मूल श्रोतों तक पहुंचने तथा पुनः निर्णायक बिन्दुओं तक चले जाने वाली आलोचनात्मक दृष्टि विकास के कई चरण लक्षित किये जा सकते है। कहानियों का यथार्थ चेतना के धरातल पर आज भली भाँति विश्लेषण हो रहा है। परिवेशगत जीवन्तता मध्यवर्गीय परिवार की मेरू बन गयी है। इतना ही नहीं आज समग्र जीवन को लेंकर विस्तार से चिन्तन की ओर उन्मुख किया जाने लगा है। डॉ० धंनजय का मत है -दों रूचि के व्यक्तियो में पारम्पिरिक रूचि का परिर्वतन होता ही है। तो यह कैसे सम्भव है कि पुरानी मान्यताओं से हटकर कहानी ने जहां नयी मान्यताओं स्थापित की है और कहानीकार विश्व स्तर पर समस्याओं को लेकर सोचने लगा है वहां बाह्य प्रवाह कैसे असम्पृक्त रह सकता है ।''१

सातवें और आठवें दशक की कहानियों के विकास कम को देखते हुए समान्तर संवेदना के चेतना स्तर को पहचाना जा सकता है । सोच के सारे ताने बाने और ताम-झाम के केन्द्र में आदि के मानव मूल्यों का तर्क ही सबल हैं ।
सामाजिक परिस्थितियों की निर्ममपरक और पड़ताल द्वारा ही इस ढंग का समान्तर वैचारिक रचना विधान अर्जित किया जा सकता है । डॉ० निरंजन मोहन ने संवेदना के बीच खड़ी समान्तर कहानी की बनावट को परखते हुए लिखा है कि सूझ और अमल के बीच खड़ी स्थिति आज भी हिन्दी कहानी के लिये सबसे बड़ी चुनौती हुई है''-२

समान्तर कहानियों में संघर्षशील और विद्रोहात्मक मानसिकता के विविध चित्र मिलते है । सामाजिक यथार्थ को कान्ति दर्शना के साथ प्रयोगधर्मी बनाया गया है ये कहानियां जीवन प्रसंगों के संदर्भो मे रची गई और मानवीय सार्थकता की पहचान में जुटी हुई हैं। इन कहानियों मे राजनैतिक संदर्भ भी आकोश का विषय बना हुआ है, क्योकि यहां न कोई तन्त्र है न कोई व्यवस्था हैं। राजनैतिक बोध को इन कहानियों में उत्तेजना के साथ उभरा गया हैं। आज के एक दशक पहले मानव उद्‌भूत विविध परिवेशो के चित्रण की समान्तर कहानियों में भरमार रही है। नई कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, समानान्तर कहानी आदि-आदि संज्ञायें पाठक के मानसिक स्तरों से आगें हैं ।

१-कहानी -परिवेश और प्रभाव, पृष्ठ २३
२-समकालीन कहानी की पहचान,६३

वस्तुतः इन दशको की कहानियों में यथार्थ के आधुमिकीकरण की प्रवृति है और यह यथार्थ मूल प्रकृति में पूर्वी पर पीठिका से जुडकर प्रतिफलित होने वाले उद्देश्यो में तात्विक भिन्नता रखता है। वर्तमान की घिनौनी, कूर और भयावह स्थितियों के प्रसंग में मूल्यों की नये सिरे से जांच पड़ताल और परीक्षण की दृष्टि इन कहानियों में हैं।

डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में कहा जा सकता है -"साठोत्तरी कहानी के स्थापित्व के प्रति दो दशको से जो हमारा विरोध था, संघात था, उसके साक्षात्कार से वस्तुतः किसी भी देश की युग और संस्कृति की अपनी आधुनिकता उदित होती है"?

स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कहानी साहित्य में ज्यों-ज्यों वदलाव आया त्यो-त्यो मानव जीवन के साथ कहानी का आकार प्रकार ही वदलता गया। कहानी विधा का नया चोला लघु कहानी के रूप में मुखर हुआ। लघु कहानियों का कथ्य पर्सनल अनुभूति की अभिव्यक्ति को लेकर लघु आकार में परिवर्तित हुआ। क्षणवोघ से जुड़ी यह लघु कहानी निःसन्देह अपने परिवर्तनो में जटिलतर होती गयी है। इस प्रकार आन्दोलन के वदलते विभिन्न रूपों को कहानी विधा ने अपने में आत्मसात किया है। विचार एवं भाव दोनों दृष्टियों से साहित्य की यह नयी विधा सुसम्वन्ध एंव समृद्ध है, बल्कि यूं कह सकते है कि जीवन को देखने की जितनी भी दृष्टियॉ हो सकती है, वे सव कहानी के वदलते आन्दोलनों में विभिन्न संज्ञा रूपों में समाहित है। इन आन्दोलनो से जुड़ने वाले मुख्य कहानीकार है - उमरकान्त, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी, फणीश्वरनाथ रेणु, मार्कण्डेय, मोहनराकेश, राजेन्द्र यादव, शिव प्रसाद सिंह, उषा प्रियम्बदा, कृष्णासोबती, धर्मवीर भारती, भीष्मसाहनी, रघुवीरसहाय, रमेशवक्षी आदि।

१-ज्ञानोदय--मार्च १९७०

द्वितीय अध्याय

(द्वितीय अध्याय)

निर्मल वर्मा के कथा-साहित्य का संक्षिप्त परिचय

(क) निर्मल वर्मा का उपन्यास साहित्य

(१)वे दिन:- निर्मल वर्मा कृत 'वे-दिन' पांच अनुभागो में विभक्त है । "चैकोस्लोवाक लेखक संघ" द्वारा आमन्त्रित वर्मा जी प्राग नगर में सात वर्षो तक रहें ।

वहां उन्होंने चेक कथाकृतियों के अनुवाद भी किये, और इण्टरप्रेटर होकर टूरिस्ट ऐजेन्सी में हिस्सा बटाया। वस्तुतः यह कृति प्राग नगर के परिवेशात्मक चित्रण को जहां एक ओर उजागर करती है वहां दूसरी ओर टूरिस्ट ऐजेंसी में मिले कार्य की भाव-संवेदना को अभिव्यक्त करती है ।

प्रवास काल मे आयी हुई श्रीमती रायना और मीता के साथ लेखक की कथा यात्रा का वर्णन प्रस्तुत उपन्यास का अभिप्रेत है। उपन्यासकार ने "मै, मुझे मेरा," संज्ञा रूप प्रयोग करके स्वंय एक पात्र का वस्तु सापेक्ष अभिव्यंजन किया है।

'वे दिन' उपन्यास एक आधुनिकता बोधीय बहुआयामी विचारधाराओं की श्रृंखला हैं। प्रवास काल में लेखक की मनःस्थिति में उसकी मनहृदय जनित पीड़ा बोध का एक ऐसा दौर प्रवाहमान रहा है, जिसे निर्वैयक्तिक चेतना के साथ कथाकार ने सवांरा है। तत्कालीन परिवेश और परिवेश बहुमुखी आयामों मे "चेंकोस्लोवाकिया"[1] की जनता का मानसिक प्रतिविम्बन इस प्रकार झलकता है--"मुझे जुलाई------अगस्त की वे राते याद हो आयी, जब यूनिवर्सिटी के छात्र -अपनी--अपनी लड़कियों के साथ बाग के अंधेरे मे बैठे रहा करते थें। बीचो-बीच कवि चैख की काली मूर्ति चुपचाप खड़ी रहती है। लोग शराब और बियर की बोतलों को मूर्ति के "पेडेस्टल " पर छोड़ जाते थें......... फिर देर रात में गरीब बूढ़ी औरतें प्रेतनियों की तरह बाग में घुस आती थीं और खाली बोतलों को अपनी स्कर्ट की लम्बी जेबों में ठूंसकर अंधेरे मे गायब हो जाती थीं"[2]

लेखक ने सह मित्रो के साथ का आत्मीय लगाव एवं निष्ठा का बखूबी इस उपन्यास में चित्रण किया है इतना ही नही यथार्थ के बदलते मूल्यों पर लेखक की दृष्टि गहराई से जमी रही हैं लेखक उपन्यास के कथ्य एवं शिल्प में मौलिकता के दावे के साथ प्रस्तुत हुआ है। इतना आवश्यक है, कि भारत भूमि पर इस तरह का कथानक मर्मस्पर्शी एवं प्रभावी होकर पाठक की चेतना पर पूरी तरह नही उतर पाता। कारण स्पष्ट है ....विदेशी संस्कृति, रीतिरिवाज आदि से जुड़ी हुई जिन्दगी भारतीय धरातल पर एक आश्चर्य ही है।[3]

१-वे-दिन पृष्ट४७
२-वे-दिन पृष्ठ७२
३-वे -दिन १३

वहां के लोग वियर, बोदका, कोन्याक (शराव) पीने में किसी भी तरह की हिचक या संकोच नही करते है। उपन्यास को पढ़ने के वाद ऐसा प्रतीत होता है कि यह सब वहा के लोगो के लिये सहज पेय पदार्थ है----''----------- सिर्फ वार की वत्ती जल रही थी, वोतलो और गिलासों के कांच झिलमिला जाते थें ।''२

प्रस्तुत उपन्यास क्रमशः टूरिस्ट जिन्दगी का एक जीवंत नमूना है। प्रथम अनुभाग से लेकर पांचवे अनुभाग तक, खाने, पीने और टहलने में स्त्री पुरुष के साहचर्य का वर्णन मिलता है। लेखक ने ईमानदारी से 'स्व' पात्र को कथावस्तु मे निहित अन्य कथा पात्रो के साथ इस तरह मिला दिया है कि अहसास ही नही होता कि लेखक और अन्य पात्रो में भिन्नता भी है ....''आह ये विदेशी विद्यार्थी। ये व------एक से ही होते हैं''३
इस वाक्य विन्यास से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि प्रवासकाल की मित्रता साम्य और सांगोपांग बनी रहती हैं उपन्यास में अन्य मित्रों के अतिरिक्त श्री मती रायना और लेखक मुख्य पात्र है ।

(२) लाल टीन की छत-

प्रस्तुत कृति में तीन खण्ड है, जिसमें क्रमशः प्रथम खण्ड में सात अनुभाग, द्वितीय खण्ड -सात अनुभाग तथा खण्ड तृतीय बिना अनुभागों के निरूपित है। उपन्यास में मुख्य मात्र ''काया'' है। उपन्यास ने एक ऐसी लडकी का चित्रण प्रस्तुत किया है, जो पहाडी पर अपने छोटे भैया के साथ रहती है। नितान्त अकेलेपन का परिवेश और परिवेश में जुझते अुए अनेक जीवनगत अन्य पात्र ''काया'' के आसपास घूमते रहते है। पहाडी का चित्रण और काया के मन की उभारन एक अंधेरी खोह बनाती जा रही थी। वह उत्सुक निगाहों से सारे संसार को समझ लेना चाहती थी। उसकी समझ और भटकती हुइ दुश्चिन्तायें उसे मन ही मन किसी तीसरे संसार का खयाल दिलातीं थी। उपन्यासकार ने इस परिवेशगत जीवन्तता की कुछ पक्तियों देकर समझाया है--''कपड़े उतारने से वह सचमुच अकेली पड गयी थीं। छज्जे पर चलती सांय-सांय हवा, कपडो की फडफडाहट पत्ते-सी नंगी, वेशर्म देह कापने लगती। कहीं बहुत धुंधला सुखद-सा विचार आता कि मुझे सर्दी लगेगी निमोनिया होगा, काली मां के लिए मेरी जान जायेगी, और तब वह धीरे धीरे अपनी नंगी देह को सहलाने लगती है''१

यह उपन्यास के पश्चिमोत्तर और विशेष रूप से पहाडी की आंचिलक प्रदेश को समेटे हुए है। इस उपन्यास में ''काया'' छोटे, मिसजासुआ, लामा, भोलू मंगतु वीरू, आदि पात्र फॉक्सलैण्ड की परिधि में घिरे हुए काया पात्र की मनःस्थिति का एक जीवन्त उदाहरण बने हुए है। काया अपने इर्द-गिर्द एक मायावी जाल सा बुन लेती है जिसमें वह अधिकांशतः समय खुद अपनी सच्ची -झूठी स्मृतियों में व्यतीत करती हैं सर्दी की लम्बी छुट्टियां भी वह इधर-उधर झटकते हुए गुजारती है।

१.लाल टीन की छत, पृष्ठ ८८

उसे अहसास होता है उसकी एक नितान्त ऊर्जाहीन फीकी दुनियां है जिसमें नैरश्य, अवशाद और अकेलेपन की छटपटाहट विद्यमान है। वह विस्मृति के गर्भ में अतीत के पृष्ठ पलटती हुई अपने आप का विश्लेषण करती है। मैं लौट आउंगी अपने कमरे में, छोटे के पास ....उसने सोचा लेकिन हाथ शीशे पर थमा था। उसकी देह से अलग, जैसे वह बिस्तर पर उठे माँ के हाथ की छाया हो, जिसे वह चाहे, तो भी नहीं हटा सकती''[1] उपन्यास का चरम विकास द्वितीय खण्ड में है, जहाँ 'काया' एक ऐसी सीमा पर खडी है जिसके पीछे बचपन छूट चुका है और आने वाला समय अनेक संकेतो और सदेशों से भरा है। एक छोर पर एक असहनीय सम्मोहन है और दूसरे छोर पर, उसके जीवन की अंधेरी भूल-भुलैया है। इस मनःस्थिति का चित्रण उपन्यासकार ने 'काया' के भीतर की उत्सुकता को लेकर निरूपित किया है। यद्यपि जाने अनजाने उस पात्र विशेष पर आत्म संतोष की मुस्कान चेहरे पर यदा कदा दिखायी देती है, लेकिन उसकी मन की अन्तः तलाश इतनी विविध रंगसिक्त है जो संशकित दृष्टि से ही उन्मेलित की जा सकती है। सचमुच उसका जीवन अंतर्वाही उजाले एवं अंधेरे में भटक रहा है। कभी स्थिर आंखों से वह अपने को देखती है और कभी छुई-मुई छलना सी आशंकत होकर दूसरों को देखती है। इस प्रकार के धुंधलके में उसका बहता जीवन ऊबड़-खाबड़ जीवनगत कगारों से टकराता रहता हैं। उत्तरार्द्ध अर्थात् तृतीय खण्ड 'काया' के जीवन का पुर्नजन्म बनकर अवतरित हुआ हैं ।

वह शहर मे लम्बी छुट्टियां व्यतीत करने के बाद फिर वहीं 'लाल टीन की छत' के नींचे पहाड़ी पर आ जाती है। वह कभी स्वप्निल दुनियां में खामोंश और उजाली रात की कामना करने लगती है तो कभी जीवन बसंत के गलित अवसान पर भी चिन्तातुर हो जाती है। वह अन्जान लड़की 'काया' अब अबोध नहीं है,उसे अपनी पथरायी आंखो से घर बाहर सब सूझने लगा है। पहाड़ी के परिवेश की जीवन्तता और आकांक्षाओं का घिरा हुआ आकाश एक बिन्दु पर आकर उसे मिलता हुआ दिखायी देता हैं। उसके मन का प्रतिबिम्बन एक अंधेरी तृप्त फूत्कार से सन्निहित बनकर अवतरित हुआ है। सचमुच जीवनगत विसंगतियां और विडम्बनाऐं इस उपन्यास के मूल में प्रतिबद्ध हैं।[2]

(३) **एक चिथड़ा सुखः-** यह उपन्यास कथाकार के भीतर बैठे उस विचार तन्द्रा से ऊबा हुआ है जिसमे स्वर्णिम अतीत वर्तमान में झांक तो रहा है किन्तु है बहुत जीर्ण शीर्ण। 'बिट्टी' पात्र का गुजरता वक्त धीरे-धीरे हिलते हुए झरोकों में "नित्ती भाई" के साथ दर्शाया गया है ।

बात बडी स्पष्ट सी है---"यह गुजारा हुआ समय है और मैं बहुत पहले मर चुका हूँ और आप असली दुनियां में नही है, मेरी डायरी आप तहां चाहें, रख सकते हैं, डायरीबन्द करके मुझसे छुटकारा पा सकते हैं !

१--लाल टीन की छत पृष्ठ ६८ ३-एक चिथडा सुख,पृष्ठ १३३
२--लाल टीन की छत पृष्ठ ८८

"बिट्टी" की दुनियां में हिलते डुलते उस प्रकार के सम्बन्ध जिन्दगी को सिर्फ दोहराने के लिये ही जीवित है। उसके लिये सारी दुनिया होकर भी नहीं है। वह अपने आप को जिन्दगी के पन्नों पर जब कभी पलट कर देखती है तब उसे बदलते नजरिये ही दृष्टिगत होते हैं। ढहते हुए सम्बन्धों में 'नित्ती' भाई का सोच लगातार करवटें बदलता रहता है और उन्हें लगता है कि बरसों पहले चली हुई जमीन पर वे दुबारा चल रहे है। 'बिट्टी' के स्थान बदलने पर भी यही सोचती है कि उसने इन दो सालों में भी जिन्दगी के कितने पाठ खेले है। दूसरो की जिन्दगी जीती है, लेकिन खुद वही जो पहले थी। पहले से भी बदत्तर।
इलाहाबाद और दिल्ली के स्थान भेद का भय उसके मन मे कटीले तार बनकर उग आता है। वह सोचती है कि इन छिटके तारों के बीच अपनी चाहना वह ढूंढ़ नहीं पायेगी। 'बिट्टी' की सारी देह सिहर कर झुरमुरा उठती है और ठिठुरते हुए कभी दिल्ली को तो कभी इलाहाबाद को ओढ़ लेना चाहती है। उसे पता है कि, उसका कोई भी तो इन्तजार नही कर रहा हैं। खुद पेड़ बनकर अपनी छाया को समेटे हुए हर जगह अपना समझकर ठिठक जाती हैं। उसकी आखें हवा में थिर हो जाती है। और असली दुनिया अपने आप उसके सामने रील की तरह घूम जाती है। उसे अपना स्वर एक दम ठण्डा और अपरिचित सा सुनाई पड़ने लगता है। फिर उसे लगता है कि वह खामोशी की दुनियां मे आकण्ठ डूबती चली जा रही है। एक थरथराती सी कौंध उसकी सिराओं में लपकती चली जा रही है उससे भयभीत होकर बो कभी आंखें मूंदती है तो कभी ढ़लते सूरज की पीली चमक देखती है। बिट्टी लगातार सोचती चलती है कि वह अतीत भी कितना अधिक ,जो 'नित्ती भाई के साथ धीरे-धीरे हथेलियों पर होकर सरका था। लेकिन वही आज अजीब सी उदासी और विस्मय से भरा हुआ चित्र बन गया है जिसे न तो कागजों पर उतारा जा सकता है और न खाली आंखों में बसाया जा सकता है "शुरू के दिनों में जब भटकते हुए थक जाते, तब अचानक बिटट्ी कहती, चलो नित्ती भाई के पास चलते है।"१

लेकिन आज वही बिट्टी की नजरों से सब कुछ बचाया जा रहा है। बिट्टी का मन अब पूरी तरह से खाली है। सिर्फ हल्की सी खरोंच के रूप दो आंखों के सामने कभी-कभार झूम जाती है जिससे वह अजीव सी खुशी में क्षण भर के लिए अपने को रखकर अपने को ठिठकने के लिए बाध्य करती हैं। बिट्टी की दुनियां लगता है किसी खास सेफ में बन्द कर दी गई है, जिससे ठहरे हुए क्षण दुबारा आने पर भी सरसराहट पैदा नही करते। बिट्टी अतीत ही नही जन्म-जन्मान्तरों के सम्बन्धों में विश्वास ही नहीं करती, और सही भी हैं एक दशक में लोग जब अपना घर छोड़ कर चले जाते है और जब बरसों बाद लौटते हैं, तो लोग उन्हें पहचानने के लिए इन्कार करने लगते है। फिर तमाम जिन्दगियों का हिसाब तो बहुत ही कठिन ही है। बिट्टी की सोच

१-एक चिथड़ा सुंख-पृष्ठ ५५

यधपि अतीत और वर्तमान दोनो छोरों से गुथा हुआ है। फिर भी वह वर्तमान के प्रकाश यथार्थ में ही विश्वास करने लगी है अतीत तो अंधेरा बन चुका है और अंधेरे में जुड़ीं हुई जड़ों को टटोलना अब मात्र वेवकूफी ही है।

निर्मल वर्मा ने आज का दिन और वीता हुआ कल का दिन के अन्तराल में लिखी हुई कहानी का यह उपन्यास रूप निश्चित ही अनुभूत सत्य की हिस्सेदारी से वीच में ऐसे कई क्षण गुजर गये जिनमें रात हुई दिन हुआ और हर कार्य में सम्वन्ध पर सम्बन्ध अढ़े रहे, लेकिन आज धुंधला सा कुहासा 'विट्टी' 'मन्नू' 'नित्ती भाई' आदि पात्रों के मध्य छाया हुआ है, जिसमे भींगी सी ठंडक वनी हई है। अव जरूरत है तो एक तपती सी आंच की कि जो इस कुहासे को चमकीला बना सके, उसे उजला और घुला हुआ कर सके।

विट्टी का वह क्षण सवसे अधिक त्रादसी वनता है जव 'नित्ती' भाई की मृत्यु का उसे दुः समाचार मिलता है ।

उसके चेहरे पर वरावर एक ठिठुरती हुई शाम जमा हो जाती है, ना कोई भाव रहते हैं और ना कोई संवेदना। उसके भीतर वाहर का भटका हुआ, खोया हुआ निजता का सम्बन्ध सुख का केवल एक चमक सा रह गया हैं। न तो उसके जीवन में कोई रहस्य है और न कोई चमत्कार। वह सच मायने मे आगे चलना भी नही चाहती फिर भी गुजरे हुए दिन बरबस उसे धक्का देकर आगे वढ़ाते हैं। उपन्यासकार ने बिट्टी के गमगीन और भावहीन चेहरे को कथा के उतरार्द्ध में वड़े ही मार्गिक ढंग से चित्रित किया है। बिट्टी बेमानी से सब कुछ सुनती और झेलती जा रही हैं। परिवेशगत विट्टी का व्यक्तित्व इस प्रकार दर्शाया गया है---''यहां दुनिया खत्म..... सी हो जाती है और उसकी सरहद सिर्फ उसके खुरखुरे पांव सुनायी देते हैं थप, थप, थप, धीरे-धीरे आगे वढ़ते हुए, पत्तों और पत्थरों को कुचलते हुए जिसके बीच बिट्टी का चेहरा दिखायी देता, आधी कटी तस्वीर-सा उठा हुआ ओंठ एक गला नीली तनी हुई नस पसीने मे झूलती बालों की लट।''?

बिट्टी ऐसे ही परिवेश के घेरे में एक सूक्ष्म भाव मूर्ति बन गयी है। उसका सिर्फ सिर और चेहरा ही मोम की गुड़िया की तरह हैं। उसके मन का निषिध मोह कभी उसे भीतर की ओर खींचता है तो कभी खुली सड़क पर लाकर खड़ा कर देता है । तब एक क्रूर सी पथरीली सी रोशनी अपने जबड़े फैलाये उसे निगल लेना चाहती हैं। बिट्टी पूरे उपन्यास में परिवेश से टक्कर लेती हुई दोहरी वाहर भीतर की संकरी गलियों में भटक रही है। वह कभी सिर्फ अपने को पहचान पाती हैं तो कभी हवा मे उड़ती हुई बातें और चेहरे से भी मुलाकात कर लेती हैं । उपन्यासकार बिट्टी और बौने पात्र के मध्य में संवाद को इस उपन्यास भाव मूलक शीर्षक बनाया है- बिट्टी तुम कुछ और बनना चाहोगी?

१-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ--१७९   २-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ १०८--१०९

..........तुमने उस बौने को देखा था?

बिट्टी ने धीरे से कहा हां क्यों ? क्यों मैं वही बनना चाहती हूँ वह भयभीत सा होकर हंसने लगा । तुम चिथड़े पहनोगी ? बिट्टी उसके पास सरक आयी वे चिथड़े नही थे............उसने कहा वह सुख था। ? "कथाकार तारों की पीली छांव में उड़ते उतरते जीर्ण-शीर्ण मन के परिधान को सुख का भावमूलक पर्याय मानता हुआ यह कह देना चाहता है कि सारा जगत एक लम्बे क्षण से जिसे निहार रहा है उसमें कुछ और नही है, एक नुमाइश का मैदान है जो रंग बिरंगी रोशनियों के मध्य झूठी सच्ची स्मृतियां को अपने में लपेटे हूये है।

(ख) निर्मल वर्मा का प्रकाशित कहानी साहित्यः-

(१) परिन्दे - ~~निर्मल वर्मा कृत परिन्दे का ... ... संग्रहित ... ... है~~।
इस कथा संकलन में कुल मिलाकर सात कहानियां है जिनका कम इस प्रकार है -----(१) डायरी का खेल (२) माया का मर्म (३) तीसरा गवाह (४) अंधेरे मे (५)पिक्चर पोस्टकार्ड (६) सितम्बर की एक शाम और (७) परिन्दे ।

कथाकार ने परिवेश की जीवन्तता और जीवन जगत के बहुआयामी अन्तद्वन्दों को प्रत्येक कहानी में दर्शाया है। 'डायरी का खेल' कहानी अतीत वर्तमान के द्वन्द को पात्रों के माध्यम से व्यंजित करती है। 'बिट्टी 'इस कहानी का प्रधान पात्र है। आज वैवाहिक संदर्भ को लेकर अविवाहित नारी जगत में कई प्रकार के मनोवैज्ञानिक सत्य उद्धाटित हो रहे है ।'बिट्टी' का अचेतन इतना अधिक संत्रस्त है कि वह पूर्वा पर सम्बन्ध के विच्छेद हो जाने पर अपने विगत फोटो को भी टुकडे-टुकडे कर देती है वर्तमान पर दृष्टिगत करते हुए वह जीवन को धुंधलके में जीना ही अभीष्ट समझती है । लिखा है------ उन्होने मेरी ओर नही देखा--चित्र पर आंखे गड़ाये बहुत धीमे स्वर पूछा--कहां से मिली है तुम्हे यह फोटो -----फिर उन्होनें अपनी कापंती हुई मोमबत्तियों से अंगुलियों से अलबम से उखाड़कर फाड़ने लगी''?[1]

बिट्टी के इस तनावपूर्ण जीवन का बहुत बारीकी से कथाकार ने अध्ययन किया है । बिट्टी के बचपन से गलित यौवन के विविध रेखाचित्र कथाकार ने बनाये है। झपकती और बोझिल आँखों की गहराई का परिमापन करते हुए लेखक ने मनहूस सन्नाटापरक जिन्दगी के बुनाव और वनाव को परिवेश के साथ निरूपत करने मे सिद्धता हासिल की है। कहा गया है ,हवा के तेज झोंकें का थपेड़ा रैंत को अपने पैरो से झाड़ता फडफड़ाता, हुआ सामने निकल गया --मरने से पहले वहुत जी भरकर जीना चाहिए, बब्बू ,उनके सूखे होंठ पीछे कुछ हिले कांपे फिर जमे से रह गये [2]।इसी कम से दूसरी कहानी माया का मर्म, एक छोटी लड़की लता माथुर की कहानी है जो कागज की नाव बनाकर पानी पर तैराती रहती है। उसकी मनः स्थिति किसी आत्मीय टोह मे अन्तः तलाश करती हुई दृष्टिगत होती है। काल सापेक्ष धुंधले सीमांन्त पर बढ़ते हुए इसे लता का पानी के बंहाव मे गिरने से बचाना ... लता की कागज की नाव का उसकी बड़ी बहिन के द्वारा निर्माण करना लेखक को एक साथ झकझोर देता है, फिर वह डूबती उतराती अतीत गन्ध को समेटता हुआ वर्तमान मे एक कहानी का रूपान्तरण करता है। तथ्य प्रतीकात्मक तथा दर्शन नैराश्यहीनता की ग्रंथि से पीड़ित है। कथाकार लिखता है-- इस घटना को बीते अर्सा गुजर गया मै अव भी बेकार हूँ लेकिन अब एम्पलायमेन्ट एक्सचेंज, के दफ्तर जाने की आदत छूट सी गई है। मै अक्सर अपने कमरे में वन्द रहता हूँ ?

१-परिन्दे पृष्ठ १७-१८
२-परिन्दे पृष्ठ २६
३-परिन्दे पृष्ठ ३९-४०

प्रस्तुत कथा संग्रह में 'तीसरा गवाह' कहानी तत्वतः विलक्षण कहानी है। चेतन मन के बदलते स्तरों का आकलन कथाकार ने नीरजा और रोहतगी पात्र के माध्यम से वखूबी किया है। प्रेम के सच्चे झूठे किस्से बहुत हैं लेकिन मि० रोहतगी द्वारा दर्शाया और सुनाया गया किस्सा सचमुच मार्मिक और हृदय विदारक प्रतीत होता है कि अचेतन अर्थात् (Id) चेतन अर्थात् (supper & age) के दोनो ओर नीरजा पात्र में क्षण वोध के साथ आकस्मिक उदय अवसान बनाये रखते हैं।[1] नीरजा रोहतगी से औपचारिक प्रेम-विवाह करने के लिये कोर्ट में उपस्थित होती है और लगता है कि उनका यह फैसला जिन्दगी की लम्वी राह तय करेगा, लेकिन कथाकार ने नीरजा के जीवन में ऐसे क्षण का वोध कराया जिससे वह अपने पर और आपने प्रेमी रोहतगी पर संसार की दृष्टि झेल नहीं पाती। मै त्रस्त आँखों से नीरजा का चेहरा पत्थर जैसा निश्चेष्ट एवं भावहीन हो जाता है, और वह कोर्ट से पलायन के रूख को अपना लेती है। लिखा है मुझें लगता है कि कोर्ट रूम में बिताये वे दस मिनट ही सवसे अधिक महत्वपूर्ण थे-२

दरअसल कोई भूला भटका सा क्षण आता है जीवन मे, जव प्रेमीजन अपना-अपना हृदय उड़ेल देना चाहते हैं और उससे भी वढ़कर एक मनहूस क्षण और होता है जिसमें प्रेम की सार जिन्दगी खत्म हो जाती और लगता है कि चारो ओर से घनी नीरवता सिमट कर उनके हिस्से में आ गयी।[3] कथा संग्रह की चौथी कहानी,'अधेरें मे', शिमला के परिवेशात्मक चित्रण को निरूपित करती है। 'वानो' इस कहानी की मुख्य पात्र है। बात यों तो जीवन के उतार चढ़ाव को लेकर गहरे मर्म को लिये हुए है लेकिन की इस पात्र के लिये मात्र भीनी- भीनी सहानुभूति है। कथा उभरकर जीवंत नहीं वन सकी फिर भी सौन्दर्य बोध के अभिनय और अछूते आयाम इस कहानी में यत्र-तत्र उद्घटित हुए है जैसें,[4] ''संगमरमर'' सी चिकनी सफेद उनकी बाँहें, जिन्हें मैं शरमाते-शरमाते छूता हूं''? पिक्चर पोस्टकार्ड इस कथा संकलन की पाँचवी कहानी है। इसमें सीडी, नीलू, प्रभा और निकी मुख्य पात्र हैं। चारो पात्रों की मनः स्थिति मैत्री भाव की ओर इंगित करती है। गर्मियों के अवकाश में इन पात्रों की अनेक [illegible] मानसिकता को लेकर दर्शाया है। आज यूनिवर्सिटी और कालेज में वहुत ऐसे औपचारिक रिश्ते जन्म ले चुके हैं। जहां पारस्परिक मिलना उठना, विना किसी हिचक के सोता रहता नीलू ने लॉ कालिज के बैठे हुए लड़को की ओर देखकर हाथ हिलाया। यद्यपि वे लड़के अपरचित हीं है। प्रभा इसे अच्छा नहीं मानती और कहती है--तुम पागल तो नहीं हो गयी झाड़ के कांटें की तरह कल तुम्हारे पीछे जायेगें।........नीलू ने कहा-------''और फिर हाथ हिलाने में क्या हर्ज है?.........देवर लुकिंग लाइक सेलर्स -''[5]

१-परिन्दे पृष्ठ ६१
२-परिन्दे पृष्ठ ६७
३-परिन्दें पृष्ठ ९९
४-परिन्दे पृष्ठ१११
५-परिन्द्र पृष्ठ ११९

'सितम्बर की एक शाम' प्रस्तुत कथा संग्रह की छठवीं कहानी है इस कहानी में विशुद्ध रूप से परिवेशात्मक चित्रण ही है। कहानी का प्रारम्भ किन्तु झुलसते हुये विविधधर्मी वातावरण को लेकर हुआ है-------''फिर हवा थमी, पत्तें खामोश हो रहे और घास जो दिन--दिन भर कांपती रही थी, अलसायी सी सोने लगी। दिन भर पीली गर्म धूल हवा को झुलसती हुई उड़ी थी।
कहानी का अन्त भी परिवेशात्मक बिम्ब को उरेह रहा है-----''बारिश कब की रूक चुकी है, लेकिन दूर तक लैम्प पोस्ट के नीचे गंदले पानी के गढ्ढे में ....।''-२ कथापात्रों नें अनूभूतिपरक झिलमिल क्षणों को इस कहानी में जिया है। इन पात्रों में मुक्ति की उत्कट प्यास है जो नैतिक मान्यताओं के घेरे कों तोड़ना चाहती है अन्तिम और विशिष्ट कहानी 'परिन्दे' एक ऐसी कहानी है जो अन्तर्मुखी असीम वेदना में पात्र 'लतिका' जीवन की बची खुची सासें अपने व्यस्त क्षणों में समर्पित कर देना चाहती है लेकिन जब अवकाश में उनके अधीनस्थ रहने वाली सभी लड़कियां तरूण पक्षियों की तरह अपने गन्तव्य ओर उड़ जाती है तो लतिका को एक ओर अतीत जीवी जिन्दगी पर तरस आता है तो दूसरी ओर निस्तब्धता के अनन्त आकाश में आत्म विस्मृत होकर एक बोझिल जीती जागती जिन्दगी का रूप धारण कर लेती है। लतिका याद करती है-------हर साल सर्दी की छुट्टियों में पहले ये परिन्दे मैदानों की ओर उड़ते है कुछ दिनों के लिये इस पहाडी स्टेशन पर बसेरा करते है । प्रतीक्षा करते है बर्फ के दिनों की जब वे नीचे अजनवी ,अनजानें देशों में उड़ जायेंगे ....। ३ इस कहानी में वातावरण में मुखरित अभूतपूर्व संवेदना के स्वर है।
प्रस्तुत कथा संग्रह जीवगत नाना व्यापारों की ओर इंगित करता है। वस्तुतः आज का जीवन कितने भयावह टकराहटों को झेल रहा है जिसमें नित्य ---- प्रति भावना शून्य होती जा रही है। जीवन के नये सन्दर्भ नये अर्थ लेकर उपजते जा रहे है। क्षण विशेष में भी निजता का अधिकार बोध आज व्यक्ति के पास अवशिष्ट नही है। इस प्रकार के तथ्यों का काल सापेक्ष निरूपण निर्मल वर्मा ने इन कहानियों में किया है।

<u>पिछली गर्मियो में :-</u>परम्परित कहानी कि विधा के प्रतिमानों से हटकर बचे समय सापेक्ष बनाने में अग्रसर निर्मल वर्मा की कहानियां ''पिछली गर्मियो मे कृत नाम से संकलित है जिनका कम है-----'धागे', 'पिता और प्रेमी '' डेढ इंच उपर 'खोज', 'उनके कमरे', ''अमालिया'', ''इतनी बडी आकांक्षा'', ''पिछली गर्मियों में।

कहानीकार ने इन कहानियो मे व्यावहारिक समझ और अपनेपन की तलाश दोनों को ही क्षणबोध के साथ, उभरे तथा उतरे इर्द गिर्द धागो से वुना है । अपनी परिधि भूमि से हटकर भांवभग से विरक्त होकर विदेशी संस्कृति की आपाधापी की झलक इन कहानियो मे निरूपित है हर स्थिति विचित्र संभावनाओं के साथ संदिग्ध

१परिन्दे पृष्ठ १५३ २-जलती झाड़ी पृष्ठ १३८

वनी हुई है ऐसा प्रतीत होता है कि कहानीकार अंधेरे की चीख़ वनकर चारो तरफ के मंडराते परिवेश विदूषित भाव को अंधकार निमग्न चौराहों पर उछाल रहा है। पहली कहानी 'धागे' में होस्टल का खुला निमंत्रण तथा चित्रण है। मुख्य पात्र 'मीनू' है जो मुटि्ठ्यो में विदेशी लहजे तथा उन्तुक्तता को दबोचकर कसे हुए है । एक अपरिचित किन्तु धनीभूत शान्ति उसके अन्तस पर छायी हुई है निजता एव भीरूता की हकलाहट तथा विन्रमता की सकपकाहट अपने प्रियतर भाव के इस प्रकार व्यंजित करती है-- ''उसने मेरे दो हाथ अपनी मुटि्ठ्यों में भर लिये, तुम्हे इतनी देर कैसे हो गयी''१

कमानुसार 'पिता और प्रेमी' कहानी में कथाकार ने ऐसे नायक की मनः स्थिति का चित्रण किया है जो एक साथ प्रेमी और पिता होने का दावा अपने भाव--विन्दुओ को समेट करता हे। वस्तुतः रास्ता चलते-चलते नायक को उसकी प्रेयसी एंव पुत्र से भेंट हो जाती है आत्मीयता के कगार पर हैरानी की मुद्रा में अजीव तसल्ली के साथ वे एक दूसरे को ताकते हैं। वे कभी अतीतोन्मुखी उदभावना से आकर्षित होते है । तो कभी वर्तमान में भोगे हुए क्षणो को पूरी शक्ति के साथ जी लेना चाहते है । नायक के मन का उल्लास, प्रेम, वातावरण, करूणा ,दया तथा स्निगध ाता चतुर्द्रिक दिशाओं में छिटक जाती है । बडे दार्शनिक वैयक्तिक स्सतर पर यह कथन कृतिकार के द्वारा अभीष्ट वन पडा है --''हर दिन को अपना अलोक होता है--देह की स्मृति की तरह अन्त और शुरू मे लगभग एक जैसा ही--अधेरे के छोर को छूता हुआ।''२

कहानी संकलन तीसरी कहानी 'डेढ इंच उपर ' दाम्पत्य जीवन की कहानी है किन्तुं यह दाम्पत्य जीवन सामाजिक,संस्कृतिक एंव नैराश्य अवसाद से आपूतिरत है।

पति के मन का भय और कुण्ठाजनित तस्त्र भाव दिभिन्न यातनाओं को अपने आप ही, काष्ट की कल्पना करते हुए भोग रहा है । मन की संदिग्ध परिसीमा पर कथाकार ने गहराई से विचार किया---''क्या यह अजीब बात नही है कि जब हम कभी मौत, यातना या दुर्घटना की वात सुनते है या सुवह अखवार में पढते है तो हमे यह विचार कभी नही आता कि ये चीजे हम पर हो सकती हैं''१

मनोवैज्ञानिक सत्य को उदघाटित करने वाली कहानी 'खोज' इस संकलन की सबसे गहरी और विचार तत्व लिए हुए कहानी है। केवल एक सफेद वाल छोटी बहनों को अतीतोन्मुखी एंव अभिनवेमुखी द्वन्द्व में गिरफ्त करता चलता है। अकारण एंव अनागत भय दोनो के पंलग के आस-पास छाया हुआ है। वे परिवेश की गंध तथा अंन्तस की छटपटाहट को निस्तत्वयधता के साथ जोडती चलती है-- ''एक लम्बे क्षण वे गहरे विस्मय से एक दूसरे को देखती रही''-२

इसी कम में उनके कमरे कहानी के अन्तर्गत एक लडके की मानसिक त्रासदी का चित्रण है । मकान दुकान के सारे कमरे उसके मनोरूप धुंधलके से छाये

१-पिछली गर्मियों में,पृष्ठ ९
२-वही,पृष्ठ ३१
३-वही पृष्ठ५६
४-पिछली गमियों में पृष्ठ ३८
५-वही पृष्ठ ६७

हुए है अविस्मरणीय अंधविश्वास में डूबे लडका एंव लडकी अर्थात् दोनो ही अचेतन मन में निर्णय के अनुसार खोये रहते हैं। यद्यपि वे दोनो ही संभल कर चलने के प्रयास का दिखावा बहुत करते है लेकिन न तो उनके पास विवेक से निर्मित विचार है और ना भावों से अपूरित अनुभाव। परिणामतः दोनो ही क्लांत आंखों में एक भीना संसार संजोये रखते है । कथाकार का कहना उपयुक्त ही है --"एक स्वप्निल-सी मुसकान, जिसका उस कमरे की उसी-बसी ग्रहस्थी से कोई सम्बन्ध नही था।"-३

"अमालिया कहानी अरब अमालिया और ब्राजीलियन पात्रो की कहानी है ये पात्र दिनभर शहर में निरूद्देश्य भटकते रहते है। उन्हे महसूसता है कि उन्हे कडवी सी गन्ध घेरे हुऐ है जो बासी हवा की बदबू के साथ सारे परिवेश को दुर्गन्धमय बनाये हुये है चिन्तित मन से उसके मन का सन्नाटा संदेह की आहट एक अपरिचित भूमि पर लाकर खडा कर देता है जहां से वे सडक मकान आदि को अनिश्चित भाव से देखते रहते है ,उनके मन की धुन्ध उन्हे घसीटकर स्वरहीन बना देती है ।

जिन्दगी के बाहर भीतर प्रकाश के सारे दरवाजे बन्द हो चुके है, इसीलिये ब्राजीलियन और अरब मित्र की माँ फोटो देखकर भी मर्म से अनछुए रह जाते।

इतनी बडी आकांक्षा इस संग्रह की सातों कहानी हैं इस कहानी मे दो फौजी युवको का मानसिक संसार अनुशीलित किया गया है। जब वे होटल के काउण्टर पर बैठे स्त्री पुरूष निस्त्रब्यता एवं मूकता पर दृष्टीपात करते है तो उन्हे जीवनगत सम्बन्धों की बनावट पर चिन्ता होने लगती है --जब स्त्री और पुरूष इतने निश्चित भाव से आपस में चुप हो, तो अनुमान लगाना कठिन नही है कि वे पति पत्नी हैं"-२

कथा संकलन की आखिरी कहानी 'पिछली गर्मियों मे' कहानी के अर्न्तगत महीप पात्र के ऊबे हुए मन का चित्रण किया गया है । महीप के पास गर्मियो में कोई खास काम नही है। उसका छोटा भाई केशी आर्मी में चला जाता है इसीलिए वह ऊबे मन से अकेलेपन को लेकर जिन्दगी की सांसें ले रहा है। माता-पिता के प्रति उसकी उपेक्षा शुरू से है इसीलिये रात को वह विस्मृति के गर्भ मे जाने के लिए निषेध-पेय का भी पान करता है। उसके मन पर एक प्रश्न पर भरी दृष्टि जमी हुई है जिसका उत्तर उसे न तो उसकी मां से मिलता है और न समग्र परिवेश से। इस प्रकार अवकाश के क्षणों में इन बहुधर्मी पात्रों की ओर निर्मल वर्मा न इंगित किया है जिन्हें न निजता पर भरोसा है न परता पर बल्कि वे जीवन को बरबस चलने के लिये धक्का दे रहे है।

(३) **मेरी प्रिय कहानियाँ** :- बरसो विदेश में रहने के कारण लेखक के मन मे इस कहानी संकलन में उसी प्रवास के दौरान जिन्दगी के जोखिम भरे जीने के भ्रम को दोहराया गया है। यद्यपि इस संकलन की सारी कहानियॉ अन्य वर्णित कहानी संकलनो में आ चुकी है, फिर भी इन कहानियों को दुबारा संकलित करते हुए लेखक ने यह

१-पिछली गमियो में पृष्ठ १०१   २-मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ ६

स्पष्ट कर दिया है कि इन कहानियों में वह सुखद विस्मय है जिसे वार-वार पढने और समझने से कुछ नया ही मिलता है। ये कहानिया अलग अलग टुकडो में काफी लम्वे अन्तरालों के बीच लिखी गयी है। 'दहलीज', 'परिन्दे', 'अन्धेरे मे', 'डेढ इंच ऊपर' तक का अन्तराल एक अन्तहीन सूनेपन का वातावरण है और इधर 'अन्तर', 'लन्दन की रात' 'जलती झाडी' कहानियों मे भोगे हुए यथार्थ को पुनर्जीवित करने की आकांक्षा हैं।

कहानीकार ने स्वय स्वीकारते हुए यह लिखा है --''इन कहानियों को दुवारा पढ़ते हुए मुझे लगा है कि मेरे लिये ही हर कहानी एक नाकाम और कभी-कभी सौभाग्य के क्षणो में--लगभग सफल कोशिश रही है कि जंगल के अन्तहीन सुनेपन में उस घास के टुकडे तक लौट सकू जहॉ मैने किसी अनजाने और मूर्खता पूर्ण क्षण में पहली बार के जीने, सूघने रोने और देखने को खो दिया था।''?

कहानीकार को वीरान जगहो को भरने की आकाक्षा सदैव रही है। उसे मध्यवर्गी जीवन के अनछुए रिस्तो को भी इन कहानियों में वटोरने का साहस किया है ।

कहानीकार के पात्र शाम के सर्दीले धुंधलके में अपनी हताश सूनी जिन्दगी में लिपटे हुए है।

लेखक ने इस गहराई को प्रबल शब्दो में इन कहानियों के वीच परिमापन करने का प्रयास किया है।

एक धुंधली सी स्मृति छाया हर पात्र के साथ जुडी हुई है पात्रगत हैरानियों की एक भुतैली आभा चारो और छिटक रही है।

इसीलिए कहानीकार इन शराबघरों का भी वर्णन विवशता से करता है जहां बारिश और ठंड से बचने के लिये अधिंकाश पात्र घडी दो घडी बैठ जाते है कहानीकार को यूरोप के अलग-अलग शहरो की स्मृतियां इन कहानियों में चमकीला सा बोध देती चलती है।

वैसे यह कहना असम्भव है कि ये सारी कहानियां सबकी ही प्रिय कहानियां होकर संकलित है इतना अवश्य है कि लेखकीय प्रियता का यह सटीक प्रभाव है।

यह तर्क जुटा पाना भी विसंगत है कि इन कहानियो के प्रति दिलचस्पी का पैन्डुलम एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक जैसा ही घूमता रहता है। कहानीकार की कथा भूमि देशी या विदेशी, यह चीज तो वहुत गौड है ।

मुख्य बात तो यह है कि जीवनगत घटनाओं का रखरखाव परिवेश की जिन्दादिली के साथ आधुनिकता वोधीय आयामों में कितना सटीक वन पडा है, यही तथ्य विचारणीय है।

(४) जलती झाडी :-

इस कहांनी संकलन में कमशः इस प्रकार दस कहानिया संकलित है', 'लवर्स', 'माया दर्पण', 'एक शुरूआत', 'कुत्ते की मौत', 'पहाड', 'पराये शहर में', 'जलती झाडी', 'दहलीज', 'लन्दन की एक रात', और 'अन्तर' ।

कहानीकार ने सहज ऐन्द्रिक बोध से वस्तुरूप को पकडने का इसमें प्रयास किया है। यूरोपीय देशों के भ्रमण करने के दौरन जो उसे संस्कृतिक, सामाजिक, समस्याओं मे उभरते हुए कोण मिले, उसे उसने इन कहानियों में भरपूर उतारने का प्रयास किया है। वैसे हिन्दुस्तान का स्मृत्यत्मक विम्ब उसके मन से हट नही सका है।

पहली कहानी, 'लवर्स' कुछ ऐसी ही कहानी है जिसमें नीलकण्ठ, नन्दी आदि पात्र 'में' पात्र के साथ शरारत भरी दृष्टि से सहानुभूति बनाये रखते है। लेकिन लेखक वार-बार सोचने लगता है कि आदमी की जिन्दगी कितनी हल्की है। वह जो उम्र के साथ बढता चलता है त्यो ही खामोशी भी बढती जाती है। वन्द दरवाजे की तरह उडते पत्तो और पुराने पत्थरों की तरह आज व्यक्ति आसुंओ की भाषा की पहचान भी भूल गया है और शायद आंसू बहाने वाला भी देर तक उस संवेदना को रोक नही पाता है।

कथन-----------------------"मैने उसकी ओर देखा।
उसकी आखों में बडे-बडे आसू थे..............किन्तु उन आंसुओ का उसके चेहरे से कोई सम्बन्ध नही है..........और कुछ देर में, ढुलकने से पहले, खुद -व-खुद सूख जायेगें और उसे पता भी नही चलेगा।''[1] क्षणबोध का यह तकाजा देर तक किसी की भी प्रतीक्षा नहीं करता। वह स्त्री पुरूष के बीच में बैठकर सब कुछ यू ही बदलता चला जाता है।

''माया दर्पण'' कहानी के पात्र तरन , इन्जीनियर वावू, वुआ आदि ऐसे ही पात्र है जो आसपास के कार्य कलापो में सर्वथा निर्लिप्त हैं।

परिवेश के पांव मुडते नही है लेकिन उसकी धुरी को दलदल में फंसी इन्सानियत की बू सदैव डगमगाती रहती है मनुष्य को लगता है कि आंखों के सामने अतीत की धूल धूमिल परते दीये की लौ मे हल्के से झिलमिला जाती है तरक फीकी सी हंसी लेकर अपनी आंखो में कातारता भरे रहती है।

वह बाबू की छाया में कब तक विश्वास वनाये रखेगी। इस प्रकार रूखी सी अभिलाषा उसे बरसो तक प्रतीक्षा करने के लिए मजबूर करती है।

कहानीकार ने मानवीय भीतरी दुनिया और परिवेश की वाहरी दुनिया का एक जैसा स्वरूप चित्रित करते हुए लिखा है--''अपने कमरे मे वापस आकर तरन चुपचाप खुली खिडकी के आगे खडी रही थी। दूर-दूर तक मैदान में फीकी सी चांदनी विखरी थी

१-जलती झाडी पृष्ट १६

इन्ही के आस पास कहीं इन्जीनियर बाबू रहते होगे?-१ तरन के सामने एक धुधली सी तस्वीर उभर आती है जिसमे वह उदासीन आंखो से देर तक कभी अपने मर्म के बारे में सोचती है तासे कभी बाबू के रूखे चेहरे के बारे में। फिर भी वह मन्त्रमुग्ध होकर उसे अपलक निहारती रहती है। इतने पर भी उसे लगा कि बरसो के बाद उसके पास एक रहस्यमय सुख उभर आया है चारो ओर घिरते अंधकार की स्निग्ध छाया के बीच उसे सब अपनी चिन्ताए निरर्थक सी जान पडती हैं।

जिन्दगी का विश्वास यद्यपि उसके सामने कई बार हिलडुल चुका था फिर भी आज शाम के घिरते अधियारे का सूनापन धुधली तस्वीर बनकर उसके दिल को छू गया था। सब कुछ कितना दूर था फिर भी कितना अपना था ऐसा सोचती हुई तरन एक पल के लिए भी बुंझ नही जाना चाहती थी एक शुरूआत कहानी में हम दोनो की पहचान की खामोशी गरमाहट और बढ़ते चरणो का इतिहास गूंथा गया है कहानीकार को स्टीमर की बात और यात्रा में एक पहचान की शुरूआत स्तब्ध तो नही लेकिन यूरोप की फैलती दुनिया की याद दिला देती है कहानीकार यह कह देना चाहता है कि स्टीमर चल रहा है। आसपास समुद्र के फेनिल जल में धूप के द्वीप डूब जाते है और फिर जब हम उन्हे भूल जाते है, तब वे कहीं दूर बच्चे की किलकारी के मान्निद अपना चेहरा ऊपर उठा लेते है, और लहरों की चमकीली नोको पर पिघल जाते है।[२]?

कहानीकार का वुझा हुआ चेहरा मन के भीतर छिपी यात्रा की दूरी को प्रकट कर देता है प्रश्न मेरी दृष्टि से वह धानी सी चुपकी लेकर स्टीमर पर लोगों के कोलाहल को सुनता रहता है कुछ देर तक खामोशी के बाद उसे बहुत अजीब सी दूरी का अनुभव होता है और फिर लगता है कि ये यूरोपीय निर्विकार चेहरे इतनी उदभ्रान्त छाया को समेटे हुए है। यह भी एक शुरूआत है।

यह तथ्य उसके मनमस्तिष्क को झिझोड़ देता है।

'कुत्ते की मौत' कहानी में लूसी कुत्ते का नाम नन्हें और उसके जुडे हुए अन्य पात्र अन्य जैसे मुन्नी आदि का जीवन इतिहास समेटे हुए है।

मुन्नी, नितिन कुछ हल्के से आकर्षण के साथ बाहर की जिन्दगी समेटे हुए है नन्हे की बेकारी दुनिया इन सब पात्रों के लिए अजूबा बनी हुई है लूसी के अन्तयेष्टि का एक अबाध इतिहास इस कहानी में दिया गया है और लगता है कि समूचा घर एक घनघोर सन्नाटे में लिपट गया है कहानीकार ने बताया है कि जिसे लोग पीडा कहते है और अब जो खालीपन था...........लूसी की चीखो से मुक्त, खुला, अबाद और गमहीन।'' -३

पहाड़ कहानी में मानवीय प्रवृत्ति की अनिश्चित शुरूआत पर बल देकर स्त्री पुरूष के सम्बन्धों को समेटा गया। सामान्य तौर पर दाम्पत्य के मध्य से एक वक्त की एक ही साथ एक रहस्यममय चमत्कार पैदा हो जाता है जिससे वे टिकी हुई[४]

१-जलती झाड़ी पृष्ठ ४०
३-वही पृष्ठ ६१

१-जलती झाड़ी, पृष्ठ ४४
४-वही पृष्ठ ६१

धारणाओं से ही अपने को जोड़कर आगे वढ़ पाते है और मौलिक विचारणा को इतिश्री मान बैठते है कहानीकार का मत है...........अक्सर होता है यह है कि वच्चे के आने पर पति ....पत्नी अनायास एक दूसरे के प्रति कुछ थोडा से विरक्त हो जाते है।चाहते है एक ....दूसरे को लेकिन वच्चे के माध्यम से ....और यह शुरूआत होती है अन्त होने की ।''-

यूरोपीय परिवेश को कुछ ढग निराला ही है वहां सम्भवता यह वात लागू न फिर भी लेखक ने पति पत्नी के मध्य उतरते डूवते अन्धकार और प्रकाश को वारीकी से ही एहसास कराया है और अन्त में जाकर कह भी दिया है कि मुझे खुशी दाम्पत्य में देखने में अच्छे लगते है और इतने पर भी जव वे एक दूसरे को चाहते हो तो मेरे लिए एक रहस्यमय चमत्कार ही है ।

''पराये शहर में'' कहानी का सारा परिवेश विदेशी ही है लेखक उभारती पन्नों के हाव भावें की दुनिया से भली भाति परिचित हो चुका है लडका व लडकी जव उस दृष्टिकोण से देखते है तब एक दूसरे का आकर्षण देखने योग्य होता है उस परिवेश मे किस प्रकार उन्मानित और बदहवाश होकर चर्च की दीवारों से टकराकर भीड़ में खो जाते है और भीड़ की अन्धेरी गली उन्हे किस प्रकार निजता के बन्धन में समेट लेती है इन सब बातो का सिलसिलेवार जिक इस कहानी में है लडकी वीच स्कायर में गाती रहती है लेखक भी वहीं पर खडा हुआ है भीड़ मे गर्म देहो की पसीने से चिपचिपाहट की दुनिया गन्ध फैलाती चली जा रही है उधर एक लम्वा दुवला पतला लडका रंग बिरंगा रूमाल गले में डालकर गुनगुना रहा है और कह रहा है कि कभी इटेलियन मैं तो कभी फ्रेन्च में और कभी अस्पाट भाषा में लेखक ने अपनी वीती हुई शाम का यूरोपीय भीड का एक आत्म स्वरूप इस कहानी में बुना है।

इसी कम में जलती झाड़ी कहानी लेखक की अत्यन्त मजवूत लहजे की कहानी है क्योंकि इसमें लड़का व लड़की को एक दूसरे की ओर आकर्षित करने का तरीका लेखक ने दर्शाया है बाहरी संसार में वह विना किसी शर्म छिझक के एक रास्ता छोडकर दूसरे रास्ते पर बढता चला जाता है उसकी ओर प्रश्न भरी निगाहें जुडती चली जाती है वह सोचता है कि वह वहुत ही मुश्किल मे कभी पटाकर कभी अपने को पाता है लेखक की पहचान इसी यूरोपीय सैक्स स्त्री से होती है और वह उसके साथ भौगविलास किसी अन्वेषण के लिये सहसा चल देता है कहानीकार का कथन है.............

...किधर देखा था?

...देखिये उधर झाडी में...............वह अव भी है

...वह कौन है

झाड़ी कापती है जैसे उसके भीतर.......ही........भीतर कुछ जल रहा हो।

वह मेरे निकट सरक आयी ......क्या मैं सच हूं एक नरम सी सरसराहट हुई, जैसे उसने मेरे भीतर एक पन्ना उलट दिया है''?[1]

लेखक आखिरकार उस 'पराये शहर' मे कह ही देता है, कि दूसरे दिन सुबह वह शहर हमेशा के लिए छोड़कर चला जायेगा। 'दहलीज' कहानी रूनी, शम्मी, जेली, मेहरू आदि पात्रों की कहानी है। रूनी अतीत और वतर्मान की झूठी सच्ची समृतियों मे फंसी हूई नायिका है । वह बड़ी बहिन जेली और भाई शम्मी से अन्तराल रखती हुई अपने अपने तक ही सीमित हो गई है वह सोच ही नहीं पाती कि आज जिस वंगले के सामने वह खड़ी है वह बंगला अतीत के वंगले से क्या भिन्न है । रूनी के आंखे मिट्टी के ढुहों पर वेतहाशा होकर दौड़ रहीं है। उसे ऊवड़ - खावड़ धरती पर खामोश छायाएं उड़ती नजर आती हैं । रूनी की मनः स्थिति लम्वे अरसे के बाद बहुत कुछ धुंधला सी गई हैं। कहानीकार वर्षो तक स्मृति का उदभ्रान्त उसके मन. पर दौड़ लगाता हुआ पंखे समेटे हुए दृिट पथ में उतरता चलता है। रूनी के मन मे न तो उत्साह है और न जीवन जीने की हरियाली का कोई कोमल रूप।' लन्दन की एक रात' कहानी मे लेखक ने वाद-प्रतिवाद का हल्का सा हिस्सा प्रकट किया है। कहानीकार दूसरी बार वहां गया हुआ है। वह नीग्रो क्षात्राओं से वहुत देर तक कुछ जानने समझनें के लिये बहस करता रहता हैं। लन्दन की परिवेशगत सरसराहट कहानीकार के मन में अपना स्थान बना लेती है । दक्षिण अफ्रीका से आये हुए नीग्रों छात्र की बेकारी की समस्या को कहानीकार ने कथ्य में स्थान दिया है। लिखता है'' नीग्रों छात्र ने तनिक उत्साह पूर्वक कहा -----हम दोनो साथ रहते हैं। कल शायद वह मुझें कुछ शीलिंग उधार दे सकेगा । .... साले कितना देते हैं? ढाई पाउण्ड ----- नीग्रों छात्र ने कहा ....मेरा दोस्त वता रहा था २
वस्तुतः उत्सुकतावश लेखक ने उन बेरोजगार युवकों को वाद--प्रतिवाद में इस कहानी के भीतर स्थान दिया है। जो बाहर जाकर बेकारी के शिकार होते है, और यह वेकारी उन्हें बहुत तंग करती हैं। 'अन्तर' कहानी इस संकलन की आखिरी कहानी है। लेखक के चौराहें का चित्रण, होटल की व्यवस्था का निरूपण ,अस्पताल में घिरते जीवन का अनुशीलन एक साथ इस कहानी में व्यंजित किया है। वह वेझिझक अपने आप को परिवेश के तहत जोड़ लेता है। उसके मन में न तो ज्यादा घबराहट ही है और न बहुत ज्यादा उत्साह । परिवेश की दृष्टि से होटल के बाहर ,स्लीपिग किट, में भी एक उन्मुक्त जीवन व्यापार छिपा हुआ है। उसी तरह अस्पताल के जीवन में घिरती हुई विरक्ति केवल निरर्थक ही नहीं है वल्कि व्यक्ति के जीवन के सच्चे अर्थ को प्रकट करती है। लेखक का मत है ----''-सामने एक बड़ा सा विस्तर था, विल्कुल समतल और सफेद ।

.... वह खाली नहीं था।

१जलती झाड़ी, पृष्ठ ८५

२ वही पृष्ठ १०० १०१

चादर से उसका सिर बाहर आया , फिर आंखे । वह उसे देख रही थी ,फिर एक छोटी सी मुस्काराहट उसके होंठों पर सिमट आयी ''?

दरअसल भीतर की निपट शान्ति अस्पतालों के बिस्तर पर और विशेष रूप से उन सिरहाने बैठ जाती हैं। सारा माहौल ठंडा हो जाता है। जीवनगत आयामों की चर्चा भी वहां वेमानी सी लगती हैं। कथाकार उन्हीं सुदूर तथ्यों पर इस संकलन में गुथी सारी कहानियों को नये अंदाज और नये तेवर से नये अर्थ और नये संदर्भ प्रदान करता है ।

५- बीच बहस में-- बीच बहस में कहानीकार ने क्रमशः पांच कहानियों को संकलित किया है।

वे है------'अपने देश वापसी' 'छुटिटयों के वाद' 'वीक एण्ड' 'दो घर' और' वीच बहस में'। कहानीकार निर्मल वर्मा देश- विदेश की संस्कृति को इन कहानियों के कथ्य में पहचानता हुआ बताना चाहता है कि आवासी और प्रवासी की मनः स्थिति कैसी और क्या होती है। कहानीकार दीर्धकाल तक विदेश में रहता है। उसे इस बात का अहसास है, कि भारत और भारतीय इत्तर देशों की दरिद्रता,गरीबी मे भी काफी अन्तर है, वह गरीबी नहीं (गरीबी पश्चिम में भी है) वल्कि सुसंस्कृत वर्ग की दरिद्रता।

दरअसल हमारे देश में एक अजीब गरीबी का माहौल है, जिससे सूखे वदहवास चेहरे उपजते चले जाते है। कहानीकार का विचित्र अनुभव है जो हर देश की लड़किया चाहे वह इटली,स्पेन या अपने देश की हो,शाम के झुरमुटे में एक तरह से ही खुलकर खिलखिलाते हुए हंसती है।

इन कहे हुए शब्दों के अर्थ एक ही तरह की अनुभूति विचारणा को प्रकट करते हैं। जिससे हरेक देश के जीवन हिस्सों का जायजा लिया जा सकता है, और हर शाम चमकीले तारों की दूर-दूर तक फैली हुई झालर को एक जैसे ही रूप में देखा जा सकता है।

कहानीकार विदेशी दूरस्थ भावनाओं का यदि पुजारी है तो भारत प्रेम का एक अनूठा स्वयं उदाहरण है। वह कहता है, कि मैं जहां उसे छोड़ गया था कवहां मेरी उम्र रूक गयी थीं विदेश में गुजरा समय जैसे प्लेटफार्म पर गुजरी रात हो''?

'छुटिटयों के बाद' कहानी में स्त्री-पुरूष के सह-सम्बन्ध को वड़े ही वारीक धागों से बुना गया है। 'मार्था' पात्र और 'मै' पात्र का अन्दाज और उसमें जन्मी गुफ्तगू का इस कहानी में बहुत ही स्वाभाविक ढ़ंग से वर्णन मिलता है ।

लेखक लिखता है--- मेरे लिए यह उसकी अन्तिम झलक थी, जिसका नाम मार्था था। जब गाड़ी चली, वे दोनो उसी तरह एक दूसरे से लिपटे खड़े थे--प्लेटफार्म के वीचों-बीच''?

दरअसल मार्था अपने सामान के बीच खोई हुई सी खड़ी रह गयी और

१- बीच बहस में पृष्ठ १४

लगता था उसकी आंखे कुछ टटोल रही है। वह अपने आप को प्लेटफार्म पर होने जैसी स्थिति में नही सोच पा रही थी।[1]

उसे कुछ अजीब सा लगा कि फासला भी गुजरते समय की तरह देखते - देखते आदमी को अपने में निगला जा सकता है,फिर भी एक झटका सा आदमी को कभी कभार लग जाता है, जो उसे घन घोर सन्नाटे में भी अहसास दिला दिता है । संकलन की तीसरी कहानी 'वीक एण्ड' जीवन्त परिवेश को लेकर लिखी गयी कहानी है। प्रारम्भ में ही कहानीकार कह देता है कि तीन लम्वे पेड़ पिछली रात में हवा में झूम रहे थे। अब ठहरे थे, नंगी टहनियों, जैसे काले कार्बन से उतरकर विल्कुल साफ कागज पर उतर आयी थी--------------ये चिनार के पेड़ यह सुवह का भूरा आलोक,उसने सोचा''-[2]

कहानीकार वीते रात और उगते सवेरे के वीच अपने सोच को जन्म देता है। कभी उसके सामने अंधेरा होता है तो कभी अंधेरे में टटोल कर अतीत के सुख के क्षणों को सिक्कों की तरह खनखनाता है तो कभी चलती फिरती दुहरी का सन्नाटा धूप में चमचमाती पत्तों की सरसराहट उसके प्रखर जीवन की कहानी वन जाता है। व्यक्ति को अपनी निगाहें कभी तनाव की जिन्दगी में सिकुड़ती है तो कभी अजनवी चेहरे को टटोलने लगती है यह मनुष्य के जीवन में अदभुत चमत्कार चमकते पत्थर, पत्थरों पर चलती पैरों की छाया के रूप में दिखायी देता रहता है। व्यक्ति स्त्री पुरूष के सहसम्बन्ध की हामी तो भरता है परन्तु उसकी ठिठुरती दुनियां उत्सुकता को एकदम समाप्त करती चलती हैं स्त्री पुरूष के इस जीवन्त सम्वन्ध का कहानीकार ने भली- भॉति निरूपण किया है। वह लिखता है कि उत्सुक लोगों का अन्त बहुत सुखी नहीं होता कौन सा अन्त सुखी होता है? उसने मेरी तरफ देखा..........और तब मैने एका एक सोचा ,कि आज उसे नही रोकूंगी ।
.... जितना मन करें उतना पीनें दूंगी...............प्यार करने के बाद,जब एक साथ बहुत प्यास लगती थी । वह पलंग के किनारे बैठ जाता था और मैं उसकी नंगी पीठ पर अपने होंठ रख देती फिर दिखने लगती,चारो तरफ एक वगल से दूसरी वगल तक । विवाहित होने के बावजूद उसकी देह एकदम कुंवारी जान पड़ती थी सफेद और निरीह ।''[3]

'वीक एण्ड' कहानी की नायिका बाहर भीतर अपने दिल में सपने संजोये रखती है उसके जीवन का सस्पर्श यथार्थ जगत का आभास करा देता है उसे लगता है कि जव वह अंधेरे में मेरी देह छुऐंगा तब सारा संसार ठिठक जायेगा क्योकि, वह स्वयं में जादू है, लेकिन मुश्किल तो यह है कि उसके हाथ मेरी देह से दूर है। मंजिल तक आते-आते एक दूसरे से दूर ही रह जाते है।[4]

१-वीच वहस में, पृष्ठ ९ २-वही पृष्ठ ३२ ३-वही पृष्ठ ३५
४-वीच वहस में पृष्ठ ४७

वह वार-बार सोचती है कि चारो तरफ एक वड़े फासले से हम मिलते है, हम प्यार करते है, सर्दियां गुजर जाती है फिर गर्मियां भी तहे दिल तक उतर नही पाती।आकोश में वही नायिका एक दिन यह सोच बैठती है कि वह उससे अब कभी नही मिलेगी, अगर वह सड़क पर दिखाई भी देगा तो उसकी तरफ देखूंगी भी नही। पीछे मुड़कर भी नही, जैसे वह हवा हों और वह आंखे मूंदकर उसके वीच से गुजर जाये। लेकिन एक पल के बाद जब वह आंखे खोलती तो उसे फिर उसी ओर जाना होता जहां से वह चली थी। विचारो की बदलती करवटो में स्त्री पात्र का यह दृश्य द्वन्द्व उसे अस्थिर वना देता है । तव उसके देह की उत्सुकता में और अधिक पीड़ा उपजती है फिर अनछुए देह पर उसे अविश्वास होने लगता है, और वे उन फासलो में वदल जाते है जैसे कि अन्धेरे में अलग-अलग लैम्प पोस्ट जल रहे हो और जिन्दगी की शाम की तरह उनकी पहचान उपज आयी हो। कहानीकार 'वीक एण्ड' की नायिका का मन वह बार बार टटोला है जिसमें समाज के लोगो से उसके मन में भय वना हुआ है।''[१]

'दो घर' कहानी में स्त्री.................पुरुष के सम्बन्धो की कहानी न होकर एक अजनवी जीवनगत् हलचल की कथा है। लेखक दरअसल बाहरी दुनिया से वहुत अधिक अपने को जोड़ नही पाया है, इसलिए वह अपने चेहरे पर एक लावारिस सी हंसी महसूस करता है। वह कहता है ....'' मुझे उस शहर में रहते सिर्फ कुछ अरसा गुजरा था। पहली वार विदेश में यो भी अकेलापन लटकता है ....फिर से ढलते पतझड के दिन थे। घर और बाहर के वीच समूचा शहर एक पीली छाया सा फैला रहता .... मैं पीछे मुड़ता, इससे पहले ही आवाज सुनाई दी........जरा सुनिये ....आप इण्डियन है''[२] लेखक के लिए यह प्रश्न परायेपन से कुछ देर के लिये छुटकारा दिलाता है। वह उन अजनवी व्यक्तियो से बेझिझक मिलना चाहते है जो शर्म और असंमजस की कोई शिकना नहीं लिये हुये थे । लेखक अहसास करता है कि उनकी आखें बराबर उन्हे नाप रही है, और उसकी मुश्कराहट में एक उदासीन किस्म की गरमी है जो हमारे अपने देश की याद दिलाती है। इस संकलन की लास्ट कहानी ''बीच बहस मे'' भारतीय सम्बन्धो की कहानी है । हिन्दुस्तान के तिलमिलाते जीवन को कुछ कत्रिम गन्ध से लपेटकर यहां प्रस्तुत किया है। बूढा आदमी, डा०साहब, मुन्ने पात्र आदि ऐसे पात्र है जिनकी भावनाओं का कहानीकार ने तिलमिलाती रोशनी में इजहार किया है ।

परिवेश का अनूठा परिमापन यहां पर भी है । बूढे ने फडफडाती आंखो से उसे देखा और कहा ....''देखिये ....आपको हम पर शर्म है, उसके आगे? बोलिए । नही आप इस तरह नही जा सकते .....वहस के वीच में।''[१] यही कहानी का अर्थमूलक मापदण्ड हैं।

१ वीच वहस में, पृष्ठ ७१
२- वही, पृष्ठ ७६-७७

(६) **कौआ और काला पानीः-** इस संकलन में निर्मल वर्मा की सात कहानियां संकलित हैं । पहली कहानी 'धूप का एक टुकडा 'एक ऐसी कहानी है जो एक स्त्री के भीतर बैठी हुई सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक स्त्री अपनी छाया को सर्वत्र पल्लवित होती हुई देखती चलती है। स्त्री पात्र बैंच के कोने पर बैठकर विवाहोत्सव पर अजीव सी मनोबृत्तियों का आकलन करती है। वैसे उसके भीतर में न प्रकाश ही है, और न अंधेरा ही । सिर्फ है तो हल्का सा फड़फड़ाता हुआ चिमगादड़ जैसा अतीत जो पंखो के संस्पर्श से ही सारा रास्ता तय करता चलता है । वह कह भी देती है कि वर्षो की गूंज जो अंगो से निकलकर मेरी आत्मा में वस जाती थी अव कही न थी। मैं उसी तरह उसकी देह को टोह रही थी जैसे कुछ लोग पुराने खण्डहरो पर अपने नाम खेजते है, जो मुद्दत पहले उन्होने दीवारो पर लिखे थे।''१

वस्तुतः व्यक्ति अपने भीतर एक पूरी दुनियां लेकर आता है, इसलिये जव कभी उसका कुछ छिनता है तो वह अपने वीच खालीपन का अहसास करता है। धूप का टुकड़ा जहां बैठकर वह स्त्री शाम होने तक जो कुछ हलचलें देखती रहती थी, वे सब उसकी दुखती रगों की सही--सही पहचान थी । उस स्त्री ने वहा बैठकर उन संगीत की आवाजो को सुना था जिनमें अपने पन की खुशबू थी और आज वह उन आवाजों को सुनकर उन बेचारों पर दयाद्र हो उठती है जो आज है कल न रह सकेगें। इसलिए वह कहती है कि धूप का टुकड़ा किस वेंच पर है --उसी पर जाकर वैठ जाती है............एक तो इस पर पत्ते नही झरते और दूसरे......अरे, आज जा रहे है''?-१

दूसरी दुनियां कहानी में लेखक और एक लड़की की उस पहचान के उरेहा गया है जिसमें उगती हुई फुनगियां है और सुलगती हुई आग हैं। कथाकार दुनियां के तमाम अजूबों को मन मस्तिष्क की दुनियां में हाल बेहार हो कर जान लेना चाहता है जो बहुत से बिशाल और बहुत से गहरी अनुभूतियों से जुड़ी हई है। मिसेज टामस से अदृश्य भावों पर विचार करता हुआ वह कह ही देता है कि यह खेल नही थां वह एक पूरी दूनिया थी। उस दुनियां से मेरा कोई वास्ता नही था....हालाकि मै कभी .- कभी उसमें बुला लिया जाता था..........मुझे हमेशा तैयार रहना पडता था, क्योकि वह मुझे किसी भी समय बुला सकती थी''-३

कहानीकार ने यह साफ तौर पर कह देना चाहा है कि जो चीजें वहुत साफ सी और धूप में चमकती हुई लगती है उनके अन्तर में भी वहुत सी गहरी दरारें भी होती है जिनको देखकर आदमी सकपका सकता है और अपने खाली हाथो को मसल सकता है। जिन्दगी की यह खोखली प्राणधारा झूलती तो चली जाती है, लेकिन अपने धुधलकों प्रतिबिम्बो को इतिहास के पृठ वनाती जाती है४'जिन्दगी यहां और वहां' कहानी में परिवेशता सहजता और जीवन्तता का बहुत बड़ा हिस्सा गुंथा हुआ

१-वीच बहस में पृष्ठ १२४
२-कौवा और काला पानी पृष्ठ १५
३-कौवा और कालापानी,पृष्ठ १७
४-वही पृष्ठ २५
५-वही पृष्ठ ४८

है। इसी आधार पर सारे मानवीय विश्वास के आधार को वड़े ही तीखे रूप में फिसलता हुआ पाया गया है इस कहानी का स्थल हिन्दुस्तान का दिल्ली प्रभाग ही है। जिसमें कथाकार ने चलती फिरती रंग विरंगी दुनियां को केंचुली बदलते हुए भली भांति देखा है। देखिये ....'एक चलती...........फिरती दुनिया - जिसके सदस्य एक दूसरे को नही जानते - फिर भी हमेशा एक दूसरे से मिलते है अंधेरे हाल में एक साथ ताली बजाते है - एक दूसरे को जानते नही, छूते नही तमाशा खत्म होते ही अपने - अपने कोने में खो जाते है ''1.

कहानीकार कह देना चाहता है कि मौसमी परिन्दो की तरह सीजन बदलने पर अपने अपने घोंसलों में छुप जाते है और फिर अंधेरी गलियों मे आकर एक साथ ही भीड़ में जमा हो जाते है। इस प्रकार ठन्डे अंधेरे गलियारे इन परिन्दो के छिपने के बहुत अच्छे स्थान है। स्त्री पुरूष के पहचान सम्बन्धों की यह अनूठी कहानी है एक वह स्त्री जो पढ़ाई लिखाई में व्यस्त लाइब्रेरी के मध्य ही दृष्टिगत होती है दूसरी वह पुरूष हर दृष्टि की छुअन में अपनी अनिवार्यता को पा लेना चाहता है उसका नाम फैटी है।

कनाट प्लेस के अंधेरे केरीडोर में चलते हुये उसे अजीब सा सुख हुआ। वह कहती ....'' है सुख ? क्या कोई ऐसी चीज है, जिस पर उंगली रखकर कहा जा सके, यह सुख है, यह तृप्ति है''

उसके लिये लाइब्रेरी से घर और घर से लाइब्रेरी एक छोटी सी दुनिया थी लेकिन वह बाहर की दुनियां को कनाट प्लेस और उसके चारों ओर की दुनिया थी उसे एक बार ही में जिया जा सकता है ।

'सुबह की सैर' कहानी निहाल चंद और उससे जुड़े हुये तमाम परिवेश की कहानी है जिसमें धुंधलका है, फिर भी यत्र तत्र विखरे हुये सपाट पत्थर दृष्टिगत होते हैं निहालचंद्र उन सपाट पत्थरों पर अर्थात धोबी घाट पर बार-- बार विचार करते हैं । उन्हे एक अजीब सा भ्रम होता है कि कही न कहीं यह सब कुछ उनकी उम्र के साथ उनके हाथ की छडी मे और हाथ में पकडे थैलों में हल्के सरसराहट के साथ प्रवेश किया जाता है। उन्हें 'सुबह की सैर' में शायद इसलिये बहुत कुछ अजूवा ही अजूवा दिखाई देता है। कहानीकार ने कहा है कि एक दिन सैर करते - करते यहां आ भटके और आंख उठाते ही हवा से हवाघर उतर आया। सफेद सीढ़ियां, झालरदार झरोखे, वड़ी - बडी आंखे से रोंशनदान -- किन्तु जो चीज निहालचंद्र को हमेशा अचम्भे मे डाल देती थी वह था नीलागुम्बद ।''-२

निहालचंद उस गुम्बद को निहारते रहते और एक लम्बी सांस खींचकर आह के साथ विचारों की करवट बदलते । उनके मन मस्तिष्क पर हवा फुरफुरा जाती और करनल निहालचंद्र की दबी भूख को उरेह जाती ।

१ कौआ और काला पानी पृष्ठ ६१   २ वही, पृष्ठ ७३

निहालचंद्र की मानसिकता का बहुत ही निरीह वर्णन कहानीकार ने यहां किया है । "आदमी और लड़की" कहानी में वर्मा जी ने जिंदगी के उन आयामों को रूप दिया है, जिनमें व्यक्ति जिजिविषा के सहारे सब कुछ झेलता रहता है।

बाजार और वहां की व्यवस्था का जिक करते हुये लेखक ने लड़की और उस बूढ़े आदमी के भीतरी संसार को अदृश्य भाव से निरूपित किया है। व्यक्ति सही गलत प्रतिबिंम्बो के सहारे हर जगह अपना संसार बसाता चलता है । उस बूढ़े आदमी की मनःस्थिति कुछ ऐसी है -------------"कुछ खाओगे ? लड़की ने पूछा आदमी ने सिर हिलाया "फिर सीधा होकर बैठ गया..............वह सो गया था ----सपने के एक चिन्दी अब भी डोल रही थी, धीर धीरे वह गायब हो गई और उसकी जगह लड़का दिखाई देने लगी १"?

लड़की और आदमी के मध्य सहानुभूतिपरक रिश्ता है एक दूसरे की चिन्ताओं को ढापने का एक अन्दाज है, एक दूसरे के बीच जिन्दगी को सही संदर्भो में समझने का तरीका है कहानीकार ने सारे परिवेश के साथ उमड़ती घुमड़ती मनोकामनाओं को इस कहानी में स्थान दिया है कौवा और काला पानी। हिन्दुस्तान के छोटे कस्बाई शहर की कहानी है जिसके पात्र "मास्टर साहब" इस छोटे उपेक्षित पहाडी कस्बे से जुड़े हुए है । एक अध्यापक की मनोवृति का कहानीकार ने गहराई से परिमापन किया है एक अध्यापक की कस्बाई मनोवृति अर्थ तन्त्र की दृष्टि से हो ही क्या सकती है, इस तथ्य से कलाकार से सुपरिचित है ।"................... मास्टर जी की जरजर कोठी और धुधुआती रोशनी से मुझे अपने घर के लोग किसी दूसरे ग्रह के प्राणी जान पड़ते थे।

विश्वास करना असम्भव था कि अभी १२ घंटे पहले उनके साथ था......."२ लेखक को स्कूल, मैदान, वाजार सभी कुछ मास्टर जी की मनोवृति की छाया के ही पर्याय जान पड़े उसे अहसास होता है कि बाजार के नाम पर कुछ भिनभिनाते ढावे है और कुछ धुधुआते शोर के साथ व्यक्तियो के कुछेक चलते-फिरते सॉचे है पहड़ियो की तुली जिन्दगी पर कथाकार का ध्यान गया हैं ।

यह कहानी यथार्थ जगत की कहानी है, जिसमें एक धड़कता हुआ दिल सींखचे की रोशनी की टिमटिमाहट लिये हुए है। इस संकलन की आखिरी कहानी "एक दिन का मेहमान" समकालीन जीवन के मध्य वर्गीय चरित्र का अनूठा उदाहरण है, जिसमें कहानीकार ने एक ऐसी गूंज का अनुभव किया है, जो भीतर तक ठहर जाती है और संवेदना को उरेहती रहती है ।

१-कौआ और काला पानी पृष्ठ ९४
२-वही पृष्ठ ११९

तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

निर्मल वर्मा के कथय में आधुनिकता

निर्मल ने जीवनतम चिन्तन के विषय में बहुत कुछ लिखा है उन्होंने कथा साहित्य की आत्मा को नये ढंग से परिभाषित करते हुए कथ्यगत बदलाव पर अधिक ध्यान से सोचा है। साहित्यगत जितना भी स्वरूप गतिमान रहा है उसका निर्वाह करते हुये उन्होने उपेक्षित कारुणिक दुखी चरित्रों को यथार्थ के धरातल पर बहुत अधिक उभारा है। सम्पूर्ण कथायात्रा में व्यक्तिगत आभावों की प्रतिकिया के कारण मन में उठते उन भावो का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है जिनके मूल में सहज कामनायें है, निःसंकोच विश्लेषण है, तथा वातावरण का पूरा प्रभाव है। कथाकार का लक्ष्य वैयक्तिक अनुभवों द्वारा मानव भावों का चित्रण है। उनके कथा साहित्य में एक ओर यथार्थ वादिता की महत्वपूर्ण कड़िया है तो दूसरी ओर जीवनगत मनोवैज्ञानिकता के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है । यद्यपि उनका कथ्य साहित्य व्यक्तिवादी एवं आत्मकेन्द्रित अहंवादी अधिक हो गया है, इसलिए सभी कथानक अहविद्रोह और विश्लेषणगत विशिष्टताओं को समेटे हुए है जिनको आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में निम्न संकेतो के माध्यम से विवरण दिया जा सकता है।

(क) आधुनिक परिवेश- मूल्य हीनता की स्थितिः

इस स्थिति विशेष का महत्व मनुष्य के काल चिन्तन से जुडा हुआ है वस्तुतः आधुनिकता की आज तक जिस प्रकार की चर्चायें अव तक होती रही है उनमें इस प्रश्न को प्रमुखतः परिवेश के साथ जोड़ा गया है कुछ लेखक परिवेश को वर्तमान की सीमा तक ही स्वीकार करते है। इनकी दृष्टि में परिवेश का मूल अर्थ यह है 'आधुनिकता की प्रकृति सूक्ष्म' है। उसकी कोई स्थूल पूर्व निश्चित और अपरिवर्तनीय दिशा नही है, जिसे व्यापक ऐतिहासिक दृष्टि से खोजा जा सके वल्कि हम कह सकते है कि आधुनिकता मूलतः एक खण्डित घटना है जो परिवेशगत है,, [1] परिवेश क्या है ? क्या वह मात्र देशकाल है ? यदि ऐसा है तब परिवेश वर्तमान के नये अर्थ से जुड़ जाता है। वस्तुतः परिवेश कालगत सातत्य के समान्तर गतिशील मानवीय विकास की सांस्कृतिक प्रकिया के अणुओं से संगठित होता है, उसका विस्तार मानवीय चेतना का अतिकमण किया करता है किन्तु मनुष्य उसको अपनी चेतना के अनुरूप खण्डित रूप में ही ग्रहण करने के लिए वाध्य है निर्मल के सभी उपन्यास और कहानियाँ ऐसे ही देशकाल पर परिवर्तनशील सम्बन्धों में निरूपित है।, वेदिन, उपन्यास में आधुनिक परिवेश और मूल्यहीनता की स्थिति पर उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है। पात्र सिगरटों की तस्करी परिवेश के सापेक्ष होकर कह देना चाहता है लन्दन में अभी कुछ दिन पहले मेरे मित्र ने कुछ पैकेट भेजे थे-------पिछले दिनों मे मैं उन्हे ब्लैक में बेचने का विचार कर रहा था।[2]

१-आधुनिकता के पहलू, पृष्ठ १९

२-वे दिन, पृष्ठ १४

.............मैने मन ही मन वादा किया। क्या कर रहे हो आजकल ? कुछ नहीं मैं खाली हूँ। २ उपन्यासकार व्यक्ति की चेतना को अवमूल्यन स्थिति में छू ही लेता है। सच तो यह है कि खालीपन का परिवेश सापेक्षता से अर्जित और संगठित करना चाहता है भले ही उसकी ऊपरी आंखे सबकी निगाहों में हंसती हो और निचले होंठ अजीब सी बड़बड़ाहट रखते हो परन्तु असल में परिवेश में सापेक्षभाव कैंची से काटकर उसके चेहरे पर चश्पा कर दिये है जहां न सम्वेदना है ओर न जीवनगत परम्परा की सुदूर दृष्टि । तभी तो कहा जाता है कि परिवेश एक यथार्थ दृष्टि का नाम है।

परिवेश मूल्यतः देश काल की परिवर्तनशीलता से मानव सम्बन्धों की गतिशीलता को ही रेखांकित करता है। किसी भी दृष्टि या वोध का विस्फोट उसमें सदैव बना रहता है। परिवेश का दवाव ही भावनाओं को पिचकाकर एक दृष्टि या वोध के रूप में संगठित या विकसित करता चलता है। इसलिए अतीत कैसे स्वयं में आधुनिकता का मापदण्ड नहीं हो सकता ''एक चिथड़ा सुख'' उपन्यास की विट्टी अतीत गति ख्यालो में रूग्ण मानसिकता वो ढोकर वहुत ही हताश हो चुकी है इसलिए वर्तमान परिवेश मे भी भाववृत्ति के नाम पर उसे एक अजीव सा विस्मय ही पकड़ने को मिलता है। वह कभी भी दूसरों को घूरते हुए भी अपने को नहीं भुला पाती यह व्यक्ति के मानसिक मूल्यहीनता के नये सन्दर्भ को प्रकट करने वाली प्रक्रिया है।

लिखा गया है ....''वह हसंने लगी ....अजीव सी हंसी जिसका न उससे, न इलाहाबाद से, न उसके वुखार से ताल्लुक था। फिर वह अचानक उसके पास आकर बैठ गयी, दोनों हाथों से उसके गालों को समेट लिया।''[1] वर्तमान की सर्वेदनात्मक दृष्टि में अतीत की उपलब्धियों और वर्तमान की मूल्यहीनता की स्थिति में अतीत और वर्तमान एक दूसरे के समर्थ ही नहीं बल्कि पूरक भी हैं। जिस प्रकार परिविश सापेक्ष वर्तमान परम्परा परछाये अवधि के छाये कुहासे को हटाकर उसमें अपनी स्वचेतना से प्राण प्रतिष्ठा करता है उसी प्रकार अतीत वर्तमान की संवेदनात्मक दृष्टि को वह विन्दु देता है जहां से उसे अपनी आधुनिकता की यात्रा शुरू करनी है।

आधुनिक दृष्टि के मायनों में आज के परिवेश के अनुरूप ही है। 'परिन्दे' में संकलित कहानी 'डायरी का खेल, में यथार्थ परिवेश को वहुत ही पारदर्शिता में गूंथा गया है। बिट्टो के सहज व्यवहार की सार्थकता पर कहानीकार को परिवेश के अंकुर ही उगते दीख पड़ते हैं। जब शाम को विट्टो छत पर टहलने नहीं आयी तव उसे देखने उसका अपना प्रतिवेशी पहुंचता है।

कहता है कि चाची कहां है ?

तुम्हारी भोजाई के संग मेरे लिए लड़का देखने गई है''

१-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ २२

वड़ी निर्लज्ज है बिट्टो......... मैं झेंप सा गया। तो फिर तुम्हारा विवाह होगा,.........
....

हां, फिर मेरा विवाह होगा, और तुम यहीं वैठे सव कुछ देखोगे।''१

परिवेश आज वैज्ञानिक स्वस्थ चेतना वन चुका है जिसके कारण हम यथार्थ पर अधिक भरोसा करने लगे। आधुनिकता एक संवेदना है जो समसामयिक आदमी के दुख दर्द से जुडने में उपजती है । वह सोच की एक ऐसी प्रकिया कही जा सकती है जो आदमी को उसकी विविशताओ से उवारने के उपाय सोचती है । वह स्वाधीनता पर नये-नये बन्दिशों को दूर करने का संकल्प लेती है । यह भी कह सकते है कि परिवेशगत आधुनिकता आदमी को न तो अकेले रहने देती है और न सवसे मिल - जुल कर । निर्मल के उपन्यास 'लाल टीन की छत' में इस दृष्टि के बहुत सारी जीवनगत आयाम काया के इर्द-गिर्द भंवर की तरह चक्कर काट रहे है ।

जैसे ....''बडी उम्र में सुख को पहचाना जा सकता हे.......छोटी उम का दुख जाता है ....जिस उम्र में काया थी, वहां पीडा को लाघकर कर सुख का धेरा शुरू हो जाता था।, या खुद एक तरह का सुख पीड़ा में बदल जाता था।. ....यह जानना असम्भव था।''२

काया की मनः स्थिति परिवेश की मूल्यहीनता से कभी-कभी ऐसी दुखती रंग बन जाती थी जिससे उसके जीवन के सारे रास्ते सिकुड़ जाते थें, और लगता था कि परिवेश की सारी मिट्टी सरक कर उसके पैरो की नीचे आ गयी है जिससे वह पांव रखते ही दलदल में फंसती जाती है। यह सव आज के परिवेशगत सोच का परिणाम है। काया को वे रातें और वे दिन रातें और वे दिन याद आने लगते है जव उसके वावू जी बडी आतुरता से उसे निजात व़द्ध कर लेते है । आज तो उसके जीवन के सामने एक निरीह पगडन्डी ही रह गयी है जिसे चाहो तो निरीह सुख कह सकते है लेकिन उतना सब कुछ नहीं ।

परिवेश की मूल्यहीनता पर विचार करते हुए हमें जीवन पद्धति के केन्द्र पर दृष्टि गड़ानी पडती हैं। व्यक्ति आज अतीत मूलक ऋण के वोझ को उतार फेंक देना चाहता है । इसीलिये वह वर्तमान के लिये परिवेश के हर क्षण को प्रासंगिक होने देता है। अतीत की उपलब्धियों के आधार पर कभी-कभी हम वर्तमान परिवेश एक खूँटी पर टॉग देते है और इतने अधिक उदांत्तवादी वन जाते है कि वर्तमान के जायके में जायका ना मानकर कुछ उलटे सीधे सूत्र उस खूँटी से बंधे अतीत से जोड़कर गले का फन्दा बना लिया करते हैं और फिर जव आदमी अतीत में आकंठ डूवकर झूमता है तो नये आत्महनन का दरवाजा ही खुला दिखायी देता है। आधुनिकता का जटिल और गतिशील यदि कोइ घटक तत्व है तो परिवेश भी है, फिर ऐसे परिवेश में फंसा हुआ हर आदमी मानव मूल्यों की प्रासंगिकता पर शंका करने लगा है, और सही भी

१-परिन्दे, पृष्ठ १९
२-लाल टीन की छत, पृष्ठ ११६

है आज जीवन की गरिमा को प्रस्तावित करने वाले मानवीय अर्थ संदर्भ धीरे-धीरे चुकने लगे तथा जन मानस मे निरर्थकता का उदय होने लगा है। निर्मल ने इस प्रकिया के रूप में कुंठा, खीझ, आकोश की अभिव्यक्ति अपनी कहानियों में खास तौर से प्रस्तुत की है। 'वीच वहस मे 'की कहानी 'वीक एण्ड' में पात्रगत मनः स्थिति का जितना अधिक विश्लेषण किया गया है , उतना ही उसमें मूल्यहीनता की सीमा पर वहुत वार सोचा गया हैं। जैसे.........कभी........कभी ऐसा होता है, कि आदमी जीता हुआ भी करीब....करीब मरने की सीमा तक पंहुच जाता है ......मरता नहीं हैं, लेकिन मरते हुए प्राणी की सारी जिन्दगी घूम जाती है ।''.1

अपने पिता के साथ हसती हुई वह स्त्री पात्र जिसके चेहरे पर परिवेश की पूरी छाया है वह परिवेशगत चिन्तन पर अपने सोच का इजहार करते हुए कहती है कि मुझे एक चीज पता चली..............दुख ही ऐसी चीज है जो अलग -अलग वंटकर छोटा नहीं होता बड़ा भी नही होता सिर्फ चमकीला और साफ हो जाता है। इन शव्दो में परिवेशगत खाली अन्तरालों के नये सन्दर्भ को टटोला गया है। निरर्थकता भी आज के आधुनिकता के घटको में एक नियति वन गयी है । यही कारण है कि व्यक्ति के आधुनिक या आधुनिक होने का सम्वन्ध इस वात से है कि व्यक्ति निरर्थकता को किस मनः स्थिति से ग्रहण करता है तो वह निश्चित रूप से उसकी जीवन उर्जा को सोखने वाली होगी। वह व्यक्ति का कार्य क्षमता पर ही नही वल्कि उसकी मानसिकता पर भी ऋणत्मक प्रभाव डालेगी किन्तु यदि उसकी निरर्थकता वोध उसे जीवन के प्रति संवेदनशील बनाता है तो उसे उसकी आधुनिक मानिसकता का प्रतीक ही कहा जायेगा । यह वह विन्दु है जहां जीने मरने का भ्रम भी आदमियो को होता रहता है । 'खूनी दहलीज' कहानी मे शम्मी भाई के मूल्य चेतना के उन श्रोतों पर विश्वास करती है, जिसका सम्बन्ध परिवेश से जुड़ा हुआ है । इसी कहानी का पात्र जैली शम्मी भाई के सह सम्बन्धो में अपने पराये के अन्तर को भी विस्मृत कर जाता है । कहानीकार कहता है कि शम्मी भाई जव अपने हास्टल की वातें वताते है, तो वह और जैली विस्मय और कौतुहूल से टुकर - टुकर उनके चेहरे, उनके हिलते हुए होठों को निहारती है। 'जान-पहचान इतनी पुरानी है कि अपने - पराये का अन्तर कभी उनके बीच आया हो तो याद नही पड़ता ।2

निरर्थकता की सकारात्मक अनुभूति इस प्रकार की कहानियों में अधिकांश मिलती हैं। परिवेशगत मूल्य चेतना आज अर्थहीन भले लगे लेकिन यह सही है कि मूल्यो का सही प्रयोग आज के अनुरूप ही हो रहा है, फिर चाहे उसे भले हम नैतिक कहें या अनैतिक ।

परिवेशगत निर्वैयक्तिक दृष्टि का भी कथाकार ने जगह-जगह मूल्यवादी प्रतिमानो पर विचार किया है । यूरोप की अर्थहीनता उन बृहत्तर मूल्यों की तलाश

१-वीच बहस में, पृष्ठ ५० २-मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ ७३

में ऋण पाती है, जो भोग की अंधी दौड़ में उसके हाथ से निकल गये थे।

यूरोप मे कार्य बहुलता के कारण जीवन में अर्थहीनता का समावेश हुआ है जिनके कारण उनके परिवेश में संवेदनशील भावों की कमी आ गयी। यथार्थ का ग्रहण मूलतः परिवेशगत होता है अतः उससे सम्प्रक्त किये विना सृजनात्मक अनुभूति के आधार फलक पर परिवेश का कितना योग है यह वातें ''कौवे और काला पानी'' के मध्य संकलित कहानियों में जगह - जगह है ''जिन्दगी यहां और वहां'' कहानी का पात्र ... फैटी ने परिवेशगत यथार्थ का सीधा अनुभव किया है। इस क्या वात है? वह बीच सड़क पर ठिठक गयी....वह चली गयी........सिर पर बंधा एक स्क्राफ स्लेटी रंग का कुरता, माथे पर काली विन्दी ------- वह अपने भीतर की धड़कनो को समेट लेती है , जैसे कोई तैराक कूदने से पहले अपनी देह को बटोर लेता है ------- वह क्षण है, उसने सोचा यह मौका है, मै अभी नहीं कूदी तो जिन्दगी भर किनारे पर खड़ी रहूंगी,-------- '' फैटी ''[1] इन शव्दों की अर्थवत्ता परिवेश सापेक्ष सड़क की ठिठकन से जुड़ी हुयी हैं। व्यक्ति अपने हथप्रभ मन से भी परिवेश के साहारे निर्णय ले बैठता हैं। उसके मन की परतों में दांये-वांये कुछ चमकती आशायें जुड़ी होती हैं। जो उसकी जिन्दगी का असली हिस्सा वन जाती है। एक ही झटके में वह तार-तार सभी अरमानों को कर देता है। फिर दूसरे ही क्षण उस किये हुये पर प्रायश्चित भी करता है। यह एक अजीब सी वात है कि परिवेशगत यथार्थता व्यक्ति को भावहीन वना दिया करती हैं। इसे स्वचेतना का ऊंघता हुआ स्वरूप भी कहा जा सकता है। आधुनिकता के निकटवर्ती सम्वन्ध समसामयिक परिवेश से ही जुड़े हुए है। जव व्यक्ति और परिवेश के अन्तरविरोध के फलस्वरूप हमें कुछ विद्रोही स्वर सुनाई पड़ते है तव वह विद्रोह मूल्यवादी चेतनाओं के सापेक्ष गिरता उभरता प्रतीत होता है । हम परिवेश को अभी विन्यस्त भी नहीं कर पाते और आधुनिकता के स्तरों का पग-पग पर अनुभव करने लगते है । डॉ० विधानिवास मिश्र ने कहा भी है ---------- आधुनिक ''संवेदना व्यर्थता की चुभन देती रहती है। परम्परा व्यर्थता को महत्तर अर्थ की भूमिका वनाती रहती है। सधती मुझसें दोनों नही , न परम्परा न आधुनिकता, विभक्त आत्मा ही वना रहता है। पर दोनों के वीच जीने के लिए आकुलता शालती रहती है''[2] परिवेशगत ऐसी शालती यथार्थवादी आधुनिकता के पंख जगह-जगह निर्मल की कहानियों में फड़फड़ाये हैं। इस फड़फड़ाहट में परिवेश का कितना वड़ा प्रयोगधर्म है जिसे ''अमालियां'' कहानी में स्पष्ट किया गया है ।

.... ''हम आसान वाक्यों के अलावा कभी-कभी इसारों से भी वातचीत कर लेते थे, लेकिन कुछ देर वात हम उव जाते , क्योंकि शव्द और इशारों के वीच फैले शून्य को भरने के लिये जो अपनापन जरूरी होता है ,वह हम में नहीं था''? शून्यता को पाटने का मूल आधार परिवेश ही है। व्यक्ति के बीच कियाशीलता

१. कौवे और काला पानी, पृष्ठ ६६
२. धर्मयुग- नवम्बर १९९७

परिवेश से गुंथी हुई होती हैं। इस कहानी में एक जगह तो यहां तक कहा गया है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से तब तक बात नही करता है जब तक तीसरा व्यक्ति उनके बीच न हो । इस प्रकार तीसरा व्यक्ति देशकाल वातावरण का अगुअन होता है। वह उन दोनों के मध्य परिवेश सापेक्ष प्रासंगिकता का इजहार करता चलता है, इसीलिए प्रश्न, संदेह, मंथन, विश्लेषण आदि सब कुछ परिवेशगामी होते है, जिनसे हम चाहकर भी दूर नहीं भाग सकते। जिस अनुपात में साहित्य अपने परिवेश से जुड़ा रहता है उसी अनुपात में उसकी आधुनिकता भी असंदिग्ध होती है। जीवन साहित्य और आधुनिकता का यह त्रिकोणात्मक सम्बन्ध परिवेश से ही बंधा हुआ है। कथाकार निर्मल वर्मा । यूरोपीय परिवेशगत स्वचेतनाओ को कहानियों का कथ्य बनाया है। प्रतिगामी वस्तुपरक चेतना के मंथन से परिवेश का जीवन्त संवाद इन कहानियों मे स्थान - स्थान पर है। देशकाल के दायित्व के साथ - साथ उस क्षण की गहरी तीव्रानुभूति की ग्राहयता जो परिस्थितियो से गुजरती है, उपजती है, का समावेश कहानीकार ने मानसिकता की उत्तेजित स्थिति में किया है । छोटे बड़े जीवन गत आयाम हर जगह और हरेक के साथ परिवेश से ही सटे हुये है।

प्रतीकात्मक परिवेश का यह अनूठा उदाहरण विचारणीय है........"चारो ओर दूर - दूर तक भूरी - सूखी मिट्टी के ऊंचे - नीचे टीलों और दूहों के बीच झाड़ियां थीं, छोटी - छोटी चट्टानो के बीच सूखी घास उग आयी थी, सड़ते हुए पीले पत्ते से एक अजीब, नशीली - सी, बोझिल, कसैली गंध आ रही थी, मैली तहों पर बिखरी - बिखरी सी हवा थी?"[1] रूनी और शम्मी भाई के लिये सारा परिवेश आंखों पर छितराया हुआ है बेर की सूखी मटियाली झाड़िया चलते जीवन के ठिठकने और धुंधलके के कुहासे में गढ़ने के परिचायक हैं। हिलती - डुलती खामोश छायायें उनका भूला हुआ स्वप्न है, ऊबड़ - खाबड जमीन जीवनगत उतार चढ़ावों की स्थितियां लपेटे हुए हैं । वे पात्र फिसलते - फिसलते अपने ही कोमल कठोर अनुभवों में ढहते चले जाते जाता है । उनके इर्द - गिर्द भावनाओं की गहरी सवेंदनाए चुक गयी है । वस्तुतः परिवेश मे सापेक्ष जीवन की सार्थकता जंहा एक ओर जुड़ी होती है वहीं दूसरी ओर उभरे हुए भवनाओं के ऐसे दूहे होते है जिन्हें बहुत देर तक अन्तरंग का अविभाज्य मान लिया जाता है। मूल्यहीनता की यन्त्रणा ही आत्म साक्षात्कार की सर्जना अवश्य होती है। निरर्थकता का बोध एक यन्त्रणा ही है, ठीक उसी प्रकार जैसे आधुनिकता का ग्रहण एक वेदना है । वह इस बात का प्रतीक नही कि व्यक्ति के पास कोई कार्य नही है और वह निठल्ला होकर जीवन की मूल्यहीनता को झेल रहा है । मूल्यहीनता बोध का मूल कारण यही है कि व्यक्ति परिवेश के दबाव, घंटनाओ के जाल तथा अस्तित्व की सुरक्षा मे उलझते हुए जब अपने जीवन में किसी वृहत्तर अर्थ की तलाश करता है तो उसे निराश होना पड़ता है । वह पाता है कि व्यस्तता की

१-पिछली गर्मियों में, पृष्ठ ७१

अंधी दौड़ में भी उसके जीवन मे कोई ऐसा मूल्य शेष नहीं रह गया जिसके लिए वह अपने प्राणों से प्रतिष्ठा कर सके। व्यक्ति आज स्वाधीन मूल्यो में भली - भांति गुंथ गया है। उसके जीवन की धुरी आत्मकेन्द्रित मूल्य चेतना पर टिकी हुई है कि वह आज उत्तेजित दिगभ्रान्तियों में खुद को फंसा हुआ महसूसता है । यह कचोटन उसे विस्मृत जरूर कर देती है, परन्तु वह अपनी छाया को ही दूसरा साथी मानकर
मूल्यहीनता वोध का मूल कारण यही है कि व्यक्ति परिवेश के दवाव, घटनाओ के जाल तथा अस्तित्व की सुरक्षा मे उलझते हुए जव अपने जीवन में किसी वृहत्तर अर्थ की तलाश करता है तो उसे निराश होना पड़ता है । वह पाता है कि व्यस्तता की अंधी दौड़ में भी उसके जीवन मे कोई ऐसा मूल्य शेष नहीं रह गया जिसके लिए वह अपने प्राणों से प्रतिष्ठा कर सके। व्यक्ति आज स्वाधीन मूल्यो में भली - भांति गुंथ गया है। उसके जीवन की धुरी आत्मकेन्द्रित मूल्य चेतना पर टिकी हुई है कि वह आज उत्तेजित दिगभ्रान्तियों में खुद को फंसा हुआ महसूसता है । यह कचोटन उसे विस्मृत जरूर कर देती है, परन्तु वह अपनी छाया को ही दूसरा साथी मानकर उत्तरोत्तर परिवेश से हाथ मिलाकर चलता है। इस प्रकार की चेतना परिवेश में गुंथी हुई दृष्टिगत होती है। काल सापेक्ष जितना भी आलोक होता है, वह सव उसके मन पर, चेहरे पर एक वारगी उतर आता है, 'उनके कमरे' में कहानी में लड़के के हल्के से सुर्ख चेहरे को देखकर कहा गया है कि.........."वह उन लोगों में से था जो ठीक समय पर ठीक बाते नहीं कर पाते।"[१] आधुनिकता के घटक तत्वों मे स्वचेतना परक परिवेश के दवावों का यह निर्मम साक्षात्कार है व्यक्ति सव कुछ जानता हुआ भी वक्त के तकाजे की गिरफ्त में आकर धीरे - धीरे सव कुछ अलग-अलग करता चलता है परिणामस्वरूप मूल्यहीनता की नये सन्दर्भ में तलाश शुरू हो जाती है जो पीढ़ी दर पीढ़ी एक दूसरे को संक्रमित करती है। वर्तमान युग में व्यक्ति का अपने परिवेश मे इस प्रकार का सीधा संघर्ष है आज मनुष्य परिवेश के दवाव से अकेला पड़ गया है, फिर वह तो परिस्थितियों के सामने समर्पण करे या फिर निर्मम साक्षात्कार करता हुआ सब कुछ झेलता रहे ।

तक कहा गया है कि

१.जलती झाडी, पृष्ठ ९२

(ख) पारिवारिक और सामाजिक मूल्यो मे बदलाव :-

पारिवार : मानव समाज की प्राचीनतनम एवं महत्वपूर्ण संस्था है। परिवार सामाजिक जीवन की प्रारम्भिक ईकाई है। परिवार कें कमिक विकास के लिए सामाजिक संम्बन्धों का विकास होता है, परिवार के साथ समाज में अत्यन्त सुन्दर समाजिक विश्वासों,रीति-रिवाजो ,विचारो,संस्थाओं का विकास हुआ आपसी हितो की रक्षा के लिए परिवार परस्पर अनुपूरक है भारतीय परिवार की महत्ता पर यह दृष्टि वहुत कुछ कामयाव है परन्तु यूरोपीय समाज संरचना में संयुक्त परिवार जैसी कोई बुनियाद रूपरेखा नही है। वहा मौलिक रूप से व्यक्तिशः विखराव हैं, वहॉ समाजिक सम्बन्धों के मोहपाश से वे सभी विमुक्त है। वहॉ के स्त्री पुरूष सम्बन्ध भी सामाजिक कर्म न बनकर अपने-अपने आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन वन गया है। पारिवारिक सम्बन्धों में यह परिवर्तन वहुत कुछ निजी अनिवार्यता का वोध करता है । आज इस प्रकार की यथार्थवादी प्रवृित का वहुत कुछ प्रभाव भारतीय जनमानस पर भी दृष्टिगत होता हैं मि० के० ए०एन० शास्त्री ने भारतीय समाज सापेक्ष वदलाव पर प्रकाश डालते हुये इस प्रवृति की ओर संकेत किया - the joint family system remained unimpaired till the end of nineteenth century when the idads of individualism began of affect indrasociety in general'[1]

स्वतन्त्रयोतर परिवार में विघटन वाह्य कम है आन्तरिक अधिक है। दृश्यरूप में कम है और अनुभूति-सत्य अधिक है यह विघटन घटना मूलक एवं सपाट न होकर सूक्ष्म एवं जटिल है। वस्तुतः यह आज की संरचना का परिणम है फलतः मान्यताओं मूल्यों एवं भावनाओं में विखराव आया है, जो अनेक नई समस्याओं को जन्म दे रहा है भारत मे हम विघटन का मुख्य कारण जनतांत्रिक शासन प्रणाली और पूजीवादी अर्थव्यवस्था के व्यक्ति का अपने परिवेश मे इस प्रकार का सीधा संघर्ष है आज मनुष्य परिवेश के दबाव से अकेला पड गया है परन्तु मनुष्य अपने आधुनिक युग को समझते हुए फिर वह तो परिस्थितियों के सामने समर्पण करे या फिर निर्भय साक्षात्कार करता हुआ सब परिस्थितियो को झेलता रहे मूल्य से है, इसलिये व्यक्तिवादी प्रवृति का विकास हुआ है। कथाकार निर्मल वर्मा ने पारिवारिक जीवन के वदलते देशीय और यूरोपीय संस्कृति के परिक्षेपों को विश्लेषित किया है । उनके उपन्यास 'वे दिन' में, स्त्री-पुरूष के यथार्थ सम्वन्धों को नये आयाम प्रदान किये गये है---"स्त्री ने पुरूष से कहा कि उसे वीसा नहीं मिल सकता पुरूष अपेक्षा भरी दृष्टि से उसकी ओर देखता हुआ कहता है कि तुम चाहो, तो मिल सकता है। उसने आंखे उपर उठाई-एक अन्जान सा विस्मय उनमे भरा था। मेरे चाहने से ? तुम सोचते हो,वह वीसा के लिये मुझसे विवाह करेगी ?तुम साथ रहते हो ....मैने कहा हम सिर्फ

१. पिछली गर्मियों में, पृष्ठ ६२ 1 - India - A Historical survey - 63

साथ रहते है ? इस कथन मे दो वाते उभर आयी है। ....एक तो यह पति पत्नी का सम्बन्ध बदलती आर्थिक परिस्थिंतियो से जुडा हुआ है या यो कहे कि पति-पत्नी का सम्बन्ध बाहर आने जाने की सुविधा की दृष्टि निर्मित किया गया है। दूसरी बात यह है कि स्त्री-पुरूष सहवर्ती सम्बन्ध को पारस्परिक जरूरतो के कारण से है। यूरोप की स्त्री ....किसी भी पुरूष के साथ रह सकती है और साथ रहना वैवाहिक जरूरत नही समझी जाती। इसी उपन्यास में कथाकार ने रायना पात्र के माध्यम से वहुत तीखी किन्तु यथार्थतः की ओर संकेत कराया है,आप विदेशी है? हां मैने मुस्कराकर उसकी ओर देखा अपनी स्त्री भी ? मैने कहा वह वहुत सुन्दर है---- उसने देखकर इशारा किया। मैने कहा कि वह मेरी स्त्री नही है उससे कोई अन्तर नही पडता ... वह बहुत सुन्दर है उसने कहा''? यह निरर्थक कोशिश व्यक्ति के बीच जन्मी मनोवृत्ति का एक रूप है? आज की झुलसते क्षणों में उपयोग ही खास मुद्दा बना हुआ है उपन्यासकार यूरोपीय स्त्री पुरूष के सह सम्बन्ध पर जितना अधिक सोच सका है, 'वे दिन' के कथानक मे उसने उडेल दिया है वस्तुतः सम्वेदनाओ और भावनाओं का स्थान गहरी अचूक बौद्धिकता ने ग्रहण कर लिया है । निर्मलवर्मा की कहानियो के यथार्थ को स्पष्ट करने में परिवार के सम्बन्ध गत विचार बहुत सहायक है। 'तीसरा गवाह' की नीरजा, रोहतगी साहब से वहुत प्रेम करती है और वह कोर्ट में जाकर दाम्पत्य जीवन को स्वीकार भी कर लेना चाहते थे लेकिन यथार्थ की गहरी संवेदिता का उसे तब अहसास होता है जब वह १० मिनट के माहौल को देखकर अपना निर्णय वदल लेती है। रोहतगी साहब बहुत सुलझे किस्म के इंसान है, वे प्रेम विवाह की जिन्दादिली को भी कुछ वर्षो तक स्वीकारते है। उनका इस कहानी में मत रहता है कि जिसने प्रेम विवाह किया हो, हो सकता है कि चन्द दिनो के वाद ही वे एक दूसरे को छोडकर किसी अज्ञात दिशा में चले जाये। इस तथ्य की ओर इशारा करते हुए वे कहते है ....कि बहुत मुमकिन है कि शादी के वाद उसने गलती महसूस की है। आखिर सच्चे प्रेम की गहराई का तो शादी के बाद ही पता चलता है। इसमें इतनी आश्चर्यजनक बात क्या है ? ऐसी बारदात तो रोज देखने सुनने में आती है? प्रेम और विवाह के सम्बन्ध में घिसी-पिटी मान्यतायें किसी भी वैज्ञानिक चेतना को अंगीकार नही करती। मध्यवर्गीय समाज मे आज या यथार्थ पहलू बहुत कुछ उभरकर समस्या वना हुआ है ''बीच बहस में'' कहानी का पिता बीमार है और वे अपने रिश्तो को भुलाकर बाद-प्रतिवाद के अखाडे में खडे हो जाते है और यहां तक की उनकी पत्नी भी भूल चूकी है कि वर्षो पहले का बीमार मरीज उसका पति रह चुका है। ''छुट्टियो के बाद'' कहानी में जिन्दगी का कुछ दूसरा ही आयाम हुआ है। 'मार्था' पात्र के विस्मयपरक जीवन की यह कहानी यूरोपीय संस्कृति का अनूठा उदाहरण है इस कहानी की नायिका छुट्टियो को व्यतीत करने के लिये एक प्रेमी की खोज करती है और वह पेरिस में इस प्रकार अपने प्रेमी से लिपटती

1- [illegible]
२-वे दिन पृष्ठ ७४-७५

है। कि जैसे वह अपने मंगेतर से लिपट रही हो? स्त्री पुरुष का यह आकर्षण जीवन के धुधलके में एक प्रकाश है और इसी प्रकाश के सहारे जीवन के कुछेक क्षणो में गर्मी भर लेना चाहते है। इसी कहानी में फ्रांसीसियों को प्यार करते देखना अपने में एक अनुभव है ''पेरिस मे मैं जिस मित्र के यहां ठहरा था, वह अपनी मंगेतर के साथ सोने से पहले मौत्सीट का रिकार्ड रेट वाहन की बोतल और सलुआ का कविता संग्रह रखना नही भूलता था। मानो वह अपने कमरे में प्यार करने नही, बाहर वही धूप मे समुद्र के किनारे पिकनिक मनाने जा रहा हो।''[1]

इसी संग्रह की दूसरी कहानी ''वीक एण्ड'' की नयिका स्पष्ट करती है कि उसे दुनिया में यदि किसी पर भरोसा है तो कुछ अपने शरीर पर। इसी लिये वह देर रात के भोगे हुए यथार्थ को देहात्म बोध से जोडे रहती है। कहानी के प्रारम्भ में ही उसके रोमांच भरे समूचे देह की चेतावनी को कहानीकार ने प्रकट किया है..............''अपने विस्तर पर रात गुंजारी हो ....जहां पिछली रात खत्म हुए थे ....अपने उतारे हुए कपडे उसकी नंगी बाहे ....सब कुछ पिछली रात से जुडे हुए है, अपने बोझ के संग। वह उन्हे देंखती रही''[2] स्त्री पुरुष का यह सह सम्बन्ध जीवन की हल्की ठिठकन को उगलता है और आज के आधुनिकताबोध में वह सब खुली आंखो से देखा जाता है। आज यह कितना आसान है कि यूरोपीय संम्बन्धो मे छोड़ी हुयी पत्नी और फैलती हुई दुनिया सब अविचारणीय है। उसके जीवनगत खाली जगह को भरने के लिये हवा की तरह हर सूने कमरे को कोई न कोई बसेरा करता है। इसलिए उन्हें भोग और प्रतीक्षा के बीच कोई अन्तराल दृष्टिगत नही होता है । इन शहरो के लोग इस यथार्थपरक सम्बन्ध की मार करने वालो को निगाहो से जान लेते है, न तो उन्हें सूघने की जरूरत पडती है न कहने की। वहां का व्यक्ति शास्वत मांग करता है। उसे आंख मूदकर अपने चेहरे की उत्सुकता को जताने और बताने का हक है। आज की कहानी पारिवारिक संम्बन्धो की बुनियादी रेखा को उरेहने में बहुत अधिक सफल है। स्त्री पुरुष के प्रेम संम्बन्धो की शून्यता 'डायरी का खेल' कहानी में देख सकते है बब्बू की शून्यता असफल प्रेम से उदभुत है ....वह सोचा करता है कि आज भी जब कभी शाम के धुधलके में मै अपने में अकेला ऊबा सा खिडकी के बाहर मकानो की छतो पर उतरती धूप को देखता हूँ,[3] तो एक क्षण के लिए ऐसा भ्रम हो जाता है कि समय के अन्तराल के परे कुछ ऐसा शेष रह गया है, जो बीता नही है जो काल की डोर से नहीं बंध पाया है, जो वर्षो से टूटी पंतग सा शून्य में डगमगाता सा रह गया गया है................ न कही गिरता है, न कही पकड़ में आता है।''[4]

बब्बू को बिट्टो की तरल स्नग्ध खिलखिलाहट शब्दातीत रहस्य बन चुकी है। उसके लिए शाम से ही उस देहरी की ओर पैर नही बढ पाते जहां अजीब सा अज्ञात

१.परिन्दे, पृष्ठ ४१
२.वीच वहस में, पृष्ठ ३२
४. वीच वहस, में ३६
५. परिन्दे,१५

विस्मय उसे उधर जाने से रोक रहा है और वह सोचने लगता है कि जाने से पहले विट्टो को कुछ ऐसा ही कह जाता जिससे कि मुझे अपनी कहानी की 'फिनिशिंग टच' देने की सुविधा होती। इन सत्य घटनाओं और स्मृतियो का जोड परिवारगत समाजगत अनुभवों में वहुत देर तक सालता रहता है। कहानीकार वर्मा ने परिवारगत ऐसे विचित्र आयाम चुने है जिन्हे नये अर्थ और संदर्भ दिये जा सकते है। यूरोपीय समुदाय में आज भी ऐसे प्रेमियो को देखा जाता है जो वाप बन चुके है, लेकिन शादी नही की। ''पिता और प्रेमी'' कहानी में इस प्रकार के संम्वन्ध का वर्णन पथगामी होकर कहानीकार ने किया है.............'लोगो की आखें कभी उस पर उठती थी कभी वच्चे पर।

कितनी उम्र है?

,,भीड में खडी एक अधेड उम्र स्त्री ने वच्चे के सिर को सहलाते हुए पूछा। अगले महीने दस महीने का होगा ....उसने कहा। स्त्री उसकी ओर देखकर मुस्कराने लगी फिर जरां उसे खुश करने के लिए कहा, विल्कुल वाप की शक्ल पर गया है।''१

उस अन पहचानी औरत ने अनजाने ही वाप वेटी के संम्वन्धों को छील दिया हैं जिससे उस पिता का भी वच्चे की मॉ को अहसास हो गया है जो सव कुछ उसका है लेकिन इतना होने के वावजूद हर समय वह महज दर्शक ही रह गया है। सामाजिक दायरे की ओर इगिंत करने वाली अन्य कहानियॉ निर्मल वर्मा ने प्रस्तुत की हैं जिनमे यूरोपीय भेद-भाव की झलक तो है ही साथ में अनिवार्य जीवन की वह विडम्वना है जो केवल समाज को ही खोखला नहीं करती है, वल्कि राष्ट्र को भी नई समस्या के सामने उन्मुख करती है

'वीच वहस' संकलित कहानी 'दो घर' में एक घर के वच्चे दूसरे घर के बच्चों के साथ खेल नहीं सकतें है क्योकि उनका पिता भारतीय है मॉ अग्रेंज है। रंग जरा सावंला होने के कारण पड़ोसी के बच्चे उन्हें जिप्सी कहकर चिढातें है। मॉ टीचर से शिकायत करती है लेकिन कोई फायदा नहीं होता है। कहा गया है ......"शिकायत कैसी? ....मैने पूछा।

दूसरे बच्चे इन्हें चिढाते है। कहते है जिप्सी है........... यहॉ रंग जरा भी काला हो , तो उन्हे सब जिप्सी दिखाई देते है कोई उनसे वोलता नही है, कोई उनके साथ खेलता भी नहीं है।"२

रंग भेद का यह नमूना अमानवीय स्थिति का परिचायक है। वर्मा जी ने इस सामाजिक विसमता को सिलसिलेवार नई कहांनियों में प्रकट किया है । रंग भेद की नीति के कारण यूरोपीय समाज समाज न रहकर परिन्दा वन गया है । इसी तथ्य को "लन्दन की एक रात" कहानी में भली-भॉति प्रकट किया गया ''लन्दन की एक रात" जार्ज नीग्रो होने के कारण सर्वत्र उपेक्षा झेल रहा है जब अग्रेंज एक-एक नीग्रो को चुनकर

१. पिछली गर्मियों में, पृष्ठ ३१-३२
२. बीच बहस में, पृष्ठ ७१

लिंच कर रहे थे, वह एक व्हाइट पर्सनालिटी के साथ अपने को जोड़ने के लिए उत्सुक निगाहों से बैचेन हो उठता है। तब अंग्रेजो की चेहरे पर पड़ी हुई कोधपरक दृष्टि ने उन्हे भीतर इतनी दूर फेक दिया था जैसे कि उससे किसी भी कोण का सम्वंध न हो। डॉ० नामवर सिंह ने इस कहानी को इसी कारण फासिस्टवादी कहानी सिद्ध किया है? यह वात केवल लन्दन में ही नही वल्कि वैस्टइण्डीज, दक्षिण अफ्रीका आदि देशो में भी लागू है रंगभेद की नीति अमानवीय तो है ही साथ ही सामाजिकता के लिए आज वहुत वड़ा अभिशाप लिये हुए है। गोरे लोगो के सामने काले लोगो के मन का सूनापन उनके खोखलेपन की गवाही देकर उनके हीनता के भाव को उड़ेलता रहता है और उन्हे अहसास होता है कि उनकी अपेक्षा से वे लोग अपने आपने में कुछ भी नही है स्वतंत्र राष्ट्र की चेतनावादी नीति में भी यह तथ्य आज ज्वलन्त समस्या वना हुआ है।

पारिवारिक एवं सामाजिक स्वातन्त्र वर्ण को निर्मल वर्मा ने सर्वाधिक महत्व दिया है। वैसे हर व्यक्ति परिवार और राष्ट्र की सीमाओ में आवद्ध है फिर भी ''दो घर '' कहानी का प्रावासी सर्वत्र स्वतन्त्र है। वह भारतीय है कलकत्ता में पत्नी और ८ वर्ष का लडका है और विदेश में अविवाहित पत्नी और दो वच्चे है। वह ना भारत लौट आना चाहता है क्योकि उसे डर लगता है और विदेश में रह नही पाता क्योकि उसकी उपेक्षा होती है। इस प्रकार के सामाजिक पारिवारिक संघर्ष थोडे वहुत निर्मल वर्मा के हर कथा पात्र में मिल जाते है। 'परिन्दे' और 'दहलीज' में इन्ही समस्याओं की नायिका अपने को दुनिया में समायोजित नहीं कर पाती है। वह पूरे विश्व में अपनें साथ कोई संगति नही उठा पाती क्योकि उसका प्रेमी मर चुका है। इसीलिए वह छुट्टियों भी स्नोफाल के बीच उस पहाडी़ कान्वेन्ट में अकेले बिताया करती है जहां दरारो से भी वर्फ का पानी टपकता है। पानी से वचने के लिए वह कोने में सिमटी रहती है लेकिन समाज के बीच प्रकाश में रहना उसे स्वीकार नही। गीली लकडियो से कमरे में वह धुंआ करती है,अकेलेपन से छुटकारा पाने के लिए डा० साहव या चपरासी को देर तक रोके रहती है। लेकिन रूंधे गले से वह यही कहती है ....''डाक्टर ....सब कुछ होने के बावजूद वह क्या चीज है, जो हमे चलाये चलती है, हम रूकते है तो भी अपने रेले में वह हमें घसीट ले जाती है..................वह नहीं पा रही, जैसे अंधेरे में कुछ खो गया है, जो शायद कभी नहीं मिल पायेगा, इस प्रकार के कथावृत चित्र हिन्दुस्तानी संस्कृति में बहुत मिलेगे।[1] 'दहलीज' कहानी की पात्र रूनी भी बेमिसाल उदाहरण है। रूनी शम्मी को चाहती है, किन्तु विसंगति यह है कि वह शम्मी को कभी भी छू तक नही पाती। वे दोनो अलग-अलग जीते है। वह शनिवार की प्रतीक्षा सप्ताह भर करती है। उसका दिल रवड के छल्ले की मानिन्द खीचता है किन्तु उन दोंनो की दुनियां बहुत अलग है। कहानीकार ने एक हल्की सी मुलाकात में इन घडकनो के अन्दाज

१-परिन्दे, पृष्ठ १५८

को प्रकट किया है ...."रूनी का दिल धौकनीं की तरह धडकने लगा। शायद शम्मी भाई वही बात कहने वाले है, जिसे वह अकेले मे रात को सोने से पहले कई वार मन ही मन सोच चुकी है।

..........मानो शम्मी भाई की आवाज ने उसकी नंगी पसलियों को हौले-से उमेठ दिया हो।उसे लगा, चाय की केतली की टीकोजी पर जो लाल-नीली मछलियां काढ़ी गयीं है, वे अभी उछलकर हवा में तैरने लगेगी और शम्मी भाई सव-कुछ समझ जायेगे-------उनसे कुछ भी छिपा न रहेगा';'?

ऐसा क्यूं लगता है?

क्या सामाजिक दायरे में बसी हुई अनुभूति बासी पड़ गयी है।
एक अपरिचित डर की खट्टी -खट्टी सी खुशवू उसे अपने में धीरे-धीरे घेर रही है। रूनी के शरीर के एक-एक अंग की गांठ खुलती जा रही है, मन रूक जाता है,[1]और लगता है कि लॉन से बाहर निकलकर वह धरती के अन्तिम छोर तक आ गयी है और उसके परे केवल दिल की धडकने है जिसे सुनकर उसका सिर चकराने लगता है। इस प्रकार की विसंगतियां कहानीकार ने जगह-जगह पर अपनी कहानियों में अभिव्यक्त की हैं।

सामाजिक एवं पारिवारिक प्रतिमानो का वदलाव यौन संन्दर्भ विशेष अर्थ में यूरोपीय सभ्यता का पहचान रूप बन गया है। 'अन्तर' कहानी में यह विसंगती यौन सम्बन्धो की देन है। इस कहानी की नायिका के अन्दर गृहस्त एवं प्रेम की ललक है। परन्तु जिन्दगी उनके हाथों से बहुत जल्दी फिसलती जा रही है और ऐसा लगता है, उसे कि यह उसके लिये कसैला रस हो गया है। नायिका को इच्छा के विरूद्ध गर्भपात काराना पड़ता है। वह फिर भी एक कमजोर सी मुस्कराहट होंठों पर समेटे हुए है। एक छोटा सा गर्म आंसू उसकी आंखो की कोरों में बहता हुआ उसके बालों में खो गया। -२

इसी तथ्य का दूसरा उदाहरण 'उनके कमरे' की कहानी में देखा जाा सकता है............."लडकी की आंखों में गहरा सा विस्मय छलक आया था और दबा सा डर भी जो केवल उन लोगो में होता है, जिनके आगे सारी उम्र पड़ी होती है। वह कुछ उसी किस्म का होता है, जब वह किसी बहुत नाजुक और कीमती चीज को हाथों में पकड़ते है। उसे छूने का इतना सुख नही जितना छूट जाने का डर"।-३

लड़की सोचने लगती है कि बचपन में उसके माता-पिता ने उसे छोड दिया और जवानी में उसके मित्र लडके ने जिसने सव कुछ अविश्वसनीय वना दिया है। इसलिए वह मन ही मन गुनगुनाती है कि सुख की कोई वात पहले से नही सोचनी चाहिए क्योंकि वह सोचने के साथ ही मर जाती है और वाद में यदि जीवित भी रहता है तो पहले की तरह जैसा तो रह ही नही पाता। वस्तुतः यह जिन्दगी का जीता-जागता स्वरूप कुछ है भी विचित्र ।

१-जलती साडी ,पृष्ठ ९१ २-जलती साडी ,पृष्ठ १४४
३-पिछली गर्मियों में पृष्ठ ६७

''सितम्बर की एक शाम'' 'पिक्चर पोस्टकार्ड 'कुत्ते की मौत', 'माया का मर्म' आदि ऐसी ही बाह्यधरातल है जिनमें सामाजिकता, अविश्वसनीय सी लगने लगती है। निर्मल ने 'डेढ इंच ऊपर' कहानी में इस तथ्य को स्वतन्त्र वर्ण के रूप में स्वीकार भी किया है। हर आदमी को अपनी जिन्दगी और शराब चुनने की आजादी होनी चाहिये ....दोनो को केवल एक बार चुना जाता है, और बाद में सिर्फ हम दोहराते रहते है''? + + + + +..............कभी-कभी आप इस संशय से छुटकारा पाने के लिये दूसरी या तीसरी स्त्री से प्रेम करने लगते है यह निराश होने की शुरूआत है ....यह सतरंज के खेल की तरह है ....एक खेल हारने के बाद आप दूसरे खेल मे जीतने की आशा करने लगते है। आप यह भूल जाते है, कि दूसरी बाजी की अपनी सम्भावनाएं है। पहले बाजी की तरह अन्तहीन और रहस्यपूर्ण.........इसीलिए मै कहता हूं कि आप जिन्दगी में चाहे जितनी औरतो के सम्पर्क में आये असल में अपना सम्पर्क सिर्फ एक औरत से होता है''।[२]

कथाकार का यह फैसला सही है, या गलत यह तो नहीं कहा जा सकता, लेकिन लोग डर के मारे डेढ़ इंच जमीन पर ही पांव जमाये रहते है, और अपनी चेतना को माचिस की तीली की तरह अपने आप ही कभी जला लेते है, और कभी बुझा देते है

आज परिवार में स्त्री - पुरूष सम्बन्ध या परिवार से बाहर स्त्री - पुरूष के सम्बन्ध बहुत ही जल्दी बदलते जा रहे है। स्त्री - पुरूष के परस्पर निजता से व्यर्थ बोध बढ़ता जा रहा है। कभी कभार स्त्री - पुरूष के मध्य तीसरा पात्र और कूद पड़ता है जिससे सम्बन्धों में दरारें पड़ जाती है, नैतिक - अनैतिक विचार दृष्टि तो बड़ी फीकी पड़ गयी है, इसीलिए सामाजिक प्रश्न अपने आप में ही मटमैले होते जा रहे है।

माता - पिता और संतानों की पीढ़ियों का अन्तराल अनेक प्रकार के सर्घषों, तनावों तथा विघटन का कारण बनता, यह सारी स्थितियां कुछ विशेष विन्दुओं जैसे विवाह पिता या माता का प्रभुत्व, धार्मिक विश्वासों और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण की भिन्नता आर्थिक दबाव व्यक्तिगत स्वार्थ, यौन सम्बन्ध और आजीविका आदि के इर्द - गिर्द बनी हुई है।

महानगरीय का अकेलापन और अजनवीपन और भी अधिक कष्टप्रद हो जाता है इन सामाजिक एवं पारिवारिक सन्दर्भो में आज का व्यक्ति निजता को छोडकर स्वार्थपरता से एक दूसरे से जुड़ा हुआ है, सहानुभूतिपरक स्वार्थपरता से एक विदा ले ली है और वैचारिक स्तर पर बैद्धिकता ने पैर जमा लिये । इस तरह की उहापुहात्मक जिन्दगी का अधिकांश आचरण निर्मल के कथा संसार में पग-पग देखने को मिलेगा। मूल्यों के बदलते प्रतिमान आज हमें तो लगता है कि वे चुके ही नही वरन बुझ चुके है[१]

१-पिछली गर्मियो में पृष्ठ ३४
२-वही पृष्ठ ३६

(ग) **सम्बन्ध हीनता तथा सम्बन्ध के नये आयाम** :समाज के विभिन्न कारणो ने जिन्हें मशीनीकरण , औद्योगिकीकरण तथा विदेशी संस्कृतिकरण का नाम दिया जा सकता है। बहुत ज्यादा बदलाव पारिवारिक सम्बन्धो में ही किया जा सकता है ।

समाज में होने वाला यह यह परिवर्तन रोका नही जा सकता और इसके परिणामस्वरूप हमे अपने जीवन मूल्यों में भी परिर्वतन करना पडता है। सीताराम शर्मा ने इस तथ्य को स्वीकारते हुए लिखा है सामाजिक परिर्वतन आधुनिक संसार के हृदय मे निवास करता है। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सामाजिक मूल्यों में भी उतनी ही तेजी से विघटन आता है,कि बरहाल जो भी हो इन परवर्तनों को रोकना हमारे लिए सम्भव नही । सच तो यह है, कि समाज के विकास में भिन्नता और समन्वय प्रकियाओं का महत्वपूर्ण संतुलन हुआ है ,क्योकि पहली प्रकिया सामाजिक विकास की प्रकिया है जो विभेदीकरण का कारण होती है, और दूसरी विभिन्नता में समन्वय स्थापित करती है ताकि संघर्ष की स्थिति पैदा न हो, इसीलिए समाज को विभिन्नता और समन्वय का गत्यात्मक संतुलन करते है।''१

आज हम देखते है कि हमारे समाज के हर क्षेत्र मे परिवर्तन की प्रकिया निरंतर गतिशील है और इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप हमारे सामाजिक जीवन में पर्याप्त परिवर्तन का स्वरूप लक्षित हो रहा है । आज कथा -- साहित्य के संदर्भ में स्वीकृत- सामाजिक सम्बन्धों से प्रेरित बदलते जीवन मूल्यों के प्रति आज का कथाकार बहुत सजग,सचेष्ट है । उसके कथा साहित्य में इन परिवर्तित जीवन मूल्यों को इसी कारण अभिव्यक्त किया जा रहा है । आज की वैज्ञानिक प्रगति ने बौद्धिक उन्मेष के फलस्वरूप व्यक्ति . को अन्तर्राष्ट्रीय धरातलपर खड़ा करके सब कुछ बदलतें सम्बन्धों में [illegible] लिए सोचने के लिए मजबूर कर दिया है । कथाकार निर्मल वर्मा बदलते सम्बन्धों के प्रतिमानों पर सहज मानवीय स्वभाव का वह पृच्छन्न रूप जिसमें कई परते है, उकेरा है । ''लाल टीन की छत'' उपन्यास की मिस जोसूआ,मंगतू,काया आदि ऐसे ही पात्र है जिन्हें समाज के सम्बन्धों की के बदलतें झरोखों में से टटोला गया है । उपन्यासकार कहता है, ------ ''मुझे मिस जोसुआ की चादरें याद हो आती है, क्योकि उनके बीच कोई रिश्ता न था। मुझे लगता है कि मेरी स्मृति एक दूसरी स्मृति से ढकी रह गयी है और जब मैं एक को छूती हूँ तो दूसरी अपने आप उठने लगती है । वे चादरें बर्फ ही की तरह सफेद थी --- और कुंवारी -- वह बेचारी अकेली पड़ी होगी और तब मुझे काफी विस्मय होता था कि लोगो ने जेसूआ का नाम लेना छोड़ दिया था...............सब उन्हे धीमे स्वर में,लगभग फुसफुसाते हुए ''वह'' कहकर बुलाते थे जिससे वह धीरे-धीरे वह एक ऐसी जगह पहुंच गयी थी,जहां नाम के बदले सिर्फ उनका शरीर रह गया था।''२

१) स्वतंत्रयोत्तर कथा - साहित्य:समाज में संक्रमण,३८

लेखक ने काली अंधेरी रात से घिरे हुए मिस जोसुआ के सम्बन्धों की वदलते संज्ञा रूपों में पहचान प्रकट की है । वह मिस जोसुआ जैसी अंग्रेज औरत के वारे में तरह तरह के विचार करता है । मिस जोसुआ के अजीब चेहरे को पढ़कर समय के तकाजे की निगाहें उपर नीचे करते हुए सर्वमान्य समझा जाता है । यह जिन्दगी वदलते जीवन के सम्वन्ध सूत्रों की कहानी है क्षणभर के सुखपरक जीवन को ठोस कदम मानतें हुए जब व्यक्ति अपने दिन और रात को थम जानें काआदेश देने लगता है। तब सबसे ज्यादा चिन्ता उसे इसी वात की होतीं है कि यह सम्वन्ध कितना और अधिक टिकाउ रहेगा । .... कहा नही जा सकता। निर्मल के सम्वन्धों की वुनावट और बदलते रंग - विरंगे धागों में ओढ़ा हुआ वही परिधान खूव पहचानते है। उन्होने इसी उपन्यास में कया पात्र की उस अनदेखी स्थिति को भी स्वरूप दिया है जो शाम के नशे की तरह वर्तमान धरातल पर उपस्थित है। काया,लालटीन की छत कभी भी दिल और दिमाग से भुला नही पाती,।फिर चाहे जितने ही सम्बंधों की दुराहट उसे झेलनी पड़ी हो। ''एक चिथड़ा सुख'' उपन्यास में निरूपित पात्र विट्टी नित्ती भाई का सम्बन्ध,अलगाव और हौसला परस्त जीवन का लगाव वड़ी ही विचित्रता से प्रगट किया गया है। बिटटी नित्ती भाई को चाहती है लेकिन उसकी चाहना धुंऐं की लकीर जैसी है। कुछ उनके शब्द और कुछ फिकरें उसके दिमाग के किसी कोने में फसें है और एक हल्की सी धुन्ध दूर से आकर कहीं धोखे से आहट दे देती है। तो वह विना परवाह किये की पीछे-पीछे दौड़ने लगती है । सम्वंधों की वेवुनियादी दुनियां में फिर ऐसा क्या है। जिसके कारण वह न तो उसे पकड़ ही पाती है और न छोड़ पाती है।

उपन्यासकार लिखता है -----,, बिट्टी । नित्ती भाई ने अपना हाथ धीरे से बिटटी के हाथ पर रख दिया जानती हो जब कभी मै तुम्हे रिहर्सल करते हुये देखता हूंतो तुम बिल्कुल बदल जाती हो जिसे मै जानता हूं । +++ बिटटी ने बहुत कोमल निगाहों से नित्ती को देखा और अपने को दवाते हुये कहा हां ऐसा होता है स्टेज पर कभी कभी लगता है मै वह नही हूँ । जो अपने को समझते आयी थी ।
-------नित्ती भाई मै समझ नहीं सकती ----वाद में मुझे कुछ भी याद नही रहता । का ऐसा असली जिन्दगी मे नही हो सकता,, सम्भवतः यह मन का वदलाव व्यक्ति के भीतर रेंगते हुये आत्मवादी एकचमकीले कीडे के कारण ही है जो वक्त सापेक्ष सम्बन्धो के मुखौटे ओढ लिया करते है जैसे थियेटर मे पर्दा गिर जाता है और देखा हुआ दृश्य कितना ही भयानक क्यों न हो परदा गिरने से और अगले एक्ट के शुरू होने तक एक रिलीफ सा मिल जाता है या यूं कहे कि पीड़ा को हाथ पाँव फैलाने का एक सिराहना सा मिल जाता है। लेकिन यह आराम असली जिन्दगी में जीने के दौरान नहीं मिल सकता, क्योकि उसमें हम सचमुच जी रहे होते है ।

१- एक चिथड़ा सुख पृष्ठ-९३-९४
२- [illegible]
३- [illegible]
४-लाल टीन की छत पृष्ठ १८६-१८७

व्यक्ति यद्यपि सम्बन्धों के बदलाव में पीड़ा के दलदल से उबरने का प्रयास करता है फिर भी वह आज की सामाजिक व्यवस्था के बीच तिलमिला उठता है। इसी उपन्यास में बिट्टी का यह कथन बदलते सम्बन्धों के आयामों की कहानी को दोहराता है ----"इन दो सालो में मैने कितने पार्ट खेले हैं----पहले से भी बत्तर ।"[१]
-------बिट्टी के भीतर एक मरती गिरती पागल सी इच्छा सम्बन्धो के बदलते आयाम हटोल रही है और उसे एहसास होता है कि निति भाई को याद कर हॉफती हुई सासों के बीच चेतना की एक लकीर कौंध जाती है। वह अतीत स्मृतियों की चिन्दियाँ उठा उठा कर एक चिथड़ा कागज बना रही है शायद वह उसे साफ तौर पर पढ़ सके । उपन्यास का कथ्य सम्बन्धों की उस कुहासा भरी दुनिया में सिमट जाता है वहां न बिट्टी के चेहरे पर तेज रह गया है और न चमक ।

सम्बन्धों की व्यापकता के कई आयाम है ,लेकिन सम्बन्धों की संकीर्णता के कुछ घिसते पिटते ही आयाम है जिन्हे हर सम्बन्ध के टूटने और बिखरने में उसी अंदाज से समझा जा सकता है। 'वे दिन' उपन्यास मुखौटा परख जिन्दगी का एक गहरा और दार्शनिक पहलू उपन्यासकार ने दो तीन पंक्तियों में उतार दिया है-----" एक ही समय मे तुम दोनो नही हो सकते । यह सम्भव लगता है कि तुम एक में से गुजर कर दूसरे में चले जाते है और दोनो भीतर जीवित रहते ?[२] बदलते मानवीय संवेदनशील संम्बन्धों में यह तथ्य मनोवैज्ञानिक सत्य बन गया है। व्यक्ति चाहे जितना अक्ल का ठेकेदार बने अखिारकार उसे अपने मुखौटे से हटकर अपनी असलियत पर आना ही पड़ता है। सचमुच आजका जीवन बड़ा ही दुरूह है और उतना ही जितना कि निर्मलजी ने अपने उपान्यास के कथाकारो में से जटिलता से संग्रन्थित किया है।[२]

१- वे दिन पृष्ठ -१२७ २- वही पृष्ठ-११७

कहानीकार निर्मल वर्मा ने वर्मा की कहानियों में जहां एक ओर नए जीवन मूल्यों की स्थापना है, वहां दूसरी ओर टूटते सम्बन्ध और बदलते सम्बन्धों पर सुलगते हुए सवाला धधक रहे है। आज कहानी जगत में शास्वत मूल्यों पर भारतीय मल्यों की चर्चा अधिक सी होनी लगी है। यही आज की कहानी की सार्थकता है कि वह अपने समय के वाहय तथा आन्तरिक समाज तथा मानसिक संघर्ष की अभिव्यक्ति है इनमें एक ओर परम्परागत मूल्यों के प्रति क्षुब्ध आक्रोश का स्वर सुनाई देता है और दूसरी ओर कुछ नवीन मूल्यों की सृजना का संकेत भी मिलता है इस दृष्टि से कथाकार वर्मा सम्बन्धों के आयामों को अलग ही तरह से नये अर्थ दिये है। ''छुट्टियों के बाद' 'कहानी की मार्था अपने प्रेमी और मंगेतर से जिस प्रकार मिलती है कहानीकार ने उसे बहुत ही बढ़िया तारीके से बदलते और टूटते सम्बन्धों के आयामों को अलग ही तरह से नये अर्थ दिये है।...........''स्टेशन पर खड़ा वह फ्रांसीसी पिकनिक तफरीह से अलग था, वह जल्दी मार्था से कुछ कह रहा था साथ - साथ भाग भी रहा था + + + सात दिन का पेरिस और उनकी छुट्टियों वाला पेरिसियन दोनो ही आखों से ओझल हो गये थे ?[1] मार्था ने पेरिस और अन्य युवक से अपने सम्बन्धों का हेर फेर किया है। वह छुट्टियां बिताने के लिये एक नये सम्बन्ध की तलाश करती है ।यह कुछ अजीब सा ही है कि वह वक्त गुजरते समय आदमी अपने सम्बन्धों को निगल लिया करता है। इस कहानी में एक दूसरे को नजर अन्दाज करने की कोशिश काफी बेमानी सी लग रही है । धुंधले अन्धेरे में मार्था सिर्फ कटी फटी छायाएं सिमटी रह गयी है। सम्बन्धों की बासी गंध केवल बोझ बनकर रह गयी है, लगता है कि जो परिचय कदम -- कदम पर रेंग रहा था वह अब जमीन से उठ चला है। अब भले ही मार्था सम्बन्धों के निरर्थक होते हुए भी अपने मन में एक अजीब किस्म की तसल्ली देती रहे फिर भी उसके स्वर में एक हल्का सा अवसाद उखड़ आता है जो किसी बहुत पुराने अतीत से जुड़ा हुआ है। 'वीक एण्ड' की नायिका ढेर सारी मानसिक यातना के पश्चात ही इस स्थिति पर पहुची है कि वह इसी परेशानी के कारण अपने प्रेमी के सोने का रेगिस्तान भोगा करती है। प्रेमी के पास वह एक छोड़ी हुई पत्नी और बन्धी हुई बच्ची है उस आदमी को जिसे मै चाहती हूँ, जिसे मै बेहद चाहती हूँ जिसे मै----- वह बीच मे ही रूक गयी। इस बार शब्द नंगे थे, अकेले मे ठिठुर रहे थे जैसे उन्हे ओढ़ने वाला जादू कही खो सा गया था और तसल्ली कही ना थी।''[2]

दरअसल इस नायिका के मन का कोना- कोना प्रेम में रंगा हूआ था किन्तु सम्बन्धो की झुरमुट उसे अपना कहलाने के लिए बेबस हैं। यद्यपि वह हर दिन के साथ एक नया साहस लेकर अपने प्रिय के लिए नया अध्याय शुरू करती है और अपने प्रिय के मुताबिक कपड़े पहनती है बिन्दी लगाती है लिपिस्टिक का रंग चुनती है, क्योकि वह सोचती है यह हमारा है जैसे वह हमारे में शामिल है।[3]

१- वे दिन पृष्ट १२६
२- बीच बहस में,पृष्ट २६
३- वही, पृष्ट ४०

किन्तु यह हमारा बहुत दिनो तक टिक नही पाता है अपना पराया चटकने लगता है स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध मात्र केवल सगूढ़ सी उफनाती देह के प्रश्रय में जी रहा है। इसलिए इस कहानी का नायक सदैव आशंकित रहता है जैसे उसकी पहली पत्नी ने उसे खो दिया है वैसा यह भी न करे । इस अर्न्तद्वन्द्व की यह पहचान सुवह दोपहर शाम हर बार चमकीली रेत का ढेर बनकर उभर आती है और दोनो का ही दिल धक-धक करने लगता है जिससे उनकी उम्मीदे बहुत दिनो तक टिकाऊ नही हो पाती है ।

विदेशो में प्रेमी प्रेमिका के सम्बन्ध समान दृष्टि से नही देखे जाते । वहॉ सम्बन्धो के धरातल परिस्थितियो से जुडे हुए है। नायक-नायिका यथार्थ पर ही विश्वास रखते है और उसमे ही जीना चाहते है।

कहानीकार ने वर्षो विदेशो मे रहने के कारण वहा की सम्बन्धगत महत्ता पर लेखनी चलायी है यह सिद्ध किया है कि जहा एक ओर पिता और प्रेमी जैसे कथानक है वहीं दूसरी और अन्तर्कहानी जैसे कथानक है। 'पिता और प्रेमी' की नायिका अपने प्रेमी से उत्पन्न बच्चे के कारण मकान बदलती है। दुनिया की निगाह में वह सब आन्तरिक रखना चाहती है कहानीकार ने इस प्रकार की कथा विन्दुओं को बहुत ही घनी आवाज दी है।

प्रेमी इत्तेफाक से अपनी प्रेमिका से सड़क पर मिल जाता है वह गोद मे लिए वच्चें को देखता हुआ अपने प्रेम सम्वन्धो के अनुरूप ही कुशलता पूछता है किन्तु उस प्रेमी का चेहरा वह नही था जैसा कुछ दिन पहले था और इधर प्रेमिका भी वह नही थी जैसी कि उसने मनमस्तिष्क मे जो पहचान वना रखी थी। कहानीकार कहता है ---------- ''वाकी महज देह थी जिसे वह पहचानता था किन्तु कपड़े में लिपटी हुई शायद वह वैसी देह नही थी जो कभी एक खास छुअन के इसारे पर जग जाती थी।

एक लम्हे के लिए उसे लालच हुआ कि हैन्डिल पर दबी उसकी अंगुलियो को दबाकर देखे, क्या पुराना जादू अव भी लौटकर आता है ।''[1]

नायक मानो उसे संदेह की दृष्टि से देखने लगा है अब वह सम्बन्धों के बदलाव से या संबन्धों की टूटन से एक छोटी सी भी उम्मीद नहीं कर पाता।

एक क्षण के लिए उसे लगता है कि वह स्वयं भीड़ मे खो गया है। उसने उसे भागती भीड़ में ही एक हल्की सी पहचान का अंश स्वीकार किया है उसकी अबोधा दृष्टि अपने आप में असमंजसमय हो जाती है। नायिका उससे अभी भी उससे बेहद प्यार करती है उसका इस प्रकार से मिलना भी एक मूक प्रार्थना है। जो पुराने किसी समय में पवित्र रहे शब्दों को दोहराने के वरावर है।

इधर 'अन्तर' की नायिका भारतीय पद्यति से बहुत कुछ जुड़ी हुई है।'अन्तर की नायिका इस विषय में अत्यन्त सचेत है कि गर्भपात कराना एक अनैतिक पाप है।

१- पिछली गर्मियों में पृष्ठ २७

इसलिए वह दूसरे शहर मे गर्भपात कराती है तथा नायक को भी अपने पास आने से मना करती है। दरअसल कहानीकार कहना चाहता है कि विदेश मे भी इस तरह के कार्य को सामाजिक अपराध महसूस किया जाता है इसलिए इस कहानी की नायिका अनैतिकता के बोध से घबराई हुई है। गर्भपात की प्रक्रिया से उसे इतना मलाल नही है जितना कि समाजिक अलगाव की पद्धति से। बौद्धिक झुकाव आज के व्यक्ति की सहज प्रवृत्ति है। विदेशो मे स्वछन्द प्रेम इस दृष्टि से संवेदना का स्थान ले चुके है। फिर भी एसी रूखी बौद्धिकता मे भी भावात्मक धरातल कुछ -ना- कुछ तो टिका हुआ है ही ।

'अन्धेरे में' कहानी का स्वछन्द प्रेंम भावात्मक धरातल का ही है ।स्त्री-- पुरूष के सह सम्बन्धो का भावात्मक जगत इस कहानी मे बहुत बारीकी से देखा गया है । वीरेन बाबू के द्वारा इजहार की गयी कल्पनाऐ एक सामान्य नारी के प्रति विशिष्ट बन पड़ी है सम्बन्धो के प्रेम मे भावनाओ की टिमटिमाती रोशनी चारो ओर इर्द - गिर्द घूम रही है ।

वीरेन्द्र बाबू की व्यक्तिवादी दृष्टि का पारदर्शी रूप कहानीकार ने यहा इस प्रकार उरेहा है ---''वीरेन चाचा माँ के पैरो के निकट फर्श पर बैठ गये मेरी आखें माँ के चेहरे पर टिकी रही मानो मैं कुछ खोज रहा हूँ माँ की आखों में मुँह, माथा हर चीज अलग अलग देखों तो वैसी ही थी किन्तु आपस में मिलकर जो भाव बनता था वह उसे चेहरे से बिलकुल अलग था ?''

कहानीकार कहना चाहता है कि जो अन्तर है वह किसी लम्बी दूरी को पास ले आने का है लेकिन अपने को दूर ही रखने में सम्न्धों का मुखौटा औढ़ा जाता है। समबन्धों की बुनावट अपने आप में ही स्त्री पुरूष के मध्य सिमट जाती है। यद्यपि वीरेन चाचा उस बच्ची की माँ से कोई बात नही करते है फिर भी उसे बहुत आश्चर्य सा होता रहता है और लगता है कि इनके बीच कुहासे में छिपी सम्बन्धो की शिष्टता भरी निगाह जुड़ी हुई है। इस प्रकार के सम्बन्धों में भावना प्रधान हो जाती है फिर भावना के ही बल पर अत्यन्तय स्नहेमयी शिष्टताएं ओढ़ ली जाती हैं। स्वच्छन्द सम्बन्धों का जुड़ाव और बिखराव निर्मल की अनेक कहानियों में यत्र तत्र खूब मिलता है। लवर्स कहानी नग्नता का प्रतीक लिये हुए है उसमें आरम्भ से अन्त तक शारीरिक सम्बन्ध ों की बुनावट है । दुकानदार और ग्राहक के के बीच इस दैहिक चेतना का जितना कुछ मौन वातावरण तय किया गया है वह हर जगह वर्णनीय है ।कहानीकार इस जगह पर भावनाओं से व्यक्ति को आदर्शपरक नही स्वीकारता ।लड़का और लड़की के मिलने का स्वचन्छन्द वातावरण बिना किसी रोक-टोक के सहज और नैसर्गिक हो गया है ....दरवाजे पर खड़ा लड़का हमें सलाम करता है। वह दरवाजा खोलकर भीतर चली जाती हैं। मैं क्षणभर के लिये बाहर ठिठक जाता हूँ ।

1- परिन्दे - 68-73

लडका मुझें देखकर मुश्कुराता है। वह हम दोनों को पहचानने लगा हैं उसने हम दोनो को कितनी बार यहां एक संग देखा है।''[१]

स्त्री पुरुष का इस प्रकार का सहसम्वन्ध अब न तो अंधेरे में है और न धुंधलके में वह तो सबके सामने खुला सा है ,भीड़ मे है ।

उनके बीच की खुली छिपी सब बाते सारे लोग जानते है । हम भीड़ मे उसकी बाह खीचकर झिझोड सकते है। वे बड़े ही इमानदारी के भाव से सड़क पर ही सब कह देना चाहते है जो रात को सोने से पहले और सोने के बाद वह कह देना चाहते थे। इसी स्वछन्द प्रेम और शारीरिक सम्बन्धो के टकराव की दुनिया 'जलती झाड़ी' कहानी मे देखी जा सकती है ।'जलती झाड़ी' कहानी का घटनास्थल वह टापू है जहॉ अन्धेरा होने पर अक्सर प्रेमियों के जोड़े आया करते है । कहानी मे शारीरिक सम्बन्धो के नग्न चित्र दिए गये है देखे ------ ''उन दोनो की गहरी हॉफती'' टूटती हुई सांसे मुझ तक पहुच जाती थीं------ एक धधकती सी गरमाहट झाड़ी के बाहर निकलती थी, बीच की हवा को छीलती,भेदती,मन्त्रमुग्ध सॉप की तरह बलखाती हुई मुझे लपेट लेती थी ।

---------------मानो उसकी गर्म , बोझिल सासो का भार न सभॉल पा रही हो ।''

स्वछन्द प्रेम का सम्बन्ध गत निर्वाह यहॉ कहानीकार ने अति यथार्थवादी नग्न धरातल पर किया है और उसे अनायास ही एहसास होता है कि वह तो इस टापू का जोड़ो के लिए वरदान है । सोच और बौद्धिकता के बीच जिन्दगी की जवाब देही का लम्हा झुलसता रहता है, जिससे हम बंध से जाते है सम्वन्ध का विखराव कहलाता है। लेकिन यह सच है कि समूची जिंदगी का बारी-बारी से यह सोता जागता घिसटता रूप हैं।

वैसे बौद्धिकता की दुहाई देकर हम भले ही आदमी पर आदमी को निगल जाए लेकिन सच यही है कि जिन्दगी का यही सच निचोड़ नही है जिसमे संवेदना को स्थान न दिया गया हो ।'खोज' कहानी मे सम्बन्धो की यथार्थवादी भूमि कुरेदी गयी है। किसी दूसरे आदमी के संग एक ही बिस्तर पर सोने की कल्पना की दोनो बहिनो कों रागात्मक बना देतीहै। यह कल्पनाशीलता संबन्धो के बड़े ही सूक्ष्म तार गूॅथती है जिससे दूर की चमक भी आकर ऑखों मे इतराने लगती है। कहानीकार ने दोनो बहनो के संवाद में यह सब कहलवा दिया है --------'तुम ? छोटी बहन की ऑखो मे पागलो की सी चमक उमड़ आयी । तुम हमेशा इस घर से डरती थी । विवाह तूम्हारे लिए छुटकारा था ।लेकिन मै---------------------मेरे लिए ।''[२]

छोटी और बड़ी बहने अलग - अलग मंसूबो में अपनी जिन्दगी का फैसला करती है। इस रोमान्टिक दुनिया से अलग हटकर 'धूप का एक टुकड़ा ' कहानी भी संबन्धों के जुड़ाव और बिखराव की कहानी है ।

१-परिन्दे पृष्ठ ७३   २- जलती झाड़ी,पृष्ठ ११
३- जलती झाड़ी,पृष्ठ ८३   ४- पिछली गर्मियों में,पृष्ठ ७१

इस कहानी की नायिका वड़े ही दार्शनिक मुद्रा मे संवन्ध का यथार्थ स्वरूप समझाने का प्रयास करती है -------------- ''मुझे कभी-कभी यह सोचकर वड़ा अचरज होता है कि जो चीजे हमे अपनी जिन्दगी को पकड़ने मे मदद देती है,वे चीजे हमारी पकड़ के वाहर है ;हम न उनके वारे मे कुछ सोच सकते है,और न किसी दूसरे को ही वता सकते है ?

आज के उगते और भरते सहज वातावरण मे संवन्धो की चर्चा भी वमानी हो गयी है ।

'उनके कमरे ' कहानी मे प्रेमी और प्रेमिका का जीनो और सिनेमाघरो में देहात्मक वोध ा का आनन्द लेते है क्योंकि शारीरिक भूख इतनी तीव है कि वे विना किसी की चिंता किए ही चुपके-चुपके मिटा लेना चाहते है ।

कहानी के शुरू में ही लड़का और लड़की के तीवगामी जीवन पर प्रकाश डाला गया है कभी कभी वे तेज चलने लगते थे मानो कोई उनका पीछा कर रहा हो .... लडकी हॉफने लगती है और उसका हाथ भींच लेता है ।

थकान से टॉगे भारी पड़ जाती है और वे एक दूसरे को क्षण भर निहार कर फिर चलने लगते है।[1]

इसी क्रम में दूसरी कहानी 'अमालिया'में प्रेम ऐक औपचारिक वस्तु है देह सम्वन्ध प्रमुख है इस कहानी की नायिका जिन विदेशी यात्रियो से मिलती है वह उनसे दुवारा मिलने पर पहचान भी नही पाती ।

अरब, अमालिया को रूमाल उपहार के रूप मे देता है और अमालिया उसी को बाजीलियन की चिन्ता किए विना ही कुछ क्षणों के लिए उससे लिपट जाता है किन्तु अमालिया बातीलियन के सामने तैयार नही होती । इसी क्रम मे तो नही लेकिन अन्य संकलनो मे एसी कहानियाँ है जिनमे दैहिक चेतना को सर्वोपरि ठहराया गया है।[2]

''दो घर''के भारतीय ने विना शादी के ही विदेश मे पूरा घर वसा लिया है।

'चीड़ो पर चॉदनी' कहानी मे अवैध बच्चो की बढ़ती संख्या पर आश्चर्य प्रकट किया गया है वस्तुतः सम्वन्धो के यथार्थवादी अनुभूत सत्य को निर्मल ने सारी कथा यात्रा मे बड़े ही खुलकर नये अर्थ और नये सन्दर्भ प्रदान किए है ।

१- कौवे और काला पानी,पृष्ठ ११ २- पिछली गर्मियों में, पृष्ठ ५७

(घ) यथार्थ के प्रति बदला हुआ दृष्टिकोण

समकालीन कथा साहित्य के सन्दर्भ मे यथार्थ के सीधे टकराने के बात अक्सर की जाती है।

वस्तुतः पहली बात तो यह है कि समकालीन यथार्थ एक ठोस और ऐतिहासिक प्रकिया है। अभूर्त और सामान्यीकृत प्रक्रिया नही।

वास्तविक स्थितियो और सन्दर्भो के अंकन और परिप्रेक्ष के विना यथार्थ स्थितयो की पहिचान संभव नही टकराहट की वात तो दूर रही ।

समकालीन कथा साहित्य मे यथार्थ के उस पक्ष को उभारा गया है जो सामाजिक और मानवीय स्थिति और नियति के भयावय सन्दर्भो और अस्तित्व की वुनयादी समस्याओ से जुड़ा हुआ है । आज हिन्दी कथा साहित्य को यथार्थवादी नया मुहावरा मिला हुआ है ।

वास्तविक स्थितियो के सन्दर्भ मे यथार्थ जगत की पहचान वढ़ती है जिससे संवन्ध ो के धरातल पर यथार्थ का वोध स्वभावतः होता चलता है यही सही है कि आज का कथाकार मानवीय संवन्धो के जालो को अलग ढंग से बुनता चला गया है, जिससे ऐसे संबन्धो की कहानिया यथार्थ की उपरी सतहो से जुड़ी होने के कारण यथार्थ का गहरा अहसास नही करा पाती ।

यथार्थ की गहराई मन मस्तिष्क के भीतरी से भी सही मायने मे जुड़ी हुई है ।

इसलिए आज के आदमी की भीतरी पीढ़ा और मूलभूत आन्तरिक संकट ऊपर उभरकर दृष्टिगत हो रहे है समकालीन जीवन का जो हिस्सा यथार्थ के नाम पर तथा साहित्य मे प्रतिफलित हुआ है अधिकतर महानगर की संकटपूर्ण स्थितियो से वना है कथाकार निर्मल वर्मा ने भी महानगरीय संवन्धों को ले कर ही यथार्थ के प्रति बदलते दृष्टिकोण की बुनियाद रखी है।

महानगरीय यथार्थ का एहसास कराने के लिए यह जरूरी है कि नगर जीवन की विविध प्रक्रियायों की गहरी समझ और पहचान हो।

कथाकार निर्मल वर्मा इसी दृष्टि से जीवनगत बदलते यथार्थ के भयाक्रान्त स्थितियो का बोध कराने मे सफल रहे है।

'वे दिन' उपन्यास मे मनः स्थिति का तनाव पूर्ण भयावह स्वरूप पूरें तथ्य के साथ ठहर गया है तनाव मे सहज हो पाने की दृष्टि यहॉ रचना के भीतर से उभरी है और उसकी सही पहचान कराती है कथा के पात्र हमेशा उलझे-उलझे कुछ ज्यादा ही अपने मन को अस्थिर बनाते हुए वर्तमान मे जीते है । ऊँची-ऊँची दीवारो के मध य बोना सा घिसटता चलता फिरता आदमी आज के यथार्थ वोध से कितना कुछ फीका हो गया है वह सब उपन्यासकार ने परिवेश सापेक्ष चित्रण मे प्रस्तुत किया है।

'नीचे समूचा शहर था दिसम्बर के नीरव आलोक मे सिमटा हुआ।

धूप में चमकती हुई ऊंची नींची छतें गिरजों की सुई नुमा मीनारें---- और एक स्तब्ध सा कोलाहल, जो एक ऊचाई पर पहुंचकर तटस्थ ------------सा हो जाता है --- हम चुप खड़े रहे।

लगा जैसे एक शव्द भी उस मायावी जादू को तोड़ देगा जो हवा, धूप ओर गिरजों की मीनारों ने अपने आस - पास वुन लिया है ।

एक निर्वात सा सम्मोहन ।''१

आज का यह जीता जागता परिवेशगत यथार्थ मानवीय नियति का भयावह साक्षात्कार कराता है, जीवन चेतना शून्य होकर वही किसी ओर ढहता ही चला जा रहा है।

मनः स्थिति को सही तरीके से साध पाने की वात कुछ दूर ही हो गयी है ।

व्यक्ति इतना अधिक तनावग्रस्त है कि उसके मन के भीतर उभरती चेतना की परतें भी ओठों तक आकर लुप्त प्राय हो जाती है।

लगता है कि हवा शव्दो को वाहर ले जा रही है।

महानगरीय संत्रास आज परिवेशगत स्थितियों के प्रति इतना गम्भीर हो गया है कि व्यक्ति को सही संदर्भो के साथ टिके रहना भी दुरूह होता जा रहा है। लेखक इस उपन्यास के विविध पन्नो के माध्यम से यही कहना चाहता है । कि हम वरावर उपर से कैसे भी दिखायी दें लेकिन भीतर से पूरी तरह टूट चुके हैं और जितनी भी धड़कने शेष है वे सब ढलान पर उतरती हुई किसी पड़ाव की तलाश मे स्वतः ही ढुलकती जा रही है।

सम सामयिक यथार्थ का एक अपरिहार्य अंग है सोच और संवेदना ।

आज के दबाव भरे संसार मे आदमी की परेशानी उतनी कुछ वढ़ गयी है कि वह रोज मर्रा की जरूरतों को जुटाते हुए ही मर खप जाता है।

उसके मन की यथास्थित बदलते तेवर मे पूरे तन को चुनौती दे रही है पर संवेदना के वह जटिल बोध को लेकर ही घिसट रहा है और उसे लगता है कि व्यवस्था का विरोध करना तो दूर हम किसी के लिए कुछ भी नहीं कह सकते है।

यद्यपि कुछ अनिश्चित ढंग से वह अपने भीतर किसी चेतना भरी छुअन को संवेदना मे स्थान देता रहता है किन्तु उसके मन की कातरता वड़ी अजीव है जिसे वह बेमानी से साश ही महसूसता जा रहा है।

''वे दिन '' उपन्यास मे सोच और संवेदना का वह स्तर जिसे यथार्थ से कतराने का बहाना कहा जा सकता है स्पष्ट किया गया है।

१- वे दिन, पृष्ठ ९३

जड़ता की भी हद हो गयी है जिससे आत्मीय संबन्धों के प्रति भी भावात्मक रूख की कोइ गुंजाईस नही रह गयी है। लेखक स्त्री पुरूष के संवेदनात्मक उलझे हुए जीवन को नये अर्थ देता हुआ लिखता है- ''वाहे नंगी थी हल्के पीले से रोयें विजली मे चमक जाते थे।

पहली बार उन्हें देखकर मुझे अपने भीतर एक बेमानी सी वेचैनी महसूस हुई। अजीव सा भी लगा कि हम दूसरी बार मिल रहे है, लेकिन बातचीत मे 'नयेपन' का भ्रम जरा भी नही लग रहा ।

न पास होने का कौतुहल न दूर होने का ठडापन ।''१

उपन्यासकार विस्मय से उनके संवेदनात्मक हौसलों को यथार्थ रंग देता है। उनकी परस्पर क्षण भर के लिए निगाहें चेहरे पर टिक जाती है, और मन चाहे ढंग से एक दूसरे को देखते रहते है लेकिन भीतरी संसार मे इतना अधिक वल पड़ जाता है कि वे कुछ कहना भी चाहे तो भी आवाक रह जाते है।

यह संबन्धगत यथार्थ आज तनाव में वह रहा है। तटस्थ और निर्मम दृष्टि से इस यथार्थ को संवेदना से काटकर यदि अलग देखा जावे तो आदमी की भीतरी पीड़ा ही प्रस्फुटित होगी ।

उलझे हुए पेचीदा संबन्ध व्याप्त तनाव की भूमिका बनाते जा रहे हैं।

आज के मनुष्य के हालात और अनुभव को सामाजिक स्थिति के वास्तविक सन्दर्भ मे रखकर देखने से ही यथार्थ के सही धरातल की पहचान हो सकती है।

निर्मल जी सिर्फ यथार्थ ही नहीं जीते वल्कि सूक्ष्म संवेदनाओ की उन करवटों को भी अवचेतन की दुनियां मे टांककर जिन्दगी की वुनावट को सुदीर्घ और मजबूत बनाते हैं ।

'एक चिथडा सुख' उपन्यास का कथानक यथार्थ के बदलते सवरूप का वह आंशिक सत्य है जिसके इर्द - गिर्द सब कुछ यूं ही वहता जा रहा है ।

बिट्टी और निती भाई की खुली आंखे जव परिवेश मे एक पल ठिठक जाती है तब संवेदात्मक यथार्थ ही हल्की सी धुंध मे तैरने लगता है ।

कथाकार का कथन सत्य है -----------''नित्ती भाई कुर्सी से उतर आए विट्टी के साथ फर्श पर बैठ गये ----- वह शायद कुछ कहना चाहते थे, किन्तु उन्हें कुछ समझ नही आ रहा था, कैसे अपनी पीड़ा के दलदल से उवकर उस दायरे में जा सके, जहॉ विट्टी थी ।''२

संधान्त यहां कथानक का प्रारम्भिक विन्दु है ।

यथार्थ बनाम त्रासदी व्यक्ति के साथ जुड़ी हुई है ।

अचानक ही अंतरंग संसार जटिल और उलझी हुइ मनः स्थिति को उजागर करता चलता है।

१- वे दिन, पृष्ठ ५७-५८

इस प्रकार की कहानी का दौर उस मानसिकता का परिचायक है जिसमें गत्यात्मक जहर बुझे दर्द को हिस्सा बनाया गया है ।

कह सकते है कि मानसिकता का वोध जगाने में उपन्यास कार पूरी तरह यहा सफल रहा है ।

इसी कोटि का तथ्य "लालटीन की छत" उपन्यास में काया और अन्य पात्रों के साथ जुड़ा हुआ है

देखिये वह अपने विस्तर पर वैठी है कुछ देर तक दीवारों को अपनी पुतलियों पर घूमते हुये देखती रही।[1]

फिर सहसा आंखे ठहर गई ।

पीड़ा भी ठहर गई।

------------काया ने अपने भीतर देख था ।

--------वह अब भी किसी कुदाली की तरह एक वहुत ही पुराने ढेर, पिरामिड को खरोंच रही थी, जो भीतर वर्षो से जमा होता रहता है- और फिर अचानक एक झटके, एक चीख, एक दुखपन, का धक्का खाकर दुवारा से वहने लगता है।

काया उस शाम विस्तर पर बैठी हुई उस वहने को देखती रही, जो भीतर से बाहर न जाकर भीतर - भीतर ही अपनी जगह वदल लेता है। कितने सूखे ढहे हैं,-----------------जो पिघलने की प्रतीक्षा मे खड़े होते है। २

रचनाकार निर्मल वर्मा ने परिवेश के यथार्थ को घटनाओं और स्थितियों के माध्यम से व्यक्त किया है, तथा कहानियों के संरचनात्मक विधान में ऐसे संकेत दिये हैं जिनमें भावात्मक तनाव तीव्र छटपटाहट के साथ उतरता चला गया है।

दरअसल रचनाकार को परिवेश के अन्तर्मन के यथार्थ वादी होकर गुजरना पड़ता है ।

किसी भी स्थिति को अन्तर्मन से जोड़कर देखने की कथा पद्धति परिवेश के बदलते यथार्थ को समेटती रही है।

कहानी की रचना प्रक्रिया से परिचित लोग जानते है कि परिवेश गत स्थितियों और कहानीकारो के आत्मीय अनुभव और प्रसंगों और संदर्भो के बीच संतुलन जरूरी है। तभी कथात्मक अनुभव को तत्कालिकता और निजवद्धता से मुक्ति मिल सकती है।

इस पद्धति से रचनाकार निर्मल ने अपनी कहानी मे यथार्थ के बदलते परिवेश में तराशते कथ्य को उपजीव्य माना है।

उसमे वही उलझी हुई मनः स्थिति है और बोझिल मानसिक उधेडबुन की तीव्रता।

१-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ ९५   २- लाल टीन की छत, पृष्ठ १५२

कहानीकार निर्मल वर्मा यथार्थ के वदलते आयामो पर सत्रास्तगत व्यर्थतावोध का हर जगह जिक करते चले है ।
तनावग्रस्त पारिवारिक सम्वन्धों यही यथार्थ वेदना वनाम पीडा वन गया है।
'डायरी का खेल' कहानी का पात्र विटटी इतना अधिक वेदना से धनीभूत हे कि उसे सारा परिवेश ही वेदना का पर्याय ही जान पडता है ।

बिट्टी सचमुच मर्मान्तक धनीभूत पीडा को निर्लिप्त भाव से पीती चलती है वव्वू के हिलते होठ आवाक होकर उस पीडा का विस्फोटन नही कर पाते। कहानीकार ने लिखा है--------''डायरी का पन्ना'' जिस पर उस शाम विट्टी ने टेड़े ----मेड़े अक्षरों में लिखा था, अव पीला और पुराना पड़ गया है ---------उन अक्षरों में उसे खोजने की चेष्टा कितनी व्यर्थ है जो अव नही रहा ।

-------------याद करने पर विटटी से जुडी कुछ वाते, कुछ घटनाये याद आती है ।

------कुछ दिन, कुछ घडियां, कुछ विखरे से क्षण, जो मैने और बिट्टी ने एक संग जिये थी किन्तु विटटी का सत्य क्या इन बातो, घटनांओ, स्मृतियों का ही जोड़ मात्र है ''-१
विट्टी की वेदना यथार्थ के वदलते आयामों के सन्दर्भ में आज भी सजीव है । 'आंसू जो विल्कुल ठण्डे वंचना रहित होते है, जिनके वहाने से रोना नही होता है, दुख से छुटकारा नही मिलता वे हदय की एक मर्मान्तक पीड़ा को निचोड़ते हुये वूंद-वूद गिरते रहते है।

'डायरी का खेल की चाची की वेदना कुछ इस प्रकार की ही है। विवाह होने से पहले ही बिट्टी का सम्बन्ध टूट जाता है और चारो और गुमसुम सा अधेंरा झाडू बुहार कर सारे प्रकाश को अलग कर देता है। पीड़ा की दहजील पर खड़े होकर कैसे बचा जाये इस तथ्य को आज की दुनिया वच निकलने के लिए निर्णय नही ले पाती ।

इसीलिए जिन्दगी क सारा खेल अनजाने ही धुधला, कुहासा और घोर अधेरे में खुद व खुद डूबता चला जाता है और अलगाव और सम्वन्धों की प्रतिबद्धता में आज इतना अधिक यथार्थवादी अन्तराल है जिसे सोचकर सोचक को एक पगली समृति ही महसूसती है।
परिन्दे कहानी की पात्र लतिका भी कुछ ऐसा ही उदाहरण है वह वर्तमान धागों में अतीत के पर बुनाने का प्रयास करती है पर कुछ नही पाती।

१- परिन्दे, पृष्ठ ३०

उसका कमरा भी छुट्टियों में खाली है और दिल भी। जैस-तैसे अपने समय को काट रही है।

'वीक एण्ड' कहानी मे कहानीकार ने उसे वच्चे की वेदना का चित्रणकिया है। जिसका पिता प्रेमिका के साथ मिलने के लिये आता है।

वच्चे का वह सूक्ष्म तार जैसा मन वार-वार इस यथार्थवादी सम्वन्धो को छूता चला जाता है।

सम्वन्धो का अंधेरापन वहुत दूर तक वेमानी रूप को ढक नही पाता ।

प्रेमी प्रेमिका भले ही आपसी ग्रध प्यार समझकर भूखें होठो और इन्दियों से समटते चले जाये किन्तु और सापेक्षपात्र इन वातों को वैसे ही नही स्वीकारते इसलिये सम्बन्धें की दुरहिट और यथार्थ का वदला हुआ रूखा हर जगह उभरता रहता है

कहानीकार ने कहा हैं........."आदमी ने कहा तुम अव तो नही रही?

वह बच्ची को छोड़कर उसके पास आता है..........जैसे अभी-अभी उसका ख्याल आया हौं।

मैं अचम्भे से उसे देखती हूं फिर उसे खीचती उसकी दुनिया से अपनी पीड़ा तक और वह घिसटता आता है नीचे जहां मैं हूँ और बच्ची हक वक आंखें से देखती है..........नीचे झाककर हमें देखती है?

सम्वन्धों के यथार्थगत वदलावों का यह उदहरण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि सम्बन्ध उस मकडी के जाल की तरह है जो हवा से हिल जाते है और कभी कभार टूट भी जाते हैं वो घर को प्रौढ़ प्रवासी पात्र अपने अलग ही ढंग की वेदन से व्यथित है।

वह भले ही नयी पुरानी गृहस्थी सुखमय संसार को अवश होकर झेलता जाये लेकिन उसके मन का अपराध बोध उसे देर तक एक सम्वन्ध के यर्थाथ पर खड़ा रहने के लिये स्वीकृति नही देता ।

उसकी अपनी पीड़ा कुछ अलग ही किस्म की है

......"उसे रात अंधेरी छत पर यह शब्द बेगाना - सा लगा , जिसका नाम सुना था, देखा कभी नही"[1]

लगता है वह प्रवासी अत्रप्त भूखी जिज्ञासा के कारण सुख के व्याहमोह में जकड़ गया है और उसके पीछे-पीछें चलने लगा है।

इतना ही नही उसकी चाल ढाल से लगता है उसकी आंखें में 'वो घर' की अजीव व्यथा है और एक क्षण ऐसा आता है कि उसके चारों ओर भय की गंध महसूसती है जिससे वह जानवरों की तरह इर्द गिर्द सिर उठाकर उस गंध से छुटकारा पाना चाहता है। कहानीकार निर्मल ने पहाड़ कहानी में यथार्थ जीवी पति पत्नी के सम्बन्ध निर्वाह को बहुत ही बारीकी से निरूपित किया है। पति-पत्नी एक पहाडी

१-वीच बहस में ,पृष्ठ ४१

पर होटल में ठहरते है। वे कुछ अतीत के पृठ अपने साथ जोड़े हुये है। इस जुड़ाव में वे देर तक रहना चाहते है, मोनो किसी बहुत पुरानी चीज को पहचान पाने की चेष्टा कर रहे थे। उनके साथ अपना बच्चा भी है। बच्चा बैंच पर सिर टिकाये सो गया हैं। पति संशकित स्वर में कहता है-----------"मुझे लगता है" हमें इसे यहां नही लाना चाहिये था।--------उसने बच्चे की ओर देखा और फिर सहसा उसकी आंखें अंधेरे के उस सिंदूर धब्बे पर उठ गयी, जहां कुछ देर पहले पहाड़ थे।
और अब कुछ नही -------

जहां बरसो पहले उन दोनो ने कुछ बहुत सुखद रातें गुजारी थी। अचानक उसका मन उल्लसित सा हो आया।"१

इसी कम मे' जलती झाड़ी 'दहलीज' और 'अन्तर' ऐसी कहानियॉ है जिनमें चिन्तन यथार्थ को नग्न भाव से उधेड़ा है और उकेरा गया है।

एक 'शुरूआत' कहानी मे क्षेत्रगत यथार्थ का भी वर्णन है। लेखक महसूसता है कि यह यूरोप आने की ललक को रोक नही पाया और इसी कारण अपने घर से हजारो मील दूर चला आया है।

स्टीमर पर यात्रा करता हुआ वह सहयात्री से प्राग और इण्डिया के बीच की दूरी तथा अन्य अनुभूत - गत सत्यों को कहने लगता है।

जब ऐसी अनुभूत तथ्यता को वह स्वीकारता है तब उसके मन पर एक ही साथ विधी हुई तमाम स्मृतियां उभर आती है---------आई मीन ---------इण्डिया क्षण भर के लिये वह एक शब्द मेरी आत्मा में विध सा गया है।

समुद की अबाध, असीम गहनता की मांनिद रहस्यमय यह शब्द जैसे अचानक भूली-भटकी स्मृति सा मेरे पास चला आया है..............इस शाम स्टीमर पर।"१

देशगत भावात्मक लगाव का यह नजरिया बहुत ही विलक्षण है कोई कितनी ही दूर क्यूं न चला जाये फिर भी जिंदगी भर अपने से जुडने वाले शब्द रंग भरे आयामों में रंजित बने रहते है। कहानीकार पात्रगत मनः स्थिति का यथार्थ के बदलते प्रतिमानो में पूरी कहानी के मध्य करता चलता है।

सम्बन्धों के यथार्थ जगत में निर्मल ने यौनगत सम्बन्धों की चर्चा बहुत की है। इनकी ढ़ेर सारी कहानियां प्रेमी और प्रेमिका के रागात्मक क्रियाक्लाप से जुडी है। जिस प्रकार 'परिन्दे 'की लतिका जाने अनजाने हयूबर्ट की प्रतीक्षा किया करती है, उसी प्रकार 'लवर्स' की निन्दी भूल जाने वाले प्रेमी को तलाशती रहती है। निर्मल वर्मा के ये सारे रूमानी पात्र प्रावृत्तिगत यौन सम्बन्ध को और अधिक उभारने के लिये मजबूर हो गये है। 'माया दर्पण" की तरह चुपचाप आखें मूंदकर सारी बातें बुआ को सुना करती हैं,उसी प्रकार 'धागे' की रूनी अपने विगत पति के बारे में अब भी परोक्ष में सब जान लेना चाहती है।३

१- जलती झाड़ी पृष्ठ ४७ २-बीच बहस में पृष्ठ ८३ ३-जलती झाड़ी पृष्ठ ६५

बहराल चाहे यौनगत सम्बन्ध हो या बंधे हुए सामाजिक सम्बन्ध इतना अवश्य है। कि कहानीकार ने इन सारे यथार्थ सम्बन्धों को प्रेम भाव में ही आंकठ डुबोया है।

''सुबह की सैर'' कहानी का पात्र निहालचन्द्र इतनी बड़ी उम्र में भी भूखी खाली निगाहों से स्त्री को ताकते है। वह स्त्री उनके सामने एक बहुत छोटी लड़की है।

शायद बचपन की हर चीज छोटे होते हुए बड़ी होती है और बुढ़ापे की हर चीज बड़ी होते हुए भी छोटी है। निहाल चन्द्र और उस लड़की के बीच हुए संवाद को यथार्थ किन्तु भावनात्मक सम्बन्ध पर लेखन ने टिप्पणी देते हुए लिखा है--------अचानक निहाल चन्द्र चौक गयें। जैसे लड़की ने पीछे मुड़कर उनके कानों में फुसफुसाया हो, और--------प्रेम नही तो क्या?

क्या तुम किसी से प्रेम कर सके निहाली ?

कर्नल निहाल चन्द्र?

एक धक्का सा खाकर वे होश में आये।

किसकी आवाज थी या सिर्फ छल और धोखा था।

भीतर की अटपटी पुकार जो बुढ़ापे के जंगल में उठती है।

निहाल चन्द्र लावारिस सी तपती आवाज ने इधर-उधर दृष्टि फाड़कर होंठों से कुछ बुदबुदाते रहते है, न प्रेम है और न लगाव है, न मोह है, न पीडा, न पत्नी का चेहरा याद आता है न बेटे की याद ।

ऐसी स्थिति में सिर्फ निहाल चन्द ही रह गये थे। कहानीकार व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक सत्य को यहां पूरी तरह से उभारना चाहता है। वस्तुतः सम्बन्ध के जितने भी सिरे है। वे सब मूल्त्र स्त्री पुरूष के ऐन्द्रिक आयामों से ही जुड़े है, भले ही वर्मा ने निहाल चन्द्र जैसे पात्र को मजाक के कटघरे में खड़ा कर दिया हो।

'अमालिया' कहानी में भी देह सम्बन्ध प्रमुख है।

''वीक एण्ड'' की नायिका हर सप्ताह देह सुख के लिये ही प्रेमी से मिला करती है।

''खोज'' में दोनों बहनें दैहिक सुख की कल्पना कर रागात्मक हो जाती है। लेकिन निर्मल की कुछ एक ऐसी भावनात्मक कहानियां है, जैसे ''पिक्चर पोस्ट कार्ड '' जिसमे कहानी का परेश मात्र बहुत ही भावुक पात्र है, और नायिका नीलू बहुत ही बौद्धिक ।

इसीलिए इन दोनों के यथार्थगत सम्बन्ध को मोह भंग और ऊब के कहानीकार ने चित्रित किया है।

नीलू परेश को बाहर भेज देना चाहती है और परेश नीलू से एक क्षण के लिए भी अलग नही होना चाहता इसलिये उनके बीच रागात्मक अनुभव

१-कौवे और काला पानी पृष्ठ ७९

वहुत देर तक नही पनप पाता ।

कहानीकार ने व्यक्ति की इस सहज प्रवृति का यथार्थ भी विश्लेषित किया है "--------"जैसे मूझे लगता है, जैसे यह वहुत दूरी की निगाह है, जो मूझे वहुत पास से देख रही है।

मैं सोचता हूँ कि मैं यह वात नीलू से कहूं किन्तु मैं चुप रहता हूं।

इन दोनो की गहरी दोस्ती भी नीलू के वौद्धिक झुकाव के कारण फीकी पड़ जाती है ।[1]

प्रेम और सहानुभूति के होते हुए भी सम्वन्धों के अलग-अलग आयाम परिलक्षित हो रहे है।

कथाकार यथार्थ के प्रति वदला हुआ दृष्टिकोण अनुभव प्रसंगों और विभिन्न संदर्भो से कथायात्रा में मूर्तमान करता चला है।

मानवीय रिश्ते आज अनेक अर्थ स्तरों पर वहुविधि, वहुमूखी होते जा रहे है । इनकी कहानियों में ऐसे ही मानसिक उधेड़ वुन के अन्तर्मुखी पात्र जगह - जगह चर्चित है।

सारा कथा साहित्य पराये और अजनवी संवधों के चुभने जाने का बोध कराते चलते है ।

मानवीय प्रवृति का यह और रागात्मक दृष्टि से खतरा उत्पन्न करता है कभी कही एक पक्ष अधिक चटकीला और अति रंजित हो जाता है और दूसरा पक्ष उदासीन और बौद्धिक । ऐसी स्थिति में यथार्थगत संवंध भी अपना वोध खो देते है और उनके सोख बदलाव आ जाता है संवेदनात्मक स्थिति तो आज विल्कुल ही बौद्धिकता के घेरे में फंसकर चुभती चली जा रही है।

इसलिए कथाकार ने उन कोणों को तथायात्रा में प्रशस्त किया है जिनका बदलते प्रतिमानो से संवध है।

(ड) यथार्थ के प्रति लेखकीय तटस्थता :-

आज का कथा साहित्य और साहित्यकार यथार्थ के विभिन्न रूपों को उभारता हुआ किसी एक रूप तक सीमित या रूढ़ नही हुआ है।

इसलिए कहा जाता है कि यथार्थ न कोई पैटर्न है न प्रेम और न फार्मूला।

वह एक ऐसी संशलिष्ट प्रक्रिया है जिसमें विसंगतियां है जो उभरती हुयी संधर्ष चेतना को अपने में अन्तर्भूत करती चलती है ।

आज का कथाकार भी हूबहू मुद्रा स्थिति को देखकर ढहते हुए आदमी की कथा कह रहा है ।

१. परिन्दे, पृष्ठ ९७

समसामयिक यथार्थ का यह चरण मानवीय करूणा और सहानुभूति के लिए निरर्थक हो गया है । मानवीय स्थिति से जुड़ी यथार्थ की कटुता वुरी तरह आज कथा साहित्य में परिलक्षित हो रही है। परिवेश गत गम्भीरता की पारदर्शक जीवन्तता अव रहस्य नही रह गयी है ।

स्पष्ट है कि कल्पना, भय या सुख का कोरा चित्रण आज कथा साहित्य में विल्कुल ही नही है व्यक्ति की भीतरी और वाहरी तनावपूर्ण जिन्दगी अनेक सन्दर्भो में कुछ नया देती जा रही है। संवंधों के वदलते प्रतिमान भावात्मक संवेदना से दूर होते जा रहे है आदमी की निरीहता, भय और घुटन का आज के कथा साहित्य में विधान हो रहा है।

इस प्रकार के साहित्य में लेखको ने आज के आदमी को वेवसी, लाचारी, यातना और अनिश्चय का वोध अनेक प्रतीकों व विम्वों के प्रश्रय में प्रकट किया है लेकिन लेखक वर्ग इन सबके वीच निर्लिप्त भाव से वास्तविक संसार खोजता जा रहा है।

यह अक्सर देखने में आया है कि जिस किसी भी लेखक ने कथा विधान में कल्पित संसार रचा है वह यथार्थ से कोसों दूर और आज की प्रासंगिकता में अर्थहीन वन गया है।

कथाकार निर्मल वर्मा का कथा साहित्य यथार्थ वादी पक्ष का जीता जागता उदाहरण है। उन्होंने कथाओं में अनुभूति का नया संस्पर्शमय और नया कथा मुहावरा दिया है जिसमें व्योरे है, संवाद है, वाद-विवाद है, लम्वी वहसों के टुकड़े है और इन सब को रूपान्तरित करने वाली पद्धति है उदाहरण के तौर पर इनके इन तीनो उपन्यासों में अनुभव का सामाजिक,सामयिक अर्थ विस्तार है। उनके सारे पात्र अधिकतर अस्तित्व या आचरण के संकट तक ही अपनी बैचेनी को ले जा पाते है । उनके भीतर एक पागलखाना है, विद्रोही विचारों का भण्डार है। उन्होने कभी भी समझौता वादी को पोशाक नही पहनी है। इस प्रकार उनका आधुनिक पात्र एक नये संकट के सामने यथार्थजीवी होकर खड़ा तो हो जाता है। इस संकट की अनेक विरोधाभास पूर्ण परतों को निर्मल ने अपने इस उपन्यास के पात्रों में उघाड़ा है। ''वे दिन'' उपन्यास " किशमस उत्सव धर्मिता में लेखकीय निर्वैयक्तिक दृष्टि का पता तव चलता है, जव वह उत्सव में सम्मिलित होकर उछाले गये तत्कालीन माहौल को शव्दो में वांधताहै ------------ ''क्लब गाती हुयी लड़की की आवाज उससे गुजरकर सारे स्क्वायर मे फैल जाती है---------- एक विचित्र सा पीला आलोक गीली सड़कों पर ठहर जाता है और उनके ऊपर किसी शरावी की देह देर तक डगमगाती रहती है ।

कहां जा रहे हो।

उसने मेरा हाथ पकड़ लिया।

-----------हम यहां ज्यादा देर नही रहेंगे ---------- मैने कहा।

तुम थक गयी हो?

यह कौन सी जगह है,यहां एक थियेटर है ''[1]

उपन्यासकार उस माहौल में वियर की गंध और ओवरकोटो की छायायें दूर फासले से देखता जा रहा है। वह विल्कुल सहज आंखो से यह सब देखकर असमंजस में पड़ जाता है । परिवेश की उत्तेजना भरी यह गंध एक-दूसरे को खींचती चली जाती है।

लगता था सबको यह झेंलना एक जैसा ही सुख है, एक दूसरे न परस्पर बोलते है और न बाहरी व्यक्तित्व का दुराव ही रखते है। तटस्थता के ऐसे परिवेश को सभी भोगते जा रहे है इस प्रकार के अनेक उदाहरणों से उपन्यासकार का आधुनिकता बोधीय यथार्थ जगह-जगह प्रस्फुटित होता गया है।

स्त्री पुरूष के यथार्थवादी सम्वंध को भी लेखक ने बहुत ही सामान्य ढ़ग से यौनगत संदर्भ में अनुशीलित किया है देखिये------------''ये स्टूडेंन्ट है----------यह हर साल क्रिशमस की छुटिटयों में रात को इसी तरह घूमते है।

-----------लड़के-लड़कियो ने उसे चारो ओर से घेंर रखा था।

अंधेरे में सिगरिटों की विन्दियां चमक जाती थी''। -२

लेखक ने इस तरह की थिरकनों के वीच धुन्धमय रोशनी का इजहार किया है।

लेखक ने विदेश में जन्मी उन्मादिता का किनारे खडे होकर आनन्द लेता चलता है विदेशी स्त्री पुरूष के कथ्य में यह सारी वातें बहुत ही सहज है जिन्हे कथाकार ने ''लाल टीन की छत'' उपन्यास के भीतर सतरंगी रूपों में देखा है। काया की मनःस्थिति और मन के ढेर सारे सुख जव पिघलते चले जा रहे हो, तव उनमें एक अजीब सी सनसनाहट वैठती चली जाती है। काया ने उस औरत को जो उनमादी आंखो से अपने आशा भरे रास्ते तय कर रही थी, देखा तो उसकी सांस चढ़ने लगी जैसे वह औरत के हाथो तले भर रही हो,तिनका-तिनका होकर विखर रही हो।

लेखक ने एक यथार्थवादी आयाम इस प्रकार प्रस्तुत किया है--------वह अपनी पीली कमीज के वटन खोलने लगी फिर उसेस उठाया----------नीचे भी गरम बनियान थी उसे भी ऊपर कर दिया तव उसकी नंगी पीठ दिखायी दी--------सफेद और साफ?''

वह औरत कहती जाती है कि वह आदमी तो अब नही रहा लेकिन

१. वे दिन, पृष्ठ १३२ २. वही, पृष्ठ १४१

निरूपण इन प्रसंगो में करते हुए यही जाहिर किया है कि वह कि आंखों में घिरी हुई उदासी को यथार्थ के बुनियादी धरातल पर सब कह देना चाहते है, लेकिन उनकी दृष्टि निर्वैक्तिक तटस्थ ही है । "एक चिथड़ा सुख" उपन्यास में जीवन गत उलझे हुए पेचीदें सूत्रों को कथाकार ने जगह-जगह दर्शाया है। बिट्टी और नित्ती भाई के बीच एक रूमानी प्रवृति का प्रेम है।[1]

नित्ती भाई सूनी आंखो से उसे देखते रहते है और बिट्टी एक लम्बे क्षण तक खिड़की की ओट में फटी-फटी आंखो से नित्ती भाई को देखती रहती है। इस परिणय सूत्र के मध्य लेखकीय तटस्थता वहां निर्विकल्प रूप में प्रकट होती है जहां बिट्टी पुराने दिनो की सुरंग मे खो जाती है। कथाकार कहता है---------सिर्फ बिट्टी के आंसू थे और वह रोना नही था-क्योंकि रोना वर्तमान में होता है, जबकि बिट्टी के आंसू किसी पुराने रोने के बासी अवशेष थे जो इस क्षण बाहर निकल आये थे,वह रहे थे वह उन्हे बहने दे रही थी''-2

बिट्टी की इस मनःस्थिति का अन्दाज करता हुआ लेखक कहता है कि ऐसे बोल रही थी जैसे सोते हुए बोल रही हो उसका दिल और दिमाग एक भूत की तरह अतीत से चिपका हुआ था। ठहरा हुआ अतीत वर्तमान में पिघल रहा था । एक प्रेम में चढ़ा हुआ रोशनी का धब्बा उसके चेहरे पर उतर आता था। इन परिवेशगत सारी स्थितियों का अनुशीलन करने पर यही स्पष्ट होता है कि यथार्थ के विभिन्न दायरे व्यक्ति के भीतरी सन्नाटें के साथ छिपे हुए मूक संम्वादो में लेखक ने अभिव्यक्त किये है ।

~~१-वे दिन पृष्ठ १३२~~ ~~२-वही पृष्ठ १४१~~

~~३-लाल टीन की छत पृष्ठ १७३~~ ~~४-एक चिथड़ा सुख पृष्ठ ९५~~

बिट्टी का सारा जीवन मानो ठिठुर गया था और धीरे-धीरे भीतरी अस्तर को अलग-थलग करके हटाने का प्रयास कर रही है ।

अनदेखी जिन्दगी के दौरान यह गुजरा सफर शायद उसके लिये आखिरी था,इसलिये वह समूची भयावहता को लेकर न जल ही सकती थी और नही बुझ सकती थी ।

कथाकार निर्मल देश--विदेशव्यापी को यथास्थिति को यर्थाथ के तटस्थ से संवेदात्मक चित्र देते चलते है। वे समकालीन जीवनगत बोध को आधुनिकता से जोड़ते हुए राजनीतिक संदर्भो को सामाजिक संदर्भो में और आर्थिक संदर्भो को मनोवैज्ञानिक सन्दर्भो में प्रतिक्रियात्मक दृष्टि से जटिल बनाते चलते है। मानव स्थितियों के सीधे मूल्य यथार्थ के धरातल उन्होने जगह---जगह अभिव्यक्ति किये है। आज के मनुष्य की मूल्यरहितता का आभास देने वाली मनःस्थिति उसे एक अमानवीय शिंकजें मे कसती जाती है,

जो मनुष्य के दिशाबोध के लिये घातक है। उपन्यासकार वर्मा ने समासामयिक

१.लाल टीन की छत, पृष्ठ १७३ २. एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ ९५

'स्थितियों का लेखा-जोखा इन्ही कथ्यात्मक माध्यमों से जगह-जगह प्रकट किया हैं। ऐसा दावा तो नही किया जा सकता लेकिन यह सत्य है कि संकान्त चेतना का गहरा संवेदनात्मक वोध इनके उपन्यासों में खुलकर हुआ हैं ।
''वीच वहस में''कहानियों के संकलन में भूमिका में युग यथार्थ का देशी--विदेशी दृष्टिकोण निवैयक्तिक दृष्टि से कहानीकार ने स्वयं ही स्वीकार किया है---------''सडक और सिनेमाधरों की दुनियाओं के वीच जो अन्तराल हमारे देश में है वह अनयत्र कही नहीं । स्कूल से लोटते हुए भूखे-प्यासे वच्चे घंटों वसों की प्रतीक्षा में खड़े रहते है चिलचिलाती धूप में उनके सूखे वदहवास चेहरे एक तरफ सिनेमा की फिल्मो में कार्न फ्लेक्स खाते चिकने चमचमाते चेहरे दूसरी तरफ।

इन दोनो के वीच तालमेल विठाना मुझे असम्भव लगता रहा हैं।
कोई चीज अपने में'अश्लील 'नहीं होती, एक खास परिवेश में अवश्य अश्लील हो जाती है।

चेकोस्लोवाकिया के वाद किसी रूसी नेता के मुंह से कान्ति की वात उतनी ही अश्लील जान पडती है, जितनी एक ऐसे भारतीय मन्त्री के मुंह से समाजवाद की प्रशंसा, जो इंन्कम --टैक्स देना भूल गये हो ।''?
यह अन्तराल हर देश में है ।

युग युगार्थ की सच्चाई एक अद्रभुद अजीव सी संकल्पना है जिसे आदमियों की भीड़ में हम फडताल-कर सकते है।

यह यथार्थ वोध सम्वन्धो की गहरी सम्वेदिता, कटुता, रंगभेद की कसक, ,युद्ध का आतंक ,अत्याचार वेकारी की विभीषिका ,भूख की नग्न अग्नि लिये हुए है। युद्ध का आंतक एक विध्वंस निर्मल के पात्रों को जव तक आच्छादित करता चलता है। विध्वंस के अवशेष भी युद्ध की यथार्थ स्मृति दिलाते है। 'माया दर्पण' कहानी में लड़ाई के दिनों में जो बैरक बनाये गये थे वे अब उखाड़े जा रहे है।

रेत और मलवे के टोह ऐसे खडे है मानो कच्ची सड़क के माथे पर गुमडे निकल आये हो ।

आधी टूटी इमारते सूखे नग्न कंकालों सी खडी है। तरन की दृष्टि में यह सव युगवादी यथार्थ विध्वंस लेखक ने तटस्थता से इस प्रकार निरूपित किया है--------''-दूर से निरन्तर सुनाई देता है, पत्थर तोड़ने मशीन का शोर, दैत्य के ८ ुरीटों की तरह धूर्र-धूर्र ....दोपहर की नींद के कच्चे कगारो पर ये आवाजें हल्की लहरो जैसी टकराती है।''-२

विध्वंस के समय में उजड़े हुए परिवेश को उदासीन नगरो में कहनीकार ने भली-भाति चित्रित किया है। 'अमलिया'कहानी में लड़ाई के दिनो जो मकान ढ़ह गये थें।

उनका मलबा अभी भी जहां-तहां पडा दीख जाता है। यह सब घोर यथार्थ जिसका निर्मल वर्मा जी तटस्थ भाव से निरूपण करते चलते है, का वर्णन है।
लिखा है.........दोनो तरफ ऊंचे मकान थे......पुराने और गये.....वीते ।

लेकिन अंधेरी गलियो में जो मलवा अभी तक पड़ा है जव चांदनी रात होती तव मलवे के नीचे दवे पिरामिडों में हमें अजीव सी चीजे मिल जाती है........ ++++++++वह एक वहुत पुराना शहर था,और चादनी रात में हमें लगता जैसे हर दीवार के कोने मे , हर पत्थर के नीचे कोई ऐसा रहस्य छिपा है, जो हाथ बढाते ही पकड में आ जायेगा।''-१

दरअसल व्राजीलियन के उदासीन मकान आज भी मिटटी के ढ़ेर में फंसे हुए है। मकान की नग्न दीवारे हर राही को रोक-रोक कर कहती ,की उनकी युद्धगत यथार्थ स्थिति कुछ भिन्न ही रही है । लेखक तटस्थ भाव से यही कहता चलता है कि वर्लिन की पुरानी इमारतों पर उसकी निगाहे जाती है तव कुछ वैसा ही भयावह भारीपन और कुछ वैसी ही सूनी वीरान आंखो सी खिड़किया,कुछ फासले पर जली हुई ईटें और टूटी दीवारो का मलवा दिखाई दे जाता है। लड़ाई को खत्म हुए मुद्दत वीते लेकिन अभी भी उसके मिटे वूझे घाव जहॉ-तहॉ उभरें हुए है । इस प्रकार के निर्वैक्तिक दृष्टिकोण कहानीकार ने युग यथार्थ के प्रति एक पारदर्शी रवैया अपनाया है।[२]
'डेढ इंच ऊपर' कहानी में आततायी पुलिस का भयावह चित्रण प्रस्तुत कर लेखक ने युग यथार्थवादी उन आयामों को चुना है जिन पर आज भी वड़ी वेसवी से वहस की जाती है।

इस कहानी मे पत्नी से पेम्फ्लेट मिलने के पश्चात पुलिस पति को पकड़ ले जाती है।

उसे उस समय तक पीटा जाता है जब तक वह अपनी चेतना नही खो देता तथा वे उस समय तक प्रतीक्षा करते रहते है जब तक उसकी चेतना नही लौट आती ।

यद्यपि इस कहानी में पति निर्दोष है, लेकिन पत्नी जमीन अधिकारियों की निगाह में दोषी है, फिर भी दण्डित पति को ही किया जाता है।

कहानीकार कहता है...........''जर्मन अधिकारियों की आंखों में यह सवसे संगीन अपराध था। पुलिस ने यह सब चीलें खुद मेरी पत्नी के कमरे से वरामद की थी........और अपको यह वात शायद काफी दिलचस्प जान पड़ेगी कि खुद मुझे उनके वारे में कुछ मालूम नही था।[३]

उस रात से पहले तक मैं और वह एक ही कमरे में सोते थे, प्रेम करते थे. .....और उसी कमरे में कुछ ऐसी चीजे थे जो उसका रहस्य थी, जिसका मेरा कोई साझा नही था।''-४

१.वीच वहस में पृष्ठ, १७ २.वही पृष्ठ ४०
३.जलती साडी पृष्ठ २१ ४.पिछली गर्मियों में, पृष्ठ ७३

पति पत्नी के बीच इस वदलते यथार्थ का लेखक ने युगानुरूप ही समाकलित किया है। सात वर्ष की विवाहित जिंदगी के बाद भी पति अपनी पत्नी की चीजों कुछ ऐसे टटोल रहा था जैसे उसका पति न होकर भेदिया पुलिस का कोई पेशेवर नौकर हो । पति-पत्नी के मध्य ऐसे सुलगते प्रश्न वड़े ही मार्मिक ढ़ंग से कथाकार ने निरूपित किया है। दरअसल आज यह कल्पना भी नही की जा सकती है कि इस युग के वदलते परिप्रेक्ष्य में दैनिक जिंदगी के साथ-साथ पति-पत्नी एक दूसरी जिन्दगी भी जी लेते है।

पति इस कहानी में वार-वार यही महसूसता है कि उसकी पत्नी कुछ ऐसी जिन्दगी जी रही थी जो उसे अलग और उससे कुछ वास्ता ही नही रखती थी।

अगर पुलिस न पकड़ती तो पति जिंदगी भर यही समझता रहता कि उसकी पत्नी वही है जिसे जानता है।

कहानीकार स्त्री के चरित्र विशेष पर भारतीय विचारको की दृष्टि से टिप्पणी करता है कि प्रेम किसी भी तरह का दुराव - छिपाव नही होता, वह आइने की तरह साफ होता है।

लेकिन आज का प्रेम कुछ भिन्न है।

अब प्रेम करने का अर्थ अपने को खोलना नही है, वल्कि सव कुछ समेंट लेना है जो समेंटा जा सके।

इस तरह के निवैतिक यथार्थ पहलू कथाकार ने पूरी कहानी में जगह जगह प्रगट किये है।

''लंदन की एक रात'', '' सितम्वर की एक शाम'' पिक्चर पोस्टकार्ड, 'कुत्ते की मौत' आदि ऐसी ही कहानियां है जिनमें कहानीकार ने बेकारी से घिरे व्यक्ति की कथा-व्यथा को निरूपित किया है।

''सितम्वर की एक शाम'' के नायक की उम्र २७ वर्ष है वह बेकार है, मानो अरसा हुए दुनियां पीछे छूट गयी है। उसकी मनोदशा का चित्रण दर्शनीय है।. .... सितम्बर १९५५ की शाम .... आयु २६ वर्ष............एक युवक तितली को घास पर उड़ता हुआ देख रहा है। + + + + + + + + + वारिस में भीगता हुआ, वह सड़के पार करने लगा। वहुत से आदमियों की भीड में वह भी एक था। उसका चेहरा दूसरे आदमियों के चेहरे से अलग था,............ वह सब वही कर रहा था, जैसा साधारण तथा सव लोग करते है। + + + + + + और अचानक वह हंसने लगा।

इतनी बड़ी भीड़ में एक हंसता हुआ चेहरा। क्या कोई इतिहास में लिखेगा कि ....एक सितम्बर १९५५ की शाम को सड़क पर चलती हुयी भीड़ में एक चेहरा हंसता था।

२६ वर्ष पुराना वह चेहरा गंदले पानी की तरह गदला गया था।

उसके सामने अपने आप पर सिवा हंसने के कुछ रह भी नही गया था ।इसी तरह पिक्चर पोस्टकार्ड कहानी की सीडी और परेस एम०.ए० करने के पश्चात बेकार है। कहानी का आरम्भ भी समाचार पत्र में रिक्त स्थान वाले पेन्सिल से निशान बना रहे सीडी से होता है .... ''चाय पीते हुए मेरी निगाह अखबार पर ठहर गयी''-१।

सीडी मैग्जीन का दूसरा पन्ना देख रहा होगा, क्योंकि सामने वही पन्ना खुला पड़ा था तीन चार जगहों के हासियो पर उसकी पेन्सिलों के निशान पड़े थे।''-२

पत्ते नोट करते - करते उनकी नोट बुक भर चली थी वह इस बार भी एप्लाई करेंगे नही तो ओवर ऐज हो जायेंगे। परेश कुछ लिखता-पढ़ता भी है। उसने एक कहानी लिखी लेकिन दुर्भाग्य से प्रकाशक ने उसे भी वापिस कर दिया।

वे पत्र-पत्रिकाओं में राशिफल पढ़ते है और रोजाना अपने भाग्य की अजमाइस करते रहते है।

'कुत्ते की मौत' कहानी का नन्हे दस वर्ष पहले बी० ए० करके बेकार है।''-३

'लन्दन की एक रात' का पात्र विली कहता है कि उसका दोस्त जर्मन गया है। वहॉ नौकरियों की कमी नही है।

कथाकार ने युग यथार्थ के और भी अलग आयाम टटोले है।

वैश्याओं की दरिद्रता का यदि यथार्थवादी नग्न स्वरूप देखना है तो ''पराये शहर'' कहानी में देखा जा सकता हैं।

''इतनी बड़ी आकांक्षा'' की जिप्सी लड़की को निरंतन उसी दरिद्रता को भोग रही है।

कथाकार निर्मल वर्मा आदमियत के यथार्थ जीवन प्रसंगो को सार्थक पंक्तियों में अभिव्यक्ति देते चलते है।

असंगत जीवन बिता रहे पात्रों के विशेष संदर्भो में लिखी गयी कहानियां कुछ विचित्र ही हो गयी है। इस संभावना से इन्कार नही किया जा सकता कि यथार्थ चेतना के धरातल पर निर्वेयक्तिक दृष्टि से लेखक ने तूलिका से रंग भरे हैं, और यह रंग न अतिरंजित है और न अति सरलीकृत ।

हू-ब-हू जटिल और गहरे स्तरों में बैठे ये रंग भयावह यथार्थ की अभिव्यक्ति करते है।

वास्तविक स्थितियों और संदर्भो के अंकन में इसी कारण कथाकार हर कथ्य में सफल रहा है।

१-परिन्दे, पृष्ठ ११२-११३ २-वही, पृष्ठ ९२

३.जलती झाड़ी, पृष्ठ ७७

(च) राष्ट्रीय-अर्न्तराष्ट्रीय प्रतिमानोंमुखी विचारणाः-

समूचे संसार के जन जीवन में आज विश्व के भौगोलिक इकाई ने सुविधापूर्ण जिन्दगी को नये आयाम प्रदान किये है।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण ने एक ओर जहां सद्भाव पूर्ण विचारणा का प्रशस्तीकरण किया है वही दूसरी ओर स्वछंदवादी अवधारणा का खुलकर प्रस्फुटन किया है।

लेखक पर इन दोनो ही धाराओं का बराबर प्रभाव है। विश्व राजनीति में सुधारों की आवश्यकता को जहां महत्व प्रदान किया गया है वही लेखन के स्वतंत्र आयामों पर यथासंभव बल दिया गया है।

भारत की स्वतंत्रता आज भी गहरी समस्याओं में लिपटी हुयी है।

ऐसे ही भारत इत्तर देशों की आजादी की भ्रामक पदचिन्हों पर अनुसारित है।
रूचियों और महत्वाकांक्षाओं के अनुरूप देश विदेश की व्यवस्था का स्वरूप बदलता जा रहा है।

राष्ट्रव्यापी और अन्तर्राष्ट्रव्यापी चरित्रों ने व्यक्ति विशेष के साथ वैचारिक संकट पैदा कर दिये है। उनके आदर्श एक ओढ़ी हुयी चीज मात्र रह गये है। ऐसी स्थिति में हमारे समग्र कथा साहित्य की कथ्यगत संवेदना बदलती जा रही है।

राष्ट्रव्यापी आलोचन और उससे जनित आकांक्षाओं पर डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने बहुत ही कटु शब्दों में बहुत कुछ कह दिया है। .... ''पहले विदेशी लोग नोच खसोंट करते थे अब कथाकथित देशभक्त, नेता, राजनीतिक पार्टियों को लाखों का चन्दा देने वाले पूंजीपति लोग नोंच खसोट और लूट-पाट करने लगे जिससे क्लर्क से लेकर इंजीनियर, ओवरसियर, सहकारिता चलाने वाले आदि दूसरे अधिकार प्राप्त लोग भी शामिल हो गये।

बेरोजगारी, बैस्मय, निर्धनता तथा दयनीयता दिन प्रतिदिन बढ़ती गयी, इसके फलस्वरूप नयी पीढ़ी में कुंठा, बर्जना, घुटन, पीढ़ा, निराशा तथा एक विचित्र की आशंका का जन्म होना स्वभाविक ही नही विषम परिस्थितियों में अनिवार्यता भी थी। वह एक नयी संक्रान्ति जिससे सब स्तब्ध थे और दिशा हारा की तरह भटक रहे थे।

डा० बार्ष्णेय का यह कथन स्वतंत्रता के बाद उन नेताओं के नाम के संदर्भ को जोड़ता है जिन्होने गांधीवाद को एक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया है। यशपाल जैसे समग्र लेखक भी राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानों के प्रति सार्वजनिक रूप से यही स्वीकार किया है कि चारों ओर भूख, रिश्वत और सिफारिश का राज कायम हो गया है।'' २

कथाकार कमलेश्वर भी किसी प्रकार के अनुभवो को वर्णित करते है ....बड़ा भयानक दृश्य है.......आपाधापी, लूट खसोट और विकराल अराजकता का तथ्य इतिहास मे पहली बार शायद इतना विकराल दृश्य उपस्थित हुआ है ....इस दारूण विघटन की स्थित में हमारी नई संस्कृति जन्म ले रही है।''-३
यह नई संस्कृति मूल्यों को राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय वना रही है ।

राजनैतिक क्षेत्र में यह चारित्रिक संकट किसी न किसी प्रकार उभरता ही चला जा रहा है। विश्व में आज ऐसी राजनैतिक परिस्थियां वन गई है जो पिछले दो दशको से समाजिक जीवन को प्रभावित कर रही है।

निर्मल ने आज के जीवन मे राजनैतिक सत्ता की कानून व्यवस्था की सुविधाओ और विसमताओ को देखा होगा तभी कथासाहित्य में अभिव्यक्त किया। राजनैतिक अस्त-व्यस्तता ने उखड़े हुये वर्ग को भयाकान्त तों किया है,साथ ही उसकी परम्परा, उसका सामाजिक ढ़ॉचा, सम्वंधो की आस्था और परिवार की नींव को भी हिलाकर रख दिया है। विश्व में आज ऐसी प्रतिमानोन्मुखी अवधारणायें जुड़ रही है। जो केवल राजनीति या किसी वर्ग विशेष से जुडी नही रही वल्कि इससे लाखों, करोड़ो की जिन्दगी, और उनका वर्तमान और भविष्य, उनकी सभ्यता और संस्कृति, उनका आचरण और व्योहार भी जुड़ा हुआ है समूचे विश्व में इन विषाक्तपरिस्थियो मे मानवीय दृष्टि में व्योहारतः परिवर्तन कर दिया है।[1]यह कम महत्वपूर्ण नही है कि इस फैले हुये धुंये से परम्परा के प्रकाश में भी मानवीय करूणा जीवित है, जो उखाडी हुई दूब की जड़ों की तरह आज भी फिर से उगने मे समर्थ हो जाती है ।

निर्मल वर्मा का उपन्यास साहित्य इन कथित प्रतिमानों से वहुत कुछ कथायगृत प्रभाव को आत्मसात करता चलता है।[2]

भारतीय धरातल पर काया की मनःस्थिति का सन्नाटे में पारित हुआ द्रव्य स्वर खोजते हुए कथाकार ने ''लाल टीन की छत'' उपन्यास में कहा है .... एक-एक पत्थर पर पांव रखते और सोचते, यह पत्थर मेरठ है, जहां लामा रहती है।

यह दिल्ली है, जहां वावू गये है।

और आंगन के आखिरी छोर पर जो पत्थर था उसने सोचा यह समर हिल है जहां चाचा का घर है।''-१

लगता है देर तक उनका पांव सारी देह से अलग होकर पत्थर पर पड़ा रहा। काया चली जायेगी इसका भय पत्थर के पीछे दुका हुआ है। कौन जानता है कि कामा के लाल नीचे भाव को कसकर इस परिवेश ने वांध दिया है, वह कातर सी उत्कंठा लेकर राष्ट्र के भौगोलिक प्रतिमान वटोरती चली जा रही है इसकी समझ में नहीं आता है कि यह यंत्रवत जीवन उत्सुकता ही रखता है और न कोई पहचान बैसे उसे लगता है कि इन सबकी परिधि से वह अलग होती जा रही है[3]और अंधेरे में फिसलती चली

१-परिप्रेक्ष्य और प्रतिक्रियायें पृष्ठ ११७ २-गांधीवाद की शव परीक्षा, पृष्ठ २३
३-नयी कहानी की भूमिका पृष्ठ १२०

जा रही है उसके भीतर मन की तकलीफ बाहर के परिवेश में उभर रही है। वह मिस जोसुआ को स्मरण कर पुनः अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानों पर यूं विचार करने लगती है..... .''मुझे वे पुराने दिन याद हो आते है जब मुझे और छोटे को यह सोचना भी असंभव लगता कि.............. वह सब कुछ करती होगी जो हम हिन्दुस्तानियो को करना पड़ता होगा।''-१

अपने मे केंन्द्रित और असुरक्षित व्यक्ति भावों की दुनिया मे हल्की सी गरमाहट में महसूसता रहता है मिस जोसुआ और काया के बीच उभरे संवादो को लेखक ने प्रस्तावित कर राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय धुंधली सीमाओ को अतिकमित कर दिया है। काया के भीतर से झांकता हुआ आकाश मिस जोसुआ के जागरिक संसार को बिलकुल भले तरीके से अंदाज करता चलता है।

जब कभी बदमाती सी गंध काया के मन................मस्तिष्क मे राष्ट्रीय प्रतिमानों को लेकर सिमट जाती थी तो अचानक उसके पांव ठिठक जाते थे। लेकिन सिलसिलेवार वह अपनी जिन्दगी के आयामों को चुनती हुई अन्तर्राष्ट्रीय आयामों पर मिस जोसुआ का वर्णन करने लगत है।

यद्यपि वह उन दिनो भटकती रहती थी और उसे एक दूसरे को पहचानना भी अजनवी सा लगता था।

उपन्यासकार ने ''वे दिन'' उपन्यास में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानो को बहुत ही हल्का रंग देकर निरुपित किया है जैसे ....''यह यहां का नियम है।............... अगर कोई चेक लडकी किसी विदेशी की पत्नी से, तब उव उसके साथ बाहर जा सकती है नही तो काफी दिकक्त पडती है।''?

\+ + + + + + + + +

''मैंने कहा, ये जर्मन लडके कितनी जल्दी डेस्पेरेट हो जाते है।

तुम मेरे साथ चलोगें?

वह बहुत अकेला होगा।''-२

\+ + + + + + + + +

''अगर आप आ सके तो मैं अपनी पत्नी से आप को मिला सकूंगा वह दूर इण्डियन कको जादूगर या महाराजा समझती है।''-३

इन उपर्युक्त तीनों उदाहरणों मे निर्मल वर्मा ने चेकोस्लोवाकिया के प्रावास मे जीवनगत अन्तराष्ट्रीय प्रतिमानो को उरेहा है।

दरअसल आज हम वहुत जल्दी एक दूसरे के देशो से वहां की संस्कृति से जुड़ते चले जा रहे है।

१. लाल टीन की छत,पृष्ठ ९०   २. वही, पृष्ठ १८८

हमारा यह सब जुड़ाव भले ही परायापन रखाता रहे लेकिन इसमे भी कुछ न कुछ सीखने समझने की आवश्यकता महसूसी जाती है। टूरिस्टों की घुमक्कड़ प्रवृति पर इसी प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमान उभरते है। व्यक्तिशः हर यायावर विल्कुल अपने जैसा ही अपने भीतर के कमजोर अग्रहो से घिरा रहकर एक झीनी सी धुंध में सिमटा रहता है।

यद्यपि उसके मन में असीम उल्लास होता है फिर भी उसके मन की गंध में दवी राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों की रेखा उभर ही आती है। वड़े मजे की वात है कि लेखक ने प्रवास के दौरान वोद का वियर के विविध रंगी जायके की वात परिवेश को लेकर स्थलों पर उभारी है रायना के साथ जुड़ा हुआ पात्र अपने मन का रहस्य वोदका को पीकर कह ही देता है.........''वोदका पीकर मुझे अपनी देह हल्की सी लग रही थी। मुझे एक क्षण के लिये अजीव सा लगा।

.........जानते हो, इन दिनो वहां कुछ शराव घरों के आगे पेड़ो की टहनिया लगी रहती है?[1]

................किसमस के पेड सिर्फ निशानी है................शराब घरों के आगे वे लगाये जाते है। वहां सीजन की नयी शराव पिलायी जाती है,............वियर का डेढ़ गिलास पीने के वाद रायना इतने खुले, सहज भाव से वोलने लगेगी। मैने नही सोचा था।''?[2]

लेखक इन पंक्तियों में रायना के व्यवहार में वंधा-वधां अपनापन वार-वार खोलकर देख लेना चाहता हैं। विदेश में खाने पीने के वाद एक आचारसंहिता के अनुरूप उनकी दूरी सिमट जाती है और वह महसूने लगते है कि निस्तव्ध जिन्दगी का हर दरवाजा खोलकर क्यूं न हर आयाम पर उंगली रखकर टटोला जाये।[3]

लेखक इसी तथ्य को आगे वढ़ाता कहता चलाता है कि विदेश में यदि तुम लम्बा अरसा रहो तो अक्सर होता है कि पुरानी खुशी लौट आती है जिसके बारे में तुमने बरसो नही सोचा था। वहां का हर क्षण मानवीय सहज सम्वन्धों का वुनियादी क्षण है जिसे मित्र भाव से भोगा और व्यक्त किया जा सकता है। कहानीकार ने प्रवासी जीवन में एक वहुत लम्वे अरसे तक अजनवीपन और अकेलापन भोगकर यह सिद्ध किया है कि महानगरीय यान्त्रिकता और उससे जुड़ी मन के भीतर की निस्तब्धता वहां के व्यक्ति की नियति में अंधेरा बनकर रह गयी है। कहानीकार इसी स्थिति को ''अपने देश वापसी'' कहानी में जगह-जगह चित्रित करता है। नार्वे शहर के इतिहास का अतीतजीवी प्रतिमान स्पष्ट करता हुआ लेखक कहता है कि........''मुझे बरसों पुरानी एक दोपहर याद आती है।[4]

१-वे दिन पृष्ट ५३ २-वही पृष्ठ २६-२७ ३-वही पष्ठ १७१
४. वे दिन, पृष्ठ ९८

नार्वे मे एक मध्यकालीन शहर है'---------वर्गेन। मुझे हल्का सा आश्चर्य हुआ। जब हमारे गाइड ने बताया कि शहर का सबसे बडा आकर्षण वे मकान है, जहां सौ.. दो......सौ साल पहले शहर के धनी व्यापारी रहते थें।..................सब चीजे हू-ब-हू वैसी ही है, जैसी कभी थी।

.......................उनके लम्बे कमरों मे मुझे बार-बार लगता रहा ,मानो इब्सन के अभिशप्त पात्रों की नियति भी इन अधेंरे कमरो की भूल-भुलैया में भटकती होगी।''-78

प्रवासी लेखक इन सब सोचे हुए तथ्यों पर बहुत देर तक यही चिंतन करता रहता है कि उसकी स्मृति में वे-- सब प्रतीक उबलते रहते है जिनका हर आयाम खुद से वंचित एक चुनौती है न तो वे आवाजे पकड़ी जा सकती है और न उन्हे वैसे ही सोचा जा सकता है।

स्मृतियो की अटूट धारा उनके बीच कब की सूख चुकी है।

वे इस्तहारो के बीच केवल उरातनता बोध ओढ़ें हुए है।

कथाकार ने फिर भी तथ्य पर गहराई से सोचा है कि विदेशें में सचमुच जीवन जिया जाता है, और यह जिया हुआ जीवन सड़को पर घरों में, होटलों मे या अन्य संस्थानों में यत्र-तत्र बिखरा हुआ है। ''वीक एण्ड '' कहानी का पात्र बार-बार इसी बात को दोहराता है.........कितना आसान है।

.........तुम कहीं भी जा सकती हों।

मेंरे लिए सब कुछ खुला है

मेरे कोई बन्धन नही................लेकिन में जाऊगी कहीं नहीं मै यहां हूँ, पार्क के एक कोने में, खुली रोशनी के नीचे, उनकी आवाजें सुनती हुई।

यह मेरा वीक एण्ड है।''8

फैलती हुई दुनिया में इस नायिका ने अपने प्रिय को अपने आप में समेटना सीखा है इसीलिए वह आश्वस्त होकर जिधर भी चाहती है उधर बसेरा कर लेती है यह अन्तर्राष्ट्रीय मूल प्रवासी जीवन में लेखक के चमकीला रेत सा किरकिरा भले है किन्तु वह इन अनुभूतियों को लगातार भोगता रहा इसीलिए सिलसिलेवार उसने प्रवास काल में पात्रों के माध्यम से नये सिरे से रिस्ते जोड़े। ''अमालिया'' कहानी का प्रवासी पात्र हर सुबह मिनिस्ट्री के दफ्तर में आकर दूसरे शहर में जाने के लिये अनुमति की प्रतीक्षा करता है क्योंकि एक जाने पहचाने दफ्तर में प्रतीक्षा करना अजनबी शहरो की गलियों में घूमने की उपेक्षा उसे कही सुखद लगता है। ''अमालिया'' का यह पात्र वैचारिक स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानों से जुड़ा हुआ है वह कहता है ....''हर सुबह मिनिस्ट्री के दफ्तर में जाकर हम प्रतीक्षा करते थें उन्होने हमसे कहा था कि ज्यों ही हमारे कागज तैयार हो जायेगे हमें दूसरे शहर मे भेज दिया

जायेगा। हमें यह नही बताया गया था कि दूसरे शहर कहां है और कौन से हैं। लेकिन हमें इसकी चिन्ता नही थी क्योंकि हमें मालूम था कि वे उतने ही अजनवी और कम से कम और हमारे लिये उतने ही नये होगे, जितना यह शहर था, जहां हम रह रहे थें।''२

१-वही, पृष्ठ ४२

२-बीच बहस पृष्ठ १३

उपन्यासकार निर्मल वर्मा ने कथ्यगत नये मूल्यों को निर्लिप्त भाव से अपने कथासंसार में प्रयोग परक वनाया है। आज के खौलते जीवन में कढ़वे रस की गन्ध को, उसके अस्वाद को हर रचनाशील कथाकार आत्मसात करता चला है। वर्मा ने विट्टी, काया, नित्ती भाई, मंगतू, वुआ, चाचा, वीरेन आदि पात्रो के माध्यम से उन ग्रन्थियों को खोलकर देखा है जिनमें वसी हुयी उद्भावनायें बहुत वौनी और सिमट गयी हैं। एक तरह का वौनापन जीवित कुंठा के घेरे में आकर हर पात्र के भीतर प्रवेश पा गया है। कथाकार जीवन के शिथिल और कसे हुए उन सन्दर्भो को टटोलता है जिनमें व्यक्तिशः रूमानियत है, घृणा है, त्याग है और मृत्यु की छटपटाहट भी हैं। इसीलिए इन रेखाओ में फंसे पात्र कभी ऊंघतें उनींदे होकर बंधी हुयी मुट्ठी खोल देते है, लगता है उनका सर्वस्व लुट गया है तो कभी वो आकांक्षाओं को गूंथकर एक ऐसा धुंध का गोला बनाते है जिसमें तीव्रता, गति है और चमक भी है। इसीलिए ऐसा लगता है कि उपन्यासकार ने कुछेक पात्रों को ऊवड़-खावड़ टीलों से उतार कर सूखी समतल जमीन पर खड़ा कर दिया है, और कुछ पात्रों को ठोस जमीन से उठाकर पहाड़ी के समानान्तर लटका दिया है जो वीहड़ सन्नाटें में हाथ वांधे हुए छटपटा रहें है।[1]

"दो घर का नायक नौ वर्ष से विदेश में है।

कलकत्ता से आने के कुछ महीने पश्चात ही वह वीमार हो गया है। वह तीमारदारी में संलग्न एक नर्स से इसी दौरान मुहब्वत कर लेता है, और उससे दो वच्चे हो जाते हैं। वह अपनी अतीत की जिन्दगी के प्रति बहुत रूखा हो गया है । इसीलिये वह अपनी खिसयाहट को छुपाने के लिये नये रास्ते की तलाश कर लेता है।

उसके अंर्तद्वन्द को कहानीकार ने मनोवैज्ञानिक शब्दावली में कुछ नये क्षितिजो का आकलन किया है।

"आपके वच्चे ....अचानक कुछ याद आया हल्की सी पीडा उठी।

....एक लावारिस-सी हंसी उसके चेहरे पर आई।

..........................मुझे हैरानी हुई कि वे अव तक मेरा हाथ पकडे थी।"[2]

यह पात्र कुछ इस प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है कि वह न तो वहां रह सकता है न वापिस कलकत्ता आ सकता है।

वह नहीं जानता कि उसका सही घर कौन सा है। वह उतना ही दुःखी है, जितना की 'जलती झाडी' का पात्र यह सोचकर दुखी है कि यदि कहीं उसकी मृत्यु हो गयी तो उसका स्थूल रुप ही पहचाना जा सकता हैं।[3]

इस प्रकार के मानसिक धरातल की स्वाभाविक प्रवृति पर कहानीकार बहुत

1. पिछली गर्मियों में, पृष्ठ 70 2. जलती झाडी, पृष्ठ 86
3. बीच बहस में, पृष्ठ 55–56

कुछ आगे लिखता रहा है।

यूरोपीय उन्मुक्त वातावरण कितना कुछ विचित्र है इसका भी अन्दाजा इस कहानी के अन्त में लग जाता है।--------"सारी रात शहर शरावघरों में सो जाता, तो वे मुझे घसीटकर बाहर सडक पर फैंक देते और फिर कुछ देर वाद दूसरे शरावी मुझे अपने संग किसी अन्य शरावखानो में ले जाते और मैं इस तरह वारी-वारी सोता, जागता, गाता, घिसटता हुआ समूचे शहर की अंधेरी गलियों में धूमता रहा।''?

यह अजनवीपन इतना भयंकर अभिशाप है कि व्यक्ति कुछ का कुछ हो गया है।

विदेशों में तो पूरा परिवार का परिवार एक दूसरे के प्रति अजनवी है। व्यवित परिवार में रह ही नहीं पाता हैं।

'पिछली गर्मियो में' कहानी का पात्र निन्दी और केशी वहुत कुछ अजनवी और अकेले हैं।

यहाँ 'निन्दी' तीन वर्ष पश्चात् वियना सें लौटता है।
उनके अन्दर भाई केशी से मिलने के इच्छा नही।[1]

उसकी मां कहती है कि वह कुछ दिनो के लिये वहां हो आये, लेकिन वह वहा नही जाना चाहता।

उसका मूल कारण यही है कि वरसो पहले एक जो चीज उसके मन में बैठी थी वह इतने पीछें और दूर सरक गयी है कि उसे देख पाना सम्भव नही ।

केशी से मिलने की इच्छा न होना इस वात का साक्ष्य है कि परिवार की दीवारे टूट चुकी है। यह अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमान वन गया है कि हिन्दुस्तान का व्यक्ति भी एक दूसरे से ज्यादा जुड़ना नहीं चाहता । 'माया दर्पण' की तरन जानती है कि वह अकेली रहेगी और अकेलापन हमेशा जिन्दगी से जुडा रहेगा।

बडे घराने की बात होकर उसका बाप विवाह नही कर पाता। बाप बेटी के मध्य इतना अन्तराल हो गया है, कि दोनो अलग-अलग चुपचाप बैठे रहते है ।

इतना ही नही वरन् यह भी निश्चय नही कर पाती है कि आखिर उसे करना भी क्या है।

कहानीकार ने लिखा है ...."आते ....जाते कभी सामने पड़ जाती थी'' तो देखते भी नही देख भी लेते तो इस तरह से मानो उसे पहचान पाने में दुविधा हो रही हो। उनकी कोशिश यही रहती कि जहॉ वह बैठी हो वहां न जाना हो।

अकस्मात मुठभेड़ हो भी जाये तो दूसरी तरफ देखने लगे या रास्ता बचाकर निकल जाये।''[2]

1. जलती झाड़ी, पृष्ठ 31
2. कौवे और काला पानी, पृष्ठ 46

तरन समझती है कि घर में तनाव क्यों रहता है। वह रूखी सी रिक्तता अपने मन में भर लेती है और सोचती है कि वावू जी को उससे ज्यादा ही विरक्ति है तो उससे छुटकारा ही क्यो नही पा लेते।

यह आज के व्यक्ति का प्रवत्तिमत अलगावपन का दौर समूचे विश्व में दिन प्रतिदिन वढ़ता जा रहा है। इसी प्रकार ''अधेरे में'' और 'अन्तर' कहानियो में बच्चे वोझ वनते आज देखे जा रहे है।

सन्तान वहां वोझिल हो जाती है जहां दायित्व का निर्वाह भली- भॉति नही हो पाता। सम्वन्धो के इन वदलावों की दुनिया में वहुत छोटे बडे अभिनव आयाम लेखक ने संर्स्पश किये है । ''जिन्दगी यहॅा वहॅा'' कहानी में व्यक्ति से व्यक्ति के फॉसले का महानगरीय संत्रास आज समूचे विश्व में देखा जा सकता है।

हिन्दुस्तान की इस संक्रांतिपरक संस्कृति में दिल्ली शहर का चित्रण विचारणीय है...............वारिस के दिनो मे वूथ के शीशे पर वुदिकिया छिटक जाती............. ....धुंधले से वादल छतों पर घूमते रहते ....दिल्ली एक टिमटिमाता सा दिया दिखाई देता धुंध पर तिरता हुआ ....हलो,............हलो......................... ......मैं हूँ ....और तुम ....।''

यह एक जीवनगत वदलते प्रतिमानों में राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय उदभ्रान्त स्वरूप निर्मल जी ने अपने कथा संसार में उन्मुक्तता के साथ दिया है।

लेखक देश से विदेश तक के सारे जीवनगत दरवाजे बडी ही समझ के साथ खोलकर बंद कर देख चुका है। उसका अपना अहसास जिसे प्रवासीकाल में जिया गया है बडा ही विचित्र और विलक्षण है।

उन अनुभूतियो को शब्दों में वांधकर कहानीकार ने एक ही वरते हुए तकाजे को विविधधर्मी बनाया है।

उसके मन की निश्चितंता इंग्लैण्ड, वेलजियम, चेकोस्लोवाकिया और हिन्दुस्तान जैसे देशों और शहरो मे अपने अन्तर में विश्वास का बल पाकर उदगीरित होती रही है। इसीलिये वे प्रतिमान जो आधुनिकता के चौखटे में समायोजित हो जाते है।

उनको कहानीकार ने भेदन करते हुए कुछ अन्ततः तलाश की है। मनुष्य का वह पहलू जिस पर एक आदर्शवादी भवनाओं के उदाट शिखर पर सोचा गया था उससे बढ़कर वर्मा ने यथार्थ वादी धरातल पर रास आते हुए जीवन को नया क्षितिज प्रदान किया है।

(छ) साहित्य के कथ्य में नये मूल्यों का सम्प्रेषण :-
स्वातन्त्रयोत्तर कथा साहित्य में आनेवाले कथ्यगत परिवर्तन और विकास के आलोचको सम्वेत स्वरों में एक जैसा ही स्वीकारा है।

राजेन्द्र यादव इस वैचारिक स्तर को सन ७० के आस पास से ही मानते है बहरहाल कथा साहित्य का वदलता कथ्य संवेदन को अधिक छूकर चला है । इनके कथ्य में व्यक्ति छटपटा रहा है। सम्वन्धों की टूटन उसे सम्वन्ध हीन होकर जीने के लिये विवश कर रहा है। यह सम्बन्ध समान धरातल के भी हो सकते है और सेक्स धरातल के भी ।

व्यक्ति दोहरे अलगाव को झेल रहा है:- अपने से अलगाव और समाज से अलगाव जिसके कारण अकेलापन अजनवीपन इसी की धरोहर वन गया है।

इस प्रकार के त्रास की अवस्था में आज का व्यक्ति इतना अधिक निरीह और वेचारा है कि डा० शिव प्रसाद सिंह के ये शव्द पूर्णसत्य है................''वह पोत जिस पर व्यक्ति सवार होकर यात्रा कर रहा था पहली वार अर्न्तध्यान हो गया है जिससे डूबते व्यक्ति को समुद्र के खारे जल का स्वाद ही मिल पा रहा है।''?

आज का व्यक्ति अभिशप्त है बौना है, नैतिकता-अनैतिकता से दूर है। ठंडा और दरिद्र है और आइडेनिटिटी रहित है। आदमी की भलमंनसाहत लुप्त प्रायः हो गयी है। आज उसे वहुत बढ़िया औरा जोरदार कहा जाता है। जो छद्मवेशी है अपने को जीता है और दूसरों को ठगता है। ऐंसी मनः स्थितियों में जूझते व्यक्ति के कथ्य को आज के कथाकारो ने कुछ आड़े-तिरछे स्वरूप प्रदान किये है कथाकार संवेदनाओं को वटोरता हुआ भोगी हुई त्रासदी को कथापात्र के माध्यम से खुद ही भोगने लगता है।[1]

यह प्रगतिशील कथ्य की जीवन्तता आज हर कोने में विचारणीय बन चुकी है। कथ्य आज नयी जमीन तोडकर नये पौधो को तोडता जा रहा है। सन ७० के बाद जितना कुछ रचानाकार में आत्मसात किया उसे उसने आवाज दी रूप दिया और दैहिक एंव आन्तरिक यथार्थ भी दिया। कथाकार निर्मल इन अमिट प्रभावों को अपने कथा संसार में एक श्रृंखलावद्ध रूप देते चले है।

उपन्यास 'एक चिथड़ा सुख' कथागत नये मूल्य संम्प्रेषण की हामी भरता है।

बिट्टी बडे अजीब ढंग से जीवन के छूटे हुए अशों को आज के जीवन को जोड़कर एक लम्वी माला तैयार करती जा रही है। उपन्यासकार ने कहा है....... ....''वह एक सूखी शाम है, सुख जो अचानक चला जाता है, बातो के बीच। बोतल उठाने और गिलास रखने के वीच हंसी के टुकड़ो पर, जव विट्टी के दोस्त सचमुच एक .....दूसरे को विश्वास की निगाहों से देख रहे थें।

वहां कोई सन्देह नही,न खतरा न आने वाले दिनो का भय.......और तव सहसा अपने पुराने दिनों की डायरी पढ़ते हुए मुझे लगता है उन दिनो में कितना बेवकूफ

१.आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद, पष्ठ ८९

था''? बिट्टी के मन का कोना लेखक का मन झांककर आया है। वह अतीत की अदृश्य सी चीजे गिलास के घूंटों में समाहित करता चलता है।

बिट्टी की आखें नित्ती भाई के सहज रूमानियत स्वभाव से जुड़ी हुई हैं। वह पुराने अवशेष को एक घूंट के साथ ही निगल लेना चाहती है पर वह कुछ नहीं पाती।

उसके मन का कांपता विश्वास कभी थम्म से नीचे गिर जाता है, और कभी इतना अधिक फैल जाता है, कि उसकी असीम छाया मे उसकी सारी दुनिया सूखी नजर आती है।

दर असल व्यक्ति की कुंठा का वह अन्दरूनी धरातल जिसे किसी ने ही समझा है।

निर्मल उन्ही में से एक है, जिनकी ठिठकी दृष्टि अतीत जीवी पात्र के गहन अन्धकार को प्रकाश में बदल देती है।

''वे दिन'' उपन्यास समग्र रूप से देशकाल परक व्यक्तियों की सीमाएं तोड़कर अन्तर्मन की कचोटती भावनाओं से जुड़ गया है।

मन की परतों के भीतर बैठा हुआ वह क्षण जिसे कभी जिया गया था हमेशा खटकता रहता है।

लिखा है....................वह हमेशा कुछ अनिश्चित ढंग से की................ .बोर्ड को छूता था, जैसे हम विजली के मीटर को छूते है। चाहे उसमें करेन्ट न हो, फिर भी अन्तिम क्षण तक, छूने से पहले तक, एक सन्देह वना रहता है। 1

यह सव अतीतजीवी मानसिकता की वजह से है।

हम अतीत के पृष्ठों पर कुछ गुमसुम सा लिखा हुआ है सदैव पढते रहते है।

यह उलझा हुआ सुख और दुख है एक वच्चे के झूले की तरह जब वह ऊपर जाता है दिल घवराने लगता है और नीचे आता है तो दिल वैठने सा लगता है। आज का व्यक्ति समयवादी दो छोरो पर अपने को खडाकर अभिशप्त बना हुआ है। स्त्री-पुरूष का सह-सम्वन्ध दो छोरो पर अपने को खडा कर अभिशप्त बना हुआ है।

स्त्री पुरूष का सह-सम्वन्ध भी कुछ वेमानी सा है। वस इतना ही है कि वे एक दूसरे के साथ है। उसके परे कुछ भी सही नही है।

वे अपने सुविधाओं से एक दूसरे का साथ भोग रहे है। उनका रूखा मन अन्तर्मन दूरियॉ बढाता ही चलता है। रायना पात्र की सोच इन संदर्भो में नये अर्थ लिये हुए है।महज शब्दों पर उसने जिन्दगी को प्रयोगशाला में प्रयोजित करके नही देखा।

वह अतीत की धुंध से अंधेरे को अपने भीतर लपेटे हुए कुछ अजीव सी कातरता अनुभव करती रहती है इस उपन्यास के अतिरिक्त 'लाल टीन की छत' में काया पात्र आज की उन तमाम लडकियों का प्रतिनिधित्व करती है जिनका

1. एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ 90

जीवन सहसा ही रूक गया है। दुखद एवं सुखद झमेलों में फॅसी पात्र काया स्थिरता से अपनी जिन्दगी का निर्धारण नहीं कर पाती। उसे हमेशा यही याद आता है कि जो आज है वह वीते हुए कल में गमगीन और वीरानगी ही पैदा करेगा। उसका मन अनायास ही उस अदृश्य क्षितिज की ओर दौड पडता है, जहां न धरातल है और न जीवन विन्दु को उतारने का स्थान सिर्फ खुले आकाश की एक धड़कन है जिसे केवल सोच और संवेदन में जिया जा सकता है।

वह टूटती जिन्दगी में अव नये विश्वासों को वल नही दे पाती। केवल यही विन्दु आज के आलोक में चमकते हैं जिनका आज प्रसंग जीवित है।

काया के मन की स्तवधता का एक छोटा सा पटाक्षेप दृष्टव्य है..... ....''एक विचित्र सी आकांक्षा ने उसे पकड़ लिया शायद वाहर की धुंध री ....या दिन भर की थकान......खाने के वाद वह सीधी अपने कमरे में आ गयी। उसने सोचा था, विस्तर पर लेटते ही नींद आ जायेगी। ....वह सोचती फिर आंखें मुदने लगती ....पपड़ाये सूखें होट खुल जाते है।''[1]

काया के मन की व्यग्रता इतनी अधिक तीव्र थी कि वह जब एक मन की परत को हटाती तो भीतर छुपी हुई एक चाहना सिर उठाती ।

गलें में फंसी हुई एक चाहना सिर उठाती है। गलें में फंसी हुई आवाज से वह सिर नही उठा पाती थी कि वह सिर की तरफ आये या वैचेनी की तरफ।

वह बैचेनी या आकांक्षा का ववन्डर आज हर व्यक्ति को घेरे हुए है और इससे अधिक भीतर ही भीतर कुदेरने वाली वह स्मृति है जो सहसा सोने के पहले हर आदमी के तकिये के पास खडी हो जाती है, तव व्यक्ति न अतीतजीवी रह जाता है और न वर्तमान भोगी घड़ी का पैन्डुलम कभी इधर तो कभी उधर सोचता हुआ अपने जीवनगत समय को मारता चलता है।कुछेक पात्रों के चेहरे मोहरे सब फीके पड गये है और कुछ पत्थर की लकीर से चमकते हुए खुली हवा के झोकों में झंकृत हो रहे है।

स्त्री पात्र पुरूष पात्र की अपेक्षा अधिक बासी और बोझिल है। वह अपने मन की गाठ खोलती हुई यादो के वहाव में जीवन गत सारे छोरो को फैलाकर वह जाती है और कहा जा सकता है कि वे पात्र पलायन के उस कगार पर खडे है जहां अधेंरा भी है और फिसलन भी। वस्तुतः इन स्त्री पात्रो के भीतर उन्हें चीरने वाली एक स्मृति है जिसके सहारे वे सिहर तो रहे है लेकिन उनकी सिहरता आग्रह पूर्ण असीम यातना में लिपटी हुई है। और उधर पुरूष पात्र कडवी गंध की तरह हवा मे ठहरे हुए है, वे कभी एक साथ अंधेरे खड्डे में उतर जाते है। तो कभी विश्वास की रोशनी पाकर ऊपर उठते चले जाते है। उनके मन में ओज है, वर्चस्व है लेकिन कही-कही न बुझने वाली तीव्र पीडा भी है।[2]

2-वे दिन, पृष्ठ ७४   1-लाल टीन की छत, पृष्ठ १३६-१३७

उपन्यासकार ने इन स्त्री-पुरुष भिन्न-भिन्न पात्रो में वह जीवन का फिसलता हुआ शिलाखण्ड अनुभूतिगम्य माना है जो लुढ़कता है।

उसमें इतना दम नहीं है, कि समान्तर सपाटता को अवधारित कर सके वजह यह है कि आज का जीवन बडा दुरूह और जटिल है।

इसीलिए गति एक रूप हो ही नहीं सकती। व्यक्ति के अपने सोच विचार भिन्न-भिन्न दिशाओं में भिन्न-भिन्न आयामों को लिये हुये है। वे मूल्य जिन्हे सनातन कहा जाता था अब वे चरमरा गये है।

इसीलिये अब फ्रेम भी नया है और कीमत भी नयी है। बाजार का रूख बदल गया है, इसीलिये ग्राहक भी नये है।

कहानीकार निर्मल ने स्वतंत्रयोत्तर भारत के नये मूल्यों की सम्प्रेषणा जहां एक ओर की है वहां दूसरी ओर विदेश प्रवासकाल में वहॉ के मूल्यबोध को अपनी स्मृतियों में चिपकाया है।

आज का मनुष्य यह महसूसता है कि वह वर्तमान में मात्र छोटी सी घटना है।

इसीलिये अतीत से जुडकर वर्तमान में एक नया रास्ता खोजने का निश्चय करता है। यद्यपि उसके मन मस्तिक में शून्यता बोध ने ऐसा पडाव कर लिया है, कि उससे सारी वस्तुए दूर खिसकतीं जा रही है।

व्यक्ति सवेरे उठता है लगातार सात-आठ घन्टे काम करता है और फिर थककर सो जाता है। इसी अनुभूति का सम्प्रेषणीय स्वरूप दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में आखिर है क्या ? उसका सारा कार्य यह सिद्ध करता है, कि वह कुछ बनना चाहता है।

किन्तु परिणाम में कुछ हो जाता है, फिर भविष्य कि रिक्तता को भरने के लिये उम्मीद लेकर फिर जुट जाता है।

''माया का मर्म'' कहानी में लेखक ने इसी नये संदर्भ और नये अर्थ को दर्शाया है............दिन के समय लालटेन जलाता हुआ मैं इस उम्र में कतराता हूॅ ....लगता है घर में कोई मर गया हो। सफेद पुतलियॉ दीवार में पथरायी सी झॉक रही हो .... मै आंखें मूद लेता हूॅ ....मेरा सोचना मेरे जैसा ही बेकार है, इसीलिए आज नही सोचूगा। [1]

कहानीकार इस पात्र के माध्यम से जीवन कथ्य को तीन पहलुओं में समेटता है।

पहला पहलू...............वर्तमान में जन्मी संघटनाओं का है जिनमें फंसा व्यक्ति विवश होकर अपने से ही अलग हो जाता है।

दूसरा पहलू.................व्यक्ति के अपने आप के अस्तित्व के नकारने का है जब वह विकट परिस्थितियों में अपने आप को पाता है और अनिर्णित भाव से अपने आपको बेसहारा महसूस करने लगता है तब यही स्थिति होती है

१. परिन्दे, पृष्ठ ३१

और तीसरा पहलू......................वर्तमान में जन्मे भविष्य का है। जिससे समग्रतः अपने को ढ़ॉप लेना चाहता है। इस सोच संवेदना में जीवनगत नये संर्दभों को कहानीकार ने भली -भॉति सम्प्रेषित किया है।इस पात्र की स्मृतियों सूखे पत्ते सी झरती जा रही है।

वह वेकारी के उदास और लम्बे अरसे से गुजर रहा है, इसलिये उसका व्यक्ति मूल्य स्वयं ही विखरा हुआ है अधखुला है तथा निराशोन्मुखी है।

"सितम्वर की एक शाम " कहानी में भी वेकारी के कारण जिन्दगी के सारे पशस्त मार्गो में व्यक्ति अवरोध खडा कर देता है, इसीलिये एक गहरी अथाह शून्यता के भवर में अपने आप को आकंठ डूवा पाता है।

वेकारी से उत्पन्न हताशा ने उसे पोर-पोर तोड दिया है। उसका यह हतास मन देखा जा सकता है..............."वह रात एक अरसे बांद भी एक अधमिटी अधूरी स्मृति के कुहासे में घुल जायेगी। रह जायेगा केवल वह उसके आकार हीन, अर्थ खोजते हुये अस्तित्व की परिधि को अनुप्राणित करता है एक अस्पष्ट धुधला सा दर्द जो किसी दुख किसी चाह से उत्पन्न नही हुआ, जो उसके जीने की किया के साथ जुडा हुआ है, हमेशा से उसके संग है। जव से वह सॉस ले रहा है। ....छाया सा भटकता उडता उसके संग वीता हुआ ।"१

"पिक्चर पोस्ट कार्ड" के युवकों ने तो नये सम्प्रेषण में तो यहा तक सोच लिया है कि शायद वे कुछ न कर सकेगे। 'जलती झाड़ी' कहानी में नये मूल्यों का सम्प्रेषण उपयुक्त कहानियों से कुछ भिन्न भी है।

इस कहानी मे खालीपन तो है लेकिन एक तपती वुझती जिन्दगी का जोड है इसलिए इस कहानी में वैसी न तो उदासीनता है और न नितान्त अकेलेपन की बोझिलता है। इस प्रकार खालीपन और सरसराती जिन्दगी के पहलुओ ने कहानीकार ने दो पक्तियों में ही रूपायित कर दिया है।.....................एक दवी उफनती सी चीख फिर सिसकती सी कराहट, फिर वह भी नही...................एक खाली हल्की हवा और तव सव कुंछ पहले जैसा शान्त हो गया।"-२

इस प्रकार के मूल्यों के सम्प्रेषण में न तो जुगुत्सा है, न कौतुहल, न जिज्ञासा है न उदासीनता। इस असीम मौन परिवेश में कहानीकार ने प्रेमी-प्रेमिकाओं के इच्छा भरे सवालों को प्रयोगपरक प्रस्तुत किया है।

आज की कहानी यथार्थ वोध के साथ व्यक्ति के कटु और तिक्त जीवन को उरेहती चली जाती है निर्मल ने यथार्थ से साक्षात्कार करते हुये कहानी कथ्य के पार्श्व मे कई चित्र उभारे है। वैसे यथार्थ और नये मूल्यों के सह-सम्वन्ध के वारे में उनका मत बहुत ही सटीक है। वे कहते है कि यथार्थ पक्षी की तरह झाडी में छिपा रहता है उसे वहा से जीवित निकाल पाना उतना ही दुर्लभ है जितना कि उसके बारे में निश्चित रूप से कुछ कह पाना।"-

1.परिन्दे, पृष्ठ 31 2.परिन्दे, पृष्ठ 119

कहानीकार सिर्फ यही कह देना चाहता है कि यथार्थ की भूमि पर नये मूल्यों के पौधे तो हम जमाते है लेकिन हर क्षण यही भय रहता है कि झाडी में छिपे पक्षी की तरह ही यदि हम पर दबाव डाला गया तो या तो मर जायेगा या फिर उड जायेगा।

इसीलिये परिवेश के साथ हमें जिन्दगी को जोडना होता है। किसी अनजाने क्षण में जब हम समाज, संस्कृति से विद्रोह करने का दावा करने लगते है तब भी बात यही होती है, कि व्यक्ति अपने ही अनुभवों से अपने भीतर की गूंज में इतना बेबस हो जाता है कि वह सोचता कुछ है करता कुछ है। ''कौवे और काला पानी'' की मास्टर जी की जीविका छाया और सन्नाटे में बटा हुआ परिवेश भीतर बाहर अलग-अलग धरातलो में बंटा हुआ है।

पिछली रात के बाद हमारे बीच एक मूल समझौता सा हो गया था कि हम उनके बारे में चुप ही रहेगें................हमारे बीच में कुछ वैसे ही अदृश्य हो गये थे।..... ....जैसे न बारिस होती हो और न धूप दिखायी दे सिर्फ बादलो की कनात ऊपर से नीचे तनी रहती है।''-१

हम अपने समय के महज दर्शक ही नही है बल्कि परिवेश के भोगता है,इसीलिए परिवेश से पल्लाझाड सम्बन्ध नही रख सकते ।

परिणाम यह होता है कि नये मूल्यों का दौर हमारी चेतना पर आरूढ हो जाता है। जिससे हम उसके इशारे पर इधर उधर मुँह मारते फिरते है।

यद्यपि यह सब नया तन्त्र नये मूल्य आज के व्यक्ति के हिमायती नही है फिर भी जीने के लिए अजीव से सन्नाटे मे ही विश्वास करना होता है।२

''छुटिटयों' के बाद की नायिका इसी विश्वास को लेकर अपने छुट्टिया व्यतीत करने के लिये प्रेमी की खोज करती है।३''लंदन की एक रात'' का जार्ज नीग्रो आपनी जिजीविषा के लिये सबकी उपेक्षा सहन करता है। मनुष्य के जीवन का प्रस्थान विन्दु बहुत ही सुहावने ढंग से जीवन सुखद आशाओं को संजोता है लेकिन ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता जाता है उसके हाथ बंधते जाते है विचारो का ताल मेल फीका पड़ता जाता है और वह भी अपना नही रह जाता इस अनोखे और विचित्र जीवन दर्शन को एक अबोध पागल सी लड़की के चेहरे पर कहानीकार ने पढ़ा है.................''उसे देखकर सहसा वे सब चीजे याद हो आती थी जो आदमी बडा होकर खो देता है उस लड़की ने कुछ भी नही खोया था और इसलिए वह खुद खो गयी और पागल सी लगती थी।४

''उनके कमरे'' कहानी में इस प्रकार का तथ्य बड़ते हुए व्यक्ति के खिसयाहट भरे आक्रोश को व्यक्त करता है।

ज्यों-ज्यों वैचारिक स्तर पर व्यक्ति धनी होकर नये मूल्यो के प्रति आकृष्ट होता है त्यों-त्यों परिवेश उसकी बांह पकड़कर उसको अपनी ओर खींच लेता है।

1. जलती झाड़ी, पृष्ठ 83
2. नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति, पृष्ठ 180
3. पिछली गर्मियों में पृष्ठ 64
4. कौवे और काला पानी, पृष्ठ 147–148

फिर तो उसके माथे पर एक उदसीन मुस्कराहट की सिलवट होती है ।
वर्मा की कहानियों के शीर्षक और कथ्य् परिवेश के जीवित आधार लेकर विद्रोही स्वर चेतना फूंकते चलते है।

उनमें खामोश आवाजें है, पतझड़ के पपड़ाये पत्ते है, भयावह इमारतें है सांय-सांय करते दरवाजे है, खटखटाती हवायें है, पथराये भावहीन सम्बंध है, व्यक्ति को निगलने वाला युद्ध है वीमारी से उत्पन्न निराशायें है, और कांपती चीखों के बीच का सन्नाटा है। कहानीकार ने मनुष्य के बाह्य और भीतरी विसंगति पूर्ण जीवन काजायजा लेते हुए हर स्थल पर नये सम्प्रेषण की बात की है आज का व्यक्ति स्वेच्छा से जीना नही चाहता। लेकिन परिवेशतः से उसे जीना पड़ता है। एक जानवर की सांस की तरह घनी गहरी खुरदरी सांस लेकर।

वह दुविधाग्रस्त विल्कुल नहीं है लेकिन हर बार परिवेश नें उसे दुविधा में डाल दिया है''

'इतनी बड़ी आकांक्षा' कहानी में स्त्री पुरुष के इस भाव सम्बंध को पहचाना जा सकता है............जब स्त्री और पुरुष इतने निश्चित भाव से आपस में चुप हो, तो अनुमान लगाना कठिन नही है कि वे पति-पत्नी नहीं है ।

उनकी उब को सूंघना भी मुश्किल नही है।[1]

आज के बदलते दूर से दिलचस्प जीवन मूल्यो में सरकती हुयी जिंदगी कितनी निरर्थक और हताश जान पड़ती है लेकिन अनायाश ही इस प्रकार की जिंदगी को देखने की गुंजाइश नही है ।

व्यक्तिः फांसले वुनियादी ढांचो को चरमराते जा रहे है फिर उनके फ्रेम में फंसी जिंदगी बीच में फंसी जिन्दगी की भॉति झूल रही है।

कथाकार इन विचार कोणो में भी नये मूल्यों के प्रति आस्थावान है उसका निरूपण है कि जिन्दगी को जीजीविषा साध्य होकर जीना है न कि मायावी कल्पना में।

(ज)-कालधर्मी कथ्य विधान मे जुड़नशीलता

सन ६० के आस पास जितना भी कथा साहित्य प्रणीत किया गया वह सब कालधर्मी जुड़नशीलता को ओढ़े हुए है।

आज का व्यक्ति अनायास ही जिंदगी का अर्थ बदलता हुआ देख रहा है। इसलिए वे विश्वास जिन पर मूल्यवत्ता ठहरी हुयी थी हिल गये है, वे मार्ग जो विस्तृत और स्वस्थ थे आज वे भी संकरे हो गये है दूरिया सिमटी तो है लेकिन यह सिमटन व्यक्तिवादी होती जा रही है अपने में ही केन्द्रित होकर अपने से ही टकरा कर आज का व्यक्ति बार-बार सिहर उठता है और उसे लगता है कि वह काल सापेक्ष नीरव भौडे में खड़ा हुआ है। स्वतंत्र भारत में जितना उन्मुक्त वातावरण प्रयोग स्तर पर दिखायी दे रहा है उससे कही ज्यादा

1.पिछली गर्मियो में पृष्ठ 101

उन्मुक्त शब्दों ने भारत इधर विश्व को ढक लिया है । जीवनगत मोड़ो पर विचार करता हुआ ''वे दिन'' उपन्यास का पात्र कहता है.............मुझे तव लगा था जैसे हम एक ऊंचाई को छूकर नीचे उतर रहे है.............वह अव नही थी, लेकिन उसकी चकराहट वाकी थी''-१

लेखक ने प्राग के सहज परिवेश को प्रतीकात्मक शैली से यहां अभिनव अभिव्यक्ति दी है व्यक्ति चारो ओर से घिरे वातावरण में समूची देह के साथ फड़फड़ा रहा है।

यह कैसे कोई घटना नही है जिसे उंगली रखकर वताया जा सके. लेकिन जीवन के मर्म की हल्की सी झांकी है । जैसे कि कोई समुद्र में लहर उठे और लुप्त हो जाये। लेकिन वरावर यह कम चलता रहे। व्यक्ति जव प्रवासी होता है तव प्रवासकाल में उसे कृतिम चीजों के घेरे में रहना होता है फिर भले ही उसमें असीम खुलापन हो। इस छोटे से लेकिन मार्मिक संघटनात्मक रवैये ने लेखक को एक नशीली सी झुरझुरी से भर दिया है और वह छुअन जिसे देह से अलग कर नही समझा जा सकता। इस काल सापेक्ष बातावरण में फैली हुयी उनकी छायायें वहां की निगाहों में ठिठक जाती है इसीलिए जीवन का प्रवासकाल विन्दु वहता अवश्य है लेकिन सहसा निर्मल ने अन्य दोनो काल धर्मी या तो परिवेशगत जुड़नशीलता का परिचय अधिक गहरायी से दिया है। उपयुक्त ही है। प्रवासकाल का सारा वातवरण कुहासा, धूप की तहों में लिपटा और गहन अंधेरे में छिपा हुआ है। वहां की रात अजीव खामोश आवाजे है जिससे एक बाहरी व्यक्ति को और अधिक सोचने-विचारने को विवश होना पड़ता है।

इन उपन्यासों के पात्र पहाड़ो से घिरी उस सिमटी की तरह है जिसका बाहर का फाटक बन्द है ।

इन पात्रो के आपसी सम्बंध स्टेशन के बेटिंग रूप में बैठे मनुष्यो की तरह जो बीच के लम्हे को अच्छी तरह गुजार देने के लिए बात करते है। आज के वातावरण में इसी प्रकार के कालधर्मी सम्बंध जुडे हुए है।

''लाल टीन की छत'' की काया काल सापेक्ष अंधेरे में घिरे पहाड़ो को चुपचाप उसी प्रकार देखती है कि जैसे कि एक पुरुष के संस्पर्श को एक महिला. ....काया को अजीब सा जान पड़ा क्योकि उसकी जुवान पर वह मर्द का नाम था..........एक औरत के मुंह पर मर्द की छुअन -सा.........और उसका सारा शरीर सिहरने लगा ''-२

काया उपन्यास प्रयुक्त पात्र. औरत को पथराई आंखो से देखती चली गयी और उसे उसमें असाधारण चमक दृष्टिगत हुयी ।

1.वे दिन, पृष्ठ 109 2. लाल टीन की छत, पृष्ठ 145

वह समझती है कि यह पहाड़न नथ वाली औरत एक ऐसा दिवा स्वप्न है जो आज के वक्त के अनुरूप ही फाक्स लैण्ड के ऊपर मंडराता रहता है।काया उसे फटीफटी निगाहों से वैसे ही देखती है जैसे उंघते पहाडों के साथ-साथ उसका स्वर भी छुआ है।

इस प्रकार के परिवेशगत आयाम लेखक ने कुछ इस प्रकार के दिये है जिससे औरत और काया के मध्य शव्द सुलगते रहे है।

उस काया को लगता है कि इन वातो से कोई उम्मीद कोई आस्था और और कोई आशा जरूर जकड में आयेगी जिससे वह आने वाले दिनों को झेल सकेगी। वाह्य वातावरण से जिस प्रकार पहाडों की जिन्दगी अंधेरे और रोशनी के वीच संवेदना से ढकी हुई है।

वह भीतर ही भीतर वड़वड़ाती है, छटपटाती है फिर अचानक एक झटके के साथ एक चीख को जन्म देती है जो दुःस्वप्न का धक्का खाकर वाहर निकली है उम्र का तकाजा तव तक रहता है। जव तक उसमें उमगों की हलचल वनी रहती है।लेकिन ये पात्र वर्फ जैसे ठंडें और फुसफसाते स्वर के पर्याय मात्र रह गये है।

काया के सपने का सरलीकृत सापेक्ष अवचेतनमन के साथ इस तरह उपन्यासकार ने व्यक्त किया है।......................लेकिन आखिर तक आते-आते मैं हमेशा उसके आखिरी हिस्से को वदल देती है।-1

काया अजीव से सपने में यह सव कर रही है। उसे वरसो पहले चिटठी लिखी थी और सपने में भी वही चिटठी लिख रही थी लेकिन आखिरी हिस्सा क्यूं वदल देती थी।

इस से स्पष्ट हो रहा है कि वह अतीत कालधर्मी जानती थी लेकिन वर्तमान का छोर उससे फिसल जाता था।

वह कहना कुछ चाहती थी और कुछ कह जाती थी वहुत खामोश अंधेरें से घिरी रात में उसके जीवन के इस मर्म को उपन्यासकार ने जगह-जगह प्रकट किया है।

इन सब सतव्ध आहटों का एक ही अर्थ है कि व्यक्ति आज जिस परिवेश में सांस ले रहा है उस परिवेश में केवल यन्त्रवत मशीनरी ढाचे में अपने को पाता है।

तत्कालीन क्षणवोध उसे इतना संदिग्ध कर देता है कि वह न तो प्रायश्चित ही कर पाता है और न समाधान वह तो वसन्त की उस घास की तरह उगा होता है। जिसमे प्रकृति के लालित्य से रवितम ज्वर है और कुछ दिनों के वाद पतझड़ी उसे समूल सुखाकर इधर-उधर विखेर देगी।

"एक चिथडा सुख" उपन्यास मानवीय सूक्ष्म प्रवृतित्यों का परिचायक है। कालधर्मिता इस उपन्सास के प्रकृतिगत परिवेश में सम्बोधित की गयी

१-लाल टीन की छत, पृष्ठ १९०

है........................जैसे उस पर सुखी, डवडवाते सूरज की छाया हो जमीन पर फैले वेमतलव और वेलास दुख उसकी आवाज से घिरी हुई जो किसी अधेरे गडढे से बाहर आ रही थी एक चमकीली सी फुसफुसाहट, जो चाकू की धार से छिछली हुई उसकी आत्मा को छील जाती थी''-1

यह विट्‌टी के साथ जुड़ा हुआ परिवेश मन की परतों को खुद व खुद उभारता जाता है। वह समझती है यह पहाड़न नथ वाली औरत एक ऐसा दिवा स्वप्न है। दरअसल मन की ठिठकन और चेहरे की छुअन अपने आप दमित इच्छाओं को खोल देती है।

विट्‌टी सहसा काल सापेक्ष परिवेश में अपने आप को खुलती और वन्द होना पाती है।

वह सुबह उठते ही अचानक बहुत खुश हो जाती है कि वह अपने मन की गहराई में डूबी सारी बातें आज कह देगी लेकिन जैसे ही विस्तर से बाहर आती है। औठों से कोई भी शव्द न फूटते केवल उसके चेहरे पर एक पीली सी छाया दृष्टिगत होती है।

दरअसल वाहरी परिवेश मे चेतन के उडते स्वर चिमगादड की भांति दीवारों से टकराते रहते है जिससे एक अजीव सी सरसराहट होती है और सब कुछ मन में वसा सन्नाटे मे लीन हो जाता है।

यह सव वाहरी भीतरी दुनिया का खेल समय सापेक्षता का ही दुहाई देता है।

अंधेरे में हम भेदक तत्व को महसूस कर सकते है। और आशा करते है कि उजाले में उसे देख भी सकेगें,लेकिन ऐसा कुछ होता नही है।

सदैव की भांति बिट्‌टी की जिन्दगी में भीतर का भीतर रह जाता है और बाहर का बाहर।

सुबह शाम उसकी यादों की भटकाव यात्रा उसकी आंखों के समय हयत जमी रहती है, लेकिन वह किसी भी शक्ति से उसे न तो हटा सकती है और न अभिव्यक्त दे सकती है।2

वस्तुतः व्यक्ति अपनी निगाहों के परिपार्श्व में ही भव्य निर्मित करता है लेकिन जव निगाहों ही वेमानी होने लगती है तो वह अपने सामने एक धुंध के अलावा कुछ नहीं देख पाता और वैसे ही जैसे घूमता-घामता अंधेरा किसी नगर शहर में सहसा आ गया हो..................

"शाम होते ही शहर का सन्नाटा मकबरे पर उतर जाता है और वह घर की तरफ चलने लगता है खाली घर, घूल भरे मुडेर, सांकल पर कागज की चिदियों फडफडाती हुई उसका स्वागत करती है3

व्यक्ति का खुला आकाश उसकी दुनिया वदल देता है।

1.एक चिथडा सुख,पृष्ठ 76
2.जलती झाड़ी, पृष्ठ 87
3.एक चिथडा सुख,पृष्ठ 98

फिर उसका उगता हुआ संसार तो वुझ जाता है या ठहर जाता है। सचमुच बिट्टी का सोच ऐसी लड़की का सोच है जो उस अंधेरे में डवडावे आंसुओं से मुंह धो लेती है और चेतना के स्वरों से आंसू पोछ लेती है।

मन की अनागत भय अतीत जीवी सुख को आगे वढने से रोकता रहता है।

यह सव कालधर्म पर टंगे परदो का नौसर्गिक खेल है।

निर्मल वर्मा ने अपनी कहानियो में काल सापेक्ष सभी प्रकृति का चित्रण किया है

"दहलीज '' में मार्च की वसन्ती हवा वह रही है, पीली रोशनी में भीगी घास के तिनको पर रेंगती हरी गुलावी धूप है।

लिखा है............'मौन की अथाह गहराई में मन डूवा है...............शुरू मार्च की वसन्ती हवा घास को सिहरा सहला जाती है? -१

"अन्तर" कहानी में मई का महीना है लेकिन वसन्त जैसा चमकीलापन है, किन्तु वैसा वोझिल नही है जैसा गर्मियो में होता है।

एक हल्का घुला सा आलोक जो लम्बी सर्दियों के बाद आता है दिखाई दे रहा है।

"दो घर" कहानी में वसन्त के धूपीले दिन है। वीच वहस में मार्च के पागल पत्ते है '' पिक्चर पोस्टकार्ड में कनाट प्लेस के कारीडोर में कड़कड़ाती दोपहरी में भी अंधेरा वना रहता है।

वाहर गर्म चुनचुनाती धूप है। शुरू गर्मी की खट्टी मीठी, हवा है, लू है के संग धूल की गरम मोटी परतें वस के भीतर चली जाती है, खिड़की के बाहर कहीं आकाश नहीं है केवल गर्द की चादर है जिसके पीछे सूर्य मैले आयने में जलता प्रतीत होता है । दिल्ली के परिवेश में अप्रैल के महीने का यह अच्छा चित्रण दर्शनीय है। ,................''मुझे एकदम याद नही आता, शायद अप्रैल......................क्वाटरों के संग -सग लम्बी झाडी चली गयी है जिस पर धूप में सूखते गीले कपडे हवा चलने से फड़फड़ाने लगते है।''-२

'परिन्दे कहानी में भी वर्षा ऋतु है - परिन्दे में बादलों के कारण पिकनिक में परिवर्तन करना पडता है।

यहॉ वारिस की मुलायम धूप सभी को भाती है 'लन्दन की एक रात' कहानी में भी जुलाई एवं शुरू अगस्त की जलती रातें है 'सितम्वर की एक शाम' कहानी में घोर वर्षा का चित्रण है लवर्स, पहाड़ जलती झाडी, खोज, दो घर में पतझण ऋतु है ।

'लवर्स' में वर्षा के आखिरी दिन है, दिसम्वर का मेघाछिन्न आकाश और मुलायम धूप है शिमले में वर्फ गिरने से दिल्ली में इतनी सर्दी हो जाती है कि नायिका खिड़िकिया बन्द करके सोती है दिल्ली की सड़को पर रूखे पपड़ाये पीले पत्तों का शोर है।

1–जलती झाडी पृष्ठ 87
2–परिन्दे पृष्ठ 95

पहाड़ों मे अक्टूबर के महीने मे पत्ते झरने लगते है। जहां हवा में पतझड की हरी आलोक और झुरमराये पत्तों की बोझिल गंध ठहरी हुई है 'जलती झाड़ी' में पानी पर तैरती पतझड़ी रूप का एक तिरता हिस्सा वच्चों को लटटू से घूमता नजर आता है।

'खोज' में दिसम्वर का सर्द और उजाला आकाश 'वीच वहस में' प्रकृति का उतरता झपटता अंदाज वर्णित है इस प्रकार काल सापेक्ष परिस्थितियो का कहानीकार ने जगह - जगह पर निरीक्षण किया है ।
वैसे कहानीकार प्रकृति सापेक्ष मनुष्य के आचरण को सामान्तर दृष्टि विन्दु से अनुशीलित करता है ।

जैसे ----- '' वह छूनें लगा, अंधेरे में उनकी देह को ।

वारिश के वाद जैसे पेड़ गरम हो जाते है , वैसे उनकी देह थी ।
हर अंग हवा मे थरथराता हुआ, जैसे पुरानी ऐंठी नशे मे उलझी हुई टहनियां उसे अपने मे लपेट रही हों, चींच रही हों, जैसे पेड़ के तने मे अपने तन का एक - एक तिनका विखरने लगा हो।'' ?

यह सब धुंधली सी आकांक्षा का प्रतीक होकर कालधर्मी जुड़नशीलता का यथार्थ वन गया है। व्यक्ति इसे भीतर हल्की छुअन के साथ अन्दाज कर सकता है। वाहर तो सिर्फ एक मुखौटा परक छटपटाता हुआ अन्दाज है जिसे केवल लोकरीति के प्रतिमानो पर निरीक्षित किया जा सकता है ।
कहानीकार ने मैदान, पहाड़, समुद्र, उपवन, पुल, तालाव आदि के चित्र जगह - जगह उरेहे है।
'मायादर्पण ' कहानी में सूखी रेत के गर्म रेले बार - बार दरवाजा खटखटाते है और बार बार सत्ता ना पाकर आंगन में ही विखर जाते है।
यह सब जिन्दगी की उन बुनियादी रूपरेखाओ को प्रकट करते है जिनमें हवा तो चलती है लेकिन चेतना संकुचित होती है।

पांव तो बढ़ते है पर दबी सी सुबकी खिंच जाती हैं नींद तो खुलती है पर जागरूकता लुप्त प्रायः हो जाती है गति तो है लेकिन, अवरोध अधिक है।

आज के बढते चरणों में जहां एक ओर असाधारण चमक - दमक है वही दूसरी और लौटते हए जीवन की पुरानी पहचान पाने की विकट तलाश हैं।

व्यक्ति पुराने और नये चाहत के प्रसंगों मे एक चमकीले अंधकार में डूबा रहता है ।

यद्यपि उसके सामने एक खुला हुआ जीवनपरक मैदान है, लेकिन चाल उसने इतनी ऊबड़ -खाबड़ कर ली है कि उसे मैदान पर पैर रखना ही नही आता।

1–बीच बहस में, पृष्ठ 110

कहानीकार ने समय का तकाजा 'पहाड़' कहानी में सुनिश्चित ढंग से प्रकट किया है..................दोनों की पुरानी स्मृतियॉ थी................और ऐसी नहीं कि एक की अलग और दूसरे की अलग, बल्कि एक दूसरे पर टिकी हुई........ ......समय के संग एक-एक पत्ता जुडता गया था और अब वे एक दूसरे के संग। इस तरह घुल-मिल गये थे कि यह कहना मुश्किल था कि कौन सा पत्ता किसका है।-१

धूप की सुनहरी माया में रंगी हुई स्तब्ध पहाड़ियों उनकी चुप्पी पर्याय बन रही है। नंगी बर्फ में लिपटी हुई खामोशी खुद अपनी खमोशी से आतंकित है।

''एक शुरूआत'' कहानी में लन्दन से प्राग से स्टीमर पर बैठे यात्री है।

समुद्र की नीली खारी बूंदों की महीन बौछारें कपड़े गीली कर जाती है। स्टीमर चल रहा है। आस पास समुद्र में फैनल जल उभरता हुआ पछाड़े खा रहा है।

लहरों की चमकीली नोंकें पर हर यात्री को अपनी जिन्दगी नजर आती है। समय सापेक्ष यह चित्रण विचारणीय है................डेक पर हवा का झौका आता है।

समुद्र की नीली खारी बूदों की एक महीन सी बौछार हमारे कपड़ो को गीला कर जाती है।

हमने अपनी कुर्सियों को कुछ और पीछे, कोने की तरफ खीच लिया है।''२

कहानीकार विदेश में जाकर भी स्वदेश की कालधर्मी प्रकृति को नही भूल सका है।।

अपने देश में पत्ते कब उगते है कब झरते है इन सबका अन्दाज वह बाहर रहकर भी करता है।

धागे में बेर की झाड़ियां है।

'पिता और प्रेमी में बड़े-बड़े आम है

''माया का मर्म'' मे सफेद रूई से बादल और मोतियों सी बूदें है

'परिन्दे में झीगुरे, तितली, जुगनू, मछलियां, चीड़ और खुबानी के पेड़ है।

निर्मल ने कालधर्मी मानवीयकृत वर्णन भी यत्र - तत्र दिये है।

उनकी दृष्टि में छोटे - छोटे बादल रेशमी रूमालों से उड़ते हुए सूरज के मुंह पर लिपट से जाते है। पहाडों के ढलान पर बिछे हुये खेत भागती गिलहरियों से लग रहे थें।

'परिन्दे' और सितम्बर की एक शाम आदि कहानियों में इस तरह के चित्र लगातार उरेहे गये है। ऐसा कहना बिल्कुल उपयुक्त है कि कहानीकार समय सापेक्ष प्रयोगधर्मिता को जबरन नही ओढता है बल्कि सहज भाव से हर जगह ऐसे प्रकट होता है जैसे आषाढ़ के पहले बरसते हुए मेघ जो कजरारे भी है और मोटी मोटी बूदो के एक हरे भरे संकलन भी हैं।

१.जलती झाड़ी, पृष्ठ ६१

२. वही, पृष्ठ ४७

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय
निर्मल वर्मा के कथा शिल्प में आधुनिकता

निर्मल वर्मा का कथागत शैल्पिक आयोजन पूर्ववर्ती परम्परा से सम्बंधित होते हुए भी अपना पृथक अस्तित्व रखता है ।

वस्तुतः शिल्प-विधि एक कथ्यगत परिधि का प्रयोगपक्ष है जिसे कथाकार चेतना प्रवाह के विविध पड़ावों में विविध रंग भरता चलता है। आज हिन्दी का प्रबुद्ध समीक्षक इस तथ्य को प्रत्यक्ष स्वीकारता है कि शिल्प-विधि की ताजगी और अभिनव दिशा कथानक के आभावो की गहराइयो को पटाता है।

वर्मा के कथा साहित्य मे इस सूत्र के प्रयोग में तो हिचक होती है, लेकिन फिर भी उनके लेखन की अभिजात रागिनी उन्हें विशिष्ट स्तर पर कथाकार बनाती चलती है।

कथाकार की रहस्यात्मक, कौतूहल, आकस्मिकता और वर्णनात्मकता कथ्य विकास के लिए आधार स्तम्भ है। वातावरण, परिवेश, इन आयामों को उभारता चलता है । शैली, भाषा, संरचना, कथ्य दृष्टि से कथानको की गहराई का समाहार करती चलती है [1]।

कथाकार ने सहज मानवीय समस्याओं को सहज शैली में ही प्रस्फुटित किया है। जीवनपरक दार्शनिकता यद्यपि दुर्बोध और संश्लिष्ट, है । फिर भी कथाकार ने कथा साहित्य में उनकी गहराइयो कों नयी दृष्टि से अनुशीलित किया गया है वे मानवीय संवेदना कों लेंकर अतल और संकीर्ण गलियों मे शिल्प प्रयोग के बल पर ही भीतर पहुचे है । व्यक्ति के टेढ़े - मेढ़े अन्धकारपूर्ण जीवन को शिल्प के झरोंखे से ही देखा है। कही-कहीं तो निर्मल जी का शिल्प इतनाा पैना हो गया है कि कथानक सूक्ष्म और सीमित सा होने के बावजूद भी आन्तरिक गहराई अधिक छूता चला है। इसीलिए विगत दशको में निर्मल जी से नौ कहानियों के शिल्प के सूत्रपात का श्रीगणेश माना जाता है। कहानियों में ही नही बल्कि उनके उपन्यासो में भी कथानक अपने ढंग के है।[2]

भाषा में लाक्षणिक व्यंजना का प्रधान्य है। शैली में विविधता है जिसके कारण कथानक विधान में अनेक प्रयोगों का आग्रह मिलता है। भिन्न शैलियों का प्रयोग होते हुए सभी के मूल में जीवन विश्लेषण का प्रमुख ध्येय है। अन्तः संघर्ष एवं स्वगत कथनो का भरमार भी इसीलिए ही है कि व्यक्ति का अहं का विश्लेषण और अहं की एकाकिता आज भरपूर है। इन उपपत्तियों के बाद भी शैल्पिक सपाटता की बजह से उनके कथानक स्पष्ट और परिष्कृत है। कलात्मक आग्रह का बहुत ही आभाव है।

1 नईकहानी – प्रकृति और पाठ, पृष्ठ 76 2. कहानी की संवेदनशीलता : सिद्धान्त और प्रयोग,पृष्ठ 81

काल सापेक्ष उद्भावनाओ का समावेश है । श्री सुरेन्द्र ने नयी कहानी की प्रकृति पर शैल्पिक टिप्पणी करते हुए लिखा है...............नये शिल्प का प्रयोग चेष्टित होकर उतना नही है जितना वस्तु की आन्तरिक विवशता का परिणाम होकर नये शिल्प में कथाकार की वस्तु दृष्टि का लगातार प्रयोग रहता है जो वस्तु चयन में लेखक का शिल्प कोण बराबर काम करता रहता है।''१

चाहे कहानी हो या उपन्यास शैल्पिक दृष्टि से दोनो में ही कथानक रूप बन्ध का आयोजन करते है। कथानक की गहराई और मार्मिकता को बहुत अधिक पाट देने के रूप बन्ध की अस्मिता का प्रश्न खड़ा हो जाता है। इसीलिए रूप बन्ध को सरासर नकार देना कथा समीक्षा के एक बहुत बड़े पहलू से आंखे मूंद लेना है। शिल्प कोई कमिक प्रकिया नही है। शिल्पबोध लेखकीय अनुभूति के सामर्थ्य से जन्म लेकर पुष्ट होता है सत्य ही शिल्प केवल चौकाने का काम कर सकता है कथानक की गहराई को नही छू सकता । इसीलिये शिल्प को सहज आन्तरिक प्रकिया मान लेना भी उपयुक्त ही कहा जा सकता है- २

विधागत प्रयोगशील रचना की जीवन्त का मुख्य लक्ष्ण शैल्पिक योंजना ही है। शिल्प बोध की अनिवार्यता रचना कर्म ही अंगभूत शर्त है।
निर्मल वर्मा ने इन्ही प्रयोगशील धाराग्रों में आज के त्रास की अवस्था में अभिनव शैल्पिक संयोजना से कहानी के नये परिधान में नये धागे पिरोये है समूचे विश्व का परिवेश आज जिस प्रकार असंगति का शिकार है उसी प्रकार अपने आचरण व्योहार मे या कहे कि प्रयोग में भी यह निजि अर्सतेत्व दर्शन की शिल्प विधि को ओढता चलता है। वर्मा जी का समग्र कथा साहित्य इसी अवधारणा के मूल मे बुना गया है । कथाकार चरित्र विवरण, संवाद, भाषा शैली, उद्धेश्य आदि परम्परागत तत्वों के प्रति अधिक सचेत न होकर प्रस्तुत कहानीकार ने कथा के कथ्य और शिल्प पर गहराई से विचार करते हुये व्यक्तिगत अनुभूत सत्य को जगह जगह टाका गया है। उनके कथा साहित्य में इसी कारण कथ्य और शिल्प परस्पर गुथे हुये है । उनका प्रत्येक कथ्य अपने उपयुक्त शिल्प के स्वयं ढूढ लेता है । इसलियें सह कथाकार विशिष्ट भाषा और शिल्प के कारण ही अपनी पहचान बनाने में हर जगह सफल हुआ है। यह सफलता जितनी कथाकार की सपाटता को लेकर है उतनी ही शिल्प की प्रयोगशीलता को लेकर और दोनो ओर के ही अधेलिखित विस्तृत आयाम है -------

(क)- भाषिक संरचना और नया शिल्प

वर्मा के कथ्य के अनुरूप ही भाषा के प्रयोग स्वतः अनूस्यूत होते है । उनके उपन्यास की भाषा के प्रयोग से अनूभूति और प्रयोग और शिल्प की अभिन्नता स्पस्ट हो जाती है। आज अनुभव के लिये भाषा संस्कार करने लगता है । डा० धनंजय वर्मा ने आज की हिन्दी कहानी पर विचार करते हुये वह परिवेश की तीखी सच्चाइयों को व्यक्त करने में सक्षम है । पहली बार ऐसा होता है कि कहानी ने

1.आज की हिन्दी कहानी, पृष्ठ 12

जीवन की मूल्यों की निरर्थक तलाश में न भटककर उस भाषा की खेज की यात्रा प्रांरम्भ की है जो जीवन और सम्वन्ध मूल्यों के अन्वेषण के आग्रह से पूर्ण रहती है।''

निर्मल के उपन्यास एवं कहानी साहित्य में भाषिक संरचना का स्वरूप पांच प्रकरणों में प्रयुक्त हुआ है । वे है ------१- भावनाकूल भाषा २- जनभाषा ३- अलंकृत भाषा ४- काव्यात्मक भाषा ५- सूत्रात्मक भाषा कथ्य के अनुरूप भाषा है भिन्न-भिन्न रूपों में भाषानुकूल भाषा के विशिष्ठ और प्रभावी रूप है। इस भाषा के कथ्य की आंन्तरिक अभिव्यक्ति सहज और पुष्ट होती गयीं हैं । जैसे---,, वह निश्चल खडी थी । वह सुन रही थी । उनके वीच सन्नाटा था। और वह इतना गहरा कि उसे , जैसे उनकी आवाजो पहले उसके पास आती हो औरफिर उसके कानो से छनकर उसके पास -------।''

जव जव चलते थे, तो वहुत हल्के ढंग से --------, जव दरवाजा खोला तो काया ढंग सी रह गई इतने वडे हाथों की इपनी हल्की छुअन हो सकती है, उसने पहले कभी नही देखा था।[1]

कितने अनजाने सुख आ जाते हैं मैने सोचा ----- वह सुख नही होता बल्कि आदमी खुद अपने दुख को छोटा करके देखने लगता है। 2'' इन तीनों उद्धरणों में कमशः विट्टी काया और रायना स्त्री पात्रो के मन सापेक्ष परिवेश का भावात्मक चित्रण है। बिट्टी की मनोभूमि सहसा आलोकित हो उठतीं है। 'दो लाशें' सन्नाटें में भी एक थरथराती कौंध उसकी शिरायों में लपलपाने लगती है । यद्यपि परिवेश की बीहड़ आंतकित मौन दृष्टि सव कुछ भीतर ही भीतर जला देती है फिर भी एक ऐसी जवरदस्त इच्छा है जिसके सहारे एक क्षण के लिये ही उसके भीतर कोई चीज थरथरा जाती है । वह भरकस अपने आग्रह पर सव कुछ हटाना चाहे फिर भी उसकी दुनिया एक अन्तहीन समय के लिये ही ठहर जाती है । इसे भावात्मक अजीव सी उलझन की संज्ञा दी जा सकती है । भाषा के झरोखे से भावों की सूक्ष्म किरणें बिटट्री के भीतर तक फैलती चली जा रही है । काया , दूसरे उपन्यास वहुत वारीक हल्की सी छुअन को परिवेश सापेक्ष महसूसती है। शायद वह स्मृतियो को जोडने की चेष्टा करती है और उसे लगता है कि सिर्फएक दो घडियां ही ऐसी होती है जो उतरते चढते प्रकाश को हल्के से अन्दाज के साथ सझती चलती है । इसी कम में रायना,, का वह रूख से वे दिन,, उपन्यास में अधिक उभरकर भाव सिद्ध हो जाता है जव वह भक्ति हृदय से दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में दुख और सुख की परिभाषा करने लगती है -दरअसल सुख एक अजीबो गरीब हालात मे उपलक्षण का नाम है । विना किसी शब्द के और विना किसी प्रश्रय के और सहायता के वह व्यकित को दिलासा दिला ही देता है इन वक्तव्यों में भावनारूप भाषिक संरचना का एक रूमानी अन्दाज है[3]।

1. एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ 67 2. लाल टीन की छत, पृष्ठ 103
3. वे दिन, पृष्ठ 152

जलती झाड़ी, कहानी में प्रयुक्त शव्द अजनवीपन की अनुभूति को गहराते है ।जैसे - पिछली रात रोनी को लगा कि इतने वर्षों वाद कोई पुराना सपना धीमे कदमो से उसके पास चला आया[1]।,,

"वीच वहस में" भावानुकूल प्रकृति का स्वर गहरा है । डायरी का खेल,, की पंक्तियां रूमानी भाषा का उदाहरण स्पष्ट करता है ।डेढ इंच उपर के शरावी की भाषा भावानुकूल प्रभाव को स्पष्ट करती है जैसे आदमी को जमीन से करीव डेढ इंच ऊपर उठ जाना चाहिये ।२

निर्मल कथा संसार मे कथ्यगत सभी दूरियों को भावनात्मक भाषा से एक संग वॉध लिया गया है । जलती झाडी ,, कुत्ते की मौत,, आदि कहानी शीर्षक किसी शव्तदातीत रहस्य को ही प्रकट करते है।[3]

इन कहानियों में प्रयुक्त स्त्री पात्रों को तरल स्निग्ध खिलखिलाहट का स्वरूप आगे पीछे निरन्तर परिवेश में मंडराता ही रहता है धरती की गंध व-फूतरी वातावरण, शहरी तनाव, झीलो और पहाडोंका एकान्त , मन के भीतर बैठी चेतना में पंख लगाकर उड़ने लगता है । एक अजीव सी मार्मिक अनुभूति लेकर उपजी हुई भाषा लेखिकीय अनुभव को और अधिक चारूत्व प्रदान करती चलती है जिससे विविध भंगिमा विधि कोणों से अभिव्यक्ति तो होती ही है साथ साथ सम्वंध मूल्यों का अन्वेषण भी होता चला है । जीवनगत मार्मिक व्यंजना कथाकार के हर कथय में भाषित संरचना में भावानुकूल स्वरूप में ही प्रकट हो सकी है[4]।

कथानुरूप निर्मल जी की भाषा देश विदेश में रहने के कारण जन भाषा के अधिक निकट रही है । भाषा का सहज स्वाभाविक प्रयोग हर पहलू पर अपना नया असर छोडता चलता है । जिसे अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दुस्तानी आदि अनेक भाषओं के सहज स्वभाविक प्रयोग में देखा जा सकता है।

अंग्रेजी शीर्षक ही इस तथ्य को स्पष्ट करते है कि उन्होने अपनी कहानियों में स्त्री पुरूष के नामों, स्थानों के नामों तथा पंद पदार्थो के नामों में अधिक दिलचस्पी दिखाई है।[5]

जैसे 'पिक्चर पोस्टकार्ड', 'लवर्स वीक एण्ड' (कहानियों के नाम), फादर, ऐलमेड, हूयूवर्ट, मिस वुड, लूसी, जैली, जाज, विली, अमालिया, माथी (पात्रों के नाम), लंदन, प्राग, वेनिस, जर्मन, वर्लिन, डैसडन, न्यूरवर्ग, वासल (नगरो के नाम) स्कावर, पब, वार, टेरेस, कारीडोर, सिमिट्री, स्टीमर, आर्केवट्रा, रेस्तरां, चेवल पोर्च सेण्डविच लाईवेरी, मेनगेट आफर, अफैयर टाइम्स, कनाट प्लेस, टेविल लैम्प (पद पदार्थ का नाम) ।

१-जलती झाडी,पृष्ठ ८७ २-पिछली गर्मी में पृष्ठ ३५ ३-वे दिन पृष्ठ २५
४-जलती झाडी पृष्ठ ७१ ५- परिन्दे पृष्ठ १२२

इस प्रकार भषिक संरचनाओं में कथाकार ने अग्रेजी के संयुक्त शव्दों से वाक्य विन्यास तय किया है ।

इतना ही नही कही कही तो वाक्य के वाक्य अंग्रेजी में ही प्रयुक्त हुए है।

यथा -द गोल्डन सिटी.........................द सिटी आफ हण्डेढ

टावर.................द सिटी आफ टियरस एण्ड नाइट मेयरर्स?

सिनयोर ....यू लाइक मैडोना ?-1

आई लव द ,आई लव द स्नों -फाल ....गुड नाअट मैडम गुड नाइट

अग्रेजी शव्दो के साथ ही साथा कथाकार ने उर्दु शव्दे का भरपूर प्रयोग किया है।

जैसे तीसरा गवाह परिन्दे एक शुरूआत दहलीज कहानियों के नाम करी मुददीन वानो रूनी रियाना ,मेहरूश्सिन्न जैली,शम्मी पात्रों के नाम तव्दीलियाप लश्कर खामखा, अजीब तमन्ना ,फिलहाल जिम्मेदारी , असी खुमारी , लापरवाही,वेंफिक्री ,खौफनाक, उम्मीदन, इजाजत , विलागा, मुलाकात, जर्द, निगाह, जिक, जिरह, इश्तहार, हरकत, मुश्किल, लापरवाही, गमगीन, पद पदार्थो के नाम । इस प्रकार वहुत सारी कहानियों में उर्दू शव्दों से संयुक्त वाक्यों के उदाहरण भी मिल जायेगें । यथा -----लतिका विला नागा क्लव जाया करती थी --------उस मुलाकात के वारे मे कुछ भी नही कह सकती हूँ । अव क्या फर्क पडता है[2] ? कथाकार ने सवसें जिन शव्दों का कथा संसार में यथावत प्रयोग किया जाता है वे अधिकतर हिन्दी केही है। साहित्यिक परिमार्जित शव्दावली में भी कहानियों के मध्य ऐसे शव्दों को अनायास ही ढूंढा जा सकता हे। जैसे विक्षिप्त, विकृत, स्तव्ध, सितम्वर की एक शाम मग्न, कंकाल, निलिप्त मुद्रा, स्निग्ध, अनिर्वनीय, माया दर्पण, हस्तलिपि, निर्विकार, धागे निस्तव्धता, आतकित, मंत्रमुध, रक्तहीन, अप्रत्याशित, इतनी बड़ी आकांक्षा, । इस प्रकार के तत्सम शव्दों के विविध प्रयोगो में भी कथाकार सजग दृष्टि से आगे वढता गया है। कही कही तो अंग्रेजी उर्दू और हिन्दी के तत्सम शब्दो का अदभुत विन्यास वहुत ही अच्छा रही है । जैसे --,,दिग्भांत-सी खडी हुई हयूवर्ट के पीले उद्विग्न चेहरे को देखती रही।[3],,

इस वाक्य में हयूवर्ट अंगेजी , उर्दू , दिग्भ्रांत और उद्विग्न , तत्सम हिन्दी आादि शब्दो का प्रयोग लेखक की वहुज्ञता और आधूनिकता का ही परिचायक है । कथाकार निर्मल ने भाषिक संरचना में प्रतीको के विम्वो का भी सहारा लिया है जिससें एक ओर अलंकृत भाषा के प्रश्रय से कथानक में चारूत्व का योग हो गया है। राग संम्बन्धों के संन्दर्भ मे कथाकार की भाषा काव्यात्मक ही वन गयी है । जिससे शिल्प में अपने आप ही अभिनव कला कौशलता की गन्ध आने लगी है[4]।,, जैसे वह दुबारा लेट गयी है ।

(१) वही, पृष्ठ १४४ (२) लालटीन की छत पृ० १३३

(३) जलती झाड़ी पृ० १०३ (४)परिन्दे पृष्ट १२८

उसके वाद हम देर तक अलग अलग देशो की लडकि यों के वारे में वाते करते रहे । लगता था जैसे पुरानी भूख के भीतर से एकाएक नयी भूख जाग गयी हो ।,,

इस प्रंकार की रूमानियत, रागात्मक , दिलकश, भाषा के सहारे जिन भाव का कथाकार ने जिक किया वे सभी तरह के सम्वन्धो में अलग अलग ढंग से निरूपित किया है । भाषा की काव्यात्मक के लिये गघ राग मे ही लेखन का ाआकर्षण है । निर्मल जी ने इसी कारण प्रेग पत्रों की प्रकृति में संजोये हुयं शव्दो को गध राग में ही वर्णित किया है यघपि आधुनिकता वोधीय चरणों में अंगेजीयत के रोमान्टिसीजिम का असर उन पर कुछ ज्यादा ही है उन्होने मूक लहरों मे हवा को तिरते हुये देखा नीरवता के हल्के छुअन को भावो की वदलती करवटों में सुना गहरी नीद में डूबी सपनो की परछाइयों को पकडा स्तब्धता में जागती हुई अवध ारणावों को पढा । इस प्रकार के कथ्यात्मक सूत्र उनकी कहानियों जगह जगह सटीक भाव को लेकर अवतरित होते गयें है।

आज की कहानियों में सूत्रात्मक भाषा विविध स्तरो को लेकर चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त हो रहा है । मर्मस्पर्शता , सूक्ष्मता और अनुभूत सत्य इसीलिये इन कहानियों के प्रमुख गुण माने जाते है। छोटी छोटी सूक्तियां कहानियों में ही नही वल्कि उपन्यासो में भी एक विचित्रता ओढे हुये है । इस विचित्रतता से व्यवित्त की तन्मय सी तल्लीनता किसी अदृश्य की ओर अग्रसर हो जाती है । एक चिथडा सुख ,, उपन्यास में विटटी पात्र की मनः स्थितियों को वारीकी से अनुशीलित करते हुये सूत्रतात्मिक भाषित संरचना का उपन्यासकार ने प्रथम ग्रहण किया है वह चुपके से ----पीछे से आयी थी ----उसके कपडो की गंध भी उसे पकडे थी । उन्होने विटटी को देखा ओर विटटी ने उनका हाथ पकडकर अपनी ओर घसीट लिया ....वे प्यार करते है वे पागल है ,, दे आर रूइनिंग देयर लाइव्स[1]।,,

उपन्यासकार ने भाषा प्रवाह में छोटी छोटी सभी अनुभूतियों को केन्द्रीभूत करके भंवर बना दिया है मानो वह इन सूत्रों द्वारा आने वाली पीढियों के लिये यथार्थवादी परिभाषायें दे रहा है । इन कहते हुये डवडवाते हुये चक्करो में फसा हुआ आदमी अपनी विरादरी जिन्दगी को चाकू की तेजधार में वल खाता हुआ काटता चलता है । उसके मनमे निहित झुलसती हुयी आभाऐं एक वहुत वडा धक्का देकर नीचे आ गिरती है और उसे लगता है कि वह इन शव्द परक सूक्तियो के सहारे में अंधेरे मे चलता रहता है ।वस्तुतः इस भाषिक संरचना की प्रकिया से मनुष्य सहसा ऐसा ठिठककर -खडा हो जाता है जैसे भीरू जानवर एक अनहोनी आहट पाकर बीच रास्ते में खडा हो जाता है । सूक्तियां आज के व्यथित व्यक्ति के मंदमंद तरीके से सहलाने का हर काम सकती है और कभी कभी धुंधले कुहासे में व्यक्ति के सारे जीवन को आच्छान करती ही कुछ सोचने विचारने के लिये मजबूर करती है[3] ।

(1) एक चिथड़ा सुख पृ0 78–79   2.पिछली गर्मियों में पृ0 102

इन सूक्ति परक शब्द वैभव को अघोलिखित उदाहरणों में जैसे कुछ लोग ऐसे ही होते है । अपने साथ एक खास अपनी दुनिया को ले आते है सिपाही , बाजीगर , बहुत छोटे बच्चे, अस्पताल के मरीज। प्रेम-अगर ऐसी कोई चीज है तो बहुत महत्वहीन और आकस्मिक परिस्थितियों में आरम्भ होती है और उसका अन्त भी शायद बहुत ही छोटे और अन्त हीन कारणो से हो जाता है ।

कथाकार ने नियति, भाव, विचार, सृष्टि, व्यक्ति आदि के परिपेक्ष्य में बहुत कुछ इन्ही सूक्तियों के आधार पर कहा सुना है । 'वीक एण्ड, कहानी में लेखक ने जीवनगत उस आयाम पर प्रकाश डाला है । जिसे आज के तनावपूर्ण जिन्दगी में सबसे ज्यादा सोचा जाता है । कहानीकार कहता है कि कभी कभी ऐसा होता कि आदमी जीता हुआ भी करीब करीब मरने की सीमा तक पहुँच जाता है -----मरता नही लेकिन मरते हुये प्राणी की तरह सारी जिन्दगी घूम जाती है ....सब चुके हुयें मौके और आधे फैसले काठ के घोडे तरह एक दूसरे के पीछे भागते है।,,२ दरअसल आदमी का हर छोटा सा फैसला एक लम्बी राह तक घिसटता रहता है और यहीं जाकर जिन्दगी खत्म हो जाती है । सूक्ति प्रयोग के बल पर कहानीकार ने बरबस पाठक का मन जीत लिया है व्यक्ति आज तक अपनी विचार भूमि पर फैल कर खडा होने में असमर्थ है भागम-भागम के इस जमाने कोई भी व्यक्ति एक जमीन पर पैर जमाये खडा नही रह सकता। जब तक वह आगत और अनादर के द्वन्द मे जकड न जाये तब तक एक धुधली आशा में अपने को खोता ही रहता है निर्मल वर्मा की भाषिक संरचना इन्ही तमाम खोजो से भावनाकुल और चिन्तन परक हैं। उन्होने युगानुरूप भाषा को नया शिल्प प्रदान किया है इसीलिये कहा जाता है उनकी भाषा में अंग्रेजी का पुट अन्तर्राष्ट्रीय बोध का साक्ष्य है उर्दु का प्रयोग हिन्दुस्तानी सामाजिक संस्कृति का परिचायक है और तत्सम हिन्दी शब्दो को प्रयोग विशुद्ध भारतीयता का परिपोषक है इन्ही निर्मित आयामों पर चुनी हुई भाषा का बल लेखक को छुये - अनछुए अनुभूत शब्द को पकडने में कामयाबी दिलाता है दरअसल हर भाषा के निजी विशेषता होती है उसमें भाषा प्रकृति अपनी जबाव देही के लिए तत्पर रहती है अन्तराष्ट्रीय स्तर पर हलके फुलके शब्दों के माध्यम से भीतर तक छुआ जा सकता है उसे अन्य किसी भाषा से नही और जिस दार्शनिक तथ्य को कोमल कान्त विचारणो को भाव विह्वल हृदय को जैसे संस्कृत निष्ठ शब्दावली से भारत भूमि पर अभिव्यक्ति किया जा सकता है । वैसा अंग्रेजी शब्दो से सुगम्फित हिन्दी भाषा से कदापि नही। इसी प्रकार विश्व की अन्य भाषाओं का अपना अपना महत्व है, कहना यह होगा कि भाषित संरचना ही लेखक का वह परिधान है जिसे ओढकर उसके जन और जीवन को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देखा और समझा है निर्मल वर्मा इस दृष्टि से बहुत सफल रहे है उनकी खास पहचान सरंचना के मूल

1.परिन्दे पृ0 42
2.बीच बहस मे पृ0 50

मे कथ्य और शिल्प की परिधि में भाषा को लेकर ही की गई हैं। आज के सन्दिग्ध, संसयग्रस्त, तनावपूर्ण जिन्दगी आदि से जुड़कर भाषा न चले तो वह लडखडा कर ठहर जायेगी इस वात का कथाकार ने वरावर ध्यान रखा है। इसीलिये निर्मल वर्मा को भाषिक संरचना का आन्दोलन कर्ता भी कहा जाता है ।

ख साकेतिक प्रभान्वित

भाषा का संरचनात्मक पक्ष सांकेतिक प्रभावनिपुणता के साथ जव लेखक कथा मे सम्प्रेषित करने लगता है तव जीवन गत उन आयामों को अभिव्यक्ति मिल जाती है जिसे आज तक पूर्णरूप से रहस्य दर्शी माना गया हैं वर्णित कथावस्तु के सन्दर्भ में लेखक की रचना पद्धित का परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से सांकेतिक प्रभावों को उकेरती चलती है कथा के मध्य जितने भी विन्यास भाव प्रकट किये जाते है उन सव में सांकेतिक आग्रह का भरपूर जटिल योग रहा है क्षणों में सांकेतिक आग्रह का भरपूर योग रहता है वर्ण्य वस्तु के अनुरूप ही उसकी अभिव्यक्ति के सांकेतिक प्रभाव इससे विवेचित किया जा सकता है। पात्रों की मनःस्थिति का रोचक अनावरण प्रतीक चिन्हों द्वारा ही उदधाटित हो सकता है भावनाओं के पीछे छिपे मर्म का उदभावन भी संकेत दृष्टि से किया जा सकता है, इन सव प्रमुख केन्दीय विन्दुओं के प्रयोग मे निर्मल वर्मा ने वहुत सटीक अनूठे प्रयोग यत्र - तत्र कथ्य में समंजित किये है जैसे-

"अभी नही.......................अप्रेल में "।

"घर के वाहर है ?"

" और कहॉ"? उन्होंने वियर का घूंट लिया और उनके स्वर में एक अजीव सा उत्साह छलछला आया"। विट्टी हर चीज की तह में जाना चाहती है, वह जिन्दगी से उदासीन नहीं है, इसीलिये वाह्य परिवेश के वीच उसे सभी कुछ जानने की उत्सुकतता रहती है, विट्टी और डैडी के वीच वे संवाद का सांकेतिक स्वरूप वहुत ही पारदर्शी और मार्मिक होता गया है[1]।

नित्ती भाई की विगत उपस्थिति का आकलन करते हुए लान के मध्य स्टेज पर वीते हुए परिवेश को प्रस्तुत कर देने में लेखक ने सांकेतिक प्रभाव को भरपूर उपयोग किया है। --

"ऊपर चॉद निकल आया, वहुत छोटा, एक सफेद कटे हुए नाखून सा। अव पहले जैसा धुंधलका नहीं था न कोई परदा, न परछाई, न धुंध, हर चीज अपने में अकेली, ठोस खड़ी थी, गमले, कुर्सियां, दरियों पर बैठे लोग"। २

चॉद का निकल आना लेकिन आकार - प्रकार और रंग में विचित्र खोना इस तथ्य का साक्ष्य है कि स्टेज के वाहर भीतर का ठिठका हुआ परिवेश किसी रूमानियत चाहना से लबालब भरा हुआ है, बैठे हुए लोगों का स्तब्ध बातावरण इस

1. एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ 35 2.वही, पृष्ठ 36

बात का संकेत करता हैं कि शान्त आवाज, साफ और ठण्डी गर्म होकर चतुर्दिक दिशाओं में अपना प्रभाव छोड़ती जा रही है ।

एक तीसरा अभिप्राय सम्वेदना के धरातल पर गुजरने लगता है। अजीव सी आधी जिन्दगी इन रास्तों पर होकर गुजर रही है। व्यक्ति भले ही उस परिवेश की आधुनिकतापरक स्निग्धता भीगे हो लेकिन याद का मद्रिम आलोक उनके चेहरे पर गिरकर उनकी उम्र का सफेद तितीरीपन दिखाने में सक्षम रहा था।

इस प्रकार के गहराने वाले कौतुहल तनमय में तल्लीनता में परोक्षतः अदृश्य आवाज को उभर जाने में कामयावी मानते है।

'डैरी', विट्टी और नित्ती भाई के मध्य चिलचिलाती जीवनगत प्रखरता को वोद्धिकता के स्तर पर इसी प्रकार वर्णित किया जा सकता है। निर्मल वर्मा प्रभाव परक शैली से कुछेक तथ्यपरक संकेत सारे परिवेश में समग्रता के साथ पिरोते चलते है। उनका वर्णित कथ्य व्यक्ति भीतर वाहर का द्वन्द वन कर अवतरित हुआ है काया और वीरू का समवाद जिस प्रभाव संकेत की उपार्जना करता है, विचारणीय है..................................

तुम चले क्यों आये?''काया ने पूछा ।

''ऐसे ही ....''

वीरू चुप था।

उसकी आखे रास्ते पर टिकी थीं।

हवा में वार-वार उसके वाल आखों पर गिर आते थे ।

''तुम नाराज हो ?''काया का स्वर हल्के से कांप गया। वीरू रूक गया-. ....उसकी ओर झिझकते हुए देखा ,''तुम गिरने में क्या सोच रही थी ?''

कुछ नही वीरू। ''-1

काया के इन उपर्युक्त शब्दों मे मन के भीतर बैठी धुंधलकी छाया उभर रही है वह भीतर बैठी शान्त तटस्थ चीज को सासों की चलती हवा के इशारो में परिमाणित करती चलती है।

सचमुच ऐसा ही होता है कि अचानक कोई आदमी उन जगहो को घेर लेता है जहां पहलें डर था, बेचैनी थी । इसी तरह सहसा काया का ध्यान भटक जाता है और उसे लगता है कि एक महीन सी छाया उसके मन के फ्रेम पर सरकती आ रही है । वह विस्मत होकर वीरू को नीचे ढलान पर खड़ा देख रही थी । वीरू को केवल उसके शब्दो के दोहराने के अलावा और कोई उपाय नही था। इसीलिये प्रभावपूर्ण सकेत में उसने ये शब्द बिना सोचे समझे कह दिये थे, और कह देने पर उसे लगा कि गिरजे की ठहरी हवा के बीच वह जो चाहे कह सकते है काया बैचेन होकर बिना पीछे देखे अपनी आख पें वीरू की ओर उठाकर बातो ही बातों में सब कुछ जान लेना चाहती है । अभी कोई चीज उसके भीतर पूरी तरह से फूटी भी न थी, फिर भी वीरू की शान्त तटस्थ निर्भीक आखो को देखकर उसके शब्द

1.लाल टीन की छत,पृष्ठ 123

सूख गये, और काया मन्त्र मुग्ध सी उसे देखती रह गयी। कथाकार ने यह सब वे सरकती हुई जिन्दगी की उस भावभूमि को शब्दों में बांधने का प्रयास किया है जिनमें जीवन का अंधेरा और उजाला एक सा एक साथ ही सिमटा हुआ बैठा है।

'' वे दिन ''उपन्यास में भी निर्मल ने इसी प्रकार के सांकेतिक आलोक को यत्र-तत्र शब्द दिये है। रायना और 'मैं' पात्र के बीच गहराता हुआ संवाद परिवेशात्मक प्रभान्वित को विलोता चला जा रहा है। देखिये----

'' सुनो ....फिर मुझे चलना चाहिए।''

उसने कहा ।

अभी क्यो?'' मैने उसकी ओर देखा।

''भीतर कमरे में अकेला होगा ....वह कई वार रात को उठता है ।

उसने कहा ।

''रायना....................तुम सुवह तक रूक नही सकती ?''

मैने विना मुड़े कहा ।''?

लेखक रायना के दैहिक चेतनापरक इम्तिहान में उत्तीर्ण होने का प्रयास करने लगता है। निस्तब्ध वातावरण में भावनाओं का गुंजार उतरोत्त्र वढ़ने लगता है। वे सोचने लगते है। शायद शरीर का भी एक मौन संवेदिक इतिहास होता है।

तपता, गर्म, सनसनाती लू की तरह। विस्मय से वे वहुत देर तक सन्नाटे को बुनते रहते है, धीमें-धीमे शान्त स्वरो में वह लापरवाही पूर्ण वैचारिक स्तर को उधेड वुन के साथ नये अध्याय देते रहते है। उनके मन का धंधुलका परिवेश में घुल जाता है, जिसके कारण वे कभी निष्प्रभ से होकर निष्क्रिय हो जाते है तो कभी सक्रिय होकर मन की तहों को उकेरने लगते है। ''रायना'', 'में' पात्र के साथ अनायास अपना उद्भावित मन- न्यौछावर करती चलती है। फिर कुछ देर बाद दबे कदमों के साथ ही सव कुछ गायव हो जाता है। एक छोटे से पल के लिए संकेत भरे शब्दों में व्यक्ति एक अन्दरूनी अन्वेषण को साध्य मान लेता है, यद्यपि चारों ओर निखरा सा वातावरण भावनाओं को गहराई में उतारता चलता है। रायना भी इन्ही कारणों से शब्दों को टटोलने का प्रयास करती चलती है। जिससे उसके भीतर छिपा नारीत्व मोमबत्ती की भांति भीतर ही भीतर प्रकाश करता चलता है। वह सिर्फ पुरूष पात्र के ध्वन्यात्मक संकेत को पकडना चाहती है, वह भी वैसे ही जैसे शीशों पर कुहरा जम गया हो और उसके परे चॉदनी सिर्फ एक मैले पीले धव्वे सी चमक रही है। इसी चमक में नीरवता को तोडती हुई वह अनिश्चित देहरी पर अपने पावं जमाये खडी रहती है। निम्नलिखित उदाहरण इस विचार भूमि का वहुत सटीक प्रमाण है।

1–वे दिन पृष्ठ 167

"तुम अकेले रहते हो ?"

"एक लडका और है ....वह आजकल घर गया है।

तुम कब तक खडी रहोगी ?

मैने उसकी ओर देखा।

वह भीतर चली आयी और कोट उतारने लगी।

"अभी ठहर जाओं ....मैं आग जला लेता हूँ।"

"ज्यादा सर्दी नही है।"

"उसने कहा और कोट उतार कर कुर्सी पर रख दिया।"-१

रायना इन शब्दो की आत्मीयता में उस गहराई में उतरती चलती है जिसमें गरमाहट है, अपनापन है और हल्का सा रूखापन भी है। वे चुपचाप बहुत देर तक एक दूसरे को देखते रहते है जलती आग की धुंध में जब कभी कोई लकड़ी चटक जाती तो वे चौंक उठते है यही विस्मृत रेखा एक छोटी सी झुरझुरी उनकी देह में भर देती है। वे बहुत देर तक लकड़ियों के जलने और सिर-सिर की आवज सुनने में अपने आप को खोते रहे एकाएक उनकी आवाजों में रोशनदान के वे पुर्जे समायोजित होने लगे जिनमें फीका-फीका प्रकाश हल्का-हल्का झरने लगा। कथाकार उन्हीं स्वरों को हदय की धडकनों से अभिन्न बनाता चलता है। इस प्रकार के बहुत सारे छितराये हुए टुकड़े जीवन के दरवाजे पर एक निर्वाक कौतूहल करते चलते है। और संकेत प्रभाव की तो बात ही विचित्र है। जिसमें स्त्री पुरूष सम्बंन्ध ठहर जाते हैं। अधेरे में मन की परतों के नीचे दबी सूखी पत्तियॉ सरसराने लगती है। सब कुछ इतना नीरस हो जाता है कि लगता है कि सारा का सारा सब भीतर रूक गया है और हवा के साथ समय बहता चला जा रहा है सचमुच बडी अजीब स्थिति होती है जब संकेत बिन्दुओं पर बल पडने लगता है। बातें भले ही छोटी हो लेकिन वे एक चतुर मार्ग दर्शक की भांति सब कुछ सामने उपस्थित कर देते है और लगता है कि बरसों से बाहर तलाशी हुई गन्ध आज भीतर सिमट आयी है और भावों की एक लम्बी कतार एक पर एक आरूढ़ होकर आज सब कुछ खोल देना चाहती है। एक बचकाने अनजान उन्मादी स्तूप को अवचेतन में टटोलने का प्रयास किया जाता है जिससे पीछे बहुत संकलित लावा धक्का दे रहा है। व्यक्ति के भीतर का फंदा सांकतिक प्रभावान्विति में ही खुलता है। भीतरी गांठ तब और ज्यादा खुलने के लिए तत्पर होने लगती है जब उसमें एक अजीव सा उजाला उभर आया हो। स्त्री-पुरूष के सह-सम्बन्ध में सांकेतिक प्रश्नों को इन्ही भोगे हुए यथार्थ तथ्यों में अनुशीलित किया जाता है। यथार्थतः व्यक्ति के भीतर की बसी हुई गन्ध उसके शरीर से भिन्न करके नही देखी जा सकती, उसे अनजाने में ही सांकेतिक शब्दावली के साथ महसूसा जा सकता है। निर्मल जी इन कथ्यों से पूरी तरह से जुडे हुए है, एक पहने हुए कपडे की तरह। वे दो चार शब्दों में ही जलती हुई अनुभूति को एक दूसरे के ऊपर फेंकने में समर्थ है उसका अनुमान

1—वे दिन पृष्ठ, 57

पात्रों के साथ इस तरह सटीक बनता चलता है, जिस तरह वे अप्रत्याशित रूप से एक दूसरे के अजनबी दोस्त हो। कथाकार ने इसी प्रकार की भाषा का संरचनात्मक पक्ष उपन्यास में हर जगह प्रयुक्त बनाया है जिसमें पात्रों के बोल मनःस्थिति का दर्पण बनकर उनकी छवि के प्रकाशन में सफलीभूत रहे। लेखक शब्दो से रिश्तों का निवेदन, संवेदन और प्रकाशन परिवेश अनुरूप ही प्रभाव पूर्ण सकेतों में करता हुआ कथानक के मूल को साध्य बनाता चलता है। निर्मल की कहानियों में सांकेतिक स्वरूप बहुत ही सहज सपाट भाषा शैली में प्रस्फुटित हुआ है वे कथ्यात्मक, प्रतीकात्मक एवं चिन्तन प्रधान शैली को सांकेतिक स्वरूप प्रदान करते गये है। कारण है कि वे यथार्थवादी धरातल पर ही बहुत सारे संकेतों को एक साथ उतार देना चाहते है। उनके संज्ञा, विशेषण, कियापद आदि व्याकरण रूप स्थल-स्थल पर विनयस्त भावों का संकेत बनते गये है। "दो घर ", कहानी में नंगे पेड़, मटियाली छाया, थकी-थकी सी चॉदनी, मोतियो सी चमचमाती वर्षा की बूंदे आदि ऐसे ही संकेतिक आयाम है जिन में बहुत कुछ पढा जा सकता है उदाहरण दृष्टव्य है --"अभी नहीं ....मैंने कहा,

" एक दिन घर जाऊगा।"

उन्होने आखें ऊपर उठायी ।

धूप की रोशनी दो डबडबाते धब्बों में बटकर उनकी आंखों से बाहर झाकने लगी।

न कातरता, न अवसाद।

सिर्फ दो उदभ्रान्त..........सी निगाहे मुझ पर गढ़ी थी।"-१

कथाकार ने एक लावारिस दृष्टि का गहराई से अहसास किया। सन्देहात्मक प्रश्नों की बौछार भी है, मन की भीतरी तह का अन्वेषण भी, खुद के अस्तित्व का अहम बोध है। वैचारिक गूंजों का द्वन्द, जागती घुटन का अवसाद है, प्रकृति के खुले परिवेश का बोध है, हृदय की कलख का अभिज्ञान है, अकेलेपन के खटकते सम्बन्ध का भान है, ढ़लते जीवन का मार्मिक प्रकाश है। इन प्रयोगधर्मी अर्थो में जितने भी नये सन्दर्भ हुए है, उनके मूल में यही एक सांकेतिक भाव है कि व्यक्ति दृष्टि बोध से कितने सोचों को एक साथ बटोरने लगता है।

इस प्रकार 'सितम्बर की एक शाम' कहानी में सांकेतिक प्रभावान्वित को देखा जा सकता है।

बारिस में भीगता हुआ वह सड़क पार करने लगा।

बहुत से आदमियो की भीड़ में वह एक था उसका चेहरा दूसरे आदमियों के चेहरो से अलग था। फिर भी उनसे मिलता-जुलता था, वेश-भूषा, चाल-ढाल, आंखों का खोलना-झपकाना, सांस लेना, फिर सहसा अनायास ढग से सांस हवा में फैला देना- वह सब वही कर रहा था, जैसा साधरणतयाः सब लोग करते है। उसके व्यक्तित्व में कही भी कोई विशिष्ठता, कोई चमत्कार नहीं था।"

१. बीच बहस में, पृष्ठ 56

यहां पर कहानीकार अथाह दृष्टि से घिरते, टिमटिमाते अभूतपूर्व अनुभव का जायजा लिया है। व्यक्ति मकानों, दुकानों और आदमियों के मध्य किस तरह सरकता चलता है, इसमें बताया गया है।

कितने आदमी एक जैसे एक दूसरे से मिलते-जुलते उस शाम सड़क चल रहे है, चित्रित किया गया है।

चलते हुए व्यक्ति को सहसा अहसास होता है कि उसके चेहरे को देखकर बडी तीखी व्यंग्यात्मक मुद्रायें एक दूसरे को काटती हुयी झाँक रही है। परिवेश के सापेक्ष व्यक्तित्व की विशिष्टता का इन पंक्तियों में आभास है। बारिश की ऋतु में बादलों का झुरमुट और उनके तहत टिमटिमाता धरती का प्रकाश एक अजीब स्थिति प्रकट करता है। कहानीकार ने ऐसी ही 'सितम्बर की शाम' का यहाँ जिक्र किया है। परिवेश चुप्पी साधे जैसे हर आहट को महसूसता जाता हो और चलता हुआ व्यक्ति ऐसी स्थिति में ना तो अपने को ही पहचान बना पाता है और ना दूसरों की। उसमें किसी को भी अपनी तरफ खींचने या आकर्षित करने की क्षमता नहीं रह जातीं । वह ऐसे परिवेश में सहमा-सहमा अपनी ही छाया को दूसरी मानने लगता है।कहानीकार ने 'पिछली गर्मियों में' संकलित 'खोज' कहानी में मनोवैज्ञानिक प्राभावान्विति को दर्शाया है।''

''आह ! बिन्नों! चीजें !..................तुम्हें चीजो से भी डर लगता है।''

''डर ?'' छोटी बहिन ठहाका मारकर हँसने लगी!''

अब नहीं ....अब कैसा डर ? पहले था।

पहले बहुत था................जब वह यहाँ थे...........................वह पीते रहते थे और हम में से कोई भी इस कमरे मे नही आ सकता था।''?

''आखिरी रात भी ''? बड़ी बहिन अब भी उसके चेहरे को देखती रहती थी''२

इस कहानी में दोनों सगी बहनों के मध्य जिस प्रभावी संवाद योजना को कहानीकार ने अनूभूत सत्य सिद्ध किया है। वह काफी अजीव है। वे वात करते - करते सहसा हंसने लगती है, विस्मित. होने लगती है।

जव कभी अतीत के झरोखे से घूच की परते उभरने लगती है तो अनजाने ही उनके मन में छिपी भावना टिमटिमाने लगती है, हालांकि वे पूरे होश नहीं रहती थी, वल्कि अपलक दृष्टि से किसी वीते क्या को खोज रही है ।

एक वहुत पुरानी याद उनकी आंखो के कोरो में सरक आयी थी जिसके कारण एक अजीव सी मुस्कान उनके होठों में सिमट आयी थी जिसके अपने सन्दर्भ थे, अपने अर्थ थे, अपनी भूमि थी और अपने ही पैमाने थे ।

इन तमाम कथ्यात्मक सूत्रों को कथा-कार ने वहुत खामोशी के साथ जगह - जगह से कुतरकर किसी एक छोर से लटकाया है । जिससे एक निस्पन्द फड़फड़ाहट सी शेष रह गई है । और वहुत दूर का जन्मा जीव रेंगता नजर आ रहा था । इतना ही नही उपर्युक्त पंक्तियों में परिवेश का सांकतिक स्वरूप चारों कोनो में मटका हुआ दृष्टिगत होता है ।

'छोटी वहन' वड़ी वहन को बहुत ही कौतूहलपूर्ण दृष्टि से देखती है जैसे वह एक - एक लम्बे अरसे से इस प्रश्न की प्रतीक्षा कर रही हो ।

छोटी वहन की आंखो में पागलो की सी चमक उमड़ आयी थी । और वह सोंचती थी कि वडी वहन इस घर से अधिक डरती थी ।

विवाह उसके लिये छुटकारा था अथवा वंधन । आखिरकार यह सब बडी बहिन के भीतर छिपे स्वर मे गूंज ही जाता था।

कहानी-कार अन्तर में प्रकाशित उन आयामो को अपनी लेखनी के हल्के स्पर्श से जांचना चाहता है जिनमे छोटे बडे सारे क्षण एक दूसरे से सटे हुये है।

कमरे की स्तव्यता भावनाओ की स्तब्धता के समरूप है । अंधेरे की आबाध नीरवता मन मे जुडी सलवटो को और अधिक गहराती जाती है ।

वे दोनो बहिने चाहे जितनी दूर भिन्न भिन्न अनुभवो मे घिरी रही हो, लेकिन आज मन के अनिश्चित स्वर ने उन्हे नई गूंज, नया प्रकाश और नया जीवन प्रदान कर ही दिया जाता था ।

वर्फ का सफेद मुंह, शराबी के पैरो सा लडखडाता, सांस सा प्रकम्पित स्वर, कोमल पंखुडियों सी हथेलियां, संगमरमर सी सफेद चिकनी वाहें, अखरोटी बाल, जबडे को सूखे रबर की तरह खीच कर फैलाना, सिनेमा के पर्दे पर ठहरे बलाज अप से चेहरे, बांस की सी लकडियों की टांगे, तितली के होठ, चिडियाघर के मूक निरीह जन्तुओ की भांति कुछ भी पाने के लालच में यन्त्रचालित गति से सीखचों के पास घिसटते आते, बेकार, सोती जागती, गुडियों की आखे, वर्फ सा सफेद चेहरा, हडबडाते हाय, एक अतृप्त भूखी सी जिज्ञासा आदि संकेत ऐसी प्रभावान्वित के प्रतिरूर है जिनमे सौन्दर्य उपमा विशेषण है सब कुछ विम्बाइत होता चलता है ।

निर्मल ने मानक भूमि पर खड़े होकर विचारों की बैठी हुई तन्द्रा को झकझोरा है। यह झंकृति केवल स्त्री पुरुष के मांसल स्वरूप मे ही संग्रन्थित नही हुई बल्कि प्रकृति के अच्छे बुरे, छोटे बड़े, नीचे ऊपर, हिलते डुलते, सूखे गीले, टेड़े मेड़े, आदि अनेक आयामो मे अभिव्यक्त हुई है जैसे पिघलती चाँदी सी धूप मैले आयामो मे बुझते दिये रेशमी रूमालो से बादल, चमकीले लट्टुओ से परिन्दे तीतरी धूप, झिलमिलाते सुर्खी रेत के कण, फटी थिगली सी पानी का एक हिस्सा, आदि प्रयोग इस तथ्य के परिचायक है कि प्रकृति के भिन्न रूपो मे संयुक्त चित्रण बहुत ही मार्मिक और जिज्ञासापरक होता है।

एक सहज स्वभाविक अनूठा उदाहरण प्रकृति, (मानवीय प्रकृति और बसुधा प्रकृति) सापेक्ष यहाँ दृष्टव्य है - "मुझे दुबारा रास्ता टटोलना पड़ा।

मैं इन सड़को पर दुबारा चलने लगा, जिन पर कल चला था, जो अब परिचित थी, किन्तु चाँदनी अजीब सी अनजानी दिखाई दे रही थी।" 1

' लन्दन की एक रात ' कहानी में व्यक्ति के दोहरे प्रकृति मूलक मन की अन्वेषण इन पंक्तियों में प्रस्तुत ....व्यक्ति द्वारा अनिश्चित भाव से उसी पथ पर चलने लगता है जिस पर कभी चलता था।

वह जितना पहले कभी उस पथ पर चलने से पूर्व सोच चुका था, उतना अब नही।

वही भावहीन चेहरा अजीब से भयावह चित्र प्रस्तुत करने लगता है।

कहानीकार कहना चाहता है कि शायद एसे पथिक का अपने पथ के प्रति एक अजीब सा भय उतर आता हैं वह एक अज्ञात नियति के प्रति इतना अधिक खामोश हो जाता है कि जिसका निर्णय वह आने वाले गुजरने वाले दोनो ही क्षणो में नही कर पाता।

उसकी मनः स्थिति उस समय चिडियाघर के उन मूक निरीह जन्तुओ की भंति होती है जो कुछ भी पाने के लालच से यत्र तंत्र चलित गति से सीखचों के पास घिसटते जाते है।

कहानीकार ने इसी उदाहरण में चाँदनी की बदलती प्रतिछाया को अनुशीलित किया है।

वह समझ नही पाता कि आज और बीते कल की चाँदनी में बहुत कुछ अन्तर क्यों आ गया है।

फीकी चाँदनी में चमकती हुई धड़ - धड़ाती मशीनों की आवाज और मन्द - मन्द गति से चलते हुए पैरों की आहट कुछ ऐसी अजीबो गरीबो बन जाती है जिसे किसी एक सूत्र में पिरोकर हम नहीं देख सकते।

निर्मल वर्मा ऐसे यथार्थवादी कथाकार है जिन्होंने कथ्यानप रूपचिन्तन को अर्थबोध के सहयात्री के रूप विविध संकेत ग्रह प्रदान किये है।

1—मेरी प्रिय कहानियॉं, पृष्ठ 117

वस्तुओं का मानवीयकरण भाषिक सौन्दर्य को वढाता चलता है उन्होंने जिन शब्दो का प्रयोग किया है सब में अपना छितराया हुआ संकेत बोध है चाहे वह परिवेश मूलक हो या भावमूलक देखिये ....अगले दिन खुलकर धूप खिली थी । मैं अधिक देर तक लाइब्रेरी में नही बैठ सका । दोपहर होते ही मैं बाहर निकल पडा और घूमता हुआ उस रेस्तरां में चला आया , जहां खाना खाने जाया करता था ।

वह एक सस्ता यहूदी रेस्तरां था।

वह सिर्फ डेढ़ शिलिंग में . शेर गोश्त, दो रोटियां और वियर का एक छोटा गिलास मिल जाता था ।'' ?

इस उदाहरण मे खिलती धूप और चमकता यहूदी रेस्तरॉ मन सापेक्ष दृष्टिवोध को लेकर जिज्ञासु मन पर छाया हुआ है ।

रेस्तरॉ की यहूदी मालकिन ग्राहको को घूरती रहती है और उसे घूरने की दृष्टि मे ऐक तना हुआ अदृश्य फंदा है जिसमें धूप है, आकाश की नीली मखमली डिबिया है , गरीवी और ठंड से जकडे मन की स्थिति है । मन मस्तिष्क को खोलकर जब वह खिडकी से बाहर झॉककर देखती है उसे सीधा कोहरा और धुंधन दिखायी देकर दुपहरी के वढते चरणो में ग्राहक ही दिखाई देते है[1]।

शायद दृष्टि के उतार-चढाव में भांवनाओं की सार्थक वहस अन्तःर्निहित हो गयी हो । कहानीकार इस तरह के परिवेश में संकेतात्मक विन्दु फैलाता चला जाता है।

देखे................ जैसे यह दिन रेल के डिव्वे में वन्द, धूप में उनींदी उसकी आंखे जिन्हे वह अपने होंठो में मूंद लेती, अगर आस-पास उतने लोग न होते। क्या वे जानते है कि जो आदमी उनके कन्धे पर सिर रखकर ऊंघ रहा है, कल रात उसकी देह पर था,समुद्र की उफनती देह पर एक अवश ढेलं-सा उठता,मरता हुआ..........।''?-2

निष्कर्षतः कथाकार वर्मा ने उपन्यासो और कहानियों में शब्दो के विविध प्रयोगो के माध्यम से सांकेतिक प्रभान्वित को नये अर्थ, नये सन्दर्भ प्रदान किये है ।

प्रकृति परिवेश के सूक्ष्म विवेचन को कहानीकार जहां एक ओर विशिष्ठ दृष्टि में बांधने का प्रयास करता है वहां दूसरी ओर मानवीय अन्तः प्रवृत्तियों को समाकलित करता हुआ आज के आधुनिक परिवेश में समायोजित करता चलता है यही सब लेखन वद्धता का अति तिशिष्ट प्रयोग आधुनिकता सापेक्ष मूल में जुड़ा हुआ है।

ग- शिल्प और प्रतीक विधान :-

कथाकार अभिनव प्रभाव सृष्टि कें लिए अभिनव शिल्प का समर्थक होता है निर्मल ने पात्रगत उदभूत भावों की संश्लिष्टी प्रतिकार्थ प्रायोजनों में इस प्रकार गूंथी है कि वह अर्थ को प्राछन्द होने के बावजूद भी मूलभाव संवेद से जोड़ता चलता है वस्तुतः रचनाकार का लक्ष्य भावनाओं की उदीप्त शिखा की ओर रहता है जिसमें व्यक्ति परिवेश,समाज, संस्कृति और सभी कुछ एक के वाद एक सभी जुड़ते चले जाते हैं।

१. कौवे और काला पानी पृष्ठ 20, .

2– बीच बहस में पृष्ठ 38

कहना होगा कि शिल्प, प्रतीक प्रयोग से और अधिक सटीक तथा कलात्मक निर्वाह में और अधिक प्रमाणित सिद्ध तव हो जाता है जव कथानक रूपवन्ध शव्द का पर्याय वन जाता है।
नये शिल्प में कथाकार की वस्तु दृष्टि का लगातार योग रहता है।

शिल्प वोध, इस प्रकार लेखकीय अनुभूति की सामर्थ्य से जन्म लेकर पुष्ट होता है।

विशिष्ट शिल्प प्रतीकवादी अवधारणा का एक अनिवार्य हिस्सा है, इसीलिये कहा जाता है कि प्रतीकात्मक शिल्पवोध की अनिवार्यता रचना कर्म की अंगभूत शर्त है। जितेन्द्र भाटिया ने सम्भवतः इसी धारणा से अभिप्रेरित होकर लिखा था...........''कथाकार अक्सर विशिष्ट भाषा और शिल्प के कारण ही कहानियों की भीड़ में आइडेनटिटी वनाने मे सफल होता है कथाकार के लिये कुशल शिल्पी होना आवश्यक है पर शिल्प अपने आप में स्वतन्त्र आर्ट फार्म नहीं है।

रचनाकार के सामने शिल्प के मुकावलें में संवेदनाए प्रमुख होती है। कहानी के क्षेत्र में पिछले वर्षो में शिल्प की आड़ मे। कथ्य हीनता को छिपाने की जितनी कोशिश की गई वे अन्ततः असफल ही रही ,क्योकि शिल्प और भाषागत चालाकिया कथ्य को प्रभावशाली वनाने में सहायक तो हो सकती है, उसका सब्सीट्यूट नही वन सकती।

वास्तव में किसी भी जैनुअन लेखक के सामने भाषा और शिल्प को लेकर कोई समस्या नही होती''-१

निर्मल वर्मा का शिल्प इस दृष्टि से कथ्य का आवरण नहीं है। उसमें घटना या स्थूल परिस्थिति का अत्यन्त अभूर्त प्रतीकात्मक संकेत है।

'वे दिन''उपन्यास में इन बुदबदाये प्रश्नो को गहराई से विश्लेषित कर सकते है।

देखे ....''एक चमकीली सी मुस्कान उसके चेहरे पर फैल गयी थी और तब अचानक मुझे उसकी आंखों में वही पहचान दिखायी थी, जिसे कुछ क्षण पहले मैने खो दिया था....................उसी तरह नही जिसे पहली वार देखा था वल्कि एक निशान की तरह जिसे सतह पर छोड़ जाते है और कुछ दूर पर जाकर दुवारा देखते है...................।''-२

1–सारिका ,सितम्बर 71
2–वे दिन ,पृष्ठ 96

चमकीली सी मुस्कान, पहचान निशाद, आदि शब्द एक असीम उल्लास को लेकर प्रमाता के हृदय को मथने लगते हैं। जिसे वह तन्मय होकर बड़ी ही तमन्ना से इन शब्दों की छाव को छूने लगता है।

लगता है पात्र की शरारत भरी हंसी उसकी आंखों से वाहर झाक रही है।

''रायना ''पात्र समूच परिवेश में अपने को इस उल्लासित भाव से आपूरित पाती है कि उसमे सहसा ठिठकन और सूनी सनसनाहट एक ही साथ एक ही हृदय में उतर आती हैं।

''निशान'' शब्द अपने आप में इतना गहरा है जिसमें भावों के मिटने के पीलेपन से जुडे हुए गहरे रंग मिटने के वावजूद भी रेंगते रहते है ।

कथाकार उस शाम की वुझती रोशनी मे उसके उज्जवल चेहरे को मधुर मुस्कान के साथ देखता है, यधपि आंखों में वहुत दूरी है, फिर भी 'पहचान' शब्द ने साझेदारी कर ली है।

पहली वार ही दृष्टा पात्र को महसूसने लगता है कि उसके चेहरे पर एक हौंसला आ गया है।

सुवह से लेकर शाम तक का वधां-वधा सा सूनापन चमकीली मुस्कान को देखकर मर गया है।

भावनाओं की यह जिन्दादिली धूमिल छायाओं को भी ठिठकाती हुई पाती हैं।

परिणमस्वरूप छोटे-मोटे विगडते चिन्ह दूसरे पात्र को विश्वास में जकडते चलते है।

और ऐसा लगता है कि वह पात्र दुवारा उस जगह पर खींच लाया गया हो जहां से वह कभी भूलकर चला जाता था। उसके भीतर में एक विचित्र आकाक्षां उपजती है और एक निश्चय बन जाता है कि जहां पहचान की गन्ध ठहरी हुई है उसी में अन्तर्निहित उसकी आंकाक्षा भी व्यग्र थी।

कथाकार ने प्रतीकात्मक शैली से जितना कुछ वैचारिक स्तर को नये पहलू प्रदान किये हैं। वे सब शीशे मे खुले चेहरे को प्रस्फुटित करते चलते हैं।

''लाल टीन की छत'' उपन्यास का परिवेशात्मक प्रतीक दृष्टवय ....''उजाला मिट गया था ।

सिर्फ एक सुर्ख रेखा पहाड़ो पर खिंच आयी थी, आकाश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक।

कमरों में बत्तियां अभी तक नहीं जली थी[1]।

१-लाल टीन की छत पृष्ठ १०३

जहां वह बैठी थी, वहां डूवते सूरज का पीला आलोक सामने दीवार पर गिर रहा था, वाकी कमरा अंधेरे मे डूवा था ?''

यहां पर वाहर फैले जंगल की सायं सांय मे वीहड़ मकान और रोते हुये गीदड़ तो हैं ही, साथ ही अंधेरे और प्रकाश में वुझे हुये शव्द स्मृति से जुड़ें हुये हैं । भीतर ही भीतर व्यक्ति के मन का प्रकाश इतना कुछ द्रवीभूत होकर चलता है कि रोशनी के सहतीर वाहर के परिवेश को भी डूवते उतारते नजर आता है । कमरे की रोशनी भले ही पात्र के आधे चेहरे पर पड़ी हो लेकिन वाहर की उगते सूरज की रोशनी घनी पलको की छाया के नीचे कुछ सुखद सोचने के लिये मजवूर करती है। इन पंक्तियों में उजाला आकाश , वत्तियां , डूवता सूरज, अंधेरा कमरा आदि ऐसे शव्द है जिनमें प्रतिकार्य भाव प्रच्छन्नता परत दर परत जुड़ी हुयी है। पात्र मनः स्थिति में आकाश उस सुकोमल हृदय का परिचायक हैं जिसमें वाहरी उदास आंखे भी अपना कुछ खोजती हैं । वत्तियां इस तथ्य की प्रतीक है कि अभी जागरूकता की छुअन नहीं हैं । काया ,, पात्र सोचती अवश्य रहती है परन्तु वुआ और चाचा के वीच कसमसाती ऐसी रेंखा वनी रहती हे जिसमे उसके हृदय का तडपता रोदन ही एक सिरे से दूसरे सिरे तक रेंगता दृष्टिगत होता है । दरअसल 'काया' सीधी आंखो के पीले आलोक को दीवारो पर रेखा वनाते हुये देखकर समझ जाती है कि उसके मन में निराशा ने वहुत पुरानी सूखी झुर्रियों को एक वारगी ही नहला दिया हो । सम्भवतः लेखक ने इन प्रतीकात्मक शव्दों से उन आंसुओ को जोंड़ने की चेष्टा की है जिन पर कभी वह खुशी से कभी हंसे भी थे । उनकी आंखो में छलछलाते भाव कभी किसी निष्ठुर पत्थर पर गिरे भी थे ।

इन प्रतीको से विंधे हुये शव्दो में पात्रों की पुरानी पहचान फड़फड़ा रहे हैं ।

कथाकार ऐसे ही परिवेश के अनुरूप मन की सरसराहट को घोर निराशा को सन्नाटें में 'विट्टी' पात्र के परिवेश का अध्ययन करता है । जैसे................,,

विट्टी का विस्तर खाली पड़ा था ।

वह लेट गया ।

वह रिकार्ड अव भी डिस्क में लगा था, जिसे कुछ देर पहले इरा सुन रही थी ।

क्या नाम बताया था, उसने ....हाइडन या हैण्डल? पता नही कितनी देर वाद डेरी की मोटर साइकिल घुरघुराहट सुनाई दी[1]।

वह जा रहे थे, चांद सरकता हुआ मकवरे के गुम्मद पर आ अटकता था

सारी छत सूनी पड़ी थी, सिर्फ विट्टी मुडे़र के पास खड़ी नीचे झांक रही थी ।

खाली, घुरघुराहट, सरकता, सूनी, खड़ी आदि शव्दो की प्रयोगपरक प्रकिया में बहुत कुछ विट्टी के मन की खरोंच हैं।

१. एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ ४४

लगता है विट्टी विना कुछ कहे नित्ती भाई से एक अजीब तत्कालिकता को दिखाती जा रही है। मुंडेर के साथ सटी हुयी भीने हृदय से जुड़ी हुई अजीव सी हलचल उसके खाली मन मस्तिक में एक साथ रेंगने लगती है । दरअसल वह चुपचाप उस खाली जगह को देखती रहती है, जहां कुछ देर पहले वह खड़ी थी और उसके मन मे एक अजीव सा डर वैठने लगता है जो उन दोनों के वीच वीत चुका है

उसे एहसास होता है कि वह कहीं वीच में है,

न इधर न उधर ।

..........................जहां नित्ति भाई खड़े हैं न वे कुछ अपने लिये कुछ कर सकते है और न कुछ उनके लिये कर सकती है, सिर्फ एक चमकीली सी घुरघुराहट सुनाई देती है जिससे उनके भीतर स्मृतियों की धूल उड़ने लगती है, वह न साफ है न धुंधली, सिर्फ एक जिद्दी सी गर्द जो मन के भीतर एक तम्वू सा तान लेती है ।

''इरा'' पात्र के मन पर वने गुम्वद का यह सव परिवेश साक्ष्य है विट्टी और इरा के मध्य एक ठिठका हुआ क्षण है । जिस पर उसकी हंसी है न पीड़ा, केवल बीता हुआ समय है जो नाखूनों की खरोंच से इन प्रयुक्त शब्दों के प्रश्रय में खरोंचें जा रहे है।

इस प्रकार के पात्रों की दृष्टि वोधमयता हृदय के मध्य वने तम्वू के वाहर झांकती नजर आती है, जो उन्हें अकेले में समग्रतः लीलती जा रही है।

उपन्यासकार ने पात्रगत तिलमिलाती दुनियां को प्रतीतात्मक शैली से बने नये आयाम दिये है ।

इरा और विट्टी का वुदवुदाता मन एक चमकीले कीड़े की तरह भीतर रेंगता रहता है।

जिसे न तो वह मार सकती है, और न ठहरने का आदेंश ही दे सकती है ।

फिर भी भीतर का ठंडा अंधेरा उन्हे तसल्ली देता चलता है इसकी देह से वाहर झांकती हुई आशांये एक के वाद एक जिन्दगी जीती चली जा रही है, सिर्फ परिवेश के साथ आंखे वदलती जाती है ।

जिस आवाज को वहुत पहले भीतर ही भीतर सुना था उसी की गूंज अब तक चली आ रही हे ।

जैसे वरसों पहले फड़फड़ाते चीथडों के वीच किसी जिन्दा दिलों को महसूसा गया है।

यद्यपि इन पात्रों के मन में अनिश्चितता है फिर भी रोशनी अंधरे के फासलें को दूर करने के लियें उनके मन में एक चमकीला सा आंतक है। एक मैला सैलाब है जिसमें वह पहली बार सबग्रता के साथ अपना कुंवारापन डुबो देते है कथाकार ने

इन प्रतीक परक शब्दों से भागते हुये क्षण को ठहराया है और सिद्ध किया है कि आदमी आज भी वही है जो पहले कभी बच्चे की तरह बौना और ठिगना था।

बेधड़क आवाज सन्नाटे को भेदती हुयी व्यक्ति की भीतरी दुनिया में बत्तियां जला देती है जिससे भीतर के अंधेरे को अपने पीले आलोक में टोह मिल जाती है, और वह समझ जिसे कभी फिसलते हुये सोचा गया था, पकड़ में आ जाती है।

दरअसल इस उपन्यास का कांपता हुआ चिथड़ा सुख इन्ही पात्रों की मनः स्थिति के अनुरूप उपन्यासकार ने गहरी दिलचस्पी के साथ अन्वेषित किया है। धुंधले क्षणों में पुरानी स्मृतियां अजीब सुख का आभास देती है । यद्यपि उनमें अजीब सा कौतुहल ही बाहर झांकता नजर आता है, पर हृदय के अन्दरूनी हिस्से में एक छोटा सा अपना अधिकार कर कोई बैठ जाता है

निर्मल की कहानियों में प्रतीकों क प्रयोग प्रचुर मात्रा मे हुआ है ।

बल्कि उनके कथानक आज के जीवन में संश्लिष्ट रूप को जितना ओढ़ कर चले है, उतने ही संकेत सूत्र प्रतीकों के माध्यम से कुछ नया कहते गये है ।

वस्तुतः प्रतीक कहानी की व्यंजना शक्ति का संवर्धन करके उसके उर्थ गौरव को संम्पुष्ट करते है ।

डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने कहानियों के प्रतीकों के प्रयोग के संन्दर्भ में यही लिखा है .... ''इंगित या संकेत आंतरिक सम्बन्धों को उभारने तथा रचना के ख्वाव में कलात्मक संयम लाने के लिये आज की कहानी का अभिन्न अंग बन गया है।

कहानी में बिम्ब और प्रतीक खूब रम जाते है जो कहानी की संश्लिष्टता का अंग बन जाते है''।

इसी बात को डा० शंताशु ने इस प्रकार कहा है कि................''नई कहानी'' में प्रतीक का प्रयोग अपने प्रस्तुत अर्थ में विशिष्ठ और अद्वितीय होते हुये भी कहानी का समाज परक, युग परक जैसी अनन्य विशिष्ठता से भी संचालित करने वाला है ।

यहां प्रतीक, कथ्य के अन्तर्गत खुलते है और अपने प्रासंगिक विवरण से ध्वन्यर्थ के सहारे पूरे युग और परिवेश का संस्पर्श करते है ।''-२

निर्मल ने अपनी कहानियों मे अभूर्त संवेदना को जिस वातावरण में मुखरित किया है वह सब अनायास ही प्रतीक की दृष्टि को अवधारित किये हुए है।

कहानीकार ने ''अंधेरे'' में कहानी के अन्तर्गत प्रतीक प्रयोग पर बहुत कुछ कह दिया है............''मैने संगमरमर सी सफेद दो बाहें परदे के बाहर हवा में फैली है।

पीछे एक छाया हैं, भूखी फटी -फटी सी दो आखें हैं......................परदे नोंचती हुई लम्बी - पतली कांपती अंगुलिया है ओर बिजली में चमचमाती नाक की

1.कहानी और कहानी, पृष्ठ 34
2. नयी कहानी के विविध प्रयोग, पृष्ठ 143
3. परिन्दे, पृष्ठ 80–81

लोंग जो बार बार फड़फड़ाते होंठो के उपर तारे सी टिकी है, ...यह सब कुछ मैने एक छोटे से क्षण में देखा था........दूसरे क्षण मुझे लगा मानो परदा अपनी जगह वापस खींच लिया गया है, सिर्फ एक भार्रायी सी आवाज सुनाई दे जाती है, जो उपर उठने से पहले ही दवा दी जाती है मानो किसी ने अपने हाथ से उसे भीच रखा हो।

इस प्रस्तुंत उदाहरण में संगमरमर सी सफेद वाहें फटी-फटी सी आंखें लम्वी पतली कांपती अगुलियां, विजली में चमचमाती नाक, फड़फड़ाते होंठ आदि सव ऐसे प्रतीक प्रयोग है जिनमें स्थूल सौन्दर्य तो है ही, साथ ही साथ मन का विचित्र भाव चमकीले कांच की तरह जहां तहां चमक दमक जाता है।'

कहानीकार कहना चाहता है। कि एक अजीव सी छूटी सहलाती पहचान शव्दों की आहट में अद्भुत दृश्य उपस्थित करती चलती है, चमकना, कांपना, फड़फड़ाना आदि क्रियायें व्यक्ति के मन की खामोशी को आवाज प्रदान करती है। टूटे हुए शीशे की भीतर चेहरे को जैसे वीचो वीच द्विगुणित आभा ओर विम्ब मिलने लगता है, वैसे ही अंधेरे में भी उसके सफेद संगमरमर से हाथ हमेशा के लिये खुली हवा मे कुछ पाने के लिये उठे हुए है। लेखक ने इन्ही शव्दो में एक कातर और सहमी हुई ध्वनि भी नजर आती है जिसमे 'वही संगमरमर सी सफेद दो वाहें किसी को वार वार अपनी ओर खींचकर' अपने खुलेपन का इजहार करती है।[2]

प्रकाश की पतली सी रेखा होठों और नाक पर जैसे ही पडती है वैसे सव कुछ अजीव सी खुशी में नाचता हुआ दृष्टिगत होता है।

पात्र ऐसी मनोभूमि पर दूसरों की आखें को गढ़ाता हुआ पाता है और उसके पीछे एक ऐसा रहस्य छोड़ जाता है कि सभी कुछ वाहर भीतर एक जैसा होकर हवा की गन्ध में चारों ओर फैल जाता है।

वस्तुतः 'बानो' पात्र एक सफेद छाया है जो अंधेरे में भी चमक रखती है, उसके संगमरमर से सफेद हाथ खुली हवा में किसी का आमन्त्रित करते है और पाठक को लगता है जैसे वह अपने आप से अलग हो और गदराये हुए फल की तरह हल्का सा उसमें स्पन्दन भी हो।

यह सब प्रतीकात्मक ढंग से आस पास की, नीरवता को लेकर कहानीकार ने बहुत कुछ मुखरित कर दिया है।

यही नही 'जलती झाड़ी' कहानी संकलन में प्रस्तुत कही 'माया दर्पण' का इन्जीनियर बाबू पात्र जब सीढ़िया उतरता है। तो सारा घर हिल जाता है। यहॉं घर हिलना तरन के व्यक्तित्व के हिलने का प्रतीक है । रेतीली जमीनतरन के आस-पास का वातावरण है।

अस्त होता हुआ सूरज स्वयं तरन है।
कच्चे सोने सी भी रेत तरन है।

१. जलती झाड़ी, पृष्ठ ३७   २. वही, पृष्ठ ३०

''रोड़ी'' पत्थर, तरन का अहं है तथा पानी का टैंक उसके सरस का भण्डार है।

देखे दूर-दूर तक रेतीले जमीन फैली थी। अस्त होने से पहले सूरज की पीली किरणे कच्चे सोने की सी रेत पर बिखर गई थी।-

तरन की रूखी सी रिक्तता इस प्रकार का परिवेश बुनती है। बरसों पहले की एक धुंधली सी अनुभूति कही भीतर धीमे से उसके मन मे उमड़ आती है -" लगता है, जैसे वह टब के पानी में अपनी नंगी देह पसारे लेटी है!''-1

धुंधली सी अनुभुति का कहानीकार ने जितना सटीक प्रयोग किया है वह एक साहित्य में अनूठा उदाहरण ही है।

तरन पात्र का मनोवैज्ञानिक सत्य जितना कुछ कहानीकार उद्भाषित कर सका है, वह सब विशेष तो है ही, साथ ही आज की कुंवारी लड़की का प्रतिनिधी भी है।

तरन के बारे में कहानीकार समग्रतः यह कहता चलता है कि वह एक हल्की सी गुदगुदी समेटे हुये हैं, ब्याह के लिये नही, गहनो के लिये नही , बल्कि उस अजीब अनजानी खुशी के लिये जो उसकी अपनी थी।

''कुत्ते की मौत'' कहानी में सभी प्राणी मर रहे हैं। मां को पराये शहर, पराये घर ने, नन्हें नितिन को बेकारी ने पिता को पुराने रोग ने विशेष प्रकार की मौत प्रदान की है ।

कहानी का आरम्भ वातावरण ही इसका साक्ष्य है कि परिवेश का प्रतीकात्मक पहलू कितना कुछ अजनबीपन समेटे हुए है..............''फिर यह भी एक रात है घर के हर प्राणी के कान ऊपर लगे है।

एक टूटती, मरमराती सी चीख सुनायी देती है। घर का सन्नाटा सिहर जाता है केवल पल भर के लिए फिर सब पहले सा शान्त हो जाता है।''

इस कहानी का कथ्य सूक्ष्म प्रतीक पद्धति का बहुत सुन्दर और सटीक प्रयोग लिये हुए है। आरम्भिक वातावरण, भरभराती चीख का ऐसा कुछ पयार्य है जिसमें मृत्यु बोध हर जीवन के पहलू से जुड़ा हुआ है, बल्कि यों कहे कि जिन्दगी और मृत्यु के फासले की बात ही यहॉ लेखक ने खत्म कर दी है।

एक क्षण का ही फॅासला उनके बीच मे सदैव टकराता रहता है।[2]

''पहाड़'' कहानी में बच्चा पहाड़ का प्रतीक बन गया हैं ''जलती झाड़ी ' यौन का प्रतीक है। ''उनके कमरे'' कहानी में हवा में डोलते एरियल पोल पर फंसी हुई अंधेरे में फड़फड़ाती पतंग खिड़की से झांक रही है उस ग्रहस्थ स्त्री का प्रतीक लिये है जो गृहस्थ के एरियल पोल पर पतंग सी फड़फड़ा रही है। 'अमालिया' में एक बरिया, युवती के प्रेम का प्रतीक है और शहर के बीच छितरे टापू भिन्न युवकों के

1–वही पृष्ठ 50

2–पिछली गर्मियों में पृष्ठ 123 १-जलती झाड़ी पृष्ठ ३७

प्रतीक है। पिछली गर्मियों में कहानी का निन्दी चमगादड़ की तरह दीवार से चिपका खड़ा है और चांदनी रात में उसकी धुंधली छाया बेडोल पशु सी दीवार पर पड़ती है।-१

यहां पर निन्दी का चमगादड़ जैसा चिपकना और बेडोल पशु की तरह दीवार पर छाना इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि व्यक्ति रुआसा मन लेकर हर स्थिति में अन्यमनस्क है। 'वीच वहस में' कही का अस्पताल लहरों में जूझतें जहाज का प्रतीक वन गया है।

इतना ही नहीं एक वहुत वड़े परिवेशगत प्रतीक शैली से कहानीकार ने अर्थ को नये सदर्भो में जूझने के लिये विवश कर दिया है।

देखिये ....उनके मुंह में लार वहती हुई गले तक चली आई, जहॉ सफेद मांस की थैलियां झूल रही थी। सफेद मांस पर नीली नसों के बीच रास्ता टटोलते हुये एक काली लकीर, जंगल की गर्मी में हांफते, फुफकारते सॉप की तरह । वह एक टक जड़, मन्त्रमुग्ध सा होकर उन्हें ताकता रहता। मुंह पर वहते सॅांप को. ....फिर एक खतरे ने उसे जकड़ लिया।''-1

1–परिन्द्रे पृष्ठ 159

सफेद मांस, नीली नसे, काली लकीर, फुफकारता सॉप कितने ही भयावह बूंदे की फड़फड़ाती शिराओ का प्रतीक वन गया है। दरअसल मृत्युवोध व्यक्ति को इसी तरह निगलने में दृष्टिगत होने लगता है। आधी वेहोशी के धुंध में घिसटते हुए जीवन का अन्तिम चरण चिलचिलाती धूप जैसे कष्ट में सुर्ख आंखे मूदकर सो जाना चाहता है। हवा में घूमते और पापड़ जैसे पड़पड़ाये होठ एक अदम्य लालसा को अभिव्यक्ति तो देते है लेकिन अस्पताल का खास वोझिल सन्नाटा वह सब अधिक से अधिक वेदर्दी से समेटता चलता है। निर्मल ने प्रतीतात्मक प्रयोगों से 'अंधेरे में' कहानी के वीरेन चाचा को अपनी पुस्तक 'शिमला का इतिहास' विषय में खोज करते हुए वर्तमान परिवेश के आंकडे जुटाये है। इसी कहानी में रेश कोर्स उसकी यह लड़की 'पूनों' का प्रतीक है वह पूनों जो अपनी ग्रहस्थी को छोड़ कर प्रेमी की वन गयी थी। 'परिन्दे' के पात्र परिन्दो से भी गये वीते है। वे कहीं भी नही जा सकते। इस प्रकार परिन्दे मरणधर्मा मनुष्यो के प्रतीक है और अन्त में वुझता हुआ लैम्प मरणासन्न ह्यूवर्ट का संकेत करता है। ''[1]

'लवर्स' में प्रेमियों का मिलन स्थल हुमायूं का मकवरा है जो प्रेम में मृत्यु का प्रतीक है। इस कहानी हमें लड़की वर्फ और लड़का पतझड़ का प्रतीक है वस्तुतः वर्मा ने प्रतीक दृष्टि को कथ्य के अर्न्तगत वड़ी सजगता से खोला है और कहा भी है कि कथाकार प्रतीको से वच नहीं सकता। प्रतीक तो अन्धे की लकड़ी के समान है जिसे भूमि पर टेकता हुआ अन्धा अपना रास्ता खोजता है, वैसे ही प्रतीक पद्धति के सहारे ही कहानी का कथ्य अनुभत की गुणात्मकता का व्यंजित रूप वन जाता है। हमें तो लगता है कि जितने भी निर्मल जी के कहानी शीर्षक है, वे सब अधिकांशतः प्रतीकात्मक ही है जैसे पिक्चर, पोस्टकार्ड, ''सितम्वर की एक शाम'' जलती झाड़ी, दहलीज, दो घर, डेढ़ इंच ऊपर, धागे, कौवे कौर कालापानी सुवह की सैर, धूप का एक टुकड़ा आदि।

(घ) परिवेशगत जीवन्तता और भाषिक संरचना की अंतरगता :-

जिस प्रकार रूमानी साहित्यकार प्रकृति की विभिन्नता, विराटता, रहस्यमता, निर्जनता, भयानकता आदि अनेक रूपो का चित्रण करता है उसी प्रकार वही साहित्यकार रागात्मक या विरागात्मक संवधो को परिवेश में खोजता है। निर्मल का कथासाहित्य रूमानियत चिन्तन को लेकर परिवेश की जीवन भावनाओं का प्रयास वना हुआ है और यह परिवेशगत जीवन्तता, घटना, संकुल जीवन की परिभाषा का एक प्रयास घर है। कहानीकार सभी तरह से वातावरण और जीवन के निकटतम पहलुओं को खोजता चला जाता है। निर्मल के यहां अकेलेपन अजनवीपन एवं परिचय के ढेरो कारण परिवेश की मूल संवेदना में छिपे हुए है।[2] कमलेश्वर ने परिवेशगत जीवन्तता, पर व्यक्ति की मनोदशा का

1–नई कहानी की भूमिका पृष्ठ–126 2– हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य,पृष्ठ–238

चित्रण करते हुए लिखा है............... " हम अभिशप्त है-अतिपरिचित होने के लिए। इसीलिए हमारे देश की मानसिकता की परिचय से डूबी हुयी है और इस अति परिचय का परिणाम है । अपरिचय की ऐच्छिक मनोदशा"?

वर्मा ने भीड़ के अकेलेपन को स्वीकार करते हुए परिवेश की विविध दशाओं पर गहराई से विचार किया है। डा० रमेश चन्द्र लवानिया ने निर्मल की परिवेशगत जीवन्तता पर इस प्रकार कहा है......... निर्मल प्रेम, सेक्स, विवाह की समस्या पर मूलतः विचार करते है और यही प्रमुख वस्तु है। जो मानव के व्यक्तित्व को तोड़ने वाली है। प्रेम से ही व्यक्ति एकांकी हो जाता है।" २

निर्मल की कथात्मक धारा में आज के परिवेश के अलगाव, वेगानापन, ऐलीनियेशन की एक गहरी समझ है। उनका कथा साहित्य में अकेजलेपन, अजनवीपन, एवं अपरिचय की स्थिति को आज के आम आदमी की संपूर्ण विवशताओं के साथ उजागर हुआ है। यह परिवेशगत जीवन्तता भाषित, संरचनाओ में सार्थक वहस का मौका देती है। 'वे दिन' उपन्यास जीवन परिवेश का एक ज्वलन्त उदाहरण है। देखे........" उसने दरवाजा खोला कुछ देर वाद उसका चेहरा दरवाजे की ओर से वाहर आया। पहले क्षण मुझे भ्रम हुआ कि मैने किसी गलत कमरे का दरवाजा खटखटा लिया है उसके चेहरे को मैने इतनी पास से नही देखा था कि वह भी गलियारे के पीछे धुंधलके में था वह भी शायद यह भ्रम उसके वालों को लेकर हुआ था। "-३

यहां पर कथाकार माहौल को वहुत ही पारदर्शी रूप में चित्रित कर देना चाहता है। पहले चरण में तो दरवाजा और उसके भीतर वाहर का खुला हुआ परिदृश्य है जिसमें कुछ तसल्ली है। तो कुछ घवराहट। महसूसा जाता है कि दरवाजे के ऊपर एक वत्ती टिमटिमाकर चारों ओर की एक वासी गन्ध की याद दिला रही है। और लगता है कि वरसों से वाहर की ताजी हवा भीतर नही आयी है।

फिर भी पहले ही क्षण उसके चेहरे की शाम की थकान की तरह महसूसने में मदद मिलती है। दूसरे चरण में एक अनिश्चित सा भाव खड़ा हो जाता है क्योंकि दरवाजे के भीतर निपट सन्नाटा है।

चारों तरफ क्लिप लगे हुए है और दरवाजा खोलने वाली पात्र धुधंलके में चेहरे को छिपाये हुए है लगता है कि परिवेश ने दोनों के ही वीच एक झीना सा पर्दा लटका दिया है, जिसके कारण उन्हें अपने भीतर एक बेमानी सी बैचेनी महसूस होती है।

अजीब सा भी लगता है। वहॉ न पास होने का कौतूहल है और न दूर होने का ठंडापन।

विस्मय से भरे हुए वे पात्र एक दूसरे को मनचाहे ढंग से देखने के लिये लालायित होने लगते है, और निगाहें क्षण भर के लिये एक दूसरे पर टिक

1–वे दिन पृष्ठ–56

जाती है । दरअसल यहाँ पर निगाहों का मेल और भावनाओं की अनुभूतियों का तादात्म्य परिवेशगत जीवन्तता को नया आयाम दे रहा है।

वे पूर्ववतः शान्त होकर अपनी आखों के नीचे एक गर्म सा गुलाबीपन समेट लेते हैं।

इस रोपे हुए वातावरण में उपन्यासकार ने परिवेश का जीता जागता उदाहरण तो दिया ही है वल्कि साथ ही नये-नये स्थानों और नये-नये व्यक्तियों के सम्पर्क से पात्रगत मनः स्थिति का आंकलन किया है।

चेकोस्लिावाकिया की राजधानी प्राग में अजनवी स्त्री पुरुश के संवंधो की यह गाथा परिवेशगत जीवंतता का हिस्सा वनी हुयी है।

निर्मल ने अपनी मोहक कल्पना शक्ति के माध्यम से इस परिपूर्णता तक परिवेश के संरचनात्मक पक्ष को सफल वनाया है।

'लाल टीन की छत' उपन्यास में पूरी तरह से एक सूने परिवेश में फंसी लड़की की कहानी है, जो अपने छोटे भाई के साथ शहर में रहती है।

सर्दी की लम्वी छुट्टी में वह इधर - उधर भटकती रहती है।

उसने अपने इर्द-गिर्द एक मायावी जाल सा वुन लिया है जिससे वह परिवेश के साथ जुड़कर अपने आप को खो चुकी है।

"कपड़े उतारने से वह सचमुच अकेली पड़ गयी थी। छज्जे पर चलती सांय-सांय हवा, कपड़ों की फड़फड़ाहट पत्तो सी नंगी, वेशर्म देह कापने लगती। कहीं वहुत धुंधली, सुखद सा विचार आता कि मुझे सर्दी लगेगी, निमोनिया होगा, काली माँ के लिये मेरी जान जायेगी, और तव वह धीरे-धीरे अपनी नंगी देह को सहलाने लगती है।"?

इस व्यक्तव्य में सबसे वड़ी चीज परिवेश की अभिनयशीलता है। पात्र सच्चाई के पहिये में फंसकर अपने आप की धुरी में ही घूमता चला जाता है। खुद अपने पर उसकी पकड़ छूट जाती है।

नशे की लहर समूची देह पर उठने लगती है।

उसे अभिनय की सीमा का अभिज्ञान ही नही हो पाता कि सर्दी भी है और सरसराता सन्नाटा भी है।

काया, मंगतू आदि पात्रों का सानिध्य अनुभव की कतरनों के साथ परिवेश को नया मोड़ देने में सहायक वनता है। काया अपनी आखों को कसकर भींच लेती है और वह ऐसे कांपने लगती है जैसे वह सारे परिवेश में अकेली और निस्तब्ध खड़ी हो।

आधी रात तक अपने घर के छज्जे पर अकेली लेटी रहती है -नंगी और निश्चल, जहां वह खुद अपने से अलग है।

अचानक उसे लगता है कि ऐसे परिवेश में उसका वचपन वहुत दूर चला गया है और आने वाला समय अनेक संकेतो और संदेशो से भरा है।

परिवेश के इस आन्तिरिक स्तर पर एक ओर अजीव आतक छाया हुआ है तो दूसरी और असहनीय सम्मोहन ।

सारे वातावरण में एक खाली - खाली सन्नाटा है।

नीचे फैला जंगल कभी अचानक ही हिलने लगता है जैसे ठहरे पानी पर किसी ने ढ़ेला मारा हो ऐसे परिवेश में निर्मल की भाषा ऐसी प्रतिध्वनति गुंज समेटे हुए है जो परिवेश का जीता जागता चित्र उपस्थित करती है। देखे "उसकी निगाहें धूए में डवडवाते उस लाल विन्दु पर ठहर गयी, जो भरती हुई धूम वढ़ते हुए अंधेरे पर जादू के टिमकने सा टिका था।"-२

पहाड़ो के वीच विखरी वह (काया) किसी पहेली का हल ढूढ़ती रहती है।

पहाड़ और काया की चितस्थिति जंगल के रास्ते की जहां एक ओर खोज करते है, दूसरी ओर उनका मन न हिस्सों का छूता है जहां बहुत से आसू बिना किसी की प्रतीक्षा किये विना ही जमे हुए थे।

उपन्यासकार वर्मा ने परिवेश का वह स्वरूप भी स्वीकार किया हैं जिसमें मानव की सूक्ष्म मनोवृत्तियां ढहते-बढ़ते घटते-उतरते जीवन को अभीष्ट मान लेते हैं

"एक चिथड़ा सुख" उपन्यास कुछ ऐसी ही हिस्सेदारी का नमूना है जिसमे अपने ही देश की परिवेशगत जीवन्तता विट्टी पात्र के एकांकी जीवन में प्रविष्ट होकर चक्कर लगा रही है ।

विट्टी एक अजीव सी उलझन अपने चेहरे पर लिये रहती है। हर वार उसके मन के दरवाजे किसी की प्रतीक्षा में अहाट पाकर खुल जाते है लेकिन बाहर झांकने पर विट्टी को अपना ठिठकता जीवन ही दिखाई देता है ।

विट्टी की पुकार एक ऐसा पोस्टर सावित हो गयी है जिसमें जादुई भरी फनफनाहट तो है, लेकिन चेहरे की झुर्रियां वीती हुई रात को दास्ता की कहानी बन चुकी है।

"रेत उड़ रही थी, उसके भीतर , और वह कांप रहा था।

पागल-सी इच्छा हुई, वह विस्तर से उठ खड़ा हो, सोने का वहाना छोड़कर उनके वीच जा खड़ा हो , विट्टी को खींचकर डेरी से अलग धकेल दे, किन्तु वह वैठा रहा , अंधेरे और बुखार और चॉदनी में , उन दोनो की सांसे और सिसकिया सुनता हुआ ....डेरी का रूधा स्वर किसी भुतैली खोह से वाहर जा रहा था, क्या कर रही हो"१

1–एक चिथडा सुख ,पृष्ठ 119

रेत का उड़ना, पागल सी इच्छा का उड़ना और अधेंरे का तैरना, सांसों का सिसकी भरना, यह सब अजीव मन की दरिद्रता को अभिव्यक्ति देने में समर्थ है ।

विट्टी सचमुच ऐसे परिवेश में ठहर गयी है । उसकी हांफती सांसों के वीच चेतना की एक लकीर कौंध जाती है ।

उसके फड़फड़ाते होंठ परिवेश के रूपाकार में वदल जाते हैं। उसके उफनते हुये शव्द अर्थ को समेट लेते हैं। ऐसा लगता है कि विट्टी इस एकांकी परिवेश में कमजोर, शिशिल , वेमानी ही नही वल्कि फिसलती हुई जिन्दगी के ववण्डर को तुफानी काले अनधड़ में घूर कर देख रही है।

वर्मा ने इस उपन्यास में ऐसी जमीन की तलाश की है। जिसमें सन्नाटा तो है ही अंधेरे की भी अपनी पहचान है सोच का उदास ओर संवेदना की महक विट्टी के लिये इतनी कुछ वेमानी हो जाती है कि वह वेकार की भटकन को भी भेद भरी आंखों में देखने लगती है ।

उसे इसी परिवेश में वे दिन याद आते है जव नित्ती भाई से एक अजीव सी पहिचान जुड़ी हुई थी, लेकिन आज वह किसी अज्ञात विपत्ति कोने से अपने आप को निहार रही है और उसे लगता है कि उसके भीतर दया, हमदर्दी जैसी चीजे खत्म हो चुकी है।

डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने एक वहुत सुन्दर वात आज के परिवेश को रेखांकित करते हुये वतायी है कि आज के वातावरण में मनुष्य अपने ओर समाज से अलगाव को रेखांकित करता चलता है।''-१

अजनवीपन अथवा निर्वासन की भावना आज 'एक चिथड़ा सुख' जैसे उपन्यास की कहानी वहुत गहराई से निरूपित की गई है।

इसी परिवेशगत भावना को पाश्चात्य विचारक ने आत्म निर्वासन कहा है।

कार्ल मार्क्स ने इस निर्वासन भावना को भौतिक आधार देते हुए राजनैतिक आर्थिक निर्वासन कहा है। किर्क गार्द ने मनुष्यों के वीच निर्वासन को मनुष्यों के वीच निर्वासन को एकांकी पद्धति वताया है।

सार्त्र ने इसी परिवेशगत निर्वासन को मनुष्य के भीतर या वाहर की संजीदगी माना है।। '-२

वस्तुतः आज के परिवेश में अकेलेपन का वोध व्यक्ति का वोझ वना हुआ है।

जहां मध्यकालीन अकेलापन आत्मिक स्तर का अकेलापन था वही रोमान्टिक युग में वैयक्तिक स्तर का वन गया परन्तु आज वही बड़े-बड़े कारखानों, बड़े-बड़े संस्थानो में काम करने वालो के वीच अवैयक्तिक होता जा रहा है।

1–आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद पृष्ठ 13   2 Existenl ialism and Humanism Pag 32

सच्चे अर्थो में 'एक चिथड़ा सुख ' उपन्यास की नायिका भिन्न - भिन्न स्तरों पर अकेली ही है, जिसका साथ जुड़ी हुई जिज्ञासा भरी ऑखें ही शेष रह गयी हैं।

एक गहरी उदासी ने उसे घेर लिया है, एक धुंधली सी चाहना ने उसे भटका दिया है, एक शान्त ठन्डी आवाज ने उसे वहका दिया है, इसीलिए वह अनजाने मे ही अंधेरे गुफ्जाओं के भीतर जीती चली जाती है।

आज के भोगे हुए यथार्थ में जिस भाषा को कथ्यात्मक रूप कहानियों में वर्मा जी ने दिया है वह वहुत ही सहज और परिवेश गत है।

इसलिये आज का वैयक्तिक मानसिक धरातल कुछ अलग ढंग का ही वन गया है।

निर्मल ने आज के परिवेश मे प्रौढ़ और वूढ़े व्यक्तियों की उस आस्था के चित्र उरेहे है जव उनकी जिन्दगी हाथों से फिसल चुकी है।

''परिन्दे'' कहानी के डा० मुखर्जी इस प्रौढ़ उम्र में युद्ध के कारण अपने शहर रंगून को छोड यहॉ आ वसे है और वे सोचते है कि सारी उम्र यहां कट ही जायेगी।

परिवेश को यह वुझता हुआ रूप कितना कुछ यथार्थ है जिसे उन्हें ने भोगा हैं।

देखें ....वर्मा पर जापानियों का आकमण होने के वाद वह इस छोटे से पहाड़ी शहर में आ वसे है।..............कुछ लोगों का कहना था कि वर्मा से आते हुए रास्तें में उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई ....वातों के दौरान डा० अक्सर कहा करते है--मरने से पहले मैं एक दफा वर्मा जरूर जाऊंगा।

लतिका डॉ० साहव के निजी जीवन को या कहे परिवेश को उरेहना चाहती है, लेकिन वे अतीत के सम्वन्ध में सहानुभूति दिखलाने पर भी कुछ नही चाहती है लेकिन वे अतीत के सम्वन्ध में सहानुभूति दिखलाने पर भी कुछ नही वतलाते।

उनका तो सीधा यही आदर्श वाक्य वन गया है कि इन्सान जिन्दा किस लिये रहता है ? इसी प्रकार ''माया दर्पण '' कहानी में रिटायर्ड व्यक्ति का परिवेश निरूपित किया गया हैं।

दीवान साहव सिक्खों के दरवार के अकेले दीवान थे, किन्तु आज उनके पास फटे-चिथड़े सा दीवान का खिताव वचा हैं जिसे चाहे 'ओढ़ लो चाहे बिछा लो। रिटायर्ड जीवन और अतीत में चिपकने की असंगति के कारण वे उॅची जाति एंव बडे घराने की प्रतीक्षा में बेटी तरन की शादी नहीं कर पाते ।

घर का बोझिल सन्नाटा चहल कदमी की की अनिश्चित पदचाप और अधीर आतुरता से मेहमानों की प्रतीक्षा आज के परिवेश को जीवन्तता प्रदान करती है।''कौवे और काला पानी'' की कहानी में परिवेश का संरचनात्मक पहलू चित्रित किया गया हैं।

४-परिन्दे पृष्ठ-१२३-१२४

इस पहाड़ी परिवेश में सटी हुई मास्टर जी की टोहती आखें वहुत वडी जिज्ञासा के साथ दर्शायी गयी है।

देखें.........कहाँ काम करते है आप?

उन्होंने पहली वार मुझसे मेरी नीचे वाली जिन्दगी के वारे में पूछा था..... ..उनके स्वर में एक लगाव भरी चिन्ता थी, जिसके कारण में उनका कृतज्ञ - सा हो आया।

...................सिर उठाकर उन्हें देखा,............कमरे की पीली चांदनी में उनकी आंखें मुझ पर टिकी थी मुझे एक अजीव सा खटका हुआ,...........पता नही वे क्या सोच रहे थे?''-१

अल्मोडा के प्रसंगत जीवन रिस्ते का धागा परिवेश में जितना अर्थ भरी दृष्टि से देखा जाता है, वह समझने योग्य है।

भले ही वहां ठंड और थकान जमी हो, लेकिन वहां के व्यक्ति की अपनी दुनिया अलग-थलग विखरी होने के वावजूद भी काफी परिष्कृत और विश्वसीनय है। वहां पेड ,चट्टाने, डगर, डाली आदि में फंसी हुई व्यक्ति की करवटों की सांसो हल्का वाजार गरम तो कर ही देती है।

इस परिवेश में भी भावनाओं के जलते अंगारे है और विचारों को शीतलता की ऊचाइयां वादलों में छिपी हुई हैं।

लेखक आज के व्यस्त जीवन में ऐसे परिवेश से यथार्थवादी आदमी जोडना चाहता है जो जीवन की सच्चाई को वहुत नजदीक से पहचान सकें।

''डेढ इंच ऊपर का वूढा पात्र आज के परिवेश में विगत पन्द्रह वर्षों से जीवनगत विसंगति और व्यर्थता बोध में जी रहा हैं।

वह वार-वार स्वीकारता चलता है कि इस बुढापे में न तो कोई कुशलता पूछने वाला है न उसकी जिन्दगी में सटकर के यथार्थवादी वनकर कुछ कहने वाला ही है।

वस इतना चेतना अवश्य रहती है कि नींद के लिये छटाक भर लापरवाही चाहिये और आधा छंटाक थकान।

इसी वात को वढाते हुए वही वुढा व्यक्ति के चेतना के विभिन्न आयामों को संश्लेषित करने लगता है ।

''इतनी चेतना अवश्य रहनी चाहिये कि आप अपनी चेतना को माचिस की तीली की तरह बुझते हुये देख सके
...........जब लौ उगलियों के पास सरक आये तो उसे छोड देपा चाहिये ।''-२

1–कौवे और काला पानी, पृष्ठ 145 2–पिछली गर्मियों में,पृष्ठ 36

वीच वहस में वूढ़े आदमी के परिवेश को कहानीकार ने विचारणीय वना दिया हैं। वह वरसो पहले रिटायर हो चुका है लेकिन फिर भी पुरानी नौकरी का स्वर अभी छूटा नही है।

वच्चों के लिये उसका अस्तित्व पीले पुराने गडढे सा दिखाई देता है ,फिरभी वह आज के परिवेश से वितृष्णा करता हुआ वेटे से इतनी वहस करता है कि वेटे को अपना अस्तित्व दीवार से चिपकी छिपकली सा लगता है।

''परिन्दे''और दहलीज कहानियों में युवा किशोर रूमानी एंव यौन ध ारातल का परिवेश हैं।

परिन्दो की लतिका अपने को आज के परिवेश में समायोजित नही कर वच्चों के लिए उसका अस्तित्व पीले पुराने गढ्डे सा दिखाई देता है,फिर भी वह आज के परिवेश से वित्रष्णा करता हुआ वेटे से इतनी वहस करता है कि वेटे को अपना अस्तित्व दीवार से चिपकी छिपकली सा लगता है।

'परिन्दे' और 'दहलीज' कहानियों में युवा किशोर रूमानी और यौन धरातल का परिवेश है।

'परिन्दे' की लतिका अपने को आज के परिवेश में समायोजित नही कर पाती क्योंकि उसका प्रेमी मर चुका है, और वह अतीत से चिपकी है।

लतिका के लिये पूरे विश्व में कोई संगति नही है, इसलिये वह छुट्टियॉं भी स्नोफाल के बीच उस पहाड़ी कान्वेट में अकेली विताया करती है। जहां दरारो से वर्फ का पानी टपकता है।

'अन्तर' 'उनके कमरे' ,और 'वीक एण्ड' में यह विंसगति यौन संम्वन्धों की देन है।

तीनो कहानियों की नायिकाओं के अन्तर ग्रहस्थ और प्रेम की ललक है किन्तु जिन्दगी उनके हाथों से फिसलती जा रही है।

'अन्तर' की नायिका अपनी इच्छाओं के विरूद्ध आज के परिवेश को झेल रही है।

'वीक एण्ड' की नायिका छुट्टियॉं व्यतीत करने के लिये अपने अनुरूप किसी पुरूष को अपना दोस्त वना लेती है।

दृष्टव्य है............'अपने' 'वीक एण्ड' वे हमेशा दूसरे शहर में गुजारते थे ....लेकिन ट्रेन में वैठकर लगता था, कि वे दोनो अरसे के साथ रहते आये है. ....कभी-कभी उसका मुँह उसके कन्धों पर उठकर उसके गले पर आ टिकता और तब वह सब कुछ भूल जाती ....जहां-जहां उसके होठ जाते वहां-वहां मांस गलने लगत जैसे उसके होठ मोमवत्ती की लौ हो.........''छोडो'' वह धीरे से कहती-लगता जैसे उसकी झनझनाती नसें खून में भीगें सिग्नल हो-१

'दो घर' का प्रवासी देशी और विदेशी परिवेश में सोचने से पहले ही निराशा छा जाती हैं।

१-बीच बहस में ,पृष्ठ ३७

इसीलिये 'लन्दन की एक रात' को जार्ज यही पूँछता है कि क्या करना चाहिये क्या नही। 'जलती साड़ी' में सकंलित इस कहानी का 'अंश वहुत ही मार्मिक है।

''और मैने सोचा, हम सचमुच कितनी कम वार अपने हाथों को इस तरह देखते है, जैसे वे है, जैसे वे असल में है और तव भ्रम होता है कि जो भी चीज उनकी पंकड़ में आयेगी वह हमारी नही हो सकती-१।

आज के परिवेश में वहुत तंग घेरे के भीतर केवल निगाहें ही है।

आखें टटोलकर भीतर की कातरता को उढ़ेल तो देना चाहती है पर किस पर और क्यूँ ?

कहानीकार आज के जलते उवलते परिवेश के ढहते स्वरूप का चित्र उपस्थिति करता चलता है।

आज का व्यक्ति जिस रास्ते पर चल रहा है वहां एक धुधलका ओढ़े हुए एक गड्ढा वना हुआ है जिसके भीतर वह न तो फिसलकर गिर पाता है और न ही वच पाता है।

परिवेशगत आधार पर निर्मल ने अपनी हर कहानी में मौलिक रूप से प्रस्तुत किया है।

''सितम्वर की एक शाम'' के नायक ने घर से भागने का कारण इस भावना से जाना है कि उसे लगता है कि वह मुक्त है और सारी दुनियॉ उसकी प्रतीक्षा कर रही हैं कि वह जीवन को नया अर्थ दे।

आज का चिन्तनशील व्यक्ति जीवन वरण की स्वतंन्त्रता के प्रति अत्यधिक सजग है।

इसीलिये निर्मल ने अपने कहानी पात्रों को किसी अदृश्य शक्ति से नहीं जोड़ा है।

यहां प्रत्येक पात्र अपना जीवन चुनने के लिये स्वतंन्त्र है, क्योकि वह जीवन को नया अर्थ देना चाहता है । इसमें संघर्ष और क्षमता बोध का होना अनिवार्य है। निर्मल की 'डायरी का खेल' में विट्टों तपेदिक की रोगी है।

वह असहायता, रूग्णता, से घिरी हुई है, फिर भी जिजीविषा से प्रेरित होकर वव्वू से कहती है..........'मरने से डर नही लगता' ,लेकिन मरने के वाद क्या होगा, कहां जाना होगा, यह सोचते ही लगता है कि........मरने से पहले वहुत जी भरकर जी लेना चाहिये और इतना जितना कि पहले कभी किसी ने न जिया हो।''-२

''सितम्वर की एक शाम''. का नायक भी आज के परिवेश से जुझ रहा है।

''माया दर्पण' की तरन जीने की अद्‌भुत क्षमता रखती है ।

1–जलती झाड़ी, पृष्ठ 109 2–परिन्दे,पृष्ठ 26

धागे की स्त्री पति को छोड़कर जिजीविषा से जुड़ी हुई है।

"डेढ इंच ऊपर" के वृद्धे पात्र में भी आज के जीने की ख्वाइश है।

जिन्दगी का जवावदेही लम्हा निर्मल प्रवृति मार्गी व्यक्ति में भली भांति देखा है।

आज के परिवेश में भाषा का जो पक्ष रचना रचाव में सही और उपयुक्त होना चाहिये, वर्मा जी ने स्वीकारा है।

उन्होने जीवन के यथार्थ वोध में भाषा की यर्थाथवादी परछाइयों ही चयन की है।

सचमुच जीवन के यथार्थ मनुष्य के भीतर पंक्षी की तरह उड़ान भरने के लिये छटपटा रहा है।

इसीलिये कहानीकार ने हर कहानीकार पात्र को आज के ढंग से जीने के लिये विवश किया है।

उनकी कहानियों में युद्ध का भयानक चित्रण है। 'अमालिया','माया दर्पण' ,'वेख्त' और एक उदास नगर आदि ऐसी ही कहानियां है जिनमें भयावह भयंकर लड़ाई के मिटे वुझे घाव परिवेश में देखे जा सकते है 'पिक्चर पोस्टकार्ड', 'सितम्वर की एक शाम', 'कुत्ते की मौत' आदि कहानियों देशों विदेशी वेकारी के अनेक चित्र उरेह रही है।

युग यथार्थ को परिवेश से जोडते हुए निर्मल ने ' लन्दन की एक रात' ,'छुटिटयों' के वाद ',इतनी वडी आकांक्षा' आदि कहानियों में ऐसे भयंकर दरिद्र संकेत संजोये है जिनमें केवल पथराये भावहीन सम्वन्ध मात्र शेष रह गये हैं।

आज व्यक्ति को विसंगतियों ने अकेला और अभिशप्त वना दिया है।

मानसिक स्तर पर वह यह सोचने के लिये मजवूर है कि वह जिन्दा कैसे है।

अपने निर्णयात्मक पहलू को आज के परिवेश से जोड़कर हर व्यक्ति नयी दिशा दे रहा है। निर्मल का प्रवासी व्यक्ति घर, नगर और देश से उखड़ने की अनुभूति भोगने के कारण समाज और स्वयं के समक्ष संदिग्ध हो गया है।

निरन्तर असुरक्षा महसूसने के कारण वह समाज से ही कट गया है।

वाह्य एवं मानसिक विसंगतियों ने उसे अजनवी कर दिया है।

निर्मल ने यात्रिक विसंगतियो को संसार मे अकेले अभिशप्त ने मनुष्य का चित्रण किया है। तात्पर्य यह है कि भाषा का संरचनात्मक पक्ष कथ्य के वुनाव में जितना कुछ सफल हो सका है उसके मूल में परिवेश की जीवन्तता अन्तर्निहित है।

(ड़)-शिल्पगत प्रयोग और उनके प्रयोग द्वारा अभीष्ट प्रभाव की सृष्टि :-

आधुनिकता के परिवेश में अभिनव शिल्प वोध को रचना धर्म का अंग मानते हुए आज के यथार्थ से जोड़ा था । "अपने कथ्य को सीधे भोगने जीने और प्रस्तुत कर देने का यथार्थपरक प्रयत्न आज का अभिनव शिल्प वोध है"?[1]

यह तो निश्चित है कि शिल्प वोध लेखकीय अनुभूति की सामर्थ्य से पुष्टि होता हुआ अभीष्ट प्रभाव की सृष्टि करता है । हिन्दी शव्द कोष के अनुसार ही शिल्प शव्द की व्याख्या भिन्न-भिन्न पद पदार्थो के प्रयोग धर्म को लेकर की गयी है जैसे-वनावट ,गठन, आाकृति, लक्षण, अवस्था, दशा तथा सौन्दर्य।

आज का लेखक कथा के रूपवन्ध और शिल्प विधान पर जव वात करता है तव एक ही वात उभर कर सामने आती है कि शिल्प के जितने अभिनव पक्ष प्रयोग सिद्ध हो सकेंगे उतने ही प्रभावमूलक वाक्य विन्यास कथा में जुड़ते चले जायेंगे। कथ्य का परिधान जहां एक ओर संवेदनात्मक क्षणों की तलाश करता है जिनसे अनुभूतियां को कथाकार संश्लिष्ट वनाने में सफल हो पाता है।

निर्मल वर्मा के अभिनव प्रयुक्त शिल्प को कुछ एक प्रयोगधर्मी विन्दु मानते हुए हम कह सकते है कि उन्होने मानवीय चेतना पक्ष को विविध आयामों पर सहस्पर्श करने का प्रयास किया है। जैसे चेतन प्रभाव पूर्ण शिल्प, कथा नियोजन का शिल्प, प्रलापीय शिल्प, आवर्तक शिल्प, विम्वात्मक शिल्प, तथा प्रतीतात्मक शिल्प आदि।

चेतन प्रवाह शिल्प का समवध पाश्चात्य विचार भूमि से है । इस प्रकार के शिल्प स्मृति द्वारा अतीत के अन्धकार को प्रदीप्त करते है। अतीत का कृमिक इतिहास चेतन प्रवाह में वर्तमान के साथ जुड़ा रहता है। डॉ० देवराज उपाध्याय ने इसी तथ्य पर लिखते हुए कहा था,

1-कहानी-स्वरूप और संवेदना,पृष्ठ 100

कि वर्तमान क्षण को अपने में अति क्षुद्र, अल्प ओर क्षणिक होता है यदि वह अतीत को अनुप्रमाणित कर अर्थात उसमें अपनी सांस फूंक कर उसे सप्राण कर उसके कन्ध ो पर वैठ सके तो वह वहुत ही भव्य विशाल आकृति का दृश्य खड़ा कर सकता है। इस दृष्टि से 'लाल टीन की छत' उपन्यास झूठी स्मृतियों से घिरा हुआ ऐसा उपन्यास है जिसकी 'काया' चन्ना चालित सी जिन्दगी होती हुयी कल्पना से अजीव का विषाद समेटती चलती है। उसकी आत्मा कांच के टुकड़े सी झिलमिलाते अतीत को हड़वड़ाती हुयी, झपटती हुयी वनी रहती है। काया और मंगतू के बीच का यह परिवेश चेतन प्रवाह पूर्ण शिल्प के लिये यह उदाहरण उपयुक्त ही है।

"दिल के भीतर एक गुव्वार सा उठता था और वह फूट जाता था । अंधेरे के आर-पार पहाड़ियां धूम रही थी - उसकी चीखों के लय के साथ - साथ पागल, वेवकूफ .... देखती नहीं हम कमरे में नहीं जा रहे .... मंगतू ने उसके पैर अपनी हथेलियों में दवोच लिये। वह गलियारे की सीढ़ियों से उतरने लगा था - और तव काया की देह शान्त हो गयी। हांथ - पांव ढीले पड़ गये। मंगतू उसे अपने क्वार्टर में ले जा रहा था। वह उसके कन्धों पर लिपट गयी।"?[1]

'काया' एक ऐसी स्मृति पात्र है जो आस पास के सन्नाटे में अपना अता पता ही भूल जाती है वह अपनी लम्वी सांसो को झूठी आशा में भुलाये रखती है । उसके वीच का जीवन झूलता हुआ अपने आप ही में अविश्वसनीय वन गया है। उसका यह ख्याल विस्मयकारी हो गया है, कि वह अपने कमरें में नही, मंगतू के क्वार्टर में लेटी है।

इच्छा होती है कि सव उसे देखें कि वह कितनी अकेली है। उसे अविश्वसनीय लगने लगता है कि जो टिमटिमाती रोशनियां उसे दिखायी दे रही है उनमें सव अकेले ही लोग संतृप्त हैं। उसे एक अजीव सा विषाद घेरे रहता है। एक अच्छी आदिम हमदर्दी उसके मन में उगने लगती है जो जंगल की आवाध नीरवता में एक पक्षी की चीख सुनकर दूसरे पक्षी को चीखने के लिए विवश कर देती है।

वस्तुतः वह जिंदगी भर अंधेरे में ही दोनों हाथों को दवोचकर अपनी बीती सिसकियों को सुनाती रही है। इसलिए उसके एक - एक शब्द के बीच स्मृति चिन्ह मिल जाता है, जहां वह हवा में धुंधला सा इशारा करती हुयी ठहर जाती है।

कभी-कभी तो उसे लगता है कि जो चीज उसे अपनी ओर खींच रही है वह कुछ और न होकर सिर्फ उसकी स्मृति ही है इसीलिए वह धीरे-धीरे अपने बोझिल कदमों से सीधे सादे वच्चों की तरह जिन्दगी की राह पार करती चली जाती है।

चेतन प्रवाह का यह अभिनव शिल्प काया के उस मन का रहस्य खोल देता है, जिसमें उसने अदृश्य सांसो के महल वनाये हुए थे। काया का कसेला सा स्वाद, भय, जीवन पहाड़, के वीच आज कितना धुंध से अपूरित हो गया है, वह खुद ही महसूसती है।

1–लाल टीन की छत पृष्ठ 71

उसका वदहवास सा चेहरा, पेट पर बंधा दुपटटा, चौड़े माथे पर उड़ते बाल, उठे हुए सतर कन्धे ऐसे ही साक्ष्य हैं जिनमें अतीत की जिन्दगी की आहट और वर्तमान के जीवन का फिसलता ...भ...एक साथ उतर आये है। उसे लगता है कि भीतर ही भीतर कोई सुरंग वन गयी है जिसमें पैरों की आहट एक सिरे से दूसरे सिरे तक आती जाती रहती है । उसके भीतर एक विचित्र सा धुरधुराता स्वर उठता है और फिर धीरे-धीरे भीतरी सुरंग में सो जाता है। इस अजीव सी वैचेनी में उसका दम घुटता जा रहा है।

निर्मल वर्मा ने चेतन प्रवाह शिल्प से काया जैसे अनेक पात्रों की मनः स्थिति का अन्वेशण किया है। डा० नामवर सिंह ने तो उनकी कहानियों में भी चेतन प्रवाह शिल्प ही वुनियादी रेखाओं पर प्रकाश डाला है और कहा है......."निर्मल की अधिकांश कहानियां अतीत की स्मृति है। कहानी कहने वाला वरसो वाद उस स्मृति को दोहराता है स्मृति में भावुकता सम्भव है किन्तु समय का अन्सल तत्कालिकता के आवेग को काफी कम कर देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालिक आवेग की भावुकता को कम करने के लिए ही निर्मल समय का इतना अन्तराल दे देते हैं।"[1]

"डायरी का खेल" के वव्वू को विट्टी की वहुत सी वातें याद आती है, एक के वाद एक प्याज के छिलके सी एक दूसरे को छीलती हुयी। "तीसरा गवाह" के रोहतगी साहव क्लव में स्कोंच पीते - पीते अपनी कहानी सुनाने लगते है।

"माया दर्पण" के दीवान साहव अतीत जीवी होने के कारण आज भी फटे चिथड़े सा दीवान का खिताव ओढ़े फिरते है "दहलीज" की रुनी के पास कोई पुराना सपना धीमें कदमो से चला आता है। ये स्मृतियां शम्मी भाई द्वारा दिये गये नामो की तरह इतने वरसों वाद भी लान की घास और वंगले की दीवारो से लिपटी वेल लताओ की तरह चिरन्तन अमर है।

कहने का तात्पर्य यह है कि निर्मल ने चेतन प्रवाह शिल्प में दो प्रकार के स्मृत्यात्मक विम्व खडे किये है पहले वे है जिनमें वैयक्तिक जीवन से घिरी हुयी कहानियों का स्वरूप है और दूसरे वे है जो प्रस्तुत के माध्यम से अप्रस्तुत की व्यंजना करते है जैसे "दो घर" कहानी में प्रवासी पात्र को पतझड़ के पत्तों को देख अपने देश के पतझड़ की याद आ जाती है। इसी प्रकार 'अंधेरे में','डेढ इंच ऊपर','धागे पिछली गर्मियो में',आदि कहानियों में छितरे-छितरे प्रसंग पूर्व दीप्ति को लेकर आये है।

अभिनव शिल्प प्रतिठा में निर्मल ने विचारोत्तेजक प्रलापीय शिल्प का अत्याधिक प्रयोग किया है यह प्रयोग अर्थ गम्भीर्य को अधिक सम्पुष्ट करता है। वैसे यह भी अवचेतन से जुड़ी हुयी जीवनगत अवधारणा है जिसे जीवन में हर व्यथित व्यक्ति को जीना होता है। अनुभव का सहज हिस्सा कितना प्रलापी होता है,वह "वे दिन" उपन्यास में विचारणीय है।[2]देखे............

1–नई कहानी पृष्ठ 75 2–वे दिन पृष्ठ 112

''मैने तुमसे क्या कहा था ? आज तुम अकेले नही सो सकोगे..........सब हीटर और वत्तियां वन्द है। 'किसी ने मुझे फोन किया था''? ''नही ....आज नही''। लेकिन कल रात तुम कहां थे? कोई लड़की तुमसे वात करना चाहती थी। वह तो कहो, मुझे जर्मन आती है........नहीं तो उसे कुछ पता नही चलता''।

''मुझें मालूम है..........मैं भीतर जाने लगा''?

यहां दोनो पात्रों के मध्य जिस अनर्गल प्रलाप का जिक्र किया गया है वह सशंकित और हास्यास्पद है जैसे आज अंधेरा कैसा है? मैने तुमसे क्या कहा था? किसी ने मुझे फोन किया था? मैं भीतर जाने लगा, आदि वाक्य असम्बद्ध प्रलाप होकर नायक के गहरे चिंतन को व्यक्त करते है। कहानियों में 'डेढ इंच ऊपर' प्रलापी शिल्प में लिखी गयी कहानी है। यहां मध्यम पुरुष की कल्पना करके नायक कभी संलाप करता है ओर कभी एकालाप। उसका चिन्तन गहरे अर्थ वोध का संकेत देता है। ''परिन्दे'' की लतिका भी ह्यूवर्ट से सलाप करती हुयी अनर्गल प्रलाप तक पहुंच जाती है। जैसे 'खुदा जाने'' इस हालत में कहा भटक रहे है। ....कमरा खाली पड़ा है लतिका ने लेटे - लेटे पलंग के नीचे चप्पलों को पैरो से उतार दिया''1 ''वीक एण्ड'' में भी ऐसा ही प्रलापी शिल्प है। और भी ऐसी कहानियां है जिनका बहुत सारा हिस्सा उन्हीं शव्दों को दोहराने के लिए चुना गया है जिनमें एक भीतरी स्मृत्यात्मक वुनियाद है। ''दहलीज'' का मूल भाव प्रेम और वेदना का रागात्मक चित्रण वन गया है, जिसमें हर पात्र का अभिनव शिल्प रुमानी वनकर मुखरित हुआ है। ''वीच वहस में'' कहानी का शीर्षक ही इस वात का प्रमाण है कि संलाप वूढ़े और युवा के वीच किस प्रकार प्रलापीय वन सकता है। नर्स और मरीज के वीच जो वार्तालाप होता है उसका निष्कर्ष अपना अलग ही शैल्विक प्रयोग वनाये हुए है । देखें..........''वह झिड़की नही थी, एक खाली जगह को भरने की कोशिश थी .... नर्स ने हताश भाव से उसकी ओर देखा मानो मरीज वह हो विस्तर पर लेटा आदमी नहीं।''2 पात्रों की परस्पर असम्वद्ध वातें ही प्रलापी शिल्प की अनोखी परिचायक बन जाती है। निर्मल की ये कहानियां घटना की क्रमवद्धता, संगति के तारतम्य को चुनौती देती हुयी पात्रगत मनःस्थिति का इस प्रकार उदघाटन करती है जिसमें व्यक्तित्व का विश्लेषण एवं परिवेश का स्वरूप स्वतः ही अंकित हो जाता हैं।

यहां पर एक वात कह देना निहायत जरूरी है, कि इस अभिनव शिल्प से कथानक से बहुत कुछ विखराव आ जाता है। इसीलिए डा० शिव प्रसाद सिंह ने एक सामान्य सी बात कही है, कि जो कथाकार समस्याओं के घेरे में प्रलापीय संलाप को अपनाते है वे कहते - कहते खुद ही विखर जाते है, और उन्हें फिर अपने को संभालना कथा सूत्र को जोड़ने के लिए वहुत ही कठिन हो जाता है।''-3

मूलतः कथानक का हास इस अभिनव शिल्प के प्रयोग से कुछ ज्यादा ही हुआ क्योंकि इस प्रकार का प्रयोग पाठक से अतिरिक्त समझ की मांग करता है।

1–परिन्दे पृष्ठ 154, 2–बीच बहस मे पृष्ठ 87–88
3–धर्मयुग अक्टूबर 1966

कथाकार शब्दो, वाक्यों या सन्दर्भो की आवृति द्वारा कथा की व्यंजना एवं सोद्देश्यता को प्रकट करता है। भाषा की यह गतिमयता कथा की मूल संवेदना में इतनी एकीकृत हो जाती है, कि कथाकार वार वार उसी विन्यास को दोहराता हुआ अभिनव शिल्प के नये आयामों को प्रकाश में लाने लगता है। वस्तुतः भावनाओं का गुवार वैचारिक स्वर का भी अतिक्रमण कर देता है जिससे जीवनगत उतरती चढ़ती तमाम रेखाओं को वड़े ही सहज ढंग से टटोला जा सकता है। ''जिन्दगी यहां ओर वहां'' कहानी में कथ्यात्मक विचित्रता इतनी अधिक आवृतिमूलक हो गयी है कि उसे दर्शन, जीवन, मन, मस्तिष्क आदि विषयों में एक साथ एक क्रम में पिरो दिया गया है।

लेखक लिखता है............'' ऐसी घड़ी में न्याय - अन्याय की बात मुझे हिमालय की चोटी सी जान पड़ी, ठण्डी और सफेद पवित्र......पहुंच के परे.......कुछ शब्द अचानक भीड़ से अलग हो जाते है.........खोये से, लावारिस.........प्रेम और पाप, ईश्वर, झूठ और न्याय और मौत....... ठहरे पानी में अलग - अलग सावुत, चमकते, सुनहले पत्थरों की तरह मैने जल्दी से एक कागज उठाया ओर दूसरे नामों के नीचे अपना नाम लिखने लगी।''? यहां पर पात्र की मनःस्थिति उस परिन्दे की तरह बन जो सीजन के साथ ही अपने घोंसले वदलता चलता है। दरअसल उसे अपनी पहचान रह नही गयी है। इसीलिए जल्दी ही कागज समेटे हुए अपनी आंखो से उस विचार विशेष को टोहना चाहती है जिसमें कोई ऐसा सुख हो जिस पर अंगुली रखकर कहा जा सके। वह अपने मन के भीतर झाकते हुए उन कोशिशों को वरावर वरकरार रखती चलती है जो भीतर की दुनियां से वाहर आकर ठिठक गया है। उसके मन की उलझन भीतर ही भीतर सुराख पैदा करती चलती है, इसीलिए उसे डवडवाई रोशनी के वीच भ्रम पैदा होता है वल्कि वह माया और सच के वीच भागती हुयी छांह बन गयी है। उसके होंठो से वाहर जो शब्द मुखरित हो रहे है उनमें प्रार्थना की आवृति है ओर अकेले पन की झटपटाहट।

ऐसी स्थिति में निर्मल ने वहुत कुछ हृदय की गूंज की अनुगूंज को वहुत दूर तक सुना है। डॉ० शशि भूषण ने ऐसे अभिनव शिल्प पर विचार करते हुए एक जगह लिखा है कि.........यहां आवर्तन की प्रकिया प्रति आवाहन की भी है और प्रकृत विकास की भी जो कथा की मूल संवेदना को निश्चय ही सम्प्रेषणीयता और प्रभावान्वित की शर्त तक पूरी करती है।''2

निर्मल ने ऐसे अभिनव शिल्प के प्रयोग से पात्रगत मनःस्थिति को हर कोण से देखने का प्रयास किया है। ''लवर्स'' में निन्दी वार वार अपने मैत्री पक्ष का इजहार करता हुआ कहता चलता है कि वी केन वी फैण्ड्स वी आर फैण्ड्स।

यह सब पीले पपड़ाये गिरते पत्तों की उस आवृत्ति का सूचक है जिसमें सव कुछ होने के बावजूद भी कुछ भी नही है। पिक्चर पोस्टकार्ड का परेश अक्सर वोलते हुए अपने विचारों की आवृत्ति करता रहता है।

1–नयी कहानी के प्रयोग पृष्ठ 189 2– कौवे और काला पानी पृष्ठ 49

"लन्दन की एक रात" का वेकार पात्र भूख और पेट से इतर शरीर की भूख पर जोरदार वहस करता है। "अन्तर" की नायिका गर्भपात के वाद मानसिक रूप से इतनी वोझमुक्त हो गयी है कि उसे लगता है कि वह वहुत हल्का महसूस रही है।

"धागे" में पात्रगत शून्यता वोध अनुभूति को वहुत अधिक गहराना चलता है। "दो घर" में एक हिन्दुस्तानी की आत्मकथा का अभिनव शिल्प में ऐसा चित्रण है जिसमें भीतर से वाहर तक एक व्यथित गूंज है।

कथा नियोजन का शिल्प निर्मल को वहुत अधिक भाया है। उन्होंने शिल्प की उस प्रयोगधर्मिता पर विचार किया है जिसमें व्यक्ति के विचार सूत्र साकार वन जाते है।

सशलिष्ट शिल्प के द्वारा कथ्य के रचाव में उन्होंने विलक्षणता ही एहसासी है। यद्यपि वहुत कुछ परिवेश एवं वैयक्तिक अवधारणा से कुछ नीरस वनता गया है, फिर भी यह सव अभिनव शिल्प की कसौटी पर कुछ नया लेकर ही गुजरता है। "पिछली गर्मियों में" कहानी का वह हिस्सा वहुत अधिक विचारणीय है, जिसमें कहानी का प्रारम्भ मन मस्तिष्क और पार्थिव शरीर की प्रकियाओ में एक जैसा गुंथ गया है। जैसे......वह दो सीढ़िया नीचे उतरा और अन्तिम सीढ़ी पर आकर ठिठक गया। पांव के अंगूठे से पानी को छुआ। एक गुनगनी सी झनझनाहट उसकी नंगी देह में फैलने लगी। एक आतुरता सी हुयी अपने को खुला छोड़ देने की, किन्तु उसने अपने को रोके रखा।"[1]

पात्र की मन अनुरूप उतार चढ़ाव की स्थिति जिस परिवेश के सापेक्ष दर्शायी गयी है, वह वहुत ही उवड़ - खावड़ है। उसके मन की दुविधा काफी हद तक उसे अशान्ति दे रही है। सीढ़ी पर उतरते - चढ़ते उसे अजीव सा तो लगता ही है साथ ही अन्तःहीन खुलापन वह महसूसने लगता है। वह भीतर ही भीतर खिंचा हुआ अजीव सा तनाव महसूस करता है, फिर जिजीविषा के वल पर धड़कते हुए दिल से आगे वह कुछ छूता ही चला जाता है। उसके मन का छितराया हुआ पीलापन धूप के उजालेपन में भी कुछ वदरंगा हो गया है जिससे भीतर ही भीतर वह घुलता हुआ चिन्तित मन को हवा में उड़ता हुआ देख रहा है।

यह कड़वाहट और मनहूस सा परिवेश उसे ठिठक जाने के लिये मजवूर करता है। वह अनमने भाव से ऐसे खड़ा रहता है, जैसे सामने का जमीन का टुकड़ा विलकुल अपरिचित और अंजाना है।

अभिनव शिल्प में आज विम्वात्मक शिल्प वहुत कुछ जोर दे रहा है। बिम्ब का निर्माण कल्पना के मूर्त होने पर होता है। विम्वों की आवृति जिस व्यंजना को जन्म देती है उसी से प्रतीक जन्म लेते है। प्रतीक में जातीय चेतना होती है ओर बिम्ब में व्यक्ति की चेतना।

1–पिछली गर्मियो में पृष्ठ 118

आज के कथा साहित्य में दोनों तरह के मूलसम्वेद कथ्य की स्पष्टता के लिए अनिवार्य हो गये है। सचमुच परिवेश का चित्रण पात्र मनःस्थिति ओर संवाद की उपयुक्तता के लिए कथाकार ने इन्हे अनिवार्यतः प्रयुक्त किया है।

निर्मल वर्मा ने अभिनव शिल्प में विम्ब के उन अर्थ विशेष से जुड़े आयामों को सुदूरता से पहचाना है जिनमें मन का ठहराव और देह में अजीव सी सिहरन एक विशेष हिस्सेदारी से रेंगने लगती है।

''वौने'' पात्र का व्यक्तित्व विविध धर्मी विम्ब विधान के यहां दृष्टव्य है. ....'' इतने वरसों वाद आज भी उसका चेहरा स्मृति पर टंगा रह गया है...एक पुरानी फोटो सा गंजा सिर, मोटे लाल होंठ और गोल-मटोल सी गर्दन.......... जैसे किसी ने दुनियां का ग्लोव दो लकड़ीनुमा टांगो पर टिका दिया हो। किन्तु जो चीज आज भी दिल को खोजती है...वह उसकी आंखे थी...दो छोटी - छोटी दीवो-सी टिमटिमाती हुयी भीतर के अंधेरे को अपने पीले आलोक में टोहती, पिघलाती हुयी। उसने कभी इतनी उदास आंखे नही देखी थी।''1

''इसमें मोटे लाल होठ, गोल मटोल सी गर्दन लकड़ीनुमा टागों छोटी-छोटी दीवो, पीले आलोक आदि ऐसे चित्रात्मक विम्ब है जिनके वीच दृश्यवोध के वहुत सारे दृश्य विट्टी के मन पर रेल की तरह गुजरते चले जाते है।

वोने का व्यक्त्वि आज की दुनियां की हवा में फंसा हुआ ऐसा भंवर है जो कभी इधर तो कभी उधर धीरे - धीरे चलता फिरता जाता है। उसका ठूठ जैसा सहज नुमाइश नुमा व्यवहार धुंध के उस पहिये को खींच रहा है जिसमें न गति है और भीतर की जलन। विट्टी अपने मन पर तारों की पीली छाह में गुजरते हुए, घिसटते हुये इस प्रकार के सन्नाटे को झेलती जा रही है।

'माया का मर्म'' कहानी में भी इसी प्रकार के ऐन्द्रिक दृश्य बोध को दर्शाया गया है। जैसे सपनों की वासी गन्ध मानों तितली के रंगीन परों से बूंद -बूंद ढुलककर विस्मृति की कब्रों पर उगी हुई पीली घास में खो गयी है।

यहां सपने, तितली के रंगीन पर कब्र, पीली घास, दृश्य विम्ब प्रस्तुत करते है।

वासी मे स्वाद विम्ब है, गन्ध में घ्राण, घास में स्पर्श और ढुलकन में श्रव्य विम्ब हैं।

इन विम्बों की आवृति मन में उतरती हुई उन तस्वीरों को पारदर्शी वनाती है जिनमें सारी सृष्टि समायी हुई है। यह भावनाओं की चित्रोपम पूंजी वही लेखक बटोर पाता है जिसे परिवेश की मनः स्थिति की मूर्त अमूर्त पहचान हो 'मेरे प्रिय कहानिया' 'संकलन मे दहलीज कहानी का यह एंन्द्रिक और परिज्ञानात्मक परिवेश सापेक्ष विम्ब विधान विचारणीय है.............''चारों और दूर - दूर तक भूरी सूखी मिट्टी के ऊंचे - नीचे टीलों और दूहों के बीच बेरों की झाड़ियां थी,''2

1–मेरी प्रिय कहानियाँ पृष्ठ 16 2–एक चिथड़ा सुख पृष्ठ 104

छोटी - छोटी चट्टानों के वीच सूखी घास उग आई थी, सड़ते हुए पीली पत्तों से एक अजीव नशीली सी वोझिल कसैली गन्ध आ रही थी।

धूप की मैली तहों पर विखरी - विखरी सी हवा थी।-२

परिवेशगत भूरी - सूखी मिट्टी का ऊंचा नीचा टीला, झाड़ियां, चट्टाने एक ओर जहां ऊवड़ - खावड़ जीवन का प्रतीकात्मक विम्व हो रही है वहां दूसरी ओर कसैली गन्ध, मैली तह, विखरी हवा, जीवन की द्वन्दपरक स्थिति का परिचायक वनकर विम्वायित हो रही है।

रूनी और शम्मी को इन सव में टेढ़ी - मेढ़ी आकृतियों तिरते हुए हवा को झोकों में दृष्टिगत होती हैं।

ऊवड़ - खावड़ धरती पर उनकी खामोश छायाएं ढलती हुई धुप में मिटने लगती है।

लाल भुरभुरे पत्तो को ओह में भूला हुआ सपना झांकने लगता है।

गुनगुनी सी सफेद हवा मन की दीवार को लांघकर वहुत दिन पहले सुने हुए मधुर स्वर की पुनरावृत्ति करने लगती है और वे शाम की धूप की तरह ढलता हुआ हल्का सा दर्द लेकर खड़े के खड़े रह जाते हैं ....आकाश के उस नीले टुकडे की तरहा जो आंसू के कतरे में ढरक कर उपस्थित हो गया है निर्मल वर्मा ने इतनी वडी आकांगा कहानी मे कथा का संयोजन ऐसे ही अभिनव शिल्प से चित्रित किया है जिसमें आधुनिकता का पूरा ही वोध है, किन्तु परम्परा में उन्हें वार वार धक्का देकर वैचेन वना दिया है।

इस कहानी को अभिनव शिल्प से इस तरह रोपा गया है कि पति पत्नी और एक अन्य पात्र तीवृ हो रही यौन आंकाक्षा को लेकर तडप रहे है।[1]

इसी वीच ठिगनी सांवली जिप्सी लड़की फौजी के साथ नाचकर यह सिद्ध करती है ।

कि आज का जीवन भी अभिनव प्रयोग की मांग करता है । निर्मल ने समग्रतः अभिनव शिल्प विधान के द्वारा ऐसे पात्रो की सृष्टि की है जिनके पैरो तले की जमीन ठोस होने के वावजूद भी मायावी ही है । जिसमें खोखली आकांक्षा अतृप्त अदम्य लालसा और यथार्थ भोगने की कामना जगह-जगह ठिठक गयी है।[2]

(च) जटिल मनोजगत को सूक्ष्म रूप से समझने तथा अभिव्यक्ति करने की क्षमता :-

कथाकार व्यक्ति के वाहय संसार की अपेक्षा आन्तरिक गहराई की ओर ज्यादा रूचि लेता है ।

सामान्य मानव की सामान्य परिस्थियों ही विभिन्न अवस्थाओं की ओर झुकती हुई बड़ी ही जटिल समस्या खड़ी कर देती है जिससे टेढ़े - मेढ़े अन्धकारपूर्ण कोने ही हर जगह दृष्टिगत होते है ।

१-आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान पृष्ठ २७३
२-एक चिथड़ा सुख पृष्ठ १६०

..............डॉ० देवराज ने कथा साहित्य के मनोविज्ञान में यह वात भली भाति विचारी है ....''कथाकार मानवीय प्रवृत्तियों को लेकर ही विश्व की परिक्रमा कर डाली जिससे मानव के हृदय और मस्तिष्क के अतल और संकीर्ण घेरे सामने आने लगे है।''-१

निर्मल वर्मा के उपन्यास पात्रगत जटिल मनः स्थिति को अभिव्यंजित करने में वहुत सफल हुए है

''एक चिथड़ा सुख'' में विट्टी की जटिल मनः स्थिति का चित्र दर्शनीय है।

देखे ....''विट्टी अपना वैग लेकर तैयार वैठी थी ।, उजली और साफ-लेकिन रक्तहीन । निती भाई की मृत्यु के वाद उस के चेहरा वरावर एक ठिठुरती हुई ठंड में जमा रहता है । न कोई भाव न भावहीन ....सिर्फ सख्त, सख्ती, जो सूख जाती है सूखकर एक चमक सी वन जाती है ।''-२

विट्टी की मनः स्थिति इस परिवेश में वहुत जटिल वन चुकी है। उसका मन भीतर वाहर वहुत भटक रहा है ।

उसकी देह में चमक तो है लेकिन वह निष्फल और तटस्थ है जो सिर्फ अपने से जोडती है।

विट्टी सरकती हुई जिदंगी को वडे उदास मन से देखती है । ऐसा उसके मन का रहस्य वन गया है जिसे न वह कह पाती है और न दिल से वुझा पाती है, वल्कि एक थकी मांदी औरत की भॅाति एक एक कदम घसीटती हुई जिन्दगी गुजार रही है । उसके भीतरी मन का धुंधला सा कुहासा वर्तमान को ढकता चला जा रहा है।

उसे धुएं में काले अक्षर जिन्दगी के ऐसे लगते है जैसे कुहासे में पेड़ फिसल रहे हो, घास हिल रही हो, झाडियों सरसरा रही है, और दुनिया की आंखें उसे घूर रही है।

बिट्टी की सारा दैहिक चेतना का रूप आधी कटी तस्वीर सा बना है जिसमें नीली तनी हुई नसें स्पष्ट दिखाई दे रही है । वह अपलक पांव और घुटने को समेटती हुई अपने को देखती रह जाती है ।

किसी भी जीते मनुष्य के चेहरे को ऐसा नही कहा जा सकता है । जैसा कि वेजान पत्थर सा चेहरा उसका था।

वह अपने आप में उलझन के धागों से विंधी हुई है। उसकी आंखें कभी कभार सन्नाटे में अपने आप को टटोल लेती है । वस मूडे पर वैठी हुई व्टिटी की सांस भर सुनायी देती है । और कुछ नही ।

इस प्रकार के मनोभूमि पर जीवन चरण को रखने वाला पात्र वर्मा ने ''लाल टीन की छत '' उपन्यास में भी देखा है ।

काया प्रवासी होकर अपने जीवन को वेहद एकांकी वना लेती है ।

काया धुंधलके का ऐसा वना चित्र है जिसमें न उत्साह की सांसों है और न ही आंखें की इच्छा भरी दृष्टि ।

काया सव कुछ अपने में ही समेट कर रक्तहीन विराम लगा देती है । उसने अंधेरे में ही अपने जीवन को गुजारने का निश्चय कर लिया है ।

वेहद जटिल मन स्थिति से काया का घर और दुनिया घिरी हुई है।

इसीलिये उसने स्मृति का वह हिस्सा मन में टांक लिया है जिसके सहारे रिरियाती आंखो से वह कुछ और आंकाक्षा भर पाती है ।

काया की मन स्थिति इतनी कुछ विचित्र वन गयी है कि वह पत्थरों पर चिपटकर आकाश को ताकती भर रह जाती है, इसीलिये परिवशगत अन्य पात्रों के साथ भी वह निराश और लापरवाह होती जा रही है ।

काया जिस मानसिकता को लेकर जी रही है वह सिर्फ उसके अपनेपन की भीतरी खोज है ।

उसने आज सारे जीवन की भंगिमा को अपने में ही समेटकर जीने का निश्चय किया है।

झूठी सच्ची वोझ भरी जिन्दगी से उसे भयानक पीड़ा का ही एहसास होता है।

वह परिवेश को झेलती हुई सोचती है..............मैं सांस लेने लगी जैसी पहली वार खुली, अन्तहीन हवा में सांस ले रही हूँ ....पक्षियों का रेला झाडियों से उपर उठा और रेल की पटरियों के साथ-साथ उडने लगा..........समूचे जंगल को अपने में समेटती हुई, एक अजीव सा आमन्त्रण जो सव कुछ घो डालता है, अपनी तरफ वुलाता है...........मैं नीचे उतरने लगी ।--1

इन पक्तियों में न कोई पीड़ा है और न कोई पछतावा अगर है तो सिर्फ भीतर का घिरता आकाश है जिस पर डरे हुए पंक्षियो का ववण्डर जो अपने भीतर एक अंधेरी फूटकार चेतना को प्रकट करता है ।

काया का यह दृश्य भयानक पीडा को तोडता हुआ उसमें रक्तिम ज्वार पैदा कर देता है

वह अपने आप में इतनी अधिक आतंकित गूंज महसूसने लगती है जिसके कारण इस प्रकार के असाधारण स्वप्नों में उसकी मानसिकता जी रही हैं ।

उसका मन मस्तिष्क वनैले जानवर की तरह वदहवास सा होकर चारो तरफ घूमता है, न वाहर आ पाता है और न भीतर ही रह पाता है ।

उसकी आंखों की कायरता पूर्ण वैचेनी सारे शरीर को झकझोर देती है और असर यहां तक होता है कि उसके भीतर का सव कुछ ठहर जाता है

फिर भी परिवेश के साथ सारा परिचित संसार उसके सामने भटकता रहता है ।

1—लाल टीन की छत पुष्ठ 196

ऐसी अवचेतनपूर्ण मनः स्थिति मे काया का सुदूर जीवन इतना कुछ विचित्र वन गया है कि वह न तो धरती पर ही है और न आकाश में ।

उपन्यासकार वर्मा नये-नये पात्रों के माध्यम से जीवनगत उन वारीकियों को पकड़ने का प्रयास करते है जिन्हे हर व्यक्ति कभी -न- कभी अजनवी मानकर जी लेता है । हर व्यक्ति की अपनी चाहत एक खालीपन समेटे हुए है और इस अनिश्चित मन से किसी -न- किसी ऐसे सिरे को पकड़कर जी रहा है जो कभी -न- कभी भीतर से वाहर तक आलोक ही आलोक भर देगा।

यद्यपि आज के व्यक्ति के भीतर का वेमानी स्वरूप नीरवता मे समाप्त होता जा रहा है, फिर भी वह अपने मन का कोलाहल कहीं खास जगह पर जाकर विस्फोटक वना ही देता है ।

'वे दिन' उपन्यास के कुछ पात्र ऐसे ही है जिन्हें उपन्यासकार ने जटिल मनः स्थितियों मे घिरा हुआ पाया हैं ।

मन का खालीपन कभी कभी ऐसी जगह की तलाश करता है जिसमे सिर्फ उत्तेजना होती है ।

व्यक्ति अथाह चिन्ता मे डूवा हुआ अपने आप को भूल चुका है ।

वियना के युद्ध परिवेश का स्मरण करती हुइ स्त्री पात्र सोचने लगती है--------

''क्या सोच रही हो ?''

वह चौक सी गयी । उसने मेरी ओर देखा .... मुझे लगा जैसे उसकी आंखे मेरे चेहरे को छू रही है...........

''कुछ नही ....मै उस आखिरी रिकार्ड के वारे मे सोच रही थी । ....उसने हंस कर कहा ।'' कैसे लगा तुम्हे ?''

''मैने उसे वरसों पहले सुना था ....उससे कहा ।

''वियना में 2''

वस्तुतः सोच मे व्यक्ति का मन अतीत के अंधेरे मे टिमटिमाते अक्षर खोजने लगता है और वह उन चीजो को उरेहने लगता है जहॉ पुरानी दीवारो की वास गन्ध जमा हो गयी है । वियना के उस दृश्य का स्त्री पात्र ने इतना कुछ ख्याल बना रखा है कि रिकार्ड के वारे मे वर्तमान को ठहरा लेती है और उसका सोच एकाएक चारो तरफ से ढीला पड जाता है फिर चारों ओर का परिवेश खाली खाली उजड़ सा ही अनुभव करती है ।

अतीत और वर्तमान के अन्तराल का वड़ी खामोशी से अनुशीलन करती हुइ वह निर्मल अपनी स्मृतियो को एक जगह ठहरा लेती है जैसे कि पानी के नीचे सुडौल चमकीले पत्थरो की तह जमीं हो ।

वर्मा ने इस रूखे ओर संघर्ष पूर्ण परिवेश का वहुत ही जटिल मनः स्थिति से नाता जोड़ा है ।

2–वे दिन पृष्ठ 138

उसी स्त्री को उस क्षण यह सोचना सम्भव लगा कि रायना और फ्रांज जैसे हजारों लोगों ने वियना लडाई के समय कभी जिन्दगी गुजारी होगी ।

वियना का सारा परिवेश उसके सामने एक भयावह दृश्य उपस्थित कर देता है ।

लेखक वड़े ही कौतुहल पूर्ण दृष्टि से उसके मन का सारा रहस्य पारदर्शी वना देता है।

यही उसके आधुनिकता वोधीय वोध का परिणाम है । जिसने ठंडे गरम सभी तरह के अजीव ढ़ूर से पात्रो के मन मे भीतर वैठे हुए देखे और समझे है ।

उपन्यासकार का वाहरी परिवेश इतना कुछ वहुयामी है कि वह चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग में स्त्री - पुरुष के सह - सम्बन्ध और उनकी मानसिकता को सहज में ही पहचान लेता है ।

कहानीकार निर्मल वर्मा ऐसे तमाम कथ्य कहानियों में लेकर चले है जिनमें पात्रगत संत्रास है, विडम्वना है, छटपटाहट है, जटिलता है और भयावहता है ।

"डायरी का खेल" की विट्टी आधी रात के समय ववलू के चेफ्त पर ले जाती है, पॉव के नीचे सूखे का ढेर चरमरा उठता है ।

नायक वव्वू इतना संत्रस्त है कि वह हल्के से पत्तो की चरमराहट की ध्वनि से सहम जाता है और फिर एक अपरिचित घनी शन्तिप्रिय छाया में अपने को वेगाना महसूसने लगता है।

वव्वू और विट्टी के वीच एक गर्म रिस्ता है फिर भी वव्वू एक शून्य दृष्टि लेकन अपनी आंखें दीवार पर जमाये उन क्षणो को गिनता रहता है जिनमें मात्र जिन्दगी के सूखें से शव्द है जिनका महत्व केवल इस रहस्य मे है जो शव्दातीत होते हुए भी अपनी महीन सी छाया पीछे छोड़ गये है ।

विट्टी वव्लू को याद दिलाती है................"ववबू, याद है तुमने कहा था, अगली गर्मियों मे शिमला चलेगें।

.......संग पहाडी पर चढते हुए घुर चारती तक जायेगे वहा जहां रूई के गालों से बादल से उड़ते है । -1

इन शव्दों को सुनकर वव्वू अजीव सा अज्ञात विस्मय लिये आखें फाडकर ही रह जाता है ।

कमरे के वुझते मैले प्रकाश में उनकी केवल सांस का प्रकम्पितस्वर शारावी के पैरो सा लडखडाता दृष्टिगत होता है ।

वह सोचने लगता है कि विट्टी को अखिर हो क्या गया है ।

वह एक विचित्र चमत्कार को उदघाटित क्यो करती है । विट्टो के शव्दातीत हो जाने पर आज वहीं वव्वू डायरी के पन्नों को लेकर ढेडेमेढे अक्षरों को पढ रहा है जो अब पुराना और पीला पड़ गया है।

1–परिन्दे पृष्ठ 29

याद करने पर विट्टो से जुडी कुछ वाते और कुछ घटनायें याद आती है।

वह सोचता है कि कुछ दिन, कुछ घड़ियाँ विखरे से क्षण जो उसने और विट्टो ने एक संग जिये थे, शेष रह गये है ।

इसीलिये उन अक्षरों में उसे खोजने की चेष्टा करना व्यर्थ है ।

लेखक ववूू के उस मन के कोने पर छितरायी हुई याद को देखा है जिसके भीतर स्मृति का लावा भीतर ही भीतर घुल रहा है।

सारा परिवेश अजीव मुतैली सी थकी थकी चाँदनी में गल रहा है।

विट्टो अपने सज्ञाहीन नही है जितना कि ववूू विचार शून्य वन गया है।

इस जटिल मन स्थिति का प्रकाशन करता हुआ कहानीकार यह सिद्ध कर देना चाहता है कि आज हर व्यक्ति अतीत के गड्ढे में रेत के घूमिल दूह को समेटे हुये है।

निर्मल की अधिकांश कहानियां जीवनगत संत्रास से घिरी हुई है ।

"लंदन की एक रात" में सत्रांस वेकारी का है। 'परिन्दे' का डा० दूसरे प्रकार का अस्यावदी संत्रास रखता है ।

'देहलीज की रूनी योवन के प्रथम योनाकर्षण और पराजय के कारण मृत्यू की कामना करती है 'अंधेरे में' वच्ची का अन्धविश्वास है जिनके कान छोटे होते है वे जल्दी मर जाते है ।

"सितम्वर की एक शाम" में वेकारी और भूख का संत्रास है ।

इसी प्रकार "अमालिया" जलती झाड़ी, 'माया दर्पण' आदि कहानियां भी तरह तरह के संत्रास भोग रही 'अन्तर' कहानी का नायक परिवेशगत संत्रास से दुखी है दहलीज के शम्मी भाई अतीत के संत्रास से चिपटे हुए है । देखें................आज इतने वर्षो वाद भी जव उसे शम्मी भाई के दिये हुए अजीव गरीव नाम याद आते है तो हंसी आये विना नहीं रहती ।

उनकी नौकरानी मेहरू के नाम को चार चांद लगाकर शम्मी भाई पे उसे कव सदियों पहले की सुकुमार शाहजादी मेहरून्निसा बना दिया है कोई नही जानता ।"[1]

शम्मी भाई वड़े ही विस्मय के प्राणी है।

उनके द्वारा दिये गये नाम पहले वर्षो वाद भी, लान की घास और वंगले से लिपटी वेल लताओं की तरह चिन्तन और अमर है।

उनके और नेहरू के वीच जान पहचान इतनी पुरानी है कि अपने पराये का अन्तर वीच में नही फटकता ।

शम्मी भाई की यह अजीव सी मायावी रहस्य वादिता वहुत ही झिलमिल और स्वपनवत है।

1–जलती झाड़ी पृष्ठ 89

यधपि उनकी जटिल मानसिकता ने एक डरावनी गंध फैला रखी है जिससे उनके शरीर क एक एक गाठ खुलती जा रही है, मन रूक जाता है धडकने वढ जाती हैऔर सारे संज्ञा रूप सुनकर सिर चकराने लगता है।फिर भी इन सवके वावजूद शम्मी भाई की ऐसी कुछ जटिल विशेषाता है जिससे उनको सुनकर मीठी मी ठी सुइयॉं चूमने लगती है और मेहरूनिशा के मन का उतसाह वढाने लगती है।

कहानीकार इसी प्रकार इतनी वड़ी आकाक्षा में टेलीविजन के जासूसी ड्रामे द्धारा संत्रास के अनुभूति को गहराता है जिसमें नंगी गली में मांग रही अकेली छोटी लडकी होती है।

'एक शुरूआत का पात्र इतनी जटिल मानसिकता को ओढ़ लेता है कि वह वेल्जियम के सेनिटोरियिम में रहते-रहते इतना अधिक अभ्यस्त हो गया है कि हर वार घर के लिए चैनल पार करते हुए उसे लगता हैं यह उसका आखिरी वार जाना है।

उसके मन की निराशा इतनी अधिक संत्रस वना देती है कि वह सोच ही नही पाता है कि आदमी जीता क्यों हैं इसी प्रकार 'कुत्ते की मौत ' में लूसी रात के समय मृत्यू और पीडा से चिल्लाती रहती है।

'लवर्स' में पतझड की शाम के कहानी के नायक को एकदम वदल दिया है।

'धूप का एक टुकडा' कहानी के स्त्री पात्र तो वहुत ही विचित्र मना स्थिति में जी रहे है।

वह धूप के खातिर एक वैच पर आकर वैठ जाती हैं और अपने विवाह से अनुरूप ही सूनी आखों से उस गिरजे को ताकती रहती है जहां से लोग जिन्दगी की शुरूआत करते है।

वह कहती है.................कभी-कभी तो यह भ्रम होता है कि १५ साल पहले मेरे विवाह के मौके पर जो लोग जमा हुए थे, वही लोग आज भी है,

......................मेरा विवाह भी इसी गिरजे में हुआ था ....सड़क के दोनो तरफ लोग खड़े थे और मेरा दिल धुक-धुक कर रहा था कि वहीं सबके सामने मेरा पांव न फिसल पड़े -१

यह स्त्री परम्परा पर एक वहुत वड़ा व्यंग करती हुई परम्परावादी जटिल मानसिकता को उभाड़ती है और कहने लगती है कि आदमियों की वात तो मैं नही जानती लेकिन मैं कह सकती हूँ कि वह घोड़ा मुझे जरूर पहचान लेगा जो उस दिन हमें खींच कर लाया था।

आदमी तो अलगाव वादी हो गये हैं। इसलिये इस धूप के टुकड़े से मुझे लगाव है

1–कौवे और काला पानी पृष्ट 12

जब हम किसी चीज को बहुत चाहने लगते है तो न केवल वर्तमान में उसके साथ रहना चाहते है, बल्कि उसके अतीत को निगलना चाहते है जो कभी हमारे साथ रहा था। वह स्त्री भीतर ही भीतर इतनी जटिल मानसिकता की शिकार हो गयी कि बरसों पहले की गूंज उसके अंगो से लिपटकर उसकी आत्मा मे बैठ गयी हैं । वह उसी तरह गिरजेघर को ऑखों से टोहती है, जैसे कुछ लोग पुराने खण्डहरों पर अपने नाम खोजते हैं जो मुद्दत पहले उन्होनें दीवारो पर लिखे थे।

मन का यह व्यग्र रूप अतीत जीवी जटिल मानसिकता का उदाहरण है ।

ऐसे बहुत सारे उदाहरण निर्मल की अन्य कहानियो में भी देखने को मिलेंगें ।

अमृतराय ने ऐसी जटिल मानसिकता का संत्रास प्रकट करते हुए एक जगह लिखा है-------संत्रास एकांत, भय की स्थिति है, सुन्न हो जाने की स्थिति है।[1]

दिशाहारा होकर प्राणभय से कहीं किसी कोने मे छिपकर बैठने की स्थिति है।''?

दरअसल आज का लेखक जीवनगत जटिल मानसिकता की कहानी लिख रहा है। पहले लेखक का कहानी से पड़ोसी या दोस्त का रिश्ता था लेकिन अब वह जीवन के उस आयाम को पढ़ना चाहता है जिसमें व्यक्ति की प्राकृतिक मौत ना होकर मानसिक मौत हो चुकी है।

प्राकृतिक मौत तो अनिवार्य होती है जिसका डर प्रायः किसी को नहीं होता लेकिन दूसरे प्रकार की मौत जिसे मानसिक मौत कहा जाता है, आज की पीढ़ी उस मौत को वरण करती जा रही है।

इसी मौत के कारण आधुनिक पीढ़ी संत्रास और यातना का अनुभव कर रही है जिससे वह बेहूदी जिन्दगी व्यतीत करने के लिए मजबूर है।

जीवन का सम्बंध केवल कल्पना और भयप्रद है। मनुष्य-मनुष्य के बीच संदेह ने स्थायित्व पैदा कर दिया है ।

प्यार, सदभाव तो तीखे कांटे की तरह चुभने लगा है ।

आज का व्यक्ति मृत्यु भय से आधुनिकता बोधीय चौखटों में जकड़ गया है, ना उसके जीवन में उत्साह है न उल्लास, फिर जीने की भरपूर लालसा के कारण वह प्रणय निवेदन का ढ़ोंग करता है । श्रीपत राय ने निर्मल की 'अंतर और धांगे' कहानी पढकर व्यक्ति के व्यक्ति से सम्बंधों के स्तर पर यही बात दोहरायी थी। उनका कहना है कि संत्रास नयी संवेदना से प्राप्त ऐसा कसैला विष है जो व्यक्ति को आहत करता है, मूर्छित करता है, और हतसंज्ञ भी करता है ।

यही आहट, मूर्छित और हतसंज्ञ व्यक्ति निर्मल की ''धागे'' कहानी मे मिलता है।?

इस कहानी के पति के० सी० को रिकार्डो के कारण रात भर नींद नही आती इसलिए उसने ग्रामोफोन लाइब्रेरी में रखवा दिया है ।[2]

मीनू को पति का पीना अच्छा नही लगता और के० सी० पिये बिना नही रह सकता।

१-विकल नवम्बर १९६८ २-पिछली गर्मियो में पृष्ठ ९

इसलिए के० सी० की आंखे भावहीन पथरीली हो गयी हैं। सम्बंधो की टूटन ने उन्हें अलग-अलग कर दिया है, देखें..........''मुझे तो रात को नींद नही आती''.........के०सी० दूसरे कमरे में है.........मीनू ने दरवाजा खोलकर पर्दा उठा दिया।

वरामदे के परे लान अंधेरे में डूवा था।

एक अपरिचित घनी-सी शान्ति सारे अहाते में फैली थी। १

'खोज' में एक वर्ष पश्चात वड़ी वहन छोटी वहन के यहां लौटती है और वह छोटी वहन से पूंछती है कि क्या तुम हर रात इन चीजों के वीच सो सकती हो, जो कभी दूसरे की थी । पुतुल जिस विस्तर पर सोता था, वहां एक वाल पड़ा है और यहां से ही मन की जटिलता शुरू होती है।

उन्हें लगता है कि उनके सामने सॉप का स्तव्ध स्थिर फन खड़ा है।

जरा सा हिलने से पलंग चरमराता है और दोनो वहिने चौक पड़ती है। हवा के थपेड़े दरवाजा खटखटाकर उन्हे संत्रस्त कर देते है और विन्नो झपट कर वड़ी वहन का हाथ पकड़ लेती है । जटिल मानसिकता अनिष्ट की आशंका से उद्भूत भावनाओ का संकोचन है, जो आत्मनिष्ठता में घुमड़न, तनाव, भय ओर असंतोष सहेजे है।

मूलतः मानव अस्तित्व को प्रत्येक क्षण चुनौती देता, अस्तित्व भय ही संत्रास की स्थिति का मूल कारण है।

यह संत्रास व्यक्ति के अंतर के सूक्ष्म पटों को वेधता हुआ उसे विक्षिप्त, संवेदना शून्य, जड़ एवं निसंग करता जा रहा है इसके मूल्य में पूंजी, संगठन तथा युद्ध जनित आर्थिक-सामाजिक-राजनैतिक पहलू ही नही वल्कि यांत्रिकी ओर विषम परिवेश सापेक्ष भविष्य की अनिश्चतता भी है यही व्यक्ति के चारो ओर मंडराने वाला ऐसा संकट है जिसे मानसिक जटिलता के नाम से जाना जाता है।

योगेन्द्र शाही ने संत्रास ओर आज के अस्तित्व पर विचार करते हुए लिखा है कि .... संत्रास भय नही है, बल्कि निश्चित विपद की आशंका से भी दूर की चीज है। 2

भय से, वीमारी, वेकारी से वचाव किया जा सकता है लेकिन संत्रास तो ऐसा भाव है जो हमे चारो ओर से घेरता है इसका ना वचाव है ओर न छिपाव। ''?

वस्तुतः संत्रास में सुखद वातावरण तिरोहित हो जाता है।

अपने ओर संसार के बीच एक परदा पड़ जाता है।

एकाकीपन घर कर लेता है और लगताा है कि अंजान और संप्रवत वस्तुओ ने उसे घेर लिया है।

निर्मल की अनेक कहानियां इस मानवीय नियति का पर्दाफाश करती है। आज की जटिल मानसिकता को ढोने वाली इन कहानियों में वहुत कुछ यथार्थवोध किया जा सकता है।

१-अस्तित्ववाद, पृष्ठ ८२ २-जलती झाड़ी पृष्ठ ३१

''छुटिटयों के वाद'' और ''वीक एण्ड'' की नायिकायें देह की चाहना में डूबकर अपनी जटिल मानसिकता को नया रूप दे रही हैं ।

''अमालिया'' का नायक अजनवी शहर के अंधेरे में सीलन भरे विस्तरों की दुर्गंध को झेल रहा हैं

पराये शहर में ' वैश्याओ की दरिद्रता पर एक जटिल मानसिक पथराया हुआ भावहीन प्रभाव है।

व्यक्ति जव तक पुराने संसार में नही लौट पाता तव तव वह नये संसार को गढ़ता चला जाता है।

जिंदगी के हाथों से फिसलने एवं स्वतंत्र चयन के निशेध ने व्यक्ति को अतीत, वर्तमान एवं भविष्य की शून्यता प्रदान की है।

वेकारी, वुढ़ापा, रूढता, प्रेम आदि भिन्न स्थितियों ने मनुष्य के जीवन को दुरूह वना दिया है।

''मायाादर्पण'' की तरन वुआ की आंखो से ओझल हो जाना चाहती है।

वह दीवान साहव की छाया को भी अव कसैले रस जैसे स्वाद में महसूसती है।

वह सोचती है कि उसके मन की रूखी सी रिक्तिता वुआ जी ओर वावू जी के मध्य विरक्ति का कारण वनी है। तो सारी देह में झुरझुरी सी दौड़ जाती है-?

तरन की यह जटिल मानसिकता आंखें फाड़ते हुए अंधेरे में धुऐ की काली छाया देखती रहती है।

उसके स्वर में एक अजीव सा खोखलापन उभर आता है और उसकी समझ में नही आता कि उसे क्या करना चाहिये, क्या नही।

उससे सव कछ कितना दूर होता चला जा रहा है जिसे वर्षो से अपना कहती रही है।

तरन के दिल ओर दिमाग में वर्तमान की मटियाली धूप की तरह जम गयी है। इसलिए वह अपने जीवन की उॅची नीची रेखाओं को साफ-साफ नही देख पाती।

चेहरे की असंख्य उदास झुर्रियां यह सव वता देने में समर्थ है कि तरन दूर दूर तक फीकी सी चांदनी की लय मात्र रह गयी है।

उसके मन में एक भयावह विचार रेंगता रहता है।

कहानीकार वर्मा ने ऐस ही संन्नाटों में सिहरते पात्रो को वहुत कुछ समाकलित किया है।

'वीच वहस में' वाप वेटे की वातचीत भी जटिल मानसिकता का प्रतीक है।

अजनबीपन और नियति पर विचार करते हुए निर्मल ने रूमानियत को भी जटिल मानसिकता के साथ ही आड़े हाथो लिया है।

"अन्तर" कहानी के सभी पात्र शराब पीते है। ':खोज' लड़की पात्र विहस्की पीती है। "अमालिया" का अरब पीने के बाद सीटी बजाता है। यह सब जटिल मानकिता शराब पीने के बाद यौन आमंत्रण का परिचायक है,जिसे हम किसी उजाड़ सूने व्यक्तित्व मे भली भाँति देख सकते है।

(छ)-अंग्रेजी वाक्य विन्यास का प्रभाव :-

कथ्यगत विदेशी प्रभाव निर्मल के रूमानी कहानीकार का स्वरूप पारंपरिक रूमानियत से भिन्न कर देता है। और उसी तथ्य के अनुरूप ही भाषागत विदेशी प्रभाव कहानीकार के स्वरूप का अलग ही चित्रण करता है।

निर्मल पर पड़े विदेशी प्रभाव भाषागत एवं कथ्यगत स्तरो को देखते हुए दो प्रकार के है।

पहला वह जिनमें उसने विदेशी विचारको का जैसे किर्क गार्द, नित्से, कोक्का, सात्र, कामु आदि का वैचारिक स्तर का प्रभाव है जिसे अभिव्यक्ति देने के लिए अंग्रेजीवाक्य विन्यास का प्रश्य ग्रहण करना ही पड़ता है और दूसरा उस स्तर का प्रभाव है जिसमें लेखक की पृष्ठभूमि सारी विदेशी ही रही है।

डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय निर्मल की गणना उन भारतीय लेखको में करते है जो अपनी प्रेरणा के श्रोत विदेशो में खोजते है भारतीय जीवन पद्धति जिनके लिए नगण्य एवं उपेक्षणीय है। तथा जिन्हे अपने को भारतीय कहने में संकोच होता है, क्योकि भारतीय लोग प्रागवासियो की तरह आधुनिक नही होते। -१

ओर लगता है कि गणपति चन्द्र गुप्त भी अंग्रेजी वाक्य विन्यास के प्रभाव के कारण निर्मल को प्रवासीय लेखक ही समझ पाते है। इसीलिए उन्होने परोक्ष रूप से यह कहा है ,........"विषय वस्तु की दृष्टि से तथाकथित नयी कहानी एक ऐसे वर्ग के कहानीकारो के व्यक्तित्व, चरित्र एवं जीवन दर्शन का प्रतिनिधित्व करती है। .... जिनका आदर्श सम्त और कामु है, जो रहते है भारत में किन्तु "लन्दन की एक रात" या पेरिस के मध्यान को लेते है"-२

कुछ भी हो निर्मल ने सहज मानवीय अभिव्यक्ति जनभाषा के माध्यमसे की है। जिसमें अंग्रेजी भी है, फारसी भी है और हिन्दी तो है ही।

उनका कथ्यानुरूप गति को अपनाने में सिद्ध रहा है।

इसीलिए अंग्रेजी का पुट जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रवृत्ति का द्योतक है तथा फारसी शब्दावली हिन्दुस्तानी की प्रतिछाया को ग्रहीत करता हैं और हिन्दी के जनसामान्य शब्द उन अर्थगर्भित भावनाओं को उड़ेलते है जिनमें चेतन प्रवाह बहुत ही पारदर्शी रूप से प्रकट होता चला है।

१-आधुनिक हिन्दी कहानी का परिपार्श्व पृष्ठ १४३ २ हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास पृ० ९७१

इन मान्यताओं के घेरे में हम कह सकते है कि निर्मल का भाषा सम्वंधी कोई एक भाषा के प्रति पूर्वाग्रह नही था।

उन्होंने तो अमूर्तभावो को मूर्तिरूप में प्रगट करने के लिए किसी भी भाषा से कहलवा ही दिया है।

कथ्य के अनुरूप भाषा के प्रयोग से अनुभूति ओर भाषा की अभिन्नता स्पष्ट होती गयी है।

उन्होने ने यदि कही भी शुद्धतावादी आग्रह छोडा भी है तो इसलिये शब्दों को एक कृत्रिम अर्थवक्ता देने की वजाय जनसामान्य वनाने के लिए।

उन्होने वहुत सारे चलते फिरते शब्दो को विन्यस्त करते हुए जमीन के आदमी से जोड़ा है।

जव कभी हम उनके भाषा समवंधी प्रयोग धर्म पर विचार करते है तो एक ही वार कौंधती है, कि वे कथ्य पर जोर देते हुए भाषा से वरवस कहलवा ही लिया करते थे।

अंग्रेजी वाक्य विन्यास का प्रयोग उनकी दृष्टि में आज की आधुनिकता से सटा हुआ है। उसे वे कैसे छोड़ सकते थे। क्योकि उन्होने तो उन्ही भावो के दीप जलाना मंजूर किया था जिसमें परिवेश और परिस्थिति का आंकलन था।

निर्मल के उपन्यासो में अंग्रेजी वाक्य विन्यास का सीधा तो नही लेकिन परोक्ष रूप से वुहत कुछ प्रयोग है।

"वें दिन" उपन्यास मे क्रिसमिस टूरिस्ट के वारे में सोचते हुए एक जगह लिखा है.........

"क्या तुम इण्टरप्रेट कर सकती हो-चैक से अंग्रेजी में[1]"

"क्या वे अंग्रेज है"

नही ....है तो आस्ट्रियन, लेकिन उन्हें तो काम चलाऊ अंग्रेजी आती है। तुम्हे मुश्किल नही पड़ेगी।"

"मुझे इसका कोई अनुभव नही है," मैने कहा।

"नही है,तो हो जायेगा.......वैसे ज्यादा काम इण्टरप्रेटेशन का नही है तुम्हे कुछ दिन उनके साथ रहना होगा।?

इस उदाहरण में दो वाते स्पष्ट है पहली यह कि चैक से अंग्रेजी में व्याख्या कराने की अनिवार्यता पर अहसास कराया गया है और दूसरी वह जिसमें अंग्रेजी श ब्द का वेहतरीन प्रयोग है,जैसे इण्टरप्रेट।

वस्तुतः यह सव अपने आप मे कुछ वजनदार है,आकर्षक है, गम्भीर है मनःस्थिति का परिचायक है।

व्यक्ति रहस्य का प्रकाशन है और परस्पर मिलने जुलने का साधन साध्य भी है।

१-वे दिन पृष्ठ १७

कथाकार भाषागत विवाद में न पड़कर सिर्फ दूरी को वांधे जाने वाली आत्मीयता का हिमायती है जो इण्टरप्रटेशन के माध्यम से एक रूप हो सकती है।

टूरिस्टो के साथ इण्टरप्रटेशन की सम्भावना से इनकार नही किया जा सकता है।

यदि इस शव्द के स्थान पर कोई अन्य शव्द का प्रयोग कथाकार करता है तो निश्चित मानिये उसका प्रभाव यह ना होता। जो "वे दिन" उपन्यास के पूर्वार्द्ध भाग में कथ्यानुरूप चिंतन को आगे वढ़ाने में हुआ है।

कथाकार अंग्रेजी का समर्थक नही है वह परिवेशगत या परिस्थितियो जनति मनःस्थिति का अध्येता है। इसी तथ्य को इसी उपन्यास में उसने कह भी दिया है. ....सो इट इज फिक्सड।।

अंग्रेजी वोलने का मौका वह हाथ से नही जाने देता था......युद्ध के दौरान वह लंदन मे रहा था। [1]

उपन्यासकार ने आदमी की करीवी जमीन को तोड़कर उन निरंतर मंडराते भावो का परिशीलन किया है जिनमें निजता की पकड़ है ओर आगे पीछे की परछाइयाँ है।

अंग्रेजी के दिलचस्प प्रयोग से वह स्कालर का दावा नही करता बल्कि उस कथ्यानुरूप चिंतन को आत्मसात करता चलता है जिसमें शव्दो का संत्रास वेग व्यक्ति के पीछे पड़ा हुआ है।

एक चिथड़ा सुख" उपन्यास में कथानक का धरातल कितना ही क्यो न भारतीय हो, फिर भी विटटी जैसे पात्र के तल्लीन मन को अंग्रेजी वाक्य नें सस्पर्श करके उसके अंदर की गहरायी को उछाल ही दिया है देखे.......

"विल यू लैट मी गो"

किससे पूछ रही है- कौन है वहां? क्या यह उसका पार्ट है, रिर्हसल का एक टुकड़ा है?[2]

दरअसल परिवेश की सारी जिज्ञासा अंग्रेजी के ही एक बाक्य में उभरकर सामने आ गयी है।

बिट्‌टी का अंदर का सारा इजहार आइना वनकर प्रतिविम्वित हो गया है।

वह स्तव्ध भावो से घनी अनुभूति को हथेली पर रखकर मानो सव कुछ दिखा देना चाहती है।

इस बाक्य ने उसकी अभिव्यक्ति को डवडवाते हुए सूरज की छाया की तरह कुछ अभास दिला दिया है, बल्कि यू कहें कि इस चमकीली फुसफुसाहट [3]

१-वही, पृष्ठ-१६ २-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ ७८
३-वही. पृष्ठ ७९

भाषा का अभिव्यक्ति जनित स्वरूप तभी चिंतन को नये आयाम प्रदान करता है जब उससे आकांक्षा और आसती हो।[1]

यदि किसी वाक्य विन्यास को आश्रित रहित प्रयोग में लाया जाये तो न उसकी सार्थकता ही है ओर न सफलता । निर्मल अपनी इस दृष्टि से अपने तीनो उपन्यासो में वहुत सफल रहे है। उनकी सुधात्मक भाषा अंग्रेजी के वाक्यो में इस तरह पिरोयी गयी है कि उसे कथ्य और कथ्यगत आवरण मे अलग अलग नही देखा जा सकता।

छोटे-छोटे अंग्रेजी के वाक्य इसीलिए उनके उपन्यासकार के मर्म और अनुभूत सत्य को उजागर करते है।

निर्मल की कहानियों में अंग्रेजी भाषा के वैज्ञानिक अनुशीलन को हम अध्ययन की सुविधा के लिए पांच आयाम दे सकते है ।[2]

१-अंग्रेजी शब्दो का उपयोग
२-अंग्रेजी वाक्यो का प्रयोग
३-अंग्रेजी गीतो का प्रयोग
४-हिन्दी वाक्यो का अंग्रेजीकरण
५-अंग्रेजी शबदो का हिन्दीकरण

अंग्रेजी शब्द उनकी कहानियो में नगरो के नामो, पात्रो के नामो, और पद पदाथै के नामो मे प्रयुक्त हुए है जैसे प्राग, वैनेस, जनमन ,वांसल ,वर्लिन, स्क्वायर, पव, बार, टैरिस, कारीडोर, पवेलियन, चयनल, मिस्टी, स्टीमर, आकेष्टा, रेस्तरा, चैपल, पोर्च, सैण्डविच, लाइव्रेरी, मैटर्न, किण्डरगार्टन, लेन, मेनगेट, स्कोच, कैण्टीन, ड्राइवर, कालर बोन, सैण्डविचेज, वर्जिन, पिक्चर, एयर कंडीशन, पोसटर, कम्पटीशन, ओवरएज, बैकेन्सीज, आफर, एफेयर, गिलेल, टाइम्स, लवर्स, बदर्स, कनाटपैलेश, एवीरियस, यूनीबर्सिटी, जैवर्स, ब्लीयर्ड, टेबिल लैम्पट आदि कहानीकार ने अंग्रेजी शब्दो को जहां एक ओर गद्य शैली में अपनाया है वही दूसरी ओर अंग्रेजी के वाक्य पूरी तरह से अभिव्यंजना में प्रयुक्त किये है।''

हाऊ बण्डरफुल सीडी !'' निक्की ने हंसते हुए सीडी के कंधे झिझोड दिये सीडी लैस अस सैलीब्रेट टू नाइट।''?[3]

\+ + + + + + + + +

''इन ए वैक लेन ऑफ दा सिटी, देयर इस ए गर्ल, हू लव्ज मी, हयूवर्ट हिचकियो के बीच गुनगुना उठता था-२

\+ + + + + + + + +

मैं बी..........ए गिफ्ट।

उसकी आवाज एक दम तरल सी हो आयी थी । .... जैसे घूंट के साथ भीतर की कोई कड़ी पथरीली चीज घुल जाती हो''--4

१-परिन्दे पृश्ठ १०९ २-मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ ५७
३-पिछली गर्मियो में पृष्ठ ५५ ४-जलती झाड़ी पृष्ठ १५

ाट विल यू हैव, सनी ?

....

ओ शट अप ?

वॉन्ट यू सिट डाउन''-

कहानीकार ने वहुत सारे अंग्रेजी के वाक्य पात्रो की मनःस्थिति के अनुरूप जगह-जगह अभिव्यक्त किये है। जैसे परिन्दे कहानी में.........जीसस सैड, आई एम दा लाइट ऑफ दा वर्ड, ही दैट फालो एट मी शैल नोट वॉक इन डार्कनेस, वट, शैल ही हैव दा लाइट ऑफ लाइफ.......................... ....।

'एक शुरूआत' में- देयर इस डैथ इन इयर आल एराउण्ड ....टेरर-टेरर आफ एन लाइटमैन्ट।

'बीच बहस में' -आई एम वेथलैस

...............लुक डोन्ट रन । माई वेथ । इट इज रनिंग आउट........इट इन कम्स एण्ड गोज।[1]

इन ढेर सारे वाक्यो में कहानीकार उन जीवनगत अनुभवो को व्यक्त करना चाहता है जिनमें धरती की सौंधी गंध है वातावरण की संस्लिष्टी और व्यस्त जीवन की अन्तः तलाश है।।

वस्तुतः विचारधारा और साहित्य का अंतः संवंध भाषा के परिधान से प्रगट होता चलता है।

पात्रगत विभिन्न छवियो, विभिन्न मुद्राये और विभिन्न रंग उपयुक्त अंग्रेजी के वाक्यो में भिन्न-भिन्न पहलुओ को समाहित किये हुए है। आज अनुभव के लिए किसी खास भाषा की तलाश नही होती वल्कि उपयुक्त उदाहरणो में पात्रो ने स्वयं के अनुभवो से अपने अनुरूप भाषा को साधन मान लिया है।

वर्मा ऐसे कहानीकार है जिन्होने भावानुकूल और जीवन परक सूत्रो में भाषा को विराम चिन्हे दिये है।

इसीलिए यंत्र तत्र अंग्रेजी के छिटके हुए वाक्य यह स्पष्ट करते है कि अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर व्यक्तिके मन में उपजा हुआ विचार तात्कालीनकिसी की भाषा को पकडकर प्रकट हो सकता है। निर्मल की ढेर सारी कहानियां इसीलिए व्यक्ति के इतने निकट आ गयी है, क्योकि उनमें बनावटीपन छूटता चला गया है, यद्यपि फालतू व्योरे से बचते हुए उन्होने सहज सपाट भाषा को कहीं-कहीं अकारण ही अंग्रेजी वाक्यो में गूंथ दिया है। उपर्युक्त उदाहरणो में यह तथ्य भी झलकता है। कही-कही भाषा का रूखापन भी इतना अधिक ही बिखर गया है।

जहां प्लीज-प्लीज-प्लीज कहकर पात्रगत मन सापेक्ष सौन्दर्य को दया की पात्रता ही प्रदान कर दी है।

१-परिन्दे पृठ १०७

ने उसको चेहरे को सहला दिया है इसीलिए उस परिवेश मे उसका माथा चमक रहा था, चेहरे पर एक पीली सी शान्ति थी, ओर एक तन्मय सी तल्लीनता। जो किसी अदृश्य आवाज को सुनने में उखड़ आयी थी। भले ही वह अपने से बोल रही थी, लेकिन यह वोलना भी किसी से आदेश की कामना करता है।

पेड़, घास, झाड़िया सभी तो है।

इसीलिए व्यक्ति के बाहर की दुनियां भी वक्ता से अपने भीतर से कुछ उगलवा लेने के लिए मजबूर करती है।

बिटटी इसी तथ्य को आगे स्पष्ट कर देती है......हम अभी आते है......सिर्फ लास्ट एक्ट वाकी है ।''

बिट्टी ने कहा''

''लालटीन की छत'' उपन्यास का एक परिवेशात्मक चित्र अंग्रेजी वाक्य प्रयोग से कितना कुछ पारदर्शी वन जाता है।

देखे.......''अचानक पाव ठिठक गये।

रास्ता बंट गया था........एक ऊपर को जाता था , दूसरा नीचे, बीच में एक पुराना घिसा-पिटा बोर्ड लगा था.......टू दा फाल्स'' पता नही किस तरफ इशारा करता था। -1

उपन्यासकार निर्मल ने नगरों, महानगरो, देश-विदेश के सांस्कृतिक स्थलो में रहने वाले वासियो और प्रवासियो का निरूपण करने में अंग्रेजी वाक्य का ही प्रश्रय ग्रहण किया है अंग्रेजीकरण की प्रकिया से परिवेश का उभरा हुआ स्वरूप पाठक के मन मस्तिष्क पर एक बार मैं ही बिम्ब वना देता है। कथाकार की भाषा का यह प्रयोग इस तथ्य को सूचित करता है कि वह हिन्दी ओर हिन्दुस्तानी के विवाद से उपर उठकर अंतर्राष्ट्रीय वैचारिक अवधारणा को समेटने में सिद्ध है। इसीलिए उनके छोटे-छोटे अंग्रेजी के बाक्य जहां एक ओर परिवेश धर्म का इजहार करते है। वही दूसरी ओर मन पर जमी उन परतो को उखाडते है जिनसे पद- पदार्थ का सम्बंध भली-भॉति पहचाना जा सकता है।

दरअसल आज जरूरत इस बात की है कि भाषा वह प्रयोग में लायी जाये जिसमें सम्प्रेषणीयता हो।

वार-वार इस तथ्य को नकार कर कृत्रिमता से वोझिल भाषा को अपनाने वाले लेखक जन जन के बीच दूरी कायम कर देते है।

निर्मल इस बात से बहुत सजग है। इसीलिए उन्होंने पात्रगत चरित्र एवं परिवेशगत चित्रण दोनो को ही ऐसी मिटटी से मूर्तमान किया है, जिसमें अपनी गंध है, अपना सोच है, औैर अपना सौन्दर्य है। यह वात वहुत चरितार्थ है कि व्यक्ति की अपनी मौलिक सोच चलती फिरती निजी भाषा मे ही उदभाषित कर पाता है फिर चाहे वह अंग्रेजी हो या हिन्दी।

१-लाल टीन की छत, पृष्ठ १७०

एक बात ओर अनुशीलन करने योग्य है कि उन्होनें कहानियों के नाम बड़ी ही विचित्र शब्दावली में प्रयुक्त करके भाषा का सुनहरा रंग भरकर अंग्रेजियत का परिचय दिया है जैसे ''लवर्स, वीक एण्ड, पिक्चर, पोस्टकार्ड'' आदि।

इन कहानी शीर्षको से पाठको के मन पर एक वाक्य क्या सारी शैलीगत विनयस्तता उभर तो आती है लेकिन आज भी सारा पाठक वर्ग लवर्स, बीक एण्ड शब्दो से नहीं जुड़ा हैं।

इसलिए उनकी बहुत सारी कहानियां कहीं-कहीं जन सामान्य से कुछ हटती हुई जान पड़ती है।

अंगेजी वाक्य विन्यास का जहां निर्मल वर्मा ने अपनी कहानियो में प्रयोग धर्म का निर्वाह किया है ,वहां अंग्रेजी गीत भी कहानियो में यत्र तत्र देखने को मिल जाते है जैसे.............

''थी काइंज इन दा फाण्उटेन''........ ....मैने कहा ॥

आज वह रिकार्ड बजाओगे?''उसने कहा-?

--- ---

कमरे में चाय की दुकान जाते हुए, ग्रामोफोन पर रिकार्ड सुने थे वह सड़क के बीचों बीच ठिठक कर खड़ा हो गया..........''वाई डॉन्ट यू विलीव मी ,आई लव यू सो मच''?

प्लस + + + प्लस + + + +

''इन ए वैक लेन ऑफ द सिटी, देयर इज ए गर्ल हू लव्ज मी''.......हयूवर्ट हिचकियो के वीच गुनगुना उठता था-२

निर्मल इसी प्रकार हिन्दी से अंग्रेजी, और अंग्रेजी से हिन्दी करण में भी विशेष आस्था वनाये है।

उन्होने आज की भाषा की पहचान करते हुए परिवेश की तीखी सच्चाईयो को व्यक्त किया है।

इसीलिए उनकी भाषा प्रतीकात्मक विम्वात्मक होने के साथ ही स्वभाविक रही है।

निर्मल का कहानी पात्र, घर, नगर, देश से बिछड़कर प्रवासीय अनुभूतियो को भोगता रहा है।

लम्बे अरसे तक अजनबी शहरों की गलियों में घूमने के कारण उसकी भाषा में बदलाव आया है, और यह बदलाव मुख्यतः अंग्रेजी वाक्य में फूट पड़ा है। उनका व्यक्ति निर्वासित होकर अकेलापन ,अजनवीपन ओर अपरिचय के साथ साथ जगह-जगह भटका हुआ है। इसीलिए उसकी मानसिकता में भाषागत सहमा सा सन्नाटा है। ओर अन्य देशो के बीच कांपता हुआ स्वर है।

१-परिन्दे पृष्ठ १११ २-मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ १५७

जीवनगत टेड़ी-मेड़ी छायायें सच्चे मायनो में भाषा की बदलती आकांक्षा से ही प्रकट हो सकती है। निर्मल को हर ओर अनुभूत सत्य के तीखे कांटे ही नजर आते है। आधुनिक युग के तीव्र घटना संकुल जीवन में अंग्रेजी के चौखटे में कसा हुआ वाक्य ही काम का हो सकता है।

इस दृष्टि से कहानीकार ने पात्रगत उस भावना का इजहार किया है जिसे वह प्रत्येक क्षण जीता रहा है। उनकी भाषा भले ही वस्तुओ के अतिवादी दर्थन में जुट गयी हो फिर भी वह मोन रागात्मकता और बुद्धि दोनो से ही जुड़ी हुयी है भावुकता के अतिरेक को कम करने के लिये निर्मल समय का अन्तराल डाल देते है।

उन्होने अतीत से चिपकने का सदैव विरोध किया है। अंग्रेजी वाक्य के इस प्रयोग ने इस रहस्य भावना का अभिव्यंजन किया है- लैट द डैंड डाई। कहकर कहानीकार पतझड़ के रूखे पार्क या पापड़ से पपड़ाये पत्तो का बार बार अंकन करता हुआ यही कहना चाहता है कि समानियत का अतिक्रमण करना भी अनिवार्य है। निष्कर्षतः हम कह सकते है कि निर्मल ने अंग्रेजी वाक्यो का प्रयोग करके मन में गहराने वाले उददीपनो का अंकन किया है। खामोशी ओर सन्नाटे में अंग्रेजी के वाक्य से सीमा रेखा का निरूपण किया है, वेदना के साक्षात्कार में अज्ञात नियति का अभिव्यंजन किया है। अंतहीन अन्धकार में बिखरे हुए जीवन आयामो को संकलित किया है। अजीब से बुझे हुए चेहरो में निर्णय का बल प्रदान किया है। इन्द्रिय बोध के द्वारा वस्तुओ के मूलरूप को पहचाना है। वातावरण में खोई हुयी आकांक्षा को नये ढंग से जीवित किया है समय सापेक्ष अनिवर्चनीय सुख ओर पीड़ा को अन्वेषित किया है विश्वजनिन, सार्वजनिक भाषा को रूमानी बोधो से पहचाना है ओर यहां तक कि सहज मानवीय सौन्दर्य को वस्तुगत एवं आत्मगत दोनों ही पक्षो में अंग्रेजी वाक्य विन्यास से संवारा है।
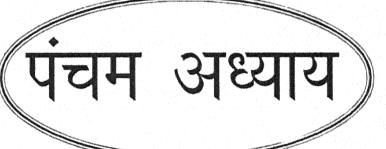
पंचम अध्याय

पंचम अध्याय

निर्मल वर्मा के कथ्य और शिल्प की सृष्टि

निर्मल वर्मा ने कथ्य और शिल्प सम्वंधी अनुभूतियों को वहुत ही सूक्ष्म अभिव्यंजना से ग्रहीत किया है।

कथा का दृश्य शैल्पिक आवृति के साथ इन तत्वो को समेटता चला है जो घटना या स्थूल का सांकेतिक अभूर्त स्वरूप रहा था। कथाकार ने नये शिल्प में वस्तु दृष्टि का लगातार योग वनाये रखा है इसीलिए कथ्यानुरूप शिल्प चयन स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में उजागर हुआ है और प्रतीत होने लगा है कि शिल्प बोध लेखकीय अनुभूति के सामर्थ्य से जन्म लेकर पुष्ट हुआ है। उनके कथा कथ्य में शिल्प में अनेक सूक्ष्म एवं नवीन प्रयोग उसी कारण मिलते चलते है। जिन्हे रेखाचित्र, डायरी, डायरी एवं पत्र आदि प्रारूपो के प्रसंग में भी पढा़ जा सकता है।

वस्तु स्थिति यह है कि कथाकार निर्मल वर्मा के नये शिल्प का प्रयोग चेष्टित होकर उतना नही है जितना वस्तू की आन्तरिक विवशता का परिणाम होकर है। अस्तु हम कथ्य और शिल्प के दो धुवांत विभिन्न स्तरो पर बहूत ही सटीक प्रमाण के साथ अनुशीलित कर सकते है।

(क)-राजनैतिक स्तर पर कथ्य और शिल्प की सृष्टि :-

निःसन्देह शताब्दियो के तमस को फोड़कर उगा स्वतंत्रीय रवि वैचारिक पुर्नजन्म के लिये वरदान सिद्ध हुआ है।

यह भी निर्विवाद सत्य है कि सवतंत्रता प्राप्ति जितनी सुखद रही है उतनी ही विशेष प्रसंगो और सन्दर्भो को लेकर दुखद भी रही है एक ओर स्वतंत्रता ने देश के व्यक्ति को बैज्ञानिक धरातल पर सोचने के लिए विवश किया है। व्यक्ति को नया जीवन जीने के लिए प्रेरित किया है ओर उसे उसके आत्मवल की अनुभूति भी करायी है, दूसरी ओर व्यक्ति को स्वस्थ मान्यताओ से आधुनिकता बोध ने उसे दिशाहीन बनाकर झटका दिया है, सम्वंधो के समाजवादी ढांचो को नकार दिया गया है और ऐसा लगने लगा है कि अच्छाई बुराई के साथ सारी दुनियां समानान्तर होकर आगे पीछे घूम रही है। निर्मल वर्मा ने स्वतांत्रयोत्तर परिवेश में रचनात्मक सांस ली है और कथा साहित्य के नये पुराने प्रतिमानो को मिलाकर एक दिशा प्रदान की है।

साहित्यकार कभी भी अपने परिवेश को नहीं नकार सकता है। वह परिवेश को ही सर्जना का प्रेरक तत्व मानता है। वह अपने आस पास के परिवेश से ही विषय चुनता है, फिर अपनी कला के माध्यम से दुनियां को समेटता चलता है।[1]

१-हिन्दी कहानी--बदलते प्रतिमान पृष्ठ ६७

डॉ० रघुवर दयाल वार्ष्णेय ने कहानी के बदलते प्रतिमानो सन्दर्भ में ठीक ही तो लिखा है, "गणतंत्र के उपरांत जो परिवेश उभर कर आया वह राष्ट्रीय नेताओ की उदघोषणाओ, जन साधारण की सम्भावनाओ के एक दम विरूद्ध है।

अव तो स्थिति यह है, कि उन्होने मुक्त भाव से यह सारा उदघोष किया कि वे अपने गुब्वारे दूसरे वच्चो के हाथ में थमाकर खुद जिम्मेदार जगह में रोजी रोटी की फिक्र में चले जाये...........जिस आलोक मंजूषा को नयी पीढी ने आदर भाव से ग्रहण किया उसमें एक दम अंधेरा था। उसके चटक गये शीशों में उल्लू बैठे थे। चारो ओर भूखे, वेसव, भ्रष्ट प्रजातांत्रिक खोल ओढे अत्याचारी लोगो की भीड़ थी। जिनके पास वड़ी-वड़ी फाइले थी वे भाग्यशाली थे। इस अंधेरे में टटोलते हुए वेसहारा लोग भी थे। चुप और असहाय थे। जिन कागजो में कही अन्न का दाना नजर नही आता था उनमें सूखते पेड़ ओर वोखलाती नदियां भी थी।।"-1

निर्मल वर्मा ने भूख, गरीवी और वेकारी के राजनैतिक पहलू कथा साहित्य में कथ्य के आधार पर वनाये है। वल्कि वे देशी गरीवी ही नही विदेशी गरीबी को और भी अधिक पास से उरेहने में सफल रहे है। "सितम्वर की एक शाम" कहानी के नायक उम्र १६ वर्ष है, वह वेकार है। 'पिक्चर, पोस्टकार्ड के पात्र सीडी और परेश एम० ए० करे के वाद वेकार है। कहानी का आरम्भ समाचार पत्र में अंकित रिक्त स्थान के पृष्ठ वदलने से होता है। सीडी रिक्त स्थानो को नोट करते-करते फाइले वना चुका है जैसे रिकार्ड, धीरे-धीरे ऊपर उठने लगा है। जूक वौक्स के भीतर सितारे सी लाल वत्ती जल उठी है।"?

+++++ +++++ ++++++++

"वह प्रतीक्षा कर रहा था..........दोपहर........भरा दोपहर वीत चली थी। शाम की प्रतीक्षा नही थी, लेकिन शाम घिर रही थी। ....
वह सड़क के वीचो वीच ठिठक कर खड़ा हो गया....व्हाई डोंट यू लीव मी, आई० लव० यू० सो मच"-२

दरिद्रता का एक पहलू वह भी है जहां आदमी इस निर्णय से वच जाता है कि भूख ओर सर्दी में से कौन सी वस्तु असहनीय है। उसके पास यदि दोनो ही है तो वह इनमें से सबसे पहले किसे चुनेगा यह वात 'अमालिया' कहानी मे देखी जा सकती है। इस कहानी में तीन यात्री अजनवी शहर के अंधेरे में वासी हवा भरे चूहो सरीखी सीलन भरे बिस्तरों की दुर्गंध में रह रहे है। इतने दरिद्रता है कि वे अपनी आधी जली मोमबत्ती को अंधेरे जीने में वड़ी किफायत से जलाया करते है।
राजनैतिक स्तर पर भुखमरी और वेकारी की ज्वलन्त समस्याये कथाकार को एक जगह नही दुनियां के बहुतेरे स्थानो पर देखने को मिलती है। दरअसल 'वे दिन' उपन्यास में पात्र के साथ की वार्ता युद्ध की विभीषका और भुखमरी को वखूवी प्रकट करते है........."तुम्हे मालूम है..........तव मैं काफी छोटी थी........हफ्ते गुजर जाते ओर हमे भर पेट खाना भी नही मिलता था।

१-परिन्दे पृष्ठ ११०
२-वही पृष्ठ १११

तम्बाकू और सिगरिटों के वारे में सोचना असम्भव था............ जब कभी महीनो वाद हमे चोरी छिपे सिगरेट मिल जाती, तब हमारे सुख का ठिकाना नही रहता?[1] लड़ाई के आखिरी दिनो की वस्तुस्थिति का लेखक ने यहां जायजा दिया है इसी प्रकार 'लंदन की एक रात' का नायक ऊपर से काफी सस्ते दिखने वाले एक रेस्तरा में आलू के चिपस तथा टोस्ट का आर्डर करने के पश्चात मीनू देखता है। मीनू में इन चीजों के दाम उसकी जेव में पड़े पैसों से भी अधिक है। वह वहाने से वहां से भागता है और अपनी संत्रस्त मनःस्थिति के कारण एक गली से दूसरी गली में भागता फिरता है।'' 'छुटिटयो के वाद' कहानी में राजनैतिक स्तर की विषमतावादी नीति पर करारा व्यंग्य लेखक ने किया है एक गाड़ी में एक लड़का और एक लड़की दोनो ही वैठे हुए है। जव लड़की कुली को १५ नये फ्रैंक दे देती है तो वैठे लड़के को इस आर्थिक विषमता पर वड़ा ही ताज्जुव होता है[2] और उसके मन में अन्दर ही अन्दर एक बेहूदा ख्याल जाग उठता है। इस ख्याल को जमाने की नई तहरीर भी कह सकते है इस ख्याल को ट्रेड यूनियन का भाषा का तावीज भी बना सकते है वह युवक सोचता है कि इतनी रकम मे तो वह पेरिस में दो दिन ओर गुजार सकता है। वस्तुतः कथाकार ने कुण्ठा, घुटन, टूटन को जीवन के चारो ओर देखा और समझा है। वह राजनीति को नया रूप देने, आर्थिक दृष्टि से समृद्धि ओर समता लाने के लिये हर कथापात्र को छटपटाता हुआ देखता है, क्योकि इस राजनेतिक परिवेश में व्यक्ति कुछ कर सकने में असमर्थ पा रहा है। सच्चे रूप में नई चेतना भी असहाय होकर अव जूझ रही है इतना ही नही, जीवन की जटिलता निजी अनुभूति को कचोट रही है। फिर निर्मल वर्मा ही क्या दुनियां का ऐसा कोई कलाकार नही जो ऐसे विषम राजनेतिक परिवेश में अपने आप को कसमसाता हुआ अनुभव न कर रहा हो।

हमारे देश के लिये स्वतंत्रता प्राप्ति एक महत्वपूर्ण घटना रही है। देश आजाद हुआ लेकिन विभाजन साथ में लाया। परिणामतः हर शहर में हत्या, लूटपाट, ओर वलात्कार की घटनाये घटने लगी। इस प्रकार के संघर्ष ओर राजनेताओ के स्वार्थ देशवासियो की दुर्दशाओ के ज्वलन्त प्रमाण है।
आज वही चक पुनरावृत्ति की दुहाई देने मे जुटा हुआ है। निर्मल वर्मा ने भारत के युद्ध विभीषिका ओर विभाजन की रेखाये तो नही खींची लेकिन जीवनगत विसंगति और विषमता का यथार्थ-अवश्य बुना है। उनका यह कथन आज का परिभाषा देने में सफली भूत है।[3]
......''सड़क ओर सिनेमाघर की दुनियाओं के बीच जो अन्तराल हमारे देश में है वह अनयत्र कही नही। स्कूल से लौटते हुए भूखे प्यासे बच्चे घण्टों बसों की प्रतीक्षा में खड़े रहते है। चिलचिलाती धूप में उनके सूखे वदहवास चेहरे एक तरफ सिनेमा की फिल्मो में कार्न फलेक्स खाते चिकने चमचमाते चेहरे दूसरी तरफ इन दोनों के बीच ताल - मेल बिठाना मुझे असम्भव लगता है।''[४]

१-वे-दिन,पृष्ठ १७८ | २- मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ ११६
३-बीच बहस में भूमिका, | ४-निर्मल वर्मा का कथा साहित्य (चीड़ो पर चांदनी)पृष्ठ१७

राजनैतिक स्तर पर जिस प्रकार हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के विभाजन में नर संहार का अनुभव किया गया उसी प्रकार निर्मल वर्मा को यूरोपीय देशो की युद्ध विभीषिका और भयावहता का ख्याल कथापात्रो के माध्यम से वार-वार आ जाता है युद्ध का आतंक उनके पात्रों को वरवस आच्छादित कर लेता है । 'व्रेख्त और एक उदास नगर' कहानी में लेखक स्वयं ही यह लिखता है.........मैं दो वार लंदन ओर पेरिस जाते हुए जर्मनी के वीच से गुजरा हूं जव कभी मध्य यूरोप से गुजरता हूं मुझे उनका ठण्डा स्पर्श महसूस होने लगता है मै पूर्वाग्रह ग्रस्त नही हूं, किन्तु आज भी किसी जर्मन को देखता हूं तो मेरे भीतर एक फिजूल सी वेमानी सी होने लगती है।''-१

कथाकार देशिक, वैदेशिक राजनैतिक हलचलो को कथापात्रो के माध्यम से व्यक्त करता रहा है।

, हिन्दुस्तान ओर इंग्लैण्ड के नाम के साथ ही अर्न्तराष्ट्रीय सोच विचार कैसा विचित्र बन गया है यह वात 'एक चिथड़ा सुख' उपन्यास में देखी जा सकती है।... .....''बिट्टी अगर हम स्टिनवर्ग के नाटक में सफल हो जाते है, तो दूसरे शहरो में भी जा सकते है तुम हिन्दुस्तान घूमना चाहती थीं,..........हिन्दुस्तान?
बिट्टी चांदनी में हिलाती सेमल की फुनगियो को देखने लगी। जैसे हिन्दुस्तान कही उनके बीच उलझा है।
इरा इग्लैण्ड लौट रही है.........उसने कहा।''?

'परिन्दे' के डा० मुकर्जी ने वर्मा पर जापानियो के आकमण के समय मकानों को ताश के पत्ते की भाँति ढहते देखा है। लन्दन की उस गरम खामोश रात में यद्यपि बार वहुत दूर की चीज लगती है,अर्थहीन और हस्यास्पद, किन्तु हर बार वही आ भटकती है, बैगाटेन की उस गोली की तरह जो चारो ओर घूमकर फिर एक छेद में आ फंसती है।2

जर्मनी में महायुद्ध के पश्चात पुरुष कहीं भी नही दिखायी देते है, चारो ओर स्त्रियां ही स्त्रियां है। कहा गया है.......लड़कियों की कतार स्कूल से होस्टल जाने वाली सड़क पर नीचे उतरती जा रही है उजली धूप में उनके रंग-विरंगे रिबन हल्की आसमानी रंग की फाके और सफेद पेटियां चमक रही है सीनियर कैम्ब्रिज की कुछ लड़कियों ने चैपल की वाटिका से गुलाब के फूलो को तोड़कर अपने बालो में लगा लिया है। कन्टोन्मेण्ट के तीन चार सिपाही लड़कियों को देखते हुए अश्लील मजाक करते हुए हंस रहे है ओर कभी-कभी किसी लड़की की ओर जरा झुककर सीटी बजाने लगते है।''?

कलान्तर में हिन्दी कथा साहित्य ने मानव जीवन के समग्र विश्वास को अपनी रचना प्रकिया में आत्मसात किया है राजनैतिक ध्रुवीकरण औद्योगिकीकरण मशीनीकरण तथा विदेशी संस्कृति के सम्पर्क से अधिक सम्भव हुआ है । आज हम

१-एक चिथड़ा सुख पृष्ठ ११५
२-परिन्दे पृष्ठ १४०

देखते है कि जनजीवन मृत्यो की समसामयिक चर्चा भी राजनैतिक घेरे में फंस गयी है।

फलस्वरूप आज प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यवरण की स्वतंत्रता पर बल दिया जा रहा है। युवापीढी के सामने पुरानी मान्यताये नकार दी गयी है। सुख सुविधाओ की पद्धति को सहारा मिला है। इस प्रकार आज मानव मात्र में मात्रभाव, अर्न्तराष्ट्रीय साहचर्य और प्रजातंत्र समवंधी मान्यताओ का वोलवाला भी वैज्ञानिक परिथि में राजनैतिक हो गया है। आज की वैज्ञानिक प्रगति ओर वौद्धिक उन्मेष के फलस्वरुप मानव मूल्यो के प्रति अधिक सजगता दिखाई दे रही है। इतना ही नही बड़े ही अजीव ढंग से राजनैतिक वैशाखी पर जीवन को तोड़ मरोड कर सुविथानुसार परिभाषित किया जा रहा है। व्यक्ति-व्यक्ति से इकाई गत मूल्यवतः को दोहराने की हामी भरने मे हिचक रहा है। ''लाल टीन की छत'' उपन्यास में मंगतू ओर काया की वार्तालाप परिवेशात्मक फाक्सलैण्ड वर्षो पहले मां के साथ वहां [illegible] करती थी। लम्बे ,सुने, भाये भाये करते जंगल......उनके वीच चाचा की कोठी पिछले महीने जव कभी वह मां से कहती........फाक्सलैण्ड चलो तो वह हंसकर उसकी बात टाल देती।''-१

मंगतू वदलते राजनैतिक परिप्रेक्ष्य को वहुत ही निराशा से ओर दर्द भरे चेहरे से परिवेश में विखेरता हुआ काया के साथ बात करता चलता है। दरअसल जब आदमी बड़ा हो जाता है तव उसके पीछे आज के लोग ही वहुत वड़ी राजनैतिक गंध होती है। और वे अपने आप ही दिन रात नाखूनों की तरह धरा पर खड़ें होकर भी गगन को छूने वाले उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त करते रहते है व्यक्ति के वेगानेपन और वदलते स्वरूप को निर्मल वर्मा ने यहां व्यवहारिक धरातल पर तथा साहित्य में अभिव्यक्ति दीं है सोच के स्तर पर कथाकार आदर्शो से विल्कुल ही हटा हुआ है और वह ज्ञान विज्ञान की नयी उपलब्धियो का अध्ययन करने के बाद नयी संवेदनाओ को सत्य मानने लगा है इसीलिए आज हर व्यक्ति का आचरण बदला हुआ है, जीवन का नया पैटर्न उवरा हुआ है। ऐसा कहने में कथाकार को हिचक नही है। यह सूरत में सत्ता हथियाने की प्रकिया हर क्षेत्र में लागू है। फिर चाहे देश व्यापी दौड़ हो या अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का खेल जनसाधारण राजनीति के कुचक्रो से मानस पर अंकित आदर्श छवि में संदेह प्रकट करने लगा है। इस विकान्ति और जीवन की ठिठुरी पहचान आज हर व्यक्ति के गले से प्रतिवद्ध वनी हुयी है। चारो ओर भयाकान्ति है कहीं से भी कोई सुलझा हुआ पारदर्शी रास्ता दृष्टिगतक नही होता है कथाकार ने वे दिन उपन्यास में स्वयं से कन्डक्टर से बातचीत करते हुए अपने देश और चैकोस्लाविया के अन्तराल को भावमुद्रा में इस तरह प्रस्तुत किया है ....''कहा से आये हो? उसने दुवारा पूंछा। इण्डिया से वहुत दूर है। उसने एक लम्वी सांस ली। मै ऊघनें लगा, मैं जानता था, वह यही कहेगी।-२

१-लाल टीन की छत पृष्ठ ८०   २-वे दिन पृष्ठ ७६-७७

शायद यह देश और शहर का अपना अलग - अलग राजनैतिक चक्र होता है उसकी आवाजें और खामोशियां भी भिन्न - भिन्न होती है उसकी चीखे और आहटें भी भिन्न होती है लेखक ने प्रवास यात्रा में प्राग के इतवार दिन का चित्रण वहां की भौगोलिक स्थिति में तो किया है साथ ही अपने पराये राजनैतिक विभाजनऔर सांकेतिक चेष्टाओं में भी किया है। लेखक लिखता है, कि ....जहां पर इतवार को प्राग के गिरजो की घण्टियां तिरती आती है तुम सोते हुए भी उन्हें सुन सकते हो। तुम उन्हे सूंघ सकते हो, उनमें चिमनियो का धुँआ है, पतझण के सड़ते पत्तों की मृत्यु है........नदी के वहते पानी की सरसराहट है दूसरे दिन शहरों में होते हैं........ ..इतवार अपना सा होता है ....पराये शहर में भी।-१

लेखक के मन का यह विचार एक ओर वहुत रूँआसा सा भी है तो दूसरी ओर वेहद नीरस। रिक्तता को लेकर जीवन दर्शन के गहन चिंतन में लिपटा हुआ भी है क्रिश्मस के दिनो की राजनैतिक उत्सवधर्मिता का लेखक ने वहुत ही सुगमता के साथ चित्रण किया है। कथाकार सिर्फ विदेशी यथार्थ से मुहावरे ही नही रटता बल्कि वह जीवन के कटुतिक्त यथार्थ को भी निर्विकार रूप से कहता चलता है। उनकी कहानियों में इस प्रकार के शून्यता वोध के कतिपय उदाहरण मिलते है। माया का मर्म कहानी के नायक की स्मृतियां सूखे पत्तो की भाँति झरती जा रही है। वह उसके अतीत कालीन राजनैतिक वैभव की परिचायक है।-२

वर्तमान में सारा दृश्य वेकारी, वेरोजगारी के उदास चेहरे को ओढ़े हुए है। मनुष्य के भीतर शून्यता वोध ने असर जमा लिया है। इतना ही नही उसे लगता है कि सारी दुनिया उससे दूर होती जा रही है। 'पिक्चर पोस्टकार्ड' के युवको को यहां तक विश्वास हो गया है, कि वे शायद कुछ भी नही कर पायेंगे-?

जलती झाड़ी में प्रयुक्त खाली हाथ शब्द की आवृति शून्यताबोध की बहुत बड़ी पहचान है। इस प्रकार कहानीकार आज के बेगानेपन अलगाव पन और बदहवास से झुकता हुआ बेकारी, रिक्तता के बोझ को कथापात्रो के माध्यम से से ढो रहा है । वर्णन बहुत ही उपयुक्त है -----आज कैसे हो -उसने पूछा मै कुछ भी कह पाता कि मुझे लगा पीछे खडा छोटा लड़का बहुत ही विरक्त भाव से मुस्करा रहा है । आज भी खाली हाथ हो -? खाली हाथ? मेरी आंखे अनायास अपने हाथो झुक आयी - वे सचमुच खाली थे''१ ''माया दर्पण'' कहानी के बावू फटे चिथड़े से दीवान के खिताव से जोंक की तरह चिपटे है ।

अतीत से चिपकने की इस प्रवृति ने राजनैतिक बदलाव का नया उद्‌भाव प्रस्तुत किया है पिछली गर्मियों में कहानी के माता पिता की व्यथा अतीत और वर्तमान के दोहरे संघर्ष कों झेल रही है 'डायरी का खेल', बव्वू के धुंधल के मन का ऊबा हुआ राजनैतिक पहलू है आज खाली जगह को भरती हुई जगह का शून्यता का उद्‌घोष करती जा रही है४।

१-वही पृष्ठ ६६   २-परिन्दे पृष्ठ ३१
३-परिन्दे पृष्ठ ९२   ४-जलती झाड़ी पृष्ठ ७९

कथाकार ने अतीत भविष्य और वर्तमान की शून्यता को सम्वन्धो ,रूग्णता और वेकारी की समस्या मे एक सत्य दोहराया है। निर्मल वर्मा की 'डायरी का खेल' कहानी जीजीविषा की अनुपम उदाहरण है। 'सितम्बर की एक शाम' संघर्ष और क्षमता वोध का प्रमाण है ।''परिन्दे'' का पात्र मुकर्जी का अदभुत क्षमता है वर्षो पहले अपने शहर रंगून को जलते देखा था।
एक एक मकान ताश के पत्तो की तरह गिरता जाता था युद्ध के दौरान उनके परिवार के सदस्य खत्म हो जाते थे फिर भी डॉ० मुखर्जी का यह दर्शन राजनैतिक मोड का परिवर्तन अध्याय है किसी चीज को ना जानना यदि गलत है, तो जान बूझ कर भूल न पाता तो हमेंशा जोंक की तरह उससे चिपके रहना यह भी गलत है जिन्दगी काफी दिलचस्प लगती है। और यदि उम्र की मजवूरी न हो तो शायद मै दूसरी शादी करने में न हिचकिचाता ।''१
''जलती झाड़ी'' कहानी में संघर्ष कम क्षमता का दर्शन अधिक है जीवनगत सुदूर आशायें क्षण बोध का पाठ सटीक वनाती चलती है यह भी आज के वदलते व्यक्तिशः राजनीति का उपक्रम है उदाहरण विचारणीय है ---------जिन्दगी में जवावदेही का लम्हा एकदम किस तरह आ जाता है जव हम उसकी वहुत कम प्रतीक्षा कर रहे होते है जैसे वह हमारे लिये न हीं, तो किसी दूसरे के लिये आया हो, दूसरे के नही तो तीसरे के लिये, तीसरे के लिए नही तो चौथे, पॉचवे और छठे के लिए । चाहे जिसके लिये हो हमारे लिये नही लेकिन वह है। कि कांपते चीखते हाथो से पकड़ लेता है ------- किन्तु हम ताकतवर है और अपने को छुड़ा लेते है और सोचते हे कि यह दुःस्वप्न है अभी वीत जायेगा ।''-२

कथाकार ने राजनैतिक वदलाव और वदलाव के घेरे मे इत्तफाक का सार्थक विवेचन मानसिक त्रासदी के साथ मानव मन के सत्य का विश्लेशण किया है। व्यक्ति जीवन को सोद्‌देश्य एवं सार्थक वनाने मे अनवरत संघर्ष कर्म एवं क्षमता का परिचय देता है वह अतीत से भी जुडता है और वर्तमान मे भी आज के साथ सांस लेंना चाहता है। इस दर्शन मे मनुष्य का संरचनात्मक पक्ष जुड़ा हुआ है राजनैतिक चिन्तन कथाकार ने विश्वपरक दर्शन परिधि में भी यत्र तत्र प्रस्तुत किया है अस्तित्ववादी अवधारणा स्वतंत्रय को प्रवलता के साथ मान्य समझती है, निर्मल वर्मा ने 'डेढ इंच ऊपर' कहानी में संत्रस्त स्वतंत्रता और सम्प्रक्त आनन्द को एक साथ बुना है 'वीक एण्ड' की अत्याधुनिक युवती जिन्दगी के फिसलते हुये सोपानों को गिनने मे जुट जाती है 'बीच बहस मे वर्णित इस कहानी मे कथाकार कहता है कि कभी कभी ऐसा भी होता है ।कि आदमी जीता हुआ भी करीव करीव मरने जैसी हालत में पहुच जाता है ------पर मरता नही , लेकिन मरते हुये प्राणी की तरह उसकी सारी जिन्दगी घूम जाती है।३

१-परिन्दे पृष्ठ १७८ २-जलती झाड़ी पृष्ठ-८७,८६ ३-.बीच बहस में,पृष्ठ -७०

------मेरी गोराकुण्ड की तरह सव चुके हुये मौके की तरह और आधे फैसले काठ के घोडे की तरह एक दूसरे के पीछे भागते है ।''?

दरअसल प्रजातांत्रिक तरीके की भाँति विदेशी संस्कृति मे मनुष्य के जीवन के हर चुनाव को स्वतंत्रता मिली हुई है । फलस्वरूप यहां का मनुष्य हर वार नये ढंग से चुनाव करता है यही उसके अस्तित्वान होने का प्रमाण है। 'परिन्दे' की लतिका ने कभी गिरीश नेंगी का चुनाव किया था गिरीश की मृत्यु हो जाती है इस नियतिगत विड़म्वना से भले ही वह कुछ देर अवसन्न रही है लेंकिन अवसंर आने पर वह ह्यूवर्ट की ओर झुकती है यह उसका आगामी चुनाव है इसी प्रकार 'वीच बहस' में बूढे पात्र की स्वतंत्रता नियतिवादी सिद्ध हुई है राजनीती भी आज अदृश्य नियति का पटल होती जा रही है जो साल - दर - साल खिलौनो की भांति कुछेक हिस्सेदार लोगो की गोद में खेल रही है कथाकार का अस्तित्ववादी दर्शन मानव नियति का संकेतात्मक प्रमाण ''परिन्दे'' की लतिका पात्र मे प्रस्तुत है------जो लतिका को लगा कि यही बात उसने पिछले साल भी कही थी और शायद पिछले से पिछले साल भी। उसे लगा मानो लड़कियां उसे संदेह की दृष्टि से देख रही है मानो उन्होनें उसकी वात पर विश्वास नही किया उसका सिर चकराने लगा ----वह थोडा सा हंसी फिर धीरे से सर को उसने झटक दिया।''१

वास्तव मे राजनेताओं की फिसलती वाणी मानव नियति का श्रंगार वनती जा रही है कथाकार परिवेश के समस्त दवाव के वीच निजी क्षमता का वोध पात्रो के माध्यम से कराता चलता है यथार्थ से साक्षात्कार के भिन्न भिन्न रूपो के पार्श्व मे कथाकार संघर्षमय चित्रो को ही वटोरता है डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव इसी तथ्य को लेखकीय आत्मचेतना से आपूरित मानते है ।''-२

दरअसल कथाकार मात्र दर्शक ही न होकर वह जिन्दगी के अखाडे में उतरा हुआ एक क्षमतावान प्रकृति पुरूष है। डॉ० देवीशंकर अवस्थी निर्मल वर्मा के कथा संचयन और राजनैतिक परिदृश्यों को एकत्व प्रदान करते हुए उपयुक्त ही तो कहते है। राजनीति एक व्यवसाय या आदर्श या प्रेरणा के रूप में नही बल्कि जीवन्त निर्मम 'स्थिति के रूप में जिसमे कास्ट्रेशन कैम्प है, नीग्रो सेंग्रीगेसन, तिलतिल कर मार देने वाली खास हिन्दुस्तानी गरीवी है। -

'वीच वहस में' का पिता वीमार है सम्वन्धगत यथार्थ का निरूपण कथाकार ने आज के महगाई भरे जमाने सनातन मूल्यों से मुक्त राहों का प्रसंगानुकूल व्यवहार किया.................... है।

बीमारी चाहे कितनी असाध्य क्यों न हो अगर वह दूसरे की हो अपने साधन खुद जुटा लेती है और वीच के रिस्तों को कूडे की तरह बुहार देती है।

२४ घंटे माँ वाप के रिश्ते को याद रखना असम्भव सा है। इसलिये इस कहानी में बाप बेटे अस्पताल में बहस करते है।?

१-परिन्दे पृष्ठ १२२ २-नई कहानी सन्दर्भ और प्रकृति पृष्ठ १३०

आज के नये दौर ने आधुनिकता वादी दृष्टि ही नही प्रदान की है बल्कि समय को व्यतीत करने के लिये एक वैज्ञानिक जीवनगत सोच भी दिया है 'छुट्टियों के बाद' कहानी की नायिका छुट्टियों के लिये एक प्रेमी की खोज करती है इतना ही नही 'वीक एण्ड' की नायिका अपने शरीर र फक्र करते हुए बहुत स्पष्ट उद्घोषणा करती है ''इस दुनिया'' मे मुझे किसी पर इतना भरोसा नहीं, जितना अपनी देह में , देह की चाहना में । उसके सहारे वह जहाँ भी हो -- वहाँ से मै उसे खींचकर ला सकती हूँ। उसमें जादू है, वह खुद अपने में जादू है।''१

देहात्म बोधों का यथार्थ अर्न्तमन की गहराई सच्चाई लिए हुए है और लगता है कि आज के जीवन चक्र ने राजनीति की भाँति सोच और संवेदना के स्तर बदल दिए है रंग भेद, छुआ-छूत, ऊँच नीच आदि की कुत्सित भावनाओ को निर्मल वर्मा ने अपने कथा साहित्य मे जहाँ तहाँ प्रकट किया है।[२]

डॉ० नामवर सिंह इसी दृष्टि से 'लन्दन की एक रात' कहानी को फासिस्टवादी कहानी करार देता है। उनका मत है कि 'लंदन की रात कहानी' फासिस्ट खतरे की कहानी है । इसी आधार पर वह हिन्दी की एक विरल आधुनिक कहानी है। एक युग यथार्थ से जुड़कर कथाकार ने राजनीतिक कुचकों की बात भी अपने कथा साहित्य में की है। ' अधेरे में' कहानी में विरेन चाचा के द्वारा लिखा गया है इतिहास राजनैतिक कुचको की बात भी अपने कथा साहित्य में की है[३]।

'अंधेरे में' कहानी मे विरेन चाचा के द्वारा लिखा गया इतिहास राजनैतिक ऊहापोहात्मकता का अनुपम उदाहरण है ---मुझे मालूम है --- माँ दिल्ली नहीं जाना चाहती। इसका कारण मुझे आज भी समझ मे नहीं आता। .... एक बार मैने कोई किताब खोली थी। उस पर छोटे-छोटे, टेढे- मेढे, नीले अक्षरो में वीरेन चाचा का नाम लिखा था...................कहते है रेस्ट हाउस का चौकीदार बड़ा काबिल आदमी है ।
...............इस तरह के इन्टरव्यू तुम कितने वर्षो से ले रहे हो।''४

इन वाक्यो मे कही भी मेल नही है, फिर भी बहुत साफ बातें है कि संश्लिष्ट जीवन आज के वातावरण मे बडेगा और बेतरीब होता चला जा रहा है। 'अन्तर' की नायिका गर्भपात के पश्चात् मानसिक रूप से अपने को बहुत हल्का महसूसती है और बार बार यही कहती है कि मुझे बहुत हल्का सा लग रहा है।''५

'धागे' कहानी मे आधुनिकता बोधीय संस्पेन्स बार बार उभारा जा रहा है। 'डेढ इंच ऊपर' का पात्र अपनी पत्नी की मृत्यु और पुलिस की निर्ममता को बार बार दोहरा रहा है । 'वीक एण्ड ' कहानी मे परिवेश का निरूपण तो है ही साथ ही आधुनिकता के ख्यालो में जकड़ी महिला का भी चित्रण है जैसे ''दूर स्टेडियम की लाल छत है. ....बच्चो की सी सफेद निरीह देह जो विवाहित होने के बावजूद कुवारी जान पडती है ....विवाहित होने के बावजूद उसकी देह एकदम कुआँरी जान पड़ती है सफेद और निरीह ।''६

१.बीच बहस में,पृष्ठ -४८ २.वही, पृष्ठ -४७ ३. नई कहानी- पत्रिका,अप्रैल १९६५
४-परिन्दे पृष्ठ -६७,६८,६९ ५-मेरी प्रिय कहानियाँ पृष्ठ -१०३ ६-बीच बहस में,पृष्ठ -४७

'दो घर' कहानी मे एक ही गूंज अनगूंज है। यहाँ कोई हिन्दुस्तानी नही . ...यहाँ कोई हिन्दुस्तानी नही आता।''[1]

कथाकार ने ऐतिहासिक कथावृत का भी कथानक में प्रश्रय लिया है। 'लवर्स' कहानी मे हुमॉयू का मकवरा प्रेमियो का मिलन है ।

यहाँ लड़की वर्फ और लडका पतझण के रूप में खुले मन से प्यार करते है। विशुद्ध राजनैतिक भाव से तो नही फिर भी विश्व इतिहास वोध कहानीकार ने कथा सूत्र मे हल्के से वॉधने का प्रयास तो किया ही है-''यह दिल्ली है -.........हमारा शहर । वरसों से हम अलग अलग घरो मे रह रहें है..................किन्तु आज सुवह हम दोनो अपने अपने रास्तो से हटकर छोटे से कैफे मे आ वैठे है, कुछ देर के लिए ।''[2]

कहानीकार जिन्दगी की टूटती भरभराती चीखें आज के भयावह जीवन मे बुनता चलता है 'माया दर्पण' कहानी मे इन्जीनियर वावू सीढियॉ उतरते है तो सारा घर हिल जाता है। यहाँ घर हिलना जीवन का परिचायक है। युद्ध की विभीषका ने सारे संसार को कुछ दिया है वह राजनैतिक दावपेंच की ही तो कहानी है। जैसे ''लडाई के दिनो मे जो वैरक वनाये गये थे, वे अव उखाडे जा रहे है......................आधी टूटी इमारते कंकालो - सी खडी थीं । सूखे रेत के कण तीतरी धूप मे मोतियो से हो[illegible]............ सरकारी सुपरवाइजर मि० दास से लेकर वडे ठेकेदार मेहेर चन्द तक काम खत्म होने पर दीवान साहव के वरामदे में कुछ देर के लिए सुस्ताने आ वैठते है और है भी क्या इस उजाड बस्ती में।

..................ले देकर एक दीवान साहब का ही तो घर है, जहाँ दूर शहरो से आए प्रवासी भद्र लोग घड़ी - दो- घडी हंस वोलकर जी हल्का कर लेते है ।''[3]

स्वातन्त्रयोत्तर जितने भी कथाकार है उन सव मे भी निर्मल वर्मा ने राजनैतिक परिधि पर घूमता हुआ जीवन अपने सोच और संवेदना से अभिव्यक्त किया है। जनजीवन की सार्थकता पर किसी भी मुल्क मे विचार नही किया गया बल्कि अवसरवादिता का स्वाथान्धिता, बेईमानी, और भ्रष्टाचार ने जनजीवन में अव्यवस्था फैलायी है इन विशेष कारणो से विश्व के लोग दिगभ्रमित है। यद्यपि बौधिक चेतना से उनके मन मे अपने को संवारने की समझ तो वडी है लेकिन इस समझ मे व्यक्ति आत्म केन्द्रित होता चला गया है फलस्वरूप हर देश मे हर तरफ एक संकट व्याप्त वह है ''वैयक्तिक और सामाजिक आचरणों के भिन्न-भिन्न मानदण्डो का। राजनीतिक दल छदम की परिभाषा बन चुकी है जिससे नैतिकता का तो पतन ही हो गया है। डॉ० रघुवर दयाल वार्ष्णेय ने भारतीय जनजीवन से जुडी राजनीति पर करारा व्यंग्य करते हुए लिखा है कि -''चारो ओर अव्यवस्था, दायित्वहीनता, कार्य अकुशलता और व्यर्थ की नारेवाजी ने गॉधी के रामराज्य को स्वप्न वना दिया है देंश मे भाषावाद, प्रान्तीयता को लेकर झगड़े शुरू हो गये ।'[4]

१.जलती झाडी ,पृठ १७

२.वही ,पृठ २१-२२

३.वही ,पृष्ठ २१-२२

४-हिन्दी कहानी के बदलते प्रतिमान ,पृठ १२१

इन समस्त विसंगतियो को निर्मल वर्मा ने कथानक तो नही वनाया पर आर्थिक स्तर व व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की हल्की फुल्की विडम्वनाओं को अवश्य प्रस्तुत किया है। इस संकीर्ण राजनीति के प्रभाव से कोई भी साहित्यकार वच भी कैसे सकेगा इसलिए कथानक वर्मा जीवन के चारो ओर उलझनपूर्ण परिस्थितियों को प्रकट करते चलते है। मानवीय यथार्थवाद नयी चेतना की कथात्मक अभिव्यक्ति तो सिद्ध हुआ है लेकिन आधुनिकता के मोह पास मे इतना अधिक जकड गया है कि साहित्य को भी संपूर्णता मे ना देखकर टुकड़ो मे देखा जाने लगा है। महानगरीय सभ्यता, कसवाई मनोवृत्ति , देशी विदेशी रहन सहन आदि कहानी के कथानक वनकर उभरे है। परिवेशगत पहलुओ पर चित्रात्मक तरीके से विचार किया गया है। व्यक्ति-व्यक्ति के बीच के सह संबंधो को परम्परा से हटकर रूपाचित किया गया है ।

(ख) सामाजिक स्तर पर कथ्य और शिल्प की सृष्टिः-

समकालीन सामाजिक जीवन के संघर्ष और विकास की अनेक स्थितियों के विभिन्न पक्षो का चित्रण समकालीन हिन्दी तथा साहित्य मे प्रभावकारी ढंग से छाया हुआ है वर्तमान जीवन के परिवेश में नया स्वरूप ग्रहण करते हुऐ विभिन्न मानवीय संवंध कथा साहित्य में प्रतिपादित किये गये है आधुनिकताबोध के कारण जीवन मूल्यों के उभरते हुए संकेतो की सार्थक अभिव्यक्ति कथा साहित्य मे हुई है आज सामाजिक परिस्थितियों और संदर्भो का इतिहास निर्मल वर्मा के कथा साहित्य मे बहुत सपाट तरीके से प्रस्तुत हुआ है। भारत मे पश्चिम की वैज्ञानिक और तकनीकी सभ्यता के आयात से समाज के जीवन मे बुनियादी और स्थायी परिवर्तन हुए है इन परिवर्तनो पर सामाजिक परिप्रेक्ष्य में कथाकार वर्मा ने काफी भिन्न दृष्टियों में देखा और समझा है।

कथन है....................''दिन पर दिन शहर की समस्याऐ जटिल हो रही है महानगरों मे मकान कबूतर के दरबे जैसे हो गये है वहाँ शोर शराबा, भीड़ भाड़ पशुवत जीवन बढता जा रहा है अनेक आचार संहिताए वदल रही है, नैतिक मान दंड बदल रहे है और लोगो की दिनचर्या बदल रही है औद्योगीकरण ने वायुमण्डल को पूर्णतया दूषित कर दिया है वास्तव मे मनुष्य की आविष्कार प्रतिमा ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है, किन्तु साथ ही अपने विनाश के वीज भी वो लिए है इस भीड़ मे सभी दौडे जा रहे है कोई किसी के साथ नही हो रहा है किसी को भी किसी की चिन्ता नहीं है।

परिचित होते हुए भी लोग अपरिचित से लग रहे है सब अपनी परिस्थितियों में बंधकर रह गये है। मध्यवर्ग को अपनी उपेक्षा का ज्ञान होने लगा है आज का नव युवक असन्तोष और अस्वीकार का प्रतीक वन गया है। नवयुवक साहित्यकारों की पीढ़ी ने स्वतंत्र भारत में जन्म लिया और जबसे उन्होनें होश संभाला देश में भ्रटाचार का साम्राज्य ही देखा है। अतः नई पीढ़ी के सामने ना कोई आदर्श है और न कोई उच्च जीवन मूल्य ही।''[१]

१-हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान पृष्ठ १२२

ऐसी स्थिति में कथाकार निर्मल वर्मा से आधुनिकता के संदर्भ में सामाजिक विद्रूपता और नगरीकरण की प्रक्रिया के अख्यान की अपेक्षा करना ही उपयुक्त है। युवा पीढ़ी को पश्चिम के सामाजिक जीवन में भौतिक सुखो के आकर्षण, उनमुक्त यौनाचार तथा वैज्ञानिक एव तकनीकी उपलब्धियो पर विवेकहीन विश्वास है। सामाजिक आचरण की नैतिकता का पतन हुआ है। औद्योगीकरण के साथ उपयोग भी बढ़ा है अतः अर्थ की महत्ता भी बढ़ी है। परिणामतः महत्वाकांक्षाओ और मान्यताओ को भी केन्द्रीभूत होना पड़ा है आधुनिकता की चर्चित बाते साहित्य में विशेषकर कथासाहित्य में बहुत पनपी है। निर्मल वर्मा का कथा साहित्य आधुनिकता बोधीय परिप्रेक्ष्य में सामाजिक स्तर व्यक्ति इकाई और समष्टिगत भीड़ दोनो ही पक्षों में अनुशीलित किया जा सकता है। उसमे व्यक्ति ने स्वंय आत्मिक सत्ता के रूप में अपनी चेतना को स्थापित कर लिया है और सामाजिक संरचना में प्रजातांत्रिक आधार भूमि पर स्थापित करने की उसने दलील दी है।

इस व्यक्तिवादी प्रवृत्ति के विकास के फलस्वरूप व्यक्ति और समाज के समबंधो का स्वरूप ही बदल गया है। डॉ० धर्मवीर भारती ने इस व्यक्तिवादिता की प्रवृत्ति के संदर्भ में लिखा है.........''वैक्तिवादिता असामाजिक अंध प्रेरणाओं से हमारे व्यक्तित्व मे उदित होने वाली वह मनोवृत्ति है जो हमे व्यक्तिगत स्वार्थो की ओर उन्मुक्त करती है।''१

आज के बदलते परिप्रेक्ष्य में कथाकार ने प्रवासी जीवन के उन मुद्दों को हल्के से छुआ है जिनमें विदेशी दुनियां क्रिसमस की छुटिटयों में किस प्रकार उत्सवमय होकर पारस्परिक स्त्री पुरुष का भेद मिटाकर मिलती है। यह भी विदेशी सामाजिक रीति नीति की कहानी है जैसे-- ''कौन है ये? --उसने पूछा ? उसने कहा--ये स्टूडेन्ट है............हर साल क्रिसमस की छुट्टियों में रात को इसी तरह घूमते है।

उन्होने एक ब्लाइण्ड बालों वाली लडकी को अपने कंधो पर बिठा रखा था उसके हाथ में गिटार था और वह दूर से कोई स्पेनिश जिप्सी जान पडती थी लड़के-लड़कियों ने उसे चारो ओर से घेर रखा था। अंधेरे में सिगरेटों की बिन्दियां चमक जाती थी।''-२

कथ्य का सामाजिक धरातल मध्य वर्ग से बेहिचक जुड़ जाता है कथाकार ने आज के जीवन को महत्वाकांक्षाओं को एवं लालसाओं को सामाजिक परिवेश की की यातनाओं से गुजरता हुआ देखा है। आधुनिकीकरण की संकमण स्थिति से गुजरते हुए सामाजिक जीवन के विविध क्षैत्रो में परिवर्तन बहुत ही जोरदार धमाके के साथ हुआ है। प्रतिबद्धता के सवाल मोथरे पड गये हैं ।

१-मानव मूल्य और साहित्य पृष्ठ १२४ २- वे दिन पृष्ठ १४१

स्त्री पुरूष के मन में प्रेम के स्थान पर वितृष्णा पैदा हो गयी है। मुक्त आकाक्षाएं क्षत-विक्षप्त हो गई है स्त्री पुरूष वासनातृप्त तो होना चाहते है लेकिन दुराव की भावना चारो ओर है इस भावनाओं में समाज निहित संस्कृति भी विरासत के साथ फीकी लगने लगी है। व्यक्ति चारो ओर आक्रोश का साम्राज्य समझकर आंखें फाड़-फाड़कर अपने को वचाना चाहता है। स्त्री पुरूष सहमे हुए जीवनगत वदहवासो को झेलते जा रहे है। 'एक चिथडा सुख' की कथा वस्तु में लेखक ने लड़की के मनोवैज्ञानिक सत्य को उद्‌धाटित करते हुए नुमाइश की अन्तभूत भावना को उद्‌भावित किया है- नुमाइश के वीच वडे मैदान मे एक वैन्ड मास्टर वेत घुमाता हुआ चल रहा था। पीछे वैन्ड वजाते हुए तीन तिलंगे जो ताश के जोकर जैसे दिखायी देते थे उदास और गमगीन धूप में लस्तम-पस्तम। वह ठहर जाता, सुनने लगता, विट्टी उसका हाथ अपनी हथेलियों में दवोच लेती, उसे घसीटने लगती। 'जल्दी चलो -ऑखें फाड़-फाड़कर क्या देखते हो?-१

दरअसल व्यक्तियों के चेहरे की झुर्रियॉ कुछ भेद वता देती है। विट्टी का हथेलियों में दवोच लेना एक भय का संकेत है और ऐसा एहसास होता है कि यह एक सिम्वल है जिसे पाते ही व्यक्ति चलता ही नही दौड पड़ता है इतने पिछले वर्षो की याद और नुमाइश के आलोक में टोहती पिघलती उदास आखों की परछाई व्यक्ति को वर्षो के वाद और भी छू रही है आश्चर्य है। सामाजिक मरूभूमि पर वहुत वडा सन्नाटा है। लोग सुखी भी है, दुखी भी। एक सुख के सुकून का थोडा सा स्मरण लेखक ने इसी उपन्यास में विट्टी के द्वारा करवा ही दिया है। ....''क्या वात है? वौना अचानक विट्टी के सामने आ खड़ा हुआ तुम वहुत दुखी दिखाई देते हो विट्टी इसवार न पीछे हटी, न हिली ....वौने की आंखो को देखा जो अन्तहीन उदासी में डूवी थी................फिर वह धीरे से मुस्करायी ''सुख क्या होता है।''२

कथाकार ने जिन्दगी के तनावपूर्ण दृष्टि को आज के वातावरण के भली भॉंति पहचाना है सुख और दुख का संघर्ष मानव मन के बीच नही है अगर है तो मानव के मन में अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थति की सोच। व्यक्ति आज समाज से हट कर जितना सुखानुभूति का वर्णन करता है उतना ही समाज के वेवुनियादी ढर्रे से कही न कही जाकर दुखी हो उठता है। शोषण मूलक समाज से मध्य वर्ग का जीवन वहुत अधिक तनाव से ग्रसित है। जीवन का एंकातिक छोर आपा-धापी में कचोट भरता हुआ दूसरे से प्रतिवद्ध हो जाना चाहता है यही आज के व्यक्ति के मानसिक त्रासती भी है समाजिक दृष्टि से कथाकार सदैव शब्दों के माध्यम से अपनी संवेदनाऐ पाठको के बीच फेकता रहता है जिससे उसके द्वारा निर्मित शब्द जलते है और अर्थ सुलगते है। इसी वीच का विस्तार आगे चलकर उस दायित्व तक होता है। जिसे सामाजिक चेतना कहा जाता है।

१-एक चिथड़ा सुख, पृष्ठ १०१-१०२

२-वही, पृष्ठ १०५

कथाकार निर्मल वर्मा ने सामाजिक स्तर पर अनेक चित्र अपनी कथायात्रा में उकेरे हैं। भूख और गरीबी से पीडित 'लंदन की एक रात' का नायक कितना व्यग्र हैं विचारणीय है। नायक ऊपर से काफी सस्ते दिखने वाले एक रेस्तरा में कुछ खाना चाहता है परन्तु उसके पास उतने भी पैसे नही है। जितने की एक टोस्ट और थोडे से चिप्स के लिये उपेक्षित हो इस दरिद्रता का अहसास कथाकार ने भली भॉति प्रस्तुत पात्र के माध्यम से कराया है। नायक की मानसिक स्थिति का सामाजिक जायजा इन प्रयुक्त शब्दों में दृष्टव्य है ....''उस क्षण भूख और निराशा के बावजूद हमारे मन में कोई खीज या कटुता नही थी...........एक लम्बी बोझिल सी सास उस अदृश्य और बैडोल भीड़ के ऊपर उठी और चन्द अश्लील अनर्गल गालियों मे खो गई एक दूसरे की गंध जिसे हम आस पास खडे सूंघ सकते थे गालियों के बावजूद अपना सकते थे....................अब अलग अलग रास्तों पर छितराने लगी थी।''१

'लंदन की एक रात' का नायक विद्रुप सामाजिक भयावहता के कारण एक गली से दूसरी गली में दौड लगाता रहता है उसकी संतृप्त मनःस्थिति एक और अपनी दरिद्र हालत में अटकी हुई थी तो दूसरी ओर रेस्तरा के मीनू और बिल पर कथाकार ने भुखमरी का अन्तर्राष्ट्रीय चित्र प्रस्तुत कहानी में वर्णित किया है। 'जलती झाडी' की एक अन्य कहानी 'पराये शहर में' की वेश्या एक विशालकाय स्त्री है। उसने सस्ती जारजट की लम्बी स्कर्ट पहन रखी है ग्राहक के लालच में वह आदमियों की भीड मे मकान की तरह खड़ी है। लेखक 'पराये शहर में' किस तरह गलियां बदलता हुआ इधर-उधर होता रहता हैं इसी तथ्य का विचित्र चित्रण 'जलती झाडी' कहानी मे भी मिलता है। लेखक का मत है कि खासकर ''अजनवी शहर में वहा हमें कोई नही पहचानता और हम किसी शर्म और झिझक के विना एक रास्ता छोड़ कर दूसरे रास्ते पर हो लेते है।''२

इस सत्य तथ्य से यह स्पष्ट है कि हर व्यक्ति की बीच एक सामाजिक भय है व्यक्ति सामाजिक संसार से एक पल के लिये भी भूल नही पाता इसी बेहद यथार्थ स्वरूप का चित्रण ''पराये शहर में '' कथाकार इस प्रकार करता है.................''किसी ने सीटी बजायी और अश्लील सा इशारा किया ....इसके साथ जाओगें? लडके ने फुसफुसाकर कहा सिर्फ ७०० लीरा...........तुम पूरी रात इसके साथ रह सकते है।वह लड़का मेरे और निकट खिसक आया तीन सौ लीरा सिर्फ एक घंटे के लियें।३ वैश्याओं की दरिद्रता और समाजिक विद्रयता पर वर्मा जी की कलम खूब चली है जान पडता है कि लेखक अन्तराष्ट्रीय स्तर पर घिनौने सामजिक दायरे को चित्रित कर देना चाहता हैं। इसे इसी कम में 'इतनी बडी आकांक्षा', कहानी की जिप्सी लड़की भी एक फौजी के साथ तीन रातो से बराबर सो नही पाती। वह उसके साथ डान्स करती रहती तथा उसे अहसास होता है कि मानो वह ड्यूटी निभा रही हो इसी बीच लेखक ने फौजी और उस लड़की के संवाद का नाटकीय रूप आज के समाज

१-जलती झाडी पृष्ठ ९८ २-जलती झाडी पृष्ठ ७३
३-वही पृष्ठ ७०

की विकृत स्थिति की ओर इंगित करता है।........."कितने साल से फौज में ? -१० महीने से। ९ महीने में आदमी हो जाता है, तुम १० महीने में ठीक से फौजी भी नही वन सका ....धीरे से ....वेवकूफ जिप्सी ने छटके से अपनी वाह छुडा ली, ...फौजी खिसिया गया, फिर वाह पकड़ी, इस वात इतने धीरे से मानों वह मक्खन की हो..........छूते ही पिघल जायेगी।.. ....वाह रे ....विना पिये तेरे साथ यो ही डोलती रहूंगी' इस वात वह हंसी भी और फौजी के कुछ और निकट सट आयी।"१

समकालीन जीवन के सन्दर्भ और विकास के अनेक स्थितियों के विभिन्न पक्षों का चित्रण कथाकार ने "लाल टीन की छत " उपन्यास में प्रभावशाली ढंग से किया है। लेखक मानवीय संम्वधों का नगरीय ओर कस्वाई जीवन वडे ही मार्मिक ढंग से छूता चलता है। उक्त उपन्यास का पात्र काया और लामा का संवाद इस स्थिति का जीवन्त उदाहरण है । ...."क्या है काया मैं यहां हूँ तुम इसे रोक नही सकते ? उसने वढकर लामा का हाथ पकड लिया ....काया उसे देखती रही फिर चारो तरफ देखा कमरे में कोई नही था "कथाकार परिवेशात्मक एकान्त और सामाजिक विद्रूपता का वैयक्तिक मनोवैज्ञानिकता के सहारे अनूठा उदाहरण देखता चलता है उपन्यास के पात्र यौन सुख के मामलें में सामाजिक दायरे को नजरअंदाज करते चलते है। दरअसल जीवनगत परिभाषा की यह आज की वास्तविकता हैं कि आज केवल यौन सुख मात्र के लिये नही वल्कि आज के दौड़ते हुए जीवन की हर तरफ की चेष्टाओं में वह सिमटी हुई कहानी है, जहां एक अकेली औरत रात दिन खाली कमरों में चक्कर लगाने का उपक्रम करती है। वही दूसरी और आज के व्यस्त वालजीवन जो रेस्तरा, होटल मे काम करते हैं जीता जागता स्वरूप इसी उपन्यास में वडे ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है............."नेपाली गोलमटोल चेहरा वहुत छोटे-छोटे वाल, सूखी सेव जैसे कपोल, जिनके नीचे मैल की असंख्य परतें जमा थीं। यह शायद वही पहाड़ी था जिसके वारे में वीरू ने उसे वताया था.......... ....जल्दी जल्दी एक प्लेट से दूसरी प्लेट मे रोटियां ठेल कर वह लौट जाता था।२"समूचे होटल की व्यवस्था में यन्त्रवत काम करने वाला यह एक वल पुरुष ही था। कथाकार सामजिक परिधि के उन दोषो की ओर इशारा करता है जिसमें घुटन, हीनता, भय और कुंठा का स्थान वन गया है। कथाकार ने विदेशी संस्कृति की झलक का व्यवस्थापरक स्वरूप अपने उपन्यास और कहानियां में यत्र-तत्र दिया है विदेशी नायक - नायिका या मित्रवर्ग में जुडें पुरुष - स्त्री किसी भी तरह के समाज की परवाह किये विना अपने आप में सन्तुष्ट वने रहते है। वीच वाजार में एक दूसरे से चिपटना लिपटना, एक ही स्लीपिंग किट में सड़क के किनारे सोना, सभी के सामने कपडे वदलना, विना विवाह के गृहस्थी जमाना आदि इसी तरह के विविध आयाम हैं जिन्हें कथाकार ने जगह - जगह निरूपित किया है।४

१-पिछली गर्मियो में पृष्ठ १०६-१०७ २-लाल टीन की छत पृष्ठ १७४
३-वही पृष्ठ ११० ४-वीच वहस में पृष्ठ २५

'वीच वहस में' की कहानी छुट्टियों के वाद 'मार्था पेरिस प्लेटफार्म पर अपने प्रेमी से लिपट जाती है, गाल चूमती है, हाथ मिलाती है जैसे............उसने बहुत कोमल झटके से लड़की का सिर अपने कंधें से हटा लिया, फिर उसके चेहरे को चूमा। हर जगह...........उसकी आंखों को, वालो को, गरदन के नीचे, ऊपर उसके होंठ यात्रा करते हुए मार्था के मुह पर टिक जाते है, जैसे वह टर्मिनल हो और फिर दुवारा अपनी यात्रा शुरू कर देते है। -?

इसी प्रकार दो घर की नायिका भी वीच वाजार में अपने प्रिय का हाथ पकड़ लेती है इतना तक तो ठीक है लेकिन इसके आगे 'पिछली गर्मियो मे' से 'इतनी बड़ी आकांक्षा' कहानी की नायिका शराव पीने के वाद इतनी अधिक उन्मुक्त हो जाती है कि वह अपने प्रिय से केविन का दरवाजा बन्द करने के लिये कहती है और लिपट जाती है। 'अन्तर' के नायक नायिका जहां वाहर खुले स्लीपिग किट में सोया करते हैं वहां यौन तृप्ति के लिय उन्मुक्त होकर भोग में लिप्त हो जाते है। और समाज जैसी चीज की परवाह नही करते लेखक लिखाता है................''वे वाहर सोते थें एक ही स्लीपिग किट में.............होटल की जो वचत होती थी, उसे वे हमेशा वियर पर खर्च कर देते थें। और वह एक अधेड उम्र का आदमी नीली आँखों में वहती धारा को पहचानने लगता १

कथाकार सामाजिक विद्रूयता का अच्छा उदाहरण, अमालिया कहानी में प्रस्तुत करता है। अमालिया का अरव दोस्तों के सामने जांघिया तक उतार देता है। विदेशी सामाजिक विद्रूपता का अनूठा उदाहरण तव और अधिक वन जाता है जव 'पिछली गमियों में' का महीप वियना, में विना शादी किये एक लड़की के साथ रह रहा है। इसी प्रकार पिता और प्रेमी, कहानी में लडकी की शादी नही हुई किन्तु बच्चा है।

''दो घर'' कहानी में विना शादी के ही गृहस्थी वसा ली गई हैं जिसमें पत्नी, वच्चे, घर सभी कुछ हैं यह सव समाज के दायरे का भीतर का विद्रोह है। वर्मा के कथा साहित्य में समाजिक जीवन की स्थितियों का दर्पणबनने के साथ ही भावी समाज की संरचना के संकेत वाहक का भी कार्य किया। इसीलिये उनका समग्र साहित्य न ही समाजवद्ध है और न ही समाज विमुख। वह कभी अलग खडा होकर समाज को झकझोरता है और कभी इसके साथ खडा होकर उसका श्रोत वन जाता हैं समाज के सन्दर्भ में इस विचित्र सी दिखने वाली विलगता और संलग्नता साहित्य की सार्थक भूमिका का परिचय मिलता है वर्मा के कथा साहित्य में मानव जीवन की अनेक गतिविधियों को सही या गलत दिशा की ओर उन्मुख तो नहीं किया फिर भी वास्तविक जीवन के आधुनिकता बोधीय सोपानों पर प्रकाश डाला हैं उनका साहित्य व्यक्ति और समाज के यथार्थ का अनुभव एंव विवेक की अर्थवक्ता की खोज से जुड़ा हैं।

१-मेरी प्रिय कहानिया, पृष्ठ १०४-१०५

उनके समग्र साहित्य में आज के सामाजिक जीवन की तीव्र उथल-पुथल है यथार्थ ही नही गहरा एंव अनेक स्तरीय हैं समाज सापेक्ष विड़म्बनाओं का इतिहास निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में वहां और अधिक अप्रछिन्न हो जाता है। जहां विचित्र आधुनिकता वोधीय परिधान को पहन लिया जाता है।

कहीं - कही यह विद्रोहात्मक परिधान भारतीय संस्कारों में भी दिखाई देता है 'पिछली गर्मियों में' की नीता, नन्दी गुल्लू भाई, वहन वेटी होकर भी एक साथ नृत्य करते है। यह विदेशी नैतिकता भारतीय स्वछन्दता के दायरे में आज समाती जा रही है 'वीक एण्ड' की नायिका रात भर वाहर रहती हैं और सुवह चोरो की तरह घर लौट आती है ताकि उसके पड़ोसी वाहर से देख न सके इस प्रकार के आचरण विद्रोही शक्ल में भारतीय कहानियों के मध्य भी पाये जाते है।

कथाकार ने अधिकतर विदेशी नैतिकता की जानकारी देते हुए यह सिद्ध करने का प्रयास किया है की प्रेमी - प्रेमिका के शारीरिक सम्बन्धो को भी सामान्य दृष्टि से देखा जा सकता है। सामाजिक स्थितियों और सामाजिक समस्याओं के सन्दर्भ में पश्चिम की वैज्ञानिक और तकनीकी सभ्यता ने भारतीय जीवन को झकझोर दिया है। समकालीन समाज में पश्चिमी करण की सहवर्ती प्रक्रियायें और नगरीकरण और औद्योगीकरण के रूप में अधिक चर्चित रही है इन दोनों में ही मनुष्य का लौकिक सुख छिपा हुआ है जिसके कारण हर स्थिति में स्त्री पुरूष की स्वतन्त्रता हर स्तर पर देखी जा सकती हैं।

डॉ० राम दरश मिश्र ने इस तथ्य पर गहराई से विचार करते हुए लिखा है, कि.......................सामाजिक जीवन से व्यक्ति जीवन अलग हटकर स्वार्थपरता के अंक में डूवता चला गया परिणामतः व्यक्तिगत स्वार्थ उभरकर सामने आ गयें जिससे जातिवाद, क्षेत्रवाद, का खुलकर उपयोग होने लगा''१

वास्तविक रूप में सामाजिक चेतना के विकास की प्रवृति के विकास समाज से व्यक्ति की ओर होने लगे। आर्थिक राजनैतिक तत्वों ने इस प्रवृति के विकास में पर्याप्त सहयोग दिया जिससे परिवेशगत असंगति विविध अन्तर्विरोधों में प्रकट हुई हैं व्यक्तिवादी चेतना का विकास सच्चे अर्थो में पश्चिमी करणका बुनियादी स्वरूप है इस व्यक्तिवादी प्रवृति के विकास के फलस्वरूप व्यक्ति और समाज के सम्बंधों का स्वरूप बदलने लगा है। नगर समाज में जीवन के यन्त्रीकरण ने सम्बन्धों की रागात्मकता को संकुचित कर दिया है अतः व्यक्ति का व्यक्ति से संम्बन्ध, व्यक्ति का परिवार के अन्य सदस्यों से सम्वन्ध विच्छिन्न होने लगा।

१-हिन्दी कहानीः अन्तरंग पहचान ,पृष्ठ ८७

यही सब कुछ निर्मल वर्मा की कहानियों मे चिन्हित हैं व्यक्ति की स्वतन्त्रता के लिये विवाह संस्था का विरोध हर स्तर पर दृष्टिगोचर होता है। भोग, स्वछन्दता, अति वैयिक्ता की विचारणा ने लेखक के उन उभरे संकेतो को प्रकट किया है जिन्हें कहते और सुनते हुए आज भी झिझक होती है। ''पिछली गर्मियो मे'' 'कि कहानी'' ''पिता और प्रेमी'' में कहा गया है कि वहुत कम उम्र में भी वच्चे शायद अपने माँ के प्रेमियो को भांप जाते है। प्रेमियों को देखकर नही वल्कि अपनी मां का रूख देखकर ।''१

लेखक इस प्रकार प्रेम और परिवार का चित्रण लगातार करता चलता है। 'इतनी वडी आँकाक्षा' कहानी में मद्यपान और स्त्री का रूप इस प्रकार लेखक प्रस्तुत करता है................''पीने के वाद अपनी औरत भी पराई सी लगती है। इतनी पराई नही कि दिलचस्प जान पडें। इतनी अपनी भी नही कि उसे नजरअंदाज किया जा सके। ''२

कथाकार वर्मा ने सामाजिक विसंगितयों को मध्यवर्ग के अन्दर वखूवी स्वीकार किया हैं और भी है कि मध्यवर्गीय जीवन, मध्यवर्गीय मानसिकता कथाकार की सवेदना का प्रमुख केन्द्र वना हुआ है जैसे विवाह अब केवल धार्मिक या सामाजिक कर्म न होकर स्त्री-पुरूष की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बन गया है। पतिनत्व और मातृत्व नारी जीवन की चरम परिणिति न होकर केवल एक सामाजिक अनिवार्यता भर रह गयी है।

नारी, पत्नी और माता होकर भी अपनी व्यक्तित्व और प्रतिभा के विकास के लिये सचेत हो गई है। पारिवारिक सम्वन्धों में सवसे वडे अन्तर नारीत्व विचारणा मे हुआ है आज का पुरूष कितना ही आधुनिक क्यों न हो गया हो किन्तु उसकी पत्नी के रूप में नारी की परिकल्पना जहां एक ओर परम्परागत बनी हुई है वही दूसरी ओर वह नारी को केवल अपने तक सीमित रखना चाहता है इधर नारी पर अस्तित्ववादी चेतना के फलस्वरूप पुरूष को समान्य धर्मी देखना चाहती है। इस प्रकार स्त्री पुरूष का द्वन्द निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में भरपूर है कथाकार निर्मल वर्मा ने नगरीय समाज का जीवन का बहुबिधि चित्रित किया है ।

वस्तुतः नगरीय समाज का जीवन बहुआयामी है। 'जटिल है और गतिशील है कारखाने, होटल , कार्यालय, सड़क, मैदान, आकाश से होकर घर की रसोई और सोने के कमरे में भी यन्त्र का मानव अस्तित्व पर प्रभुत्व जम चुका है। इस प्रकार उसका सारा सामाजिक जीवन कृत्रिम हो गया है।

''बीच बहस मे'' की कहानी में ''दो घर'' की नायिका परिवेश का सूनापन और आज के आपाधापी परक परिवेश की झल्लाहट में अपने और अपने मिलने वाले पात्र को संकेत करती हुई कहती है।[3]

१-पिछली गर्मियों में पृष्ठ १०१ २-वही,पृष्ठ १०२

३-बीच बहस में,पृष्ठ ७५

.............''हम आमने - सामने खड़े रहे। वे हांफती रही ? बन्द कमरे की स्मृति को खुली सड़क पर खोलों, तो सिवाय विस्मय के कुछ हाथ नहीं आता। ... .मैं दो बार आपके घर गई थी, -दोनो वार ताला लगा था। .... .मेरे दिल में उनके प्रति जो रूखापन था.............वह एक दम उपर सरक आया। ''?

कथाकार युगानुरूप युग सत्य का संक्रमणशील व्यापार अपने कथानक में सवारता चला है। सामाजिक जीवन के नैतिक अनैतिक दोनो ही पक्ष समस्या मूल होकर प्रस्तुत हुए है सुधारवादी और पुनरूत्थानवादी प्रभाव से इनके कथानक समस्या का समाधान एव यथार्थ की विषमता का विकल्प खोजती चलती है। यह और बात है कि इन कहानियों के समाधान मात्र वैयक्तिक तथा काल सापेक्ष रह गये है। स्त्री पुरूष सम्बन्धों का यथार्थ और सम्बन्धों से अद्‌भुत तनाव इनकी कहानियों का विषय बोध है। सामाजिक व्यवस्था की टूटती हुई दीवारे इनके कथा साहित्य में जहां तहा दिखाई देती हैं व्यक्ति के मूल संघर्ष आज अदभुत और अविश्वसनीय वनते जा रहे है। इसीलिये वैयक्तिक चेतना समाज के मध्य इतनी कुछ अस्तित्ववादी वन जाती है कि किसी भी नियति या धर्मवाद की दुहाई फीकी पड़ने लगती है। व्यक्ति इतना कुछ एकाकी हो गया है कि वह किसी भी तरह काल सापेक्ष होकर दिन व्यतीत करता नजर आता है । कहानीकार ने ''वीक एण्ड '' कहानी के कथ्य में इस जीवनगत आयाम को दार्शनिक सन्दर्भ देते हुए लिखा है ....''मरता कोई नही.......... .....दिन भी खत्म नही होता। दूसरे दिन घडी लौट आती है, जो पिछली रात जंजीर तोडकर वाहर अन्धेरे में भाग गई थी,...................जैसे यह दिन रेलवे के डिब्बे में वन्द धूप में उनीदी उसकी आखें जिन्हें वह अपने होठो में मूद लेती अगर आस पास इतने लोग न होते। तथा वे जानते है कि जो आदमी उसके कन्धें पर सिर रखे ऊंघ रहा है, कल रात उसकी देंह पर था। समुद सी उफनती देह पर एक अवश ढेले -सा उठता मरता हुआ..............मरता कोई नही ।''१

कथाकार ने व्यक्तिवादी चेतना को समाजिक जीवन व्यापक धरातल पर देखा है। जीवनगत बहुत सारे सन्दर्भ पुरानी लकीरो की भॉति मनुष्य के चेहरो पर गढ जाती है। जिन्हें बार बार धो देने पर मिटा नही पाता। इसके वावजूद वे लकीरे वर्तमान में अस्तित्वहीन होती है और कही-कही तो प्रेम में कटुता का कारण भी यही रहता है। सामाजिक बाधायें जहां एक ओर है, व्यक्तिवादी प्रणय की प्रतिठा भी है।

स्त्री - पुरूष की इस प्रकार की वहुत सारी समस्यायें इतनी अधिक सामान्य नही है, जितनी की दूर से लगती है।

१-बीच बहस में पृष्ठ ३७-३८

आज की सामाजिक समस्याओं के प्रति हर लेखक का विश्वास हिल गया है। समाज बनाम दिखावे और ढोंग, पाखण्ड के गलियारे बन गये है। आज का आदमी निजी आंतरिक आग्रह और बाहरी परिवेश के दवाव में जूझ रहा है। स्त्री पुरूष का सह सम्बन्ध सामाजिक प्रतिमानो पर विल्कुल नही टिका है स्त्री पुरूष दोनो ही हर तरह की स्वतन्त्रता की हामी भरते है जिससे उनका पारिवारिक जीवन समान धर्मी होने के कारण विसंगतियों में जूझता रहता है। इस दोहरी मानसिक पीड़ा का शिकार केवल स्त्री ही नही है पुरूष उससे भी कुछ ज्यादा है। कथाकार वर्मा ने वहुत सारे ऐसे कथ्य चुने है जिनमें जीवन का हल्का टिमटिमाता प्रकाश केवल रास्ता भर दिखलाया है और वह जीवन जिसमें दोनो ही जीने की लालसा प्रकट की थी, ओझल ओ जाता है। 'कौवे और काला पानी' की कहानी 'सुवह की सैर' का पात्र निहालचन्द जीवित इसलिए है कि उनको लगता है कि जैसे उनकी चोंचें अखवार पर नही, उनकी नींद में सुराक भेद रही हो। चिडियों के पीछे चीले आती और उन्हें खदेरकर वचे-खुचे टुकडो को दवोचकर गायव हो जाती।

..................निहाल चन्द लेटे रहते है आवाज को अपनी गति के पास आने देते न हिलते डुलते। दम साधकर दिल को ढांपे रहते । "-१

कथायात्रा के समाज सापेक्ष अध्ययन करने पर हम कुछ निष्कर्ष इस प्रकार तय कर सकते है। सवसे पहले ऐसा कहने में हिचक नही है कि कथाकार ने सामाजिक यथार्थ को पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर उन्मुक्त होकर स्वीकार किया है। दूसरी ओर उनकी यथार्थ के भीतर वे तमाम शक्तियां खुलकर अग्रणी हो जाती है जिनमें आज की सामाजिक वातावरण का निर्माण है और आज के मनुष्य के संस्कार का परिस्कार है लेखक ने तीसरी ओर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि मध्य वर्ग में व्यक्तित्त्व वादी चेतना ही प्रवल हो गयी है मध्य वर्गीय चेतना के तनाव, टकराव संघर्ष की स्थिति में निराशा, घुटन आक्रोश, विद्रोह निरोध आदि इसलिये उनके कथा साहित्य में अभिव्यक्यि हुए है। कथाकार ने समाजिक जीवन की अंसगतियों विसगतियों, विषमताओं और जटिलताओं को जहाँ एक ओर उभारा है वही दूसरी ओर आज की व्यवस्था के स्वच्छन्दतावादी परिवेश के निर्माण की वकालत भी की है फलतः कथानक के परम्परागत आदर्श ढह गये है और आम आदमी का सामान्य जीवन भी यथार्थ की गन्ध में हर स्थान में लिपटा हुआ दिखाई देने लगा है। इतना ही नही आम आदमी की दमित, कुंठित आर्थिक महत्वाकाक्षाओं की पीड़ा को भी पर्याप्त अभिव्यक्ति कथाभी यही है । इसलिये एक स्वर में आज के आलोचको ने स्वीकार किया है।

१-कौवा और काला पानी पृष्ठ ७७

कि निर्मल वर्मा का कथा साहित्य न तो बाहरी यथार्थ की ही अनुभूति की कथा कहता है और न ही भीतरी परिवेश गत विच्छन्दता की कहानी उनके साहित्य मे तो जीवन परिवेश के दवाव में बनते विगड़ते मानवीय रिश्ते मूल्य और संवेदनाओं सभी अभिव्यक्त है ।

यथार्थता परिवेशगत जीवन और अनुभूति सत्य लेखकीय दृष्टि का एक अटूट रिश्ता उनके साहित्य में पक्ति...पक्ति के मध्य विद्यमान है। लेखक को कल्पना का सौन्दर्य इतना अधिक आनन्द नही देता जितना कि सामाजिक जीवन चेतना का वोध. वने हुए हैं।जैसे यौन, भोगन, लिप्सा, अनुभूति, भूख, वेकारी, सन्त्रास, उत्पीड़ा आदि कथाकार देशी-विदेशी सभी तरह के सामाजिक व संस्कृतिक उन्मेषों को एक साथ वटोरकर आगे वढता रहा है उसका दृष्टिकोण जहां सामाजिक प्रतिस्थापनाओं के प्रति विद्रोही है। वहां आर्थिक स्वतन्त्रता का भी पक्षधर है।

(ग) साहित्य स्तर पर कथ्य और शिल्प की सृष्टि :-

कथाकार निर्मल वर्मा के समग्र साहित्य को अनुशीलित करने के बाद वहा एक ओर सामाजिक, सांस्कृतिक स्थितियों का सन्निवेश मिलता हैं वहां दूसरी ओर परम्परा से हट कर साहित्यक स्तर पर कथागत एंव शिल्पगत नवीनता मिलती है । साहित्यगत इन दोनो आयामों को हम कमशः विवेचित कर सकते है। आज का कथा साहित्य परिवेश के समस्त दवावों के वीच में सघर्षरत है कारण यह है कि आज का व्यक्ति अपने कार्य व्यापारों का पुन्ज वन गया है। और कथा साहित्य इसी यथार्थ का आत्म साक्षात्कार कराता है।[1] वर्मा जी ने जीवन का कटु और तिवृत यथार्थ ही कथा साहित्य का वर्ण स्वीकार किया है। उनका यही दृढ मत है कि एक लेखक को समसामयिक समस्याओं और प्रश्नों से अपने को अलग नही रखना चाहिये ?यथार्थ से साक्षात्कार के भिन्न रूपों के पार्श्व में कथाकार ने वहुत अच्छी रूचि से आत्म चेतना के स्तर वुंने है। ''वे दिन'' उपन्यास में परिवेशगत यथार्थ का जायजा लेता हुआ लेखक कहता है ....हम इन्हें, झूठे............वसन्त, के दिन कहा करते थें। वे ज्यादा टिकते नही थें । लेकिन जव वे आते थें लोग आतुरता से उन्हें निचोड लेते थे उनकी आखिरी बूंद तक। शहर की सडकें लोगों से भर जाती ल्वेंकमैन्ट की वेन्चों पर बूढी औरते अपने अपने पैरम्वुलेटर के समय ऊघती रहती है।''२

इस उपन्यास में लेखक ने महायुद्ध के समय झुलरो यूरोप के परिवेश का चित्रण मानवीय स्थिति के साथ किया हैं। वैसे इन पक्तियों मे मानवीय सम्वन्धों की उपमा है। और परिवेश की वदलती चेतना भी है कथाकार कह देना चाहता है कि रिक्त -स्थान पर एक बेढ़ंग रूक्षता ने जगह घेर ली हैं। उस जगह को सरसता में वदलने के लिये आदमी हर स्तर प्रयत्नशील है। जिसके कारण यह सौन्दर्य से परिपूर्ण क्षणों की तलाश करता नजर आता है।

१-नव भारत टाइम्स ,नवम्वर १९८६(साक्षात्कार)
२-वे दिन पृष्ठ ४४

वसन्त ऋतु का वदलना ,परिवेश के परिर्वतन की एक खूवसूरत किन्तु यथार्थ कहानी है । यथार्थ के चौखटे में लेखक ने केवल परिवेश को ही नही देखा वल्कि व्यक्तियों के परस्पर सम्वन्धों और संवेदनाओं का उस फ्रेम मे दायरा बनाया है। कथाकार कहता हैं ....,''एक उम्र में यह विचार भी वहुत रूआसा लगता हैं कि कोई खाली खाली सा होकर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है.........एक संग वहुत सुख सा भी होता है -वाद में लगता है कि तुम सवसे अलग हो तुम एकदम वड़े हो गये हो.........और यह असम्भव सा ....सा लगता है कि जिस घडी तुम सो रहे हो उस घड़ी तुम्हारी कोई वाट जोह रहा हो ....तुम्हे अचानक पहली वार अपनी अनिवार्यता का पता चलता है।''१

यथार्थ संवेदना के आत्मचेतना पर ये पक्तियों उद्घृत होने से अधिक तीव्र और गहन हो गयी है। इस यथार्थ के पहलू में रूमानियत भी है और अस्तित्वबोधीय भी है । कथाकार वन्धनहीन स्वतन्त्रता की हामी भरता है और दूसरों की स्वतन्त्रता के लिये कुछेक बन्धन भी स्वीकार करता है इसलिये इस प्रकार का यथार्थ कटु जीवन के आयामों से जुडकर रूमानियत में भी तिक्त होता चला गया है। अजनबी स्त्री पुरूष सम्बन्ध को यथार्थ के धरातल पर इस उपन्यास में बहुत अधिक बुना गया है। उपन्यास की कथागत सीमायें व्यक्तियों के आत्म चेतना में सटी हुई है जिससे हर देश और हर व्यक्ति के अनुरूप का यह उपन्यास सहज हिस्सा वन गया है। इस उपन्यास की पात्र रायना इस वात का अनूठा उदाहरण है कि भीषण विपत्तियों और दुखों को झेलता हुआ भी इंसान के भीतर आशाओं का समुद्र सूखता नही वल्कि नये नये स्थानो और नये नये व्यक्तियों से सम्पर्क होने के पश्चात वह उत्तरोत्तर आशाओं से फिर भर उठता हैं। लेखक ने इस कथानक को निस्सीम वनाते हुए मानवीय नियति की सर्वभौतिकता का नये आयाम और नये पहलू छुए है। ''लाल टीन की छत'' उपन्यास में कथाकार ने एक ऐसी लड़की का वर्णन किया है जो पहाड़ीं पर रहती है और सच्ची झूठी स्मृतियों से खेलती रहती हैं यद्यपि इस कथा परक खेल में बहुत वडा असहनीय सम्मोहन है जिससे वह कभी सोच में डूवकर तिलमिला उठती है। तो कभी देहात्म बोध के कारण बहुत अधिक उन्मुक्त हो जाती है। कथाकार ने उस पात्र में परिवेश का यथार्थ और यथार्थ का उन्मेष दोनो ही जुड़वा वना दिये है। देखें -,''शुरू सदियों की वह रात काया को हमेशा याद रहती है। .... एक पुराने फोटो की तरह ....जिसकी आकृतिया. रंग सब फीके पड जाते है। लेकिन वह सांस घडी, वह मौका, वह दिन साफ पत्थर की लकीर ......सा चमकता है .. ..। वह सर्दियो की पहली शाम थी जव मंगतू ने सव कमरो मे आग जलाई थी''२

स्मृतियों के गर्भ में खेलती हुई वह पात्र असीम सम्मोहन से और अज्ञात आशंका से उभयनिष्ठ हो जाती है और उसे अहसास होता है कि वह फोटो आज भी उसके

१-वे दिन पृष्ठ ७९ २-लाल टीन की छत पृष्ठ ५४ ३-एक चिथड़ा सुख पृष्ठ ९४

सीने से फड़फड़ा रहा है। बाहर से भले ही धुंध चढ़ गई हो लेकिन भीतर से वह फोटो मनमस्तिष्क में चिपका हुआ ही है। पात्र की मानिसकता का यह कथ्यगत उदाहरण अनूठा ही नही है वल्कि परिवेश के यथार्थ को निस्छलता के साथ उगल रहा है। काया की देह एक दम शिथिल हो गयी थी लेकिन भीतर से उसे एक वहुत वड़ा झटका सा लगा था जव उसने अपने भीतरी परिवेश को सम्मोहन की दृष्टि से देखा था।

सम्बन्धगत यथार्थ के अनेक पहलू रूमानियत ढंग से इस उपन्यास की कहानी से जुड़ें हुए है। जीवन का वह दूरूह हिस्सा जो केवल चेहरे के भाव मात्र से वाहरी दुनियां समझ लेती है लेकिन पात्र विशेष की यह दुनिया चेहरे से नही मन में गुथे उस सूक्ष्म तार से समझती है जिसका एक छोर अतीत के गर्भ के भीतर बैठी तन्द्रा आंखो से बाहर बटोर लेना चाहती है। वह प्रंसग जव और अधिक सार्थक हो जाता है। जब'' बिट्टी'' धीरे से नित्ती भाई के चेहरे पर आँखे गडाकर कहती है ....,''तुम क्या सचमुच उससे प्यार करते हो? तुम क्या सोचती हो? मैं सोचती हूँ ....तुम कुछ करते क्यों नही हो? विट्टी ....तुम्हे सवकुछ आसान लगता है । ....मुझे इतना मालूम है, वह कितना तडपती है। तुमने ....तुमने कभी ....।?'' इस प्रकार के सम्वाद से उनके चेहरे पीछे छाया में रग जाते हैं । सहसा वे सिमटे हुए हो जाते है और फटी फटी आंखों से अहसास करने लगते है कि न तो वे अपने भीतर है और न वाहर। सामान्य जिन्दगी उनके लिये दूभर हो गयी है। बिट्टी ने चारो ओर घूमता हुआ जीवन कुहासे में लिपट गया हैं वह जी भर कर जी भी नही सकती है। और भावहीन होकर रह भी नही सकती है उसकी आंखों में एक असाधरण सी चमक उमड़ आती है। और वह चमक ऐसी प्रतीत होती है जैसे कि देह के किसी ऐसे पर्दे को छानती हुई आयी है । जिसने सारे जीवन में सिहर भर दी है । विट्टी के जीवन की इस खुली किताब पर एक फ्रेम चढा है। जिसमें कही भीतर के अधेरे का टिमटिमाता प्रकाश भी है कथाकार विटटी पात्र के जीवन में भीतर उमडते उददाह को बूंद-बूंद उडेल लेना चाहता है। जिसके कारण बिट्टी के जीवन का वह सारा भाग जिसे उसने केवल सोच में ही जिया है खुद व खुद खुल उठता है। भावनाओं की रंगीन तस्वीरे अजीव व्यग्यांत्मक तव वन जाती है जव वह नित्ती भाई को उदासी में घिरा हुआ पाती है विट्टी के सरकते जीवन की कहानी वाहर के परिवेश में आकर कुछ ठिठक गयी है पीछे मुडकर अपने इतिहास के पन्ने उलटना चाहती है पर मुड नही पाती है। परिवेश के साथ जीवन वनी हुई विट्टी का हौसला किस प्रकार पस्त हो गया है। विचारणीय है ....,''एक थरथराती सी कौंध उसकी शिराओं में लपकी, उसने आंखें मूद ली, मार्च की हवा, रिहर्सल की आवाजे डूबते सूरज की पीली चमक ....सव कुछ गुलेल की काली नोक और गले के भीतर फसी सास पर थिर हो गया था ....क्या यह असली है ?,''[1]

१- वही पृष्ठ ६८

दरअसल उसने इतना ही जाना कि यह सब जीवन का रहस्य है जिसमें अगल -बगल के पिछवाड़े भी है, सामने का अंधेरा भी है और पीछे का प्रकाश भी।

कथाकार कहना चाहता है कि आदमी के लिये यह सब कितना अधिक अभिशाप है कि वह विस्मय से अजीव हरकतें देखता रहता है । और मुखौटा लगाकर सब कुछ छिपाता रहता है। कथाकार की दृष्टि एक विट्टी पात्र में ही जागरूक है जिनके मन में बूदं-बूंद रिसती हुई चिन्ताएं जलती बुझती टपक रही है[1] लेखक जीवन के उन सभी बुनियादी आयामों को नये स्वर प्रदान करना चाहता है जिनको आज तक अन्य कथाकारों ने बहुत दूर से अनछुये रूप में देखा है। "एक चिथड़ा सुख" उपन्यास कथा की दृष्टि से मनोवैज्ञानिक अनुभूत तथ्य को उभारने वाला उपन्यास भी है जो आज का है। और आगे का भी है निर्मल वर्मा की कहानियों में कथानक की दृष्टि से सौन्दर्य , प्रेम, वेदना, रहस्य, प्रकृति, विश्वास ,अविश्वास जहां एक ओर वहा दूसरी ओर विसंगति व्यर्थता बोध, अकेलापन,अजनवीपन, संघर्ष, शून्यतावोध आदि सब कुछ है । कहानीकार वर्मा थोड़े शब्दों में पात्र का समूचा स्वरूप अन्तर सब कुछ स्पष्ट कर देता है[x] 'लन्दन की एक रात'' कहानी में प्रेम के सन्दर्भ को जीवन्तता प्रदान करते हुए कहते है कि प्रेमिकाओ के नेत्र सोती जागती उस गुड़िया से है जिनके सिर पीछे होते ही मुंद जायेंगे ?''

यह तथ्य केवल प्रेमिका के साथ ही नही है वल्कि अन्य जीवनगत सम्बंध ा के साथ भी है। कथाकार ने इस प्रकार के अलग-अलग पात्रो के आश्वासन भरे जीवन को आज की स्याही और तूलिका से रंग भरते हुए देखा है। 'इतनी बड़ी आकांक्षा' में जिप्सी लड़कियों की आंखे काली है। "पिता और प्रेमी" कहानी में बच्चो की आंखे नीली है ये सारे रंग स्थिर, स्निग्ध, शान्त, अवोध आदि भावो का अंकन करने में सिद्ध है[1] प्रेम वर्मा के कथासाहित्य में भाववाचक संज्ञा वनकर ही आया है। रूमानियत का अंश इसलिए बहुत अधिक वढ़ गया है। डॉ० सुरेश सिन्हा ने मुक्त विचार से इस धारणा की पुष्टि की है। 'निर्मल का मूल स्वर रोमांटिक है, उन्होने एक दो अप वादो को छोड़कर प्रेम कहानियां ही लिखी है। ट्रेजडी यह है कि इन सारी प्रेम कहानियों में कथा एक ही है केवल नाम ओर सन्दर्भ हर कहानी में परिवर्तित होते गये है?''

रूमानी प्रेम प्रसंगो के अनेकानेक रूप उनकी कहानियों में मिल जाते है।'दहलीज' कहानी में शम्मी भाई की उपस्थिति मात्र ही रूनी का दिल धौकनी की तरह धड़कने लगता है । वे मेज के नीचे अपना पांव उसके पांव पर रख देते है।''२

लवर्स के नायक को यह सोचना अच्छा लगता है कि वे दोनो एक ही शहर में रहते है।-३

१-जलती झाड़ी पृष्ठ ११४ २-हिन्दी कहानी का उदभव और विकास पृष्ठ ५९७

३-जलती झाडी पष्ठ ९० ४-वही पष्ठ ८

वौद्धिक झुकाव आज के व्यक्ति की सहज प्रवृति। आज की कहानी में व्यक्ति की रागात्मकता का अनुभव ही वौद्धिक अनुभव की निष्पति है।

"पिछली गर्मियो में' कहानी में कहानी के पात्रों को यह वात अच्छी लगती है कि वे घरों में वाहर सड़क पर चल रहे है"-; इस प्रकार की यथार्थ संवेदना पात्र विशेष की आत्म चेतना पर भिन्न-भिन्न प्रकार से गुजरती है "वीच वहस में" कहानी, "वीक एण्ड" की नायिका को यह वात आश्चर्य युक्त कर देती है कि वे एक के वाद दूसरे दिन भी साथ रह रहे है।"-२ अनुमति की समग्रता का सार्वभौमिक सत्य नहीं हुआ करता। "परिन्दे" में संकलित कहानी "तीसरा गवाह" की नीरजा की यथार्थ सम्वेदिता विभिन्न स्तरों पर उद्घाटित होती है । वह प्रेम और सहानुभूति के होते हुए भी कोर्ट रूम में विताये गयें दस मिनट में ही अपना निर्णय वदल देती है"।३ कहानीकार वर्मा ने अपनी कहानियों में विविध धर्मी विविध रंग कथानक को लेकर भरे है स्त्री - पुरूष के सह सम्वन्ध पर जहां उनकी लेखनी जमी है। कहानीकार भाव सम्वेदित हृदय को खुले पृष्ठ प्रदान करता है फिर वे चाहें अन्दरूनी हो या वाहरी । सवसे बड़े मजे की वात तो यह है के प्रेम- प्रसंग के वदलते, घिसते, फिरते सम्वन्धों को कभी लेखक ने जान दे दी तो कभी शमशान घाट पर उन्हें ले जाकर आग भी लगा दी है लेखकीय तटस्थता द्रवित दोनो ही भावों से एक जैसी ही रही है कथ्यात्मक सूत्र भिन्न होते हुए भी प्रमाता वर्ग को वरवस अपनी ओर आकृष्ट करके ऐसा वन्धनमय वना देते है कि वह सोचने लगता यह सव मेरा ही है, मेरे लिए ही है। निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में अनेक सूक्ष्म एवं नवीन प्रयोग मिलते है। वैसे वर्मा के कथा साहित्य में शिल्पगत ऐसा प्रयोग नहीं है। जिसे कथा आन्दोलन प्रतिमान मना जा सके । वस्तुतः कथाकार कथानक का तानावाना वनुता चलता है, शिल्प प्रयोग उसका प्रतिपाध नहीं वनता। महेन्द्र भल्ला ने तो ठीक ही लिखा है............"सार्थक है । वह अनुभूति जो कथाकार ने आपके साथ-साथ इसी क्षण में प्राप्त की है। विना कार्य कारण श्रखंला में वंधी घटनाओं और रंग -विरंगे चरित्रों के मायाजाल की दृष्टि कियें विना पाठक पर कोई एहसास जताये और बिना अपने कधों पर सारे जहाँ का दर्द की झूठी लाश उठाये ,.............किसी एक वाक्य किसी एक घटना, किसी एक चरित्र अथवा किसी एक उपकम से उसका रचनात्मक संगठन नहीं हुआ इसीलिए वह अपने समूचे रूप में ही सार्थक है। उसका एक-एक रेशा महत्वपूर्ण है'४

शिल्पगत जटिल अनुभूति को वर्मा ने संश्लिष्ट कर इस प्रकार गूंथा है जिसे 'वे दिन' उपन्यास में स्त्री पुरूष के सम्वन्ध के वीच भली भाँति देखा जा सकता है कथाकार जटिल मनः स्थिति को चारो ओर से विखराव फैलाव के आग्रह मे लाकर खड़ा कर देता है। उदाहरण विचारणीय है..........'-'एक जिये हुए क्षण की वासी छाया-सी, जिसे हम न छोड़ सकते है, न दुवारा पकड़ सकते है। रायना ....उसका मुंह उठाकर मैने अपनी तरफ कर लिया।

१-पिछली गर्मियो में पृष्ठ ११८ २-बीच बहस में ३७
३:परिन्दे ४७ ४-समकालीन दिशा और दशा पृष्ट १७७

वह अजीव निरीह आखों से मुझे देखती रही । उस क्षण मैं उसे कुछ नहीं कह सका. .... उस सुख के वारे में भी नही, जो मै अपने लिये छीनता रहा था, विना यह चिन्ता किये हुए कि वह इस दौरान कितनी खाली होती गयी है ''१

कथाकार ने अपने विखराव और अलगाव को इस लघु प्रसंग में इतना दूरुह रूप दिया है कि शिल्पगत प्रयोग अपने आप में वौना हो गया है। कथाकार रचनात्मक पक्ष की अपेक्षा तो नही करता लेकिन अनुभूति की तीव्रता शिल्प का ह्रास अदृश्य कर देती है। इसीलिये इस प्रकार की अनुभूतियां खुद व खुद इतनी सजग हो उठती है कि मामूली शव्द गहरे होकर मनः स्थिति उदघाटन करने लगती है। उपन्यासकार वर्मा शिल्प वैभव के प्रति मौन नही है। उन्होनें शव्द सुलगते हुये देखे है और अर्थ चिनगारी लिये हुए ।

इन शव्द-अर्थ प्रसगों को 'एक चिथडा सुख' उपन्यास में भली भाँति देखा जा सकता है। --''विट्टी'' के शव्द चुक जाने के वाद भी ओठो के वाहर फिसलते जा रहे थे -कमजोर, शिथिल, वेमानी लेकिन एक लीक में वंधे हुए । अपने ववंडर में घूमते हुए, दोहराते हुए..................डोंट टच मी, डोंट यू देयर टू टच मी।''-२

विट्टी के फफड़ाते होठो की भाषा और धड़कनों भरे हृदय की धधकती ज्वाला ने इन अंग्रेजी के लधु वाक्यों के प्रयोगो से स्पष्ट कर दिया था कि वह ना उम्मीद रखती है और न दूरस्थ झाडियों में अपने को उलझाना चाहती है गहरी अनुभूति क्षण भर के लिये भले ही उन्हें विचित्र कर दिया हो लेकिन इतना अवश्य था कि वे कही भीं अटक नही रहे थे। इस प्रकार के वाक्य विन्यास से लेखक स्पष्ट कर दिया है कि जीवन जितना दुरूह है कि उतना उसका प्रयोग भी वैसे शव्दों के प्रयोग वल पर स्पष्ट नही हो पाता मन की वात शव्दों से हू वहू वांधी नही जा सकती फिर भी इस उपन्यास के हर पात्र ने प्रयास किया है कि जीवनगत गुत्थी को नये अर्थ देकर सुलझाया जाये। कथाकार वाक्य विन्यास, शब्द प्रयोग को कोई मौलिक देन नही मानता। वह प्रयुक्त पात्रों के माध्यम से कहलवा ही देता है कि आज के जितने टेढ़े - मेढ़े रास्ते है उतने ही शब्दों के प्रयोग भी इस दृष्टि से कथाकार को वहुत सफलता मिली है। हिन्दी में डायरी शैली के माध्यम से पात्रगत अनुभूति को अभिव्यक्ति दी गयी है कथाकार वर्मा ने तो इस शैली में अग्रेजी वाक्य के प्रयोगों के आधार पर और अधिक बलपूर्वक भीतरी मन की उकलाहट को उड़ेल दिया है जा वात शिष्टतावश हिन्दी भाषा से बाधित नही हो पाती उसे अग्रेजी के प्रश्रय में कथाकार ने बांधा है। कथाकार की सार्थकता उसके शिल्प पर अधिक निर्भर करती है उस शिल्प की सार्थकता कथानक के उद्देश्यपरक दृष्टि की अपेक्षा रखती है इस प्रकार कथानक और शिल्प की सह सम्बन्ध रेखा सोद्देश्य ही है 'लाल टीन की छत' उपन्यास मे दृष्टि मे एक ऐसे शैल्पिक संयोजना की कहानी है।

१-वे दिन पृष्ठ १८०   २-एक चिथडा सुख पृष्ठ १२०

३-लाल टीन की छत पृष्ठ १०३

जिसमें एक लड़की के इर्द गिर्द सारी झूठी और सच्ची स्मृतियां घूमती रहती है। शिल्पगत प्रयोग वहुत वडी वारीकी से एक हल्की छुअन को लेकर कथानक से जुडता रहता है। शव्द, स्मृति मूर्तरूप, कैसे धारण कर लेती है इस विन्यास भाव को उपन्यास कार ने भली भॉति संवारते हुए लिखा है...................''वह आगें वढ़ी तो सामने शीशे के नीचे वे शव्द अव भी लिखे थे, जो वह वहुत पहले से देखती आयी थी ....अटैन्शन प्लीज, स्टैप्स ए हीड । सिर्फ दो सीढियां उतर कर ड्राइंग रूम आता था पहले जव आती थी, तो पंजों पर खडे होकर शीशे में अपना चेहरा देखती थी इस वार सीडी से उतरती ही वह दिखाई दिया उसका अपना चेहरा, और न जाने क्यों वह उसे वहुत वदला सा दिखाई दिया..............पिछले दिनो से अलग, जैसे दो वहुत उदास आखें उसकी तरफ घूर रही हो ''-१

लेखक ने काया की मनः स्थिति का और असमंजस से भरे हृदय का वदलता हुआ भाव पहचाना है। लगता है कि काया के समक्ष धुंध छा गयी है और उजाला मिट गया है।

जहॉ उसे देखती है स्मृतियों के कारण भारीपन ही नजर आता है उसे अहसास होता रहता है कि वह कथा भी मन मस्तिष्क की याद को वर्तमान के झोको से बुहार नही पायेगी। इसीलिये हर पल वहुत अजीव सा और वढेगी पहचान लिये हुए उससे भूत भविष्य की कुछ वातें कहता रहता है। शिल्प तो इस वुने अथवुने शव्द प्रयोग से काया का भीतरी संसार ठहर सा गया है। और उसे अनुभूति होती है कि किसी ने अपने हाथों से वहते पानी को रोक लिया है और हाथों के उपर छलछलाता वह पानी नीचे गिरता जा रहा हो।

काया 'लाल टीन की छत' उपन्यास की विशिष्ट पात्र है वह मन के डूबे हुए हिस्से को हल्के हल्के शव्दों के माध्यम से परिवेश में उरेहने प्रयास करती है। और वह पहाडी की जिन्दगी में अपने ढहते हुए वर्षो को पुनः समेट कर फिर से अतीत में खो जाने की पहल करती है और कह भी देती है...........''जव लम्वे अरसे वाद आधी जिन्दगी शहरो मे गुजार कर, मै दुवारा उस पहाडी स्टेशन में आयी, तो हमारा मकान वैसा ही खडा था जैसा मैने वरसो पहले अपने बचपन के दिनो में देखा था ....वही 'लाल टीन की छत' वही उजाड, छज्जा वही सीढ़िया जो मिस जोसुआ के अहाते में उतरती थी ।

कुछ भी नही वदला था''?

१-नई कहानी सन्दर्भ और स्वीकृति पृष्ट १७९
२-मेरी प्रिय कहानियां पृष्ठ ११

इस प्रकार की घुलती-मिलती स्मृतियो के कारण काया विल्कुल निश्चल शान्त होकर वर्षो वाद भी अपने पूर्व को विस्मृत नही कर पाती। यद्यपि लम्वे अरसे का फीका उजाला उसके चेहरे पर उभर आया था। भीतरी तह मे वह अजीव सी असहाय सी मूर्ति वन वैठी थी फिर भी जिन्दगी की पुनरावृत्ति मे वह क्षण उसे पूर्ण दिशा की ओर फिर खींच ले गया। पिछली स्मृतियों की परतें एक एक होकर उभरती गयी और वह स्थिर ऑखों से विल्कुल शान्त चेहरे पर लिखी इवारत को पढने मे जुट गयी। उपन्यासकार ने परिवेश का और काया की मन की स्थिति के सहसंवन्ध पर कही भी धुंध नही चढने दी वल्कि उसने अतीत और वर्तमान के फडफडाते सामंजस्य को परिवेश से जोडकर अमर वना दिया है। शिल्प के द्वारा सूक्ष्म मनः स्थितियों को पकडने मे, अभिव्यक्त करने मे, उभारने मे उपन्यासकार को विशेष सफलता मिली है ।

कहानीकार निर्मल वर्मा से उपन्यासकार निर्मल वर्मा से कही और अधिक वढकर है शिल्प की दृष्टि से उन्होनें छोटे-छोटे कथानक के माध्यम से दृश्य जगत घटनाओं से स्थान दिया है। लघुप्रसंग, व्यक्ति विशेष का चरित्र और जीवन का अन्तर विरोध जितना कथानक की दृष्टि से उजागर हुआ है उतना ही शिल्प की अभिनव प्रयोग से विखरी गुथी अनुभूतियां उजागर हुई है। डॉ० देवीशंकर अवस्थी ने कथानक और शिल्प का समंजन नये कहानी कार के वीच देखते हुए ठीक ही तो लिखा है। ....नया कहानीकार चोखटों से मुक्त होकर उन सूखे और कठोर नामहीन चीजों को छूने का प्रयास करता है । जो पकड़ के वाहर है ।''१

वर्मा पात्रगत अनुभूति को कहानी विधा में वडे ही मार्मिक ढंग से हल्के शब्दों में प्रयोग के माध्यम से व्यक्त करते चलते है। घटना या परिस्थिति का संकेत अत्यन्त अर्मूत ढंग से दिया जाता है। फिर कहानीकार ने एक हरी अनुभूतियों को संशलिष्ट अनुभूतियों को जगह-जगह जोड दिया है। कहानी का नया शिल्प का प्रयोग सचेष्टित होकर उतना नही है जितना कि कथा वस्तु कि आन्तरिक व्यवस्था का परिणाम होकर। इस दृष्टि से वर्मा का कहानी शिल्प कोई कृत्रिम प्रकिया सिद्ध नही हुआ। वह कहानी के अन्दर का हिस्सा वन गया है...........देखिये ....''. .वही वंगला था'' अलग कोनो में पत्तो से घिरा हुआ ....मौन की अथाह गहराई में डूवा है। ....वहुत वरसों पहले एक रिकार्ड के नीचे छतरी से आ रही है। ....ताश के पत्ते घास पर विखरे है।''२

'दहलीज' कहानी का यह अग्रभाग जीवन परिवेश का एक नमूना है रुनी को इतने वर्षो के बाद भी लगा कि वह बंगले के सामने खड़ी है और सब कुछ वैसा ही है जैसा कि कभी वर्षो पहले था वसंत का खुश्क नरम मिला हुआ

१. नयी कहानी : संदर्भ और प्रकृति १७९
२. मेरी प्रिय कहानियॉ पृष्ठ ११

हवा का रूप सांय सांय करता हुआ आज भी वह रहा है लान के उपन की ओर फुनगिया फिर एक दूसरे से उलझ रही है । आदि-आदि। रूनी ऐसा सोच कर प्रतीकात्मक दृष्टि से खुद व खुद उलझती जा रही है। कुछ क्षणों के लिये वर्तमान के तेज हवा के झोकों में खो जाना चाहती है। रूनी का यह दिन वर्तमान, एक साथी एक ही जमीन के उगे हुए एक ही वृक्ष की टहनी में कांप रहा है। कभी उसे साथ संसार खामोश दिखाई देता है कभी उसे हर वनस्पति के होंठ फड़कते नजर आते है इसी तथ्य् को कहानीकार ने शैल्पिक दृष्टि से नये आयाम प्रदान करते है लिखा है कि ''और तव रूनी ने अपने पलके उठाली, छत की ओर एक लम्वे क्षण तक देखती रही, उसके पीछे चेहरे पर एक रेखा खिच आयी ....मानव वह एक दहलीज हो ।''१

इस तरह का सहमा,संकुचित कथानक प्रयोग विधि से कथाकार को बहुत भाया है। शब्द कितना अधिक मूर्त रूप धारण कर लेता है यह भी कथाकार की मौलिक सूझ-वूझ है ''दिल्ली, इस एक शब्द में कितनी स्मृतियां छिपी हैं शिमला-कालका की सांप -वलखाती ढेडी- मेढ़ी लाइन ,लम्वी- लम्वी अंधेरी सुरंगे और रेल के डिव्वे की खिड़की से वाहर हवा मे फिसलती वातें-२

कहानीकार निर्मल वर्मा ने मन के सुक्ष्म स्तरों के अनुरूप ही शब्दो के सूक्ष्म प्रयोग कथानक में पिरोये है । वस्तुतः विचार और भावना अमूर्त प्रतिस्थापना है जिसे अमूर्त अर्थ सन्निहित में ही समझाया जा सकता है। अर्थ संकोचन, वैविध्य अवधारणा से अधिक सटीक तव वनते चलते हैं जव पात्रगत संतरगी तार मन की छुअन को लेकर प्रस्तुत हुए हो। कहानीकार निर्मल वर्मा की हर एक कहानी में विशेषता कदम -कदम पर है इसी विशेषता के प्रयोग विधि से कथाकार मनः स्थिति को बारीकी से पकडने में सिद्ध हस्त हो सका है। डॉ० नामवर सिंह ने वहुत ही विलक्षण ढंग से कथाकार के मन तत्व को एक सूत्र मे वांधते हुए लिखा है कि ....''संगीत का सा प्रभाव उत्पन्न करने की सामर्थ्य निर्मल वर्मा की कहानियों में है।''३

कथ्य के अनुरूप भाषा के भिन्न भिन्न रूप निर्मल वर्मा की कहानियों में मिलते है। वही प्रयोग अजनवीपन की अनुभूतियों को गहराते हुए वातावारण को साकार वनाते चलते हे। । इतने पर भी अंग्रेजीकरण की प्रकिया नगरो, महानगरो ,देश विदेश में रहने वाले लोगों की दिलचस्पी की याद दिलाती है। भाषा का परिधान लेखक की अनुभूति को साकार वनाता चलता है और भाषा का इगित स्वरूप धुधलके को हटाता हुआ सही मायने में फ्रेम को तैयार करता है। दो चार उदाहरण द्रष्टव्य है ....

''क्या यह अजीव वात नही है कि जव हम कभी मौत, यातना या दुर्घटना की बात सुनते हैं या सुबह अखवार में पढते है ,तो हमें यह विचार कभी

१-मेरी प्रिय कहानियॉ पृष्ठ १९ २-परिन्दे पृष्ठ भाग ३-पिछली गर्मियो मे पृष्ठ ३८ ४-वीच बहस में पृष्ठ ३२ ५- वही पृष्ठ ८१

नही आता कि ये चीजे हम पर हो सकती है या हो सकती थी । ''-

++++ +++ +++

गाड़ी ठहरने पर हमने सब सामान जल्दी जल्दी नीचे उतर दिया माथो ने वड़ी लड़की के दोनो गालों को चूमा ,मुझसे हाथ मिलाया और फिर वह खुद भी नीचे आयी। कुछ देर तक वह अपने सामान के वीच खोई सी खड़ी रही,जैसे उसकी आंखें कुछ टटोल रही हो।''-३

++++ +++ +++

एक पागल इच्छा हुई कि उन्हें कमरे में जैसे का तैसा छोडकर भाग खडा हो। किसी को पता भी न चलेगा ,वह कहां चला गया? लडकी थोडा-वहुत जरूर हैरान होगी किन्तु वर्षो से वह उससे जैसे ही अचानक मिलती रहती थी और विना कारण विगडती रहती थी। यू आर ए कमिंग मैन एण्ड ए गोइंग मैन ।''?.......................
....

उपर्युक्त उदाहरण में सहज मानवीय संवेदना की गिरावट ओर भाषा की हकलाहट के साथ ही समूचे वातावरण को पात्रगत संवेदना हीन वनाया गया है।

कहानीकार अग्रेजी के वाक्य प्रयोग द्वारा रही सही संवेदना को और भी फिसल जाने देता है। दरअसल की चीत्कार पूर्ण भयावहता व्यक्ति से व्यक्ति को संवेदना हीन वनाती जा रही है। परिवेश की जीवन्तता व्यक्ति के मन की जीवन्तता का प्रयोग परक उदाहरण वन गयी है। देश विदेश के संस्कृतिक पहलुओं को कहानीकार ने इन्ही आधारो पर एक सूत्र मे पिरोने का प्रयास किया है। भावनाओं की करवटें, विचारो की तन्द्रा, मन में उन दरवाजों को खटखटाती हैं जिनमें उसकी वसी संवेदना शून्य होती जा रही हैं। वर्मा की कतिपय ऐसी कहानिया है जिनमें शब्दों में सही अर्थ देने के लिए भाषा के अमाल बढाये है। अर्थ चिन्गारी लेकर जहां सम्वन्धों के फ्रेम जोड़ते रहे है वहा चौखटो में फंसी तस्वीरे फासायी संवाद के दरार पैदा करती रही है। भाषा का वह पक्ष जिसे कथाकार ने वहुत अधिक नजदीक देखा है उसे रूमानियत की भाषा कहा जा सकता है। कथाकार की किसी भी कहानी के कथय में प्रवेश करके जव पाठक भीतर उतरना चाहता है तव उसे रूमानियत प्राण धारा का सहारा लेकर ही,वहना पड़ता है फिर चाहे वह कहानी 'लवर्स'' हो या फिर तीसरा गवाह ।

कहानीकार भाषा - शिल्प के माध्यम से कुछ कह सुनने में तव सिद्ध हो जाता हैं जव अनुभूति की उगली पकड़कर भाषा के इशारे की ध्वनि वह अपने से जोड़ लेता है। हम ऐसा कहने में भी विश्वास करते है कि कथ्य और शिल्पगत ध्रुवांत कथाकार की समान्तर ही होकर चले है। यदि कथ्य विशेष को कहानीकार ने जटिल रूप दिया है। तो वही दुरूह शिल्प का प्रश्रय भी ग्रहण किया।

१- कौवे और काला पानी, पृष्ठ १६४

है। कथाकार की भाषा इसीलिये सोच और संवेदना के आधार पर निर्मित हुई हैं इतना ही नही वर्मा जी के कथाकार से एक सवाल और जूझने लगता है कि कहानी का कथानक विशिष्ठ है अथवा उसका शैल्पिक आवरण ? यहां इस सवाल के उत्तर में यह तथ्य उभर कर आता है कि कथ्य और शिल्प भिन्न -भिन्न न होकर एक दूसरे के पूरक ही है। जहां कथ्य निर्जीव सा लगने लगता है वहां शिल्प उसमें सजीवता प्रदान करता है, और जहां कथ्य सजीव है वहा शिल्प कैसा भी हो कहानी सजीव और जीवन्त वनी ही रहती है।

(घ) युग धर्म स्तर पर कथ्य और शिल्प की सृष्टि :-

स्वातन्त्रयोत्तर साहित्य में युग धर्म स्तर का और उससे जन्में परिवेश का खुलकर प्रयोग किया गया है। समकालीन सामाजिक वोध और सामाजिकता का वदलता स्वरूप कथा साहित्य में उभरा ही नहीं है वल्कि समग्र क्रान्ति के साथ उसके मेरु में जुड़ गया है। व्यापक रूप में युग वोध जीवन के सभी पहलूओं से सम्बन्धित होता है जैसे राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्तर आदि कथा साहित्य मे समकालीन बोध विभिन्न कोणो मे जन्मा है। स्वतन्त्रयोत्तर भारत में सबसे अधिक आदि कही मूल विघटन हुआ है,तो वह युग वोध के स्तर पर अर्थ मूल है।[1]

स्वतन्त्रता के बाद का नव युवक अपनी मानसिक तृप्ति के लिए बहुत अधिक परिवर्तन करना चाहता है वह अपनी महात्वाकांक्षाओ की वजह से सामाजिक स्थितियों के प्रति तटस्थ नही है उसमे स्वतन्त्र देश के एक स्वतंत्र नागरिक की सम्पूर्ण महात्वाकांक्षाऐं है जिसके कारण वह हर स्थिति से जुड़ने की संभावनायें एवं प्रवलताओं पर जोर देता है। युग स्तर पर पीढ़ी दर पीढ़ी समाज सापेक्ष मूल्यों मे परिवर्तित होतीजा रही है इतना ही नही एक ही परिवार की दो पुश्तो के पारिवारिक बोधा में अन्तर आ गया है जिसके कारण दो पुश्तों मे मानसिक संघर्ष की तीवता दिन - प्रतिदिन तीव्र होती जा रही है हर पहलू पर युगानरूप कुछ घटनाऐ घटित हो रही है जिसका तत्कालीन प्रतिकियात्मक प्रभाव पड़ रहा है[2]।

डॉ० भगवान दास वर्मा ने युग वोध पर गहरी दिलचस्पी दिखाते हुए ठीक ही तो लिखा है----- नयी पीढ़ी का बेटा अपने वाप के प्रति कृतज्ञता के बोझ से भीगी भावनाओ का इजहार नही करता। वह अपनी स्वतंत्रता पर विश्वास रखता है । अपनें लिए अपने मार्ग का चुनाव किसी दूसरे पर नही छोड़ता। इतना ही नही नयी पुश्त का लड़का हो या लड़की अपनी जिन्दगी की दिशा स्वयं निश्चित करते है विवाह जैसी गम्भीर घटना मे वह किसी की दखल अंदाजी वर्दास्त नही कर सकता । पुरानी और नयी पीढ़ी मे यह फर्क है।[3]

१.कहानी की संवेदन शीलता T,- सिद्धान्त और प्रयोग पृष्ठ २११ २- वही पृष्ठ ९९
३- एक चिथड़ा सुख पृष्ठ १६

आज समकालीन परिवेश से सामाजिक मूल्यों मे बहुत बड़ा फर्क आ गया है इन्ही वजहो से आज का कथा साहित्य भी वस्तु तथा शिल्प भी संश्लिष्टता के बल पर प्रगति तथा प्रयोग के क्षेत्र मे नये स्तरों की खोज कर रहा है।
कथाकार निर्मल वर्मा आज के बहुमुखी दुरूह एवं जटिल जीवन की विभिन्न परिदृश्यो मे अपने कथा साहित्य के भीतर समेटते गये । उन्होंने जीवनगत सत्यो को अनुभूति के माध्यम से पूर्णत्त्व तक पहुचांना चाहा है इसीलिए उनके समग्र साहित्य मे जीवन का सच्चा पैटर्न दिखायी देता है जो परिवर्तित संदर्भ मे परिवेश बोध को मानव मूल्यो मे जोड़ रहा है। आज न केवल भारत मे बलिक समूचे विश्व मे झंझापात घटनाओं ने जन जीवन के सीधे रास्ते से व्यक्ति को भटका दिया है चतुर्दिक दिशाओं मे फैली हुइ यह भटकाव संस्कृत लेखकों को भी मूल उत्स से हटकर विस्तीर्ण एवं संकीर्ण झमेलो मे उलझाती रही है कथाकार वर्मा इस दृष्टि से उन अगुवा कथाकारो मे गणमान्य है, जिन्होंने परिवर्तित तारीको मे व्यक्ति के इतिहास को नये पृष्ठ प्रदान किये है । इसी कारण उनका कथा साहित्य व्यष्टि और समष्टि, मन और बुद्धि पूर्व और पश्चिम, परम्परा और प्रयोग रूमानियत और यथार्थ आदि का युग स्तरों पर समाजस्य लिए हुए है इतना ही नहीं उनके मन की वह संवेदनाशील जगह जिसमे असुरक्षा ने स्थान बना लिया है उसमे भी यान्त्रिक बना दिया गया है। बेड़ोल, बेहुदे ,भयावह, इमारत की तरह आज का भटका हुआ व्यक्ति हर चौराहे पर खड़ा किसी अज्ञात से दिशानिर्देश की अपेक्षा कर रहा है इस अनिवार्य जीवनगत विसंगतियो मे कथाकार का पात्र कहीं फटे चिथड़े स्वर्णिम अतीत से अपने को लपेटता है तो कही किशोर रूमानियत भविष्य की आकांक्षा कर उधार लिए हुए धागो मे जीवन पट बुनने का कार्य करने लगता है ।

'एक चिथड़ा सुख ' उपन्यास की पात्र बिट्टी के मन में बैठी खामोश आवाजे सांय सांय करती संघर्ष की आपत्तियाँ उसके जीवन संसार को रौंधती ही जा रही है उसे आगे पीछे सब कुछ ऐक चौखटे मे जकडे हुए मुखौटे ही दिखायी देते और उनसे वह मुक्त होने के लिए लगातार छटपटाती रहती । भटकते जीवनका प्रतीकात्मक बिम्ब है।

युगवोध उपन्यासकार ने इस प्रकार दर्शाया है -''विट्टी का सिर कुछ टेढ़ा-सा हो जाता है। और गर्दन की नसें चमकने लगती है जैसे वह भी अल्मोड़ा और रानीखेत के जंगलों में चली गयी हो, हन्टर साहव के पीछे-पीछे चारों तरफ सिर्फ पेड़ दिखाई देते है। पेड़ घास और झाड़िया और पैरो के नीचे पत्ते चरमराने लगते है और उसके नीचे सव कुछ दव जाता है। नल का वहता पानी, सावुन और मैल की गंध पिटते कपड़ो की कराहट................सिर्फ हवा सुनाई देती, हवा और घास और अंधेरे के वीच चार पैर और दो चमकती आँखें ?-१

वर्मा ने अकेले अभिशप्त पात्र विट्टी के संसार की विसंगतियों का चित्रण किया है । खामोश आवाजें, सांय-सांय करती हवा की ध्वंनियो, पतक्षण के टपकते पत्ते पथराये भावहीन सम्वन्ध व्यक्ति को अकेले में अधिक निगलते रहते है। आदमी सन्नाटे की दृष्टि में खुद की कांपती आवाज को भयावह वना लेता है। बिट्टी पात्र भी बाहर का संसार जी लेना चाहती है। परन्तु भीतरी संसार ने उसको एक तीखी नशीली गंध में लाकर खड़ा कर दिया है। जिससे वह छुटकारा भी पाना चाहे तो नही पा सकती और ऐसा एहसासती है, कि एक अतीत की खूंटी पर टंगा हुआ तस्वीर का रूप उसे बाहर की दुनिया को न सुनने के लिये कानों में रूई के फाहे भर देता है। वह वीते हुए नही वल्कि सिर्फ याद को वस याद को जी भर रहा है। इस मानसिकता से जीते हुए पात्र की मन स्थिति का अंदाज उपन्यास कार ने पूरे उपन्यास में कदम-कदम पर किया है विट्टी कभी वर्तमान में पुराने वासी अवशेष के चिन्ह उरेहती है तो कभी पुराने स्मरण को घटना मानकर हल्की सी रिलीफ महसूसती हैं। उसके व्यक्तित्व का युगवोध विचारणीय है। ....
.....''उसकी इलावादी कजिन सूखे वालों का जूड़ा और पीला माथा मूसी हुई जीन्स पर खद्द्र का कुर्ता ढीला-ढाला सिर्फ आंखें कुछ वदल जाती है, किसी क्रूर गोपनीय रहस्य से चमकती हुई...............विट्टी का स्वर उसकी पीड़ा को लवालव अपनी चीख में उड़ेल जाता है।''-

यह बिट्टी के मन की तस्वीर का वह रूप है जिसे उसे अपने में ही नही आत्मीय लोगों में भी दिखाई दे रहा है। उसके चेहरे पर स्मृति का टंगा हुआ एक पुराना फोटो है जो वालिस्त भर की देह में एक अजीव कपकपी पैदा करा देता हैं। उसका अपना दिल जो उसकी छाती की दीवार से टकरा रहा है। उसे छटपटाने के लिये मजबूर करता है। इस तरह की अहात्मक जिन्दगी का दृश्य केवल इसी उपन्यास में न होकर 'लालटीन की छत' मे भी अधिक उकेरा गया है। काया पात्र की चक्करदार जिन्दगी का आंशिक रूप इस तथ्य का अनूठा उदाहरण है

''आंखें माँ की देह के परे उठ आई, खिड़की के परे, जहां धूप में पहाड़ खड़े थे और देर तक उसे पता नही चल सका कि वह उसकी देह है, जो हिल रही है या हिलता हिल्स, की पहाड़िया है, जो आंसुओ के वीच कांप रही है।''-१

१-लाल टीन की छत ,पृष्ठ ८७

काया का जीवन साँप की कुण्डली मार कर लालटीन की छत से लेकर पहाड़ियों तक एक जैसा ही बैठा है उसकी जीवन की मुट्ठी दबी हुई है जिसके कारण चिपचिपी हथेलियों में अतीत की यादें रस मग्न होती जा रही है। थोड़ा सा भी साहस नही है, कि वह अपनी मुटिठयों को खोल सके । और उत्सुकता से बाहर के संसार को जगह दे सके, उसे अपने जीवन में अजीव सा भ्रम बना हुआ है। कि वह कुछ भी न तो बदल सकती है और न ही अपने बदलते स्वरूप का अंदाज ही कर सकती है, उसकी मानसिकता में डबडबाते आकांक्षाओं के गील-गीले बिन्दु रूप ढलते जाते है। जो उसकी सामाजिक जिन्दगी के युग स्तरीय साक्ष्य है।

"वे दिन" उपन्यास में कथाकार ने युग स्तर पर मानवीय सम्बन्धों की उपमा का अहसास कराया है अजनबी स्त्री पुरूष के सह सम्बन्धों की यह गाथा एक ओर कितनी सहज होती है और दूसरी ओर समाज की सीमाओं में कितनी तीखी होती है इस तथ्य का जीता जागता उदाहरण प्रस्तुत है................."मुझे जुलाई अगस्त की वे राते याद हो आई जब युनीवर्सिटीज के छात्र अपनी लड़कियों के साथ बाग के अंधेरे कोनों में बैठे रहा करते थे बीचो बीच कभी चैख की काली मूर्ती चुपचाप खड़ी रहती तो लोग शराब और बियर की बोतलों को मूर्ती के "पेडेस्टल" पर छोड़ जाते हैं फिर देर रात में गरीब बूढ़ी औरते प्रेतनियो के तरह बाग में घुस आती थी और खाली बोतलो को अपनी स्कर्ट की लम्बी जेबों में ठूसकर अंधेरे में गायब हो जाती थी,"-१लेखक प्रस्तुत अंश में दो तरह के जीवन चित्र प्रस्तुत करता है। पहली तरह का जीवन उछाह लेते हुए युवक युवतियों के रूमानियत का जीवन है जिस पर अभी उजले प्रकाश में बसन्ती हवा का फैलाव किया है। वह जीवन एक ओर गरम है, उज्जवल है, कोरे पन्ने सा सफेद है और सुखद स्वप्न की भांति विस्मयकारी भी है। युवक-युवतियां आज इसको जी भरकर निचौड़ लेना चाहती है वे जीवन के सारे दरवाजे खोलकर युग स्तर पर उगते हुए विचारों को जोड देना चाहती है उनके चारो ओर सरसराता हुआ सफेद आहट से भरा आज चक्कर लगा रहा है। दूसरी ओर लेखक ने उस गरीबी मुखमरी के युग स्तर पर वर्णन किया है।

जो गरीब बूढ़ी आंखों के माध्यम से उजागर हुआ है आज का जीवन कुछ भी हो ऐसा हो गया है। बडी विस्मयता है वही वक्त किसी के लिये अत्यन्त कलात्मक है तो किसी के लिये जीवन जीने की दुरूस्ता से ढका हुआ है कहानीकार निर्मल वर्मा कहानी साहित्य में युग स्तर पर रूमानी मूल प्रवृत्ति को प्रश्रय देते हुए आगे बढ़ते चलते हैं।

कथाकार का व्यक्ति अपने रूमानी व्यक्तित्व से दूसरे को आकर्षित करता हुआ भिन्न प्रवृतियों का भी आत्मसात करता चलता है।

१-२-वे दिन पृष्ठ ४५

''एक शुरूआत ''कहानी के रूग्ण व्यक्ति ने अपने हाथों से कोमलता का कचूमर निकाल दिया है। अनाकर्षण इस कहानी में ही नहीं ''धागे''कहानी के निखिल पात्र के जीवन की कठोरता और कोमलता के द्वन्द्व के बीच में बहुत कुछ मिलती है। उदाहरण स्मरणीय है.........................। ''आधी रात को सहसा मेरी आंख खुल गई थी शायद खिड़की के सामने झूले की रस्सी की परछाई को देखकर मैं डर गई थी । ....मैं करवट बदल कर लेट जाती हूँ......... मैने अपना एक हाथ शैल के तकिये के नीचे रख दिया और मै धीरे-धीरे उसके पास खिसक आती हूँ मैं चाहती हूँ, कि उसके देह की गरमाहट अपने में खीच लूं ।''-१

''बीच बहस में'' संकलित कहानियों 'छुट्टियों के बाद' कहानियों में एक अजीब सा युग बोध है। इसका पात्र युवक हंसता भी रहता है और उदास भी रहता है। वैसे वह हंसमुख और दिलेर भी है, परन्तु भीतर से बहुत टूटा हुआ और उदास है। इस अद्भुद सामंजस्य का मूल आज के युग में हर व्यक्ति के साथ में जुडा हुआ है व्यक्ति अपने खालीपन और निराश मन से भीड़ में भी अकेले को ही पाता है। कहानीकार को इस निराशा को परिवेश में गतिमान सिद्ध करता हुआ यहां तक कह देता है कि ....''जाते हुए उसका चेहरा एकदम सुन्न सा पड़ गया था। लेकिन के लड़के चेहरे पर वीरानगी थी वह आखिर तक उसकी खाली जगह के आस पास मंडराती रही मुझे लगा कि वह खाली जगह काफी दूर तक हमारे साथ- साथ चलेगी ।''-२आज के युग स्तर पर आदमी की वेश भूषा कुछ एकांगी होती जा रही है। कथाकार ने पात्रगत वेश भूषा का एक अजूबा, अपने किस्म का एक हिस्सा बनाते हुए अभिनव रूप दिया है।

''डायरी का खेल'' मैं विट्टू का श्रृगांर कुछ अपने ही ढंग का है विट्टू हल्के आसमानी रंग का ब्लाउज और उन्नावी साड़ी पहने हुए है खुले हुए बाल संभाल रखे है और पाउडर तथा कुमकुम की बिन्दी से विट्टु का चेहरा निखर आया हैं । इस तथ्य का जहां कहानीकार ने जिक्र किया है वह विट्टू के समानधर्मी अन्य लड़कियों की बात छेड़ते हुए लेखक ने आज के जीवन व्यवहार की बात कह दी है ।

..........................''सब लड़कियों का कभी न कभी व्याह होता है, विट्टू का भी व्याह होगा । विट्टू की बात याद आयी फिर बहुत सी बातें याद आयी ....एक के बाद एक वे सिलसिलेवार, प्याज के छिलको-सी एक दूसरे को छीलती हुई.................तब अचानक मैं चौंक सा गया दरवाजे पर एक धुंधली सी छाया दिखी, जो परदे की ओट में स्तब्ध ठिठकी खड़ी थी ?'' कथाकार जीवनगत धुंधलके में घिसटता चला जा रहा है। कभी-कभी सुनहरे भविष्य की आशा में उसके चेहरे पर चमक आ जाती हैं।

१.पिछली गर्मियों में पृष्ठ२२-२३ २-बीच बहस में ,पृष्ठ २३
३-परिन्दे पृष्ठ २३

और कभी कुछ विगड़ जाने जैसा अनुभव करने पर उसके चेहरे पर तॉवे जैसी पीली रेखायें उभरने लगती हैं सचमुच आज का दूरूह जीवन लड़की की शादी के सन्दर्भ में कुछ-कुछ ऐसा ही हो गया है। आज का व्यक्ति रेती के ढेर वटकखा करके कुछ असूवो से भविष्यों भवनो का निर्माण कर रहा हैं, और उन पर वडी हिलकिचाहट के साथ छाया के निर्मित सूखे तिनके विखेर रखे है जो लड़की को निरस्त करने के बाद एक ही हवा के झौके से दूर दूर तक फैलते और ढ़हते चले जाते है। वस्तुतः व्यक्ति निराशा में घिरते अंधेरे और उतरती धूम के वीच मटमैला होकर यथार्थ की जमीन पर संज्ञाहीन हो जाता है।

आज का युग इन जीवन्त सन्दभों में वहुत कुछ ढेडा-मेढ़ा है । व्यक्ति उन परम्पराओं और मर्यादाओं को एक क्षण जी भरने के लिए खोजने की चेष्टा करता है जो व्यर्थ है लेखक विट्टी जैसी तमाम लड़कियो की कथा व्यथा को अपने संग राही के रूप में पाता है वह लिखता भी है कि..................

''याद करने पर विट्टी से जुडी कुछ वाते ,कुछ घटनाये' याद आती हैं ....कुछ दिन, कुछ घड़ियां, विखरे से क्षण, जो मैने और बिट्टी ने एक दूसरे के संग जिये थे।''?

लेखक को जब वही विट्टो जो श्रंगार के प्रति मूर्ति थी झुर्रियो वाला चेहरा याद आने लगता है। वदलते जीवन प्रतिमानों के साथ ही कहानीकार ने प्रेमानुभूति की चिरन्तरता को समाकलित किया हैं उनकी अनेक विधि कहानियों का मूल स्वर रोमान्टिक ही है। लेकिन यह रोमा पुराने वलिदान - वादी चौखटों से भिन्न हैं, बल्कि प्रेम संन्दर्भ वैयक्तिक सुख का पर्याय है। ,उनके लिए प्रेम कही समस्या वना हैं तो कही मुक्त भोग, डॉ० देव कथुरिया ने तो वर्मा की कहानियों के प्रेम - विषयक दृटि-कोण को युगवोधीय ही माना है।''-२

आज के अनिवार्य जीवन में प्रेम विषयक दृष्टिकोण को आकर्षक का पहला सोपान नही कहा जा सकता है। ''पिक्चर पोस्ट कार्ड'' कहानी का परेश पात्र मसूरी ने किताव घर के सामने खडा था दो लड़कियों को देखता सारी शाम बिता दिया करता था। लड़कियों से परेस का परिचय और पारस्परिक निर्विकार भाव कहानीकार इस प्रकार वर्णित करता.......... ''यह है प्रभा यह परेस..................... ....नीलू ने कहा³।

हाउ डू- यू डू ? प्रभा ने कोल्ड काफी में डूवी स्टाक से क्षण भर के लिये मुंह हटाकर मेरी ओर देखा....................कैसे पेपर हुए शायद अगले साल फिर आना पडेगा+++ +++ +++ +++ +++

परेश, थोडी से पी लो ,अच्छा एक घूंट।. परेश ,क्या तुम प्रेम करते हो ?. ....यू आर केजी ....परेश , तुम्हारी क्या उम्र है?........................ परेश, क्या तुम अभी तक वर्जित हो ?⁴''

१- परिन्दे, पृष्ठ ३० २. हिन्दी कहानी साहित्य में प्रेम एवं सौन्दर्य तत्व का निरूपण, पृष्ठ ३५८
३- परिन्दे, पृष्ठ ९६-१०२ ४- जलती झाड़ी, पृष्ठ ६-२७

इतना स्वछन्द प्रेम के देहात्मक वोध का साफ नजरिया अन्य कहानीकारों मे नही मिलता है। स्वछन्द प्रेम का शारीरिक रूप इतना ही नही ''लवर्स'' कहानी में वहुत अधिक नग्नता के साथ चित्रित हुआ है। कहानी के आरम्भ और अन्त मे अर्धनग्न युवती पत्रिका की वात कर कहानी उस नग्नता को दोहराते जाते है। . ...मैगजीन के कवर पर लेटी एक अर्धनग्न और गोरी युवती का चित्र वह चित्र दुकान पर वैठे लडको को दिखाते है और आंख मारकर हँसते है। लडके को इस नंगी स्त्री में कोई दिलचस्पी नही है, किन्तु ग्राहक ग्राहक है, और उसे खुश करने के लिये वह भी मुस्कराता है।

.+++ +++ +++ +++

वही कवर है ,जो अभी कुछ देर पहले देखा था। वही वीच का दृश्य है, जिस पर अर्ध नग्न युवती धूप में लेटी है। क्या दाम है मैने पूछा। लड़की ने मुझे देखा और दाम वताया और मुस्कराते हुए सीटी वजाने लगा।''? जहां वर्मा ने स्वतन्त्र प्रेम को नग्नवादी दृश्य मे चित्रित किया है वहां दूसरी ओर प्रेम का भावात्मक धरातल भी गहराई से परिभाषित किया गाया है। 'अधेरे में' कहानी का स्वच्छन्द प्रेम भावात्मक धरातल का ही है यहां गुप्त किन्तु स्वचन्द प्रेम के माधुर्य का सांकेतिक चित्रण है। एक ओर एक अन्तयन्त संस्कृत महिला की स्नेहमयी संस्कृत मुद्रायें है। तो दूसरीऔर वीरेन वावू ने क्रिया क्लाप द्वारा नारीं के प्रति प्रेमी की शिष्ट संयमित संवेदनाओ की भी सूक्ष्म अभिव्यंजना है।''? कथाकार 'अन्तर' कहानी के स्वछन्द प्रेमी - प्रेमिका का जहां उठते वैठते चित्रण करता है, वहॉ 'पिता और प्रेमी ' के प्रेमी प्रेमिका का आश्वस्त भरा हृदय भी टटोलता है। और इन कहानियों मे परस्पर विश्वास भरी दृष्टि है । इस दृष्टि मे वोझिलपा नही है चमकीलापन है। एक हल्का धुला सा आलोक है। आज प्रेमी प्रेमिका परस्पर सरसरी दृष्टि से एक दूसरे को भीतर तक छू लेना चाहते है 'अन्तर' कहानी के प्रेमी प्रेमिका चलते फिरते ,खाते पीते , उठते वैठते एक दूसरे के वहुत करीव आ जाना चाहते है । देखिये ....''वह विस्तर पर झुक आया । उसने उसके भूरे वालो को चूमा....,.....फिर होठो को। कमरे की गर्मी के वावजूद उसका चेहरा विल्कुल ठण्डा था वह चूमता रहा । वह तकिये पर सिर सीधा किये लेटी रही । तुम अव सुखी हो।? उसका स्वर वहुत धीमा था।''२

कहानीकार ने स्त्री पुरुष के मध्य आर्य मध्यकालीन प्रेम नही देखा है । उसने तो जीवनगत देहात्मक वोध का प्रेम सर्वोपरि सिद्ध किया है । देश विदेश के प्रेमी-प्रेमिकाओ के संदर्भ का उसके सामने स्पष्ट दृष्टिकोण है।

इसीलिए डॉ० मधु सन्धु ने रूमानी प्रेम मे आस्था का जिक्र करते हुए लिखा है ....''निर्मल वर्मा की कहानियों मे ना तो मध्ययुगीन सरीका आध्यात्म प्रेम है न संतति निर्मित होने वाला स्त्री पुरुष का शास्त्र सम्मत संयोग है ,न यह रीतिकाल जैसा स्त्री-पुरुष का ऐन्द्रिक पर्व है यह प्रेम न तो पूर्व प्रेमचन्द युग की

(१)मेरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ ६?
(२)कहानीकार निर्मल वर्मा , पृष्ठ ६?

तरह रहस्य रोमांच से भरा है न ही इसमे प्रेमचन्द्र-प्रसाद युग जैसा प्रेम का उदात आदर्श रूप है यह प्रेम न तो किसी समर्पण या त्याग के लिए है ,न दुष्टों का हृदय परिवर्तन करने के लिए ही । प्रेम की पारम्परिक धारणा यहाँ मजाक का विषय हो गयी है ।उनके पात्र मात्र रसिक है न मात्र प्रेमी, इसीलिए कोई भी आध्यात्मिक अथवा नैतिक ग्रन्थि निर्मल के पात्रों मे नही दिखलाई पडती ।

वे उन्मुक्त भाव से खुलकर मिलते है यह प्रेम का युग स्तर मौलिक विवेचन है।''१ वस्तुतः प्रेम तत्व जहाँ प्रछन्न भाव विचार के प्रश्रय से देखा जाता है वहाँ उसमे मुखौटापरक जिन्दगी को ओढ लिया जाता है । आज का युग इन ओढी हुई चादरों को यथार्थ जीवन में उतार फेंक देना चाहता है। निर्मल के कथा पात्र कही भी संदिग्ध स्त्री पुरूष नहीं लगते । वे यर्थाथ है, उनमें भूख है, प्यास है, कामना है, वासना है , लिप्सा है, आतुरता है , छटपटाहट है, बेचैनी है , व्याग्रता है, प्यार है , घृणा है, द्वेष है, आदान है, प्रदान है, रूप है , विद्रूप है, सारा संसार समाया हुआ है। जान पडता है, कि वे जिस धरातल पर खडे है वह आज का है, अभी का है और उसे वे जिन्दगी से जोड़ें हुए है। कथाकार निर्मल वर्मा ने कहानियों मे व्यक्ति सापेक्ष विविध आयामों को बखूबी समेटते हुए आज की मूल्यहीनता पर गहराई से विचाार किया है व्यक्ति आज अकेलेपन, अजनबीपन और अपरिचय जैसी प्रसंगत -स्थितियों में बहुत कुछ उलझा हुआ है । परिवेश से उखडने पर व्यक्तिव हर स्थल पर अजनबी हो जाता है, बल्कि यूं कहिये परिवेश के अलगाव और बेगानेपन से उनके मन की स्थिति बहुत अधिक समस्यामूलक बन जाती है यह उपयुक्त ही है। वैसे अकेलेपन का बोध है तो बहुत पुराना लेकिन आज का अकेलापन वैचारिक स्तर पर मध्यम युग के अकेलेपन से बहुत भिन्न है।

मध्यम युग जहां आत्मस्तर का अकेलापन वहाँ आज का अकेलापन पूंजीवादी गिरपत्त में कुछ अजनबी ओर अव्यैतिक ही हो गया है ।कमलेश्वर ने भी इसी सत्य को दोहराते हुए लिखा है कि ....,'' हम अभिशप्त है .... अतिपरिचित होने के लिये इसलिये हमारे देश की मानिसकता अति परिचय से ऊबी हुई है और इस अतिपरिचय का परिणाम है अपरिचय की एच्छिक मनोदशा। इसलिये हमारे अपरिचय अतिपरिचय की देन है।''२

कथाकार निर्मल वर्मा हर स्तर पर भीड़ के अकेलेपन को स्वीकारते चलते है। उनकी अकेलेपन और अजनबीपन में डूबी कहानियाँ आज आदमी की सम्पूर्ण विवशताओं को उजागर करती है। ''बीच बहस में'' संकलित कहानियाँ अपने देश वापसी, का जिक्र कर देना यहाँ उपयुक्त ही है ....सामान सजोने के बाद लड़के ने पसीना पोछा पूरी बर्थ में अकेला था, इसलिये वह मेरे साथ ही बैठ गया । दोनो लड़कियों के सामने वह अकेला सा पड़ गया था।''३

१- नई कहानी की भूमिका, पृष्ठ १२६ २ वही, पृष्ठ ११०
३- बीच बहस में, पृष्ठ २१

कहानीकार कह देना चाहता है। व्यक्ति अजनवीपन से आच्छादित परिवेश में अकेले ही जीता है इस प्रकार का अन्तराल हर देश में हर जगह है । व्यक्ति खुली आवाजों को न तो गांठ में वांध सकता हैं और न किसी के लिए उन्हें और अधिक तेज सम्प्रेषित कर सकता है। हर देश में इतना कुछ खुलापन होने के वावजूद भी कुन्ठा युक्त प्रदर्शन चिपका हुआ है। हम एक मकान से दूसरे मकान में झांक भी नही सकते है क्योंकि डर है कि पड़ोसी की लुब्ध पपडाई आखें दूर अकेले पन मे न फेंक दे । कुछ वाते युरोपीय देश में यहां से विपरीत है। जितना भारतीय व्यक्ति अपने सगे सम्वन्धियों से देह और आत्मा छिपा कर मिलता है वहॉ ऐसी प्राइवेशी नही है इसलिये कहानीकार ने इस अकेलेपन की छाप का जायजा कुछ अधिक दिलचस्पी से लिया है। आज व्यवित्त एक अन्तहीन ऊव और विसात की सूखी परतों के नीचे अपने अदृश्य को एक दूसरे से छिपाता चला जा रहा है । शायद आधुनिक तड़क-भडक में यह सव युग स्तर पर अनिवार्य हो गया है।वैसे जितना वह दिल से सुना है सही मायने में उतना ही वाहर से भी अजनवी है। दूधनाथ सिंह ने भीड के अकेलेपन को स्वीकारते हुए अजनवीपन और अकेलेपन की दुहाई नयी कहानी के कथ्य में अवश्यमेव सिद्ध कि है ....,''क्या हम घर के एकान्त कोने में जव विल्कुल अकेले होते है तव पूर्णयता सुखी नही होते है। क्योंकि तभी हम सच्चे अर्थ में अकेले नही होते है लेकिन ज्यों ही हम टकरा जाते है हम अकेले रहना शुरू कर देते है। अपने को खोना शुरू कर देते है ।''[?] लेखक ''परिन्दे '' कहानी में जूली की आंखो का निरीह भाव भांपते हुए कहता है ....''. शायद जूली का यह प्रथम परिचय हो, उस अनुभूति से, जिसे कोई भी लड़की वड़े भाव से सजोकर संभालकर अपने में छुपाये रहती है, एक अन्य अनिवार्चयनीय सुख जो पीड़ा लिये है ,पीड़ा और सुख को डुवोती हुई उमड़ते ज्वर की खुमारी ....जो दोनो को अपने में समा लेती है एक दर्द , जो आनन्द से उपजा है और पीड़ा देने वाला है,''?

निर्मल ने इस प्रकार के ढ़ेरो कारण अपनी कहानियों में यत्रतत्र समझे है तथा उन्हें अकेलेपन के ही क्षणों में हर जगह गूथे है। 'जलती झाडी का पात्र सोचता है कि इस शहर में वह अजनवी है। यदि आज रात वह यहॉ से चला जाए तो होटल के मैनेजर और पुलिस के अलावा किसी को कुछ पता ही न चलेगा।''[?]

'एक शुरूआत' कहानी मे लेखक को वियना से दूर होते हुये रात वहुत लम्वी लगने लगती है । कारण है................उसके संग वहुत कुछ जो दूर हो गया है ।''[?]

१ ज्ञानोदय, अप्रैल १९६६

इतना ही नही असुरक्षा की भावना से भी आज का आदमी अकेला है। ' परिन्दे 'मे संकलित कहानी 'अंधेरे' मे की पात्र वच्ची अपने को असुरक्षित महसूस करती है माँ कही गयी हुई है पिता उसके उतने निकट नही है, इसलिए वह अपने मन की वात किसी से कह भी तो नही पाती ।

वह निराशा से भरे स्वर मे चारों ओर का खोया हुआ वातावरण देंखती चलती है उसकी हर चेष्टा मे अनिश्चित अर्द्ध सोये स्पर्श है उन्हे चेतन पक्ष मे कभी भी छुआ तक नही जाता जिस प्रकार खिड़की के वाहर नीले नीले जंगल है , ऊँची ऊची पहाड़ियाँ है, पेड़ो के घने झुरमुट है उसी प्रकार उसका सारा संसार गुमसुम वीहड जैसा ही है।-'

आज संत्रास की भावना ने व्यक्ति को वहुत अधिक अपनी दुनियां की ओर ढकेल दिया है। 'एक शुरूआत' कहानी का नायक तपेदिक का रोगी है इसीलिए वह विगत ६ वर्षो से बेल्जियम में रह रहा है। वर्ष में एक दो वार अपने घर वालो से मिलने लंदन आता है । उसके चारो तरफ एक अजनवी खामोसी छायी हुयी है। वह सोच ही नही पाता कि उसका सही घर बेल्जियम है या लन्दन, यद्यपि उसके मन मस्तिष्क में लन्दन का सारा परिवेश जुड़ा हुआ है।''१

जैसे--''लागर..................क्षण भर के लिए लगा, जैसे ये लन्दन के वीते दिनो कीअन्तिम, आत्मीय विदा हो। ....लन्दन की गरम, पगली रातो के संग लागर का तीखा व्यक्ति भय, मृत्यु के अस्तित्व को स्वीकारता हुआ अपनी जिंदादिली को रौंदता चला जाता है । वह सोचता है कि वह अकेला ही है जिसे कोई नही देख रहा और धीरे धीरे वह मर रहा है। इतना ही नही आज के जुड़ते सम्वध कुछ दिनों के वाद कूड़े की तरह वुहार दिये जाते है। 'माया दर्पण' कहानी में वाप बेटी के मध्य अलगाव चित्रित है । तरन जानती है कि वह अकेली रहेगी किन्तु बाबू की छाया से बंधी हुयी ओर बाबू का अकेलापन हमेशा जिन्दगी भर उससे जुड़कर रहेगा। इस अकेलेपन की परिवेशगत गहराई का कहानीकार ने सम्बंधों के आधार पर ही निरीक्षण नही किया है वल्कि अनाकर्षक होकर व्यक्ति कितना भी अधिक अकेलापन महसूसता है उदाहरण दृष्टव्य है --''चेहरे का आकर्षण, चाहे जैसा हो, वह जानती थी कि उसमें नही है । उसके लिये अव मन क्लान्त नही होता। वर्षो पहले सड़क पर चलते हुए कोई उसकी ओर देखता, तो तन मन सिहर उठता था। वह दौड़कर वापस आती थी , और घण्टों आइने के सामने खड़ी रहती थी। क्या देखते है लोग उसमें।''-२अन्तिम, आत्मीय विदा हो। ....लन्दन की गरम, पगली रातो के संग लागर का तीखा व्यक्ति भय, मृत्यु के अस्तित्व को स्वीकारता हुआ अपनी जिंदादिली को रौंदता चला जाता है ।

१.परिन्दे पृष्ठ १४९
२.जलती झाडी पृष्ठ ८१

वह सोचता है कि वह अकेला ही है जिसे कोई नही देख रहा और धीरे धीरे वह मर रहा है। इतना ही नही आज के जुड़ते सम्बध कुछ दिनो के बाद कूडे की तरह वुहार दिये जाते है। 'माया दर्पण' कहानी में बाप बेटी के मध्य अलगाव चित्रित है । तरन जानती है कि वह अकेली रहेगी किन्तु वावू की छाया से वंधी हुयी ओर बावू का अकेलापन हमेशा जिन्दगी भर उससे जुड़कर रहेगा। इस अकेलेपन की परिवेशगत गहराई का कहानीकार ने सम्वंधो के आधार पर ही निरीक्षण नही किया है वल्कि अनाकर्षक होकर व्यक्ति कितना भी अधिक अकेलापन महसूसता है उदाहरण दृष्टव्य है --"चेहरे का आकर्षण, चाहे जैसा हो, वह जानती थी कि उसमें नही है । उसके लिये अव मन क्लान्त नही होता। वर्षो पहले सड़क पर चलते हुए कोई उसकी ओर देखता, तो तन मन सिहर उठता था। वह दौड़कर वापस आती थी , और घण्टो आइने के सामने खड़ी रहती थी। क्या देखते है लोग उसमें।"-२

इस प्रकार के विचित्र प्रश्न व्यक्ति के मन में तव उठते है जब उसमे से दृष्टियों का जोड़ है और इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए व्यक्ति का दिल घण्टो धौंकनी जैसा चलता ही रहता है लेकिन वही तरन लोगो की दृष्टि वोध से अलग हट गयी हो।

आज का व्यक्ति कुछ नये ढ़ंग से सोचने लगा है इसलिए उसका चिंतन स्वतंत्र ही नही वल्कि वैज्ञानिक भी है । "परिन्दे" की लतिका ने कभी गिरीश नेगी को चुना था परन्तु गिरीश की मृत्यु के वाद वही ह्यूवर्ट की ओर आकर्षित हो जाती है। यह सोच व्यक्ति को संवेदना से छुटकारा दिलाती है। कहानीकार लिखता है---"मि० ह्यूवर्ट अंग्रेजी धुन गुनगुनाते ऊपर आ रहे थे। सीढ़ियो पर अंधेरा था... ....गुड ईवनिंग डाक्टर, गुड ईवनिंग ....थैन्कयू मिस लतिका ....यहां अकेली क्या कर रही हो मिस लतिका ?.......आज इस वक्त ऊपर कैसे आना हुआ ?"-१ इस प्रकार की चर्चित ओर सम्वंध वढ़ाती हुयी जिंदगी आज के अस्तित्ववादी बोध का ही तो परिणाम है । 'पिछली गर्मियो में' के०सी० ने अरूणा को छोड कर विदेश के मुक्त प्रेम का चयन किया । वह परिवार और समाज के प्रति लापरवाह है, उसे अपने कार्य ओर क्षमता पर पूरा भरोसा है । इस प्रकार की प्रवृत्ति आज व्यक्ति के युग स्तर पर निर्णय लेने के प्रति सजग है। मानवीय वैचारिक स्तर पर व्यक्ति संघर्ष का पुजारी वन गया है। 'सितम्वर की एक शाम' का एक वेकार नायक लड़-झगड़ कर घर से भाग जाता है। रेस्तरां के वाहर सरकारी क्वार्टर के सामने छोटे से घास के मैदान पर लेटे-लेटे उसके अन्दर अदभुत क्षमता उत्पन्न होती है उसे लगता है।-----------'उसकी जिन्दगी की गांठ अतीत के किसी सप्रेत से नही

१. वही पृष्ठ ४९ | २- परिन्दे पृष्ठ ६३ | ३- जलती झाड़ी, पृष्ठ ४७
४- वही, पृष्ठ २५ | ५- परिन्दे, पृष्ठ १२३

जुड़ी है, इसलिए वह मुक्त है, और घास पर लेटा है। सारी दुनियां उसकी प्रतीक्षा कर रही है कि वह उसे अर्थ दे, उसकी वाट जोह रही है----------सांस रोके -१

इस प्रकार का बोध शायद आधुनिकता बोध का सबसे प्रवल धनात्मक चिन्ह है। आज का व्यक्ति अपने लिए अपने विचारों के लिए संघर्ष करता है भले ही वह कुचक्रो के दवावो से असफल हो जाए । 'जलती झाडी' मे संघर्ष एवं क्षमता का कहानीकार ने खुलकर जिक्र किया है..............''जिन्दगी मे जवाव देही का लम्हा एकदम किस तरह आ जाता है , जैसे वह हमारे लिए न हो , किसी दूसरे के लिए आया हो ।''२

लेखक का मनतव्य वहां उस संघर्ष की ओर इंगित करता है जिसे व्यक्ति ने अपनी क्षमता से पहचाना है ।

यथार्थ बोध आज के कथा साहित्य का प्राण है । निर्मल की तमाम कहानियाँ यथार्थ संवेदिता पर ही जुडी हुइ है । आज वेकारी ,दरिद्रता, गरीबी आदि ने व्यक्ति को ईश्वरीय आस्थाओं से अलग कर ठोस धरातल पर लाकर खड़ा कर दिया है । व्यक्ति मे निहित विसंगतियों का संसार उसे वहुत देर तक धोखा नहीं दे सकता । ''कुत्ते की मौत'' कहानी का नायक नन्हे दस वर्ष पहले वी० ए० पास करके भी वेकार है । उसकी हर श्रद्धा की आशा उसे भविष्य के जीवन की ओर अनिश्चित अंधेरे में धकेलती जाती है । नन्हे को दस वर्ष पहले के अपने जीवन की सुखद कहानी भी अव सालने लगी है ।.......

जैसे ''किस वर्ष और किस डिवीजन मे नन्हे ने वी०ए० पास किया (अखवार का वह पन्ना आज भी रजिस्टर मे रखा है , जिसमें नन्हे का रिजल्ट निकला था और नन्हे के नाम के नीचे पेन्सिल की रेखा खीची गयी है)

.+ + + वस इतना ही ....।

फिर उन्होने नींद की गोलियां पानी के साथ निगल लीं ।'१

निर्मल वर्मा की कहानियो मे कुछ ऐसे अछूते संसार है जिन्हें उन्होने पहली बार कथा संसार का विषय बनाया है जैसे मादक द्रव्यो का सेवन , विदेशी परिवेश का आंकलन , रिश्तों का वेगानापन और आत्मीयता का नाटकीयपन आदि कथाकार इन आयामो मे युग स्तर पर गहराई से विचार करता हुआ दिखलाई पडता है आज के व्यक्ति की संश्लिष्ट मनः स्थिति अवूझ पहेली वनी हुई है । वह चलता कही है और सोचता कही है । इस प्रकार की गतिविधियॉ निर्मल के पात्रो मे जगह-जगह पर मिलेगी । व्यक्ति न तो परिवेश से अपने को वचा पा रहा है और ना हीं परिवेश मे ही अपने को समा पा रहा है। अलगाव और प्रतिवद्धता की स्थिति उसके मन हृदय पर छायी हुई है । कभी उसका संसार उसे अपना ही लगता है तो कभी जटिलता के कारण यह संसार उसे वहुत दूर धक्का देकर उसे सोचने के लिए विवश कर देता है निर्मल के कथापात्र इसलिए आज भी जिरह के विषय बने हुए है क्योकि उनमे अन्तराष्ट्रीय युगवोध है।

१- वही, पृष्ठ ११ २- जलती झाड़ी पृष्ठ ८७-८६

पारम्परित मान्यताओं से अलगाव है , उन्मुक्त काम वासना से लगाव है, जीवन परक उद्दाम आवेग से जुड़ाव है । कहा जा सकता है कि युग विशेष की संकीर्ण या विस्तीर्ण सभी दृष्टियाँ यदि एक जगह समझनी हो तो निर्मल के कथा संसार मे पंक्ति -पंक्तिवद्ध होकर वैठी मिल जाएगी ।

१ जलती झाड़ी, पृष्ठ ७३
२ आधुनिक हिन्दी कहानी का परिपार्श्व, पृष्ठ १४३

षष्ठ अध्याय

षष्ठ अध्याय

उपसंहार :-

(क)प्रभाव सृष्टि एवं प्रभाव दृष्टि

हिन्दी कथा साहित्य की परम्परा मे प्रेमचन्द, प्रसाद, जैनेन्द्र, इलाचन्द जोशी, अज्ञेय, उपेन्द नाथ अश्क, यशपाल आदि विशिष्ठ कथाकार एक ओर जहॉं कथा साहित्य में पूर्व सम्वन्ध को वनाये रखे है, वहॉं दूसरी ओर कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, मन्नू भण्डारी, विष्णु प्रभाकर, अमर कान्त, गिरीराज किशोर, फणीश्वरनाथ रेणु, मार्कण्डेय. शिव प्रसाद सिंह, कृष्णा सोवती , भीष्म साहनी, रघुवीर सहाय, रमेश वख्शी, आदि कथाकारों ने जीवनगत यथार्थ को कथा साहित्य में आरोपित किया है। इन कथाकारों के मध्य निर्मल वर्मा का कथ्यानुरूप चिन्तन और रूमानियत निजी प्रभाव सृष्टि और दृष्टि से विलक्षण है। डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय निर्मल वर्मा की गणना उन भारतीय लेखकों में करते है, जो अपनी प्रेरणा के सोत्र विदेशों में खोजते है, भारतीय जीवन पद्धति जिनके लिये नगण्य है , अपेक्षणीय हैं , उन्हें वर्मा ने अपेक्षित ही रखा है। वार्ष्णेय का मत है, कि वे अपने को भारतीय कहने में संकोच करते है। प्रयाग वासियों की तरह आधुनिक होने में विश्वास रखते है। ''-१

वस्तुतः प्रभावसृष्टि की दृष्टि से वर्मा का कथा जगत मे अन्यतम् स्थान है। कथा की चाहे विषय वस्तु हो या फिर शिल्प वस्तु हो, दोनों में ही लेखकों को सफलता मिली हैं, इतना अवश्य रहा हैं कि लेखक ने स्थूल संसार को हू -वा -हू तथ्य बना लिया है। यदि वह स्थूल को आत्मसात करके सूक्ष्म अभिव्यंजना करता तो निश्चित ही मानवीय भाव संवेदना के धरातल पर खरा उतरता लेकिन, इस दोष दृष्टि के वावजूद भी कहानीकार का कथ्यगत, शिल्पगत ?, चिन्तन परक , स्वरूप पूर्ववर्ती और परवर्ती कथाकारों के प्रासंगित सन्दर्भ में हम समकालीन कह सकते हैं। हिन्दी कथा साहित्य सच्चे मायनों में प्रेमचन्द काल से उदीप्त हुआ है। प्रेमचन्द ने कहानी जगत की मूल संवेदना को मानवीय संवदेना से मिला दिया है तत्कालीन समाज अपनी समस्त विसंगतियों के साथ कहानीकार की सहानुभूति के लिये उभरकर सामने आया हैं । निम्न मध्य ,और उच्च वर्ग के विविध आयाम प्रेम चन्द के तथ्य के आधार रहे है। उन्होंने नर-नारी व्यथा ,सामाजिक विद्रूपता सम्वधी समस्याओं को उपन्यास और कहानियों में वखूवी निरूपित किया है उनकी ऐसी अनेक कहानियॉं और उपन्यास है, जिनमें कलात्मक प्रौढ़ता तो है ही ,साथ ही कथ्यात्मक मानवता वादी उत्कान्ति है, यथार्थ हैं,

१ सेवा सदन, पृष्ठ ७७ २ जलती झाडी, पृष्ठ ६३

आदर्श है पंच परमेश्वर से लेकर कफन तक और गबन से लेकर गोदान तक उनके कथा साहित्य में युग सत्य के हस्ताक्षर है। प्रेमचन्द्र ने देशकाल अथवा वातावरण की यर्थाथता पर बहुत ध्यान दिया था। इसलिये उनके वर्णन मे कहीं भी अस्वाभविकता नहीं आयी है। सेवा सदन का पात्र पदम सिंह समकालीन आर्थिक विशंगतियां का शिकार होकर कहता है--'' मैं जाता हूँ घोड़े को लौटा देता हूँ और कोई दोष लगा दूंगा सदन को बुरा लगेगा इसके लिए में क्या करूं । ....उन्होंने निश्चिय किया कि घर में सज्जनता दिखाने की आवश्यकता है। या वाहर किन्तु हम वाहर वालों की दृष्टि में मान-मर्यादा वनाये रखने के लिए घर वालों की कव परवाह करते हैं ।''-१

ऐसी ही समस्यायें निर्मल वर्मा की कहानियों में भी युगानुरूप बहुतअधि ाक उभरी हैं '' पराये शहर में'' कि कहानियों में वेश्या आदमियों की भीड़ में मकान की तरह खड़ी रहती है,'' इतनी बड़ी आकांक्षा'',एक जिप्सी लड़की की व्यथा है,''-२

इसी तरह 'डायरी का खेल',की चाची को बिट्टी के विवाह की चिंता है धार्मिक धरातल पर प्रेमचन्द्र ने छुआछूत की जिस समस्या को,सदगति ,जैसी कहानियों में दर्शाया हैं वैसी ही समस्या अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप ''लन्दन की एक रात'' ,कहानी में मिल जाता है। इस कहानी में अंग्रेज एक-एक नीग्रो को चुन-चुन कर अलग करते जाते है।''-१

प्रेमचन्द्र ने देश प्रेम का युगानुरूप चित्रण किया है इस प्रेम का विस्तृत और आतुर रूप निर्मल वर्मा की ''दो घर कहानी'' में देखा जा सकता है, जिसमें प्रवासी जीवन भर स्वदेश जाने के लिये छटपटाता रहता है ।

ऐतिहासिक कहानियों और उपन्यासों में प्रसाद का अन्यतम् स्थान है। उनके कथा साहित्य में दो प्रवृत्ति विशेष के लक्षण दिखाई देते है। --गुप्त प्रेम कथाएं (आकाश दीप) ऐतिहासिक कथाएं जैसे (सिकंन्दर की शपथ)उपन्यास साहित्य की दृष्टि से प्रेमचन्द्र इन्हीं दोनों प्रवृतियों से अपूरित है । इस प्रकार उनके समग्र कथा साहित्य में भावना का मीना और झीना स्वरूप है। कंकाल, तितली' ,जैसे उपन्यासों में प्रसाद ने सामाजिक विषमता के साथ ही व्यक्ति के पृथक अस्तित्व और एकान्त भावनाओं का चित्रण किया है। 'कंकाल' में घटनाओं की प्रचुरता है ,कथावस्तु शिथिल है फिर भी कथानक की नवीनता और विचारों की निष्पक्षता अनुभूति को गहराई देती रही है।''[२]

प्रसाद की कहानियां ऐतिहासिक एंव वर्तमान जीवन के दोनो ही यथार्थ 'आदर्श पहलुओं को समेटे हुए है। 'विराम चिन्ह 'कहानी में हरिजनों के मन्दिर प्रवेश की समस्या है।''[३]

सलीम कहानी में हिन्दू-मुस्लिम द्वेष की समस्या हैं।''[४]

१- वही पृष्ठ,१०७   २- कंकाल,आमुख

३- आकाशदीप,पृष्ठ २२   ४- इन्द्रजाल,पृष्ठ ६३-१२०

निर्मल वर्मा कथाकार है,इसीलिये प्रसाद के प्रेम और सौन्दर्य से भी बढ़कर प्रेम की गंध और वासना की आग दोनों को ही अपने कहानियों में स्थान दिया है। प्रसाद की दुनियॉ जहॉ केवल काल्पनिक है वहॉ निर्मल वर्मा की दुनियॉ ठोस यथार्थवादी है।'आकाशदीप'का वुद्ध गुप्त पत्थर जैसा ह्रदय लेकर चम्पा के सम्पर्क में आकर चन्द्रकान्त मणि की तरह पिघलने लगता है,वहां निर्मल की दहलीज,परिन्दे,अंधेरे में,आदि कहानियां सन्तरण की भांति अपने प्रिय के सामीप्य को प्राप्त करने के लिये तैरती और उतराती दिखाई पड़ती है ?''

''जूली की वेदना','रोहतगी साहब की प्रतीक्षा ''परिन्दे,आदि कहानियों में प्रसाद की भॉति प्रकृति चित्रण और संगीतमय प्रेम का निरूपण है वर्मा थोड़ा सा हटकर रूमानियत के सन्दर्भ में 'लवर्स' की बौद्धिकता और केशी के नेत्रों की पथरीली भावहीन उदासी एक शाम खामोशी की भॉति अनुभूति करते है, जिससे संगीत और मादक दृव्यों का जुड़वा भाई जैसा संगोपाग समन्वय सृजित हो उठता है।

जैनेन्द्र की रचना पद्धति पूर्वोत्तर कथाकारो से भिन्न है मनोवैज्ञानिक शैली से कथाकार ने सुनीता,कल्याणी,त्यागपत्र,जैसे उपन्यासों में मानवीय गत्यात्मक मूल्यों को अर्थवत्ता प्रदान की है। इस दृष्टि से त्यागपत्र जैनेन्द्र का महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। उपन्यास का पात्र प्रमोद वृद्धावस्था में अपनी बुआ मृणाल के प्रति कर्तव्य पालन न कर पाने कारण पश्चाताप व्यक्त करता हैं। उसका चिन्तन परिपूर्ण में आत्मविश्लेषण अर्थवान है। प्रमोद के अतीत चिन्तन में मृणाल का व्यक्तित्व उभर आता है।''[२]

जैनेन्द्र ने माननीय संवेदना से जहॉ कथा-वस्तु का निर्माण किया है, वहॉ 'मास्टर जी' जैसी कहानी में जीवन बोध को बहुत नजदीकी से देखा हैं । और इधर एक 'एक रात' जैसी कहानियां जीवन के कुछेक घण्टों पर आधारित होकर भी सम्पूर्ण व्यक्तित्व की उपस्थिति करती है ?

निर्मल वर्मा जैनेन्द्र जैसे अहिंसा के समर्थक नहीं है। उन्होने' वे दिन उपन्यास में बहुत ही बारीकी से वातावरण को उतारकर कथावस्तु का मूल वातावरण ही बना दिया है। वे दिन उपन्यास में यह तथ्य मनोवैज्ञानिक भी है और यथार्थ भी, जैसे..........उसने चुपचाप अपना पैकेट मेरे पास फेक दिया। मैने सिगरेट जलायी और अपनी देह को रगड़ने लगा। एक नशीली सी झुरझुरी मेरे पैरों और जोड़ो मे फैलने लगी..............मुझे बचपन से अपनी देह अच्छी लगती रही है, जब उस पर कुछ न हो। मै धीरे-धीरे छूता हूँ,उन अंगो को जो दिन भर कपड़ो से छिपे रहते है।''[१]

वर्मा की रुमानियत कहानियों में स्त्री पुरुष के उन सम्बन्धो का जिक्र है जिनमे व्यक्ति जिन्दगी भर खो जाना चाहता है। देह छुअन और मन की धड़कन रूमानियत को चार चांद लगा देती है ।

१- परिन्दे, पृष्ठ ६३-१२० २- त्यागपत्र, पृष्ठ ४५ ३- जैनेन्द्र की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृष्ठ १२३
४- वे दिन, पृष्ठ ११९ ५- पिछली गर्मियों,पृष्ठ ११२

उदाहरण दृष्टव्य हैं --मैने छुआ नहीं एक लम्बे छड़ तक उसे अपने हाथों पर वैसे ही पड़े रहने दिया--मेरे हाथ उसके नीचे दव गये है .....मीनू की स्निग्ध शान्त आँखों और मेरे कांपते हाथों के वीच केशी का अधवुना स्वेटर एक लम्बे पल तक विना हिले डुले पड़ा रहता है।''[3]

अज्ञेय प्रयोगवादी कथाकार है। उन्होने मनोवैज्ञानिक प्रयोगों का आगृह कथा-विधान में स्वीकार किया है। 'विपथगा' कहानी संग्रह की जितनी भी कहानियाँ है वे सव मानवीय अन्तर्जगत की कहानियाँ है। उनकी कहानियों में एक ओर आत्म संघर्ष प्रधान्य है,तो दूसरी ओर प्रगाढ़ अकेलेपन की कसक है। कोठरी की वाते- -कहानी में जिस कोठरी का मानवीयकरण किया गया है। वह कोठरी कहती है--''अपने प्रगाढ़ अकेलेपन में मैंने एक शक्ति पायी है। मैं आत्मायें पढ़ती हूँ।''[4]

अज्ञेय के कथा साहित्य में वेदना वादी स्वर मुखरित हुआ हैं,इसीलिये व्यक्तिवादी सत्य कथावस्तु में स्थापना पा सका है। 'अपने-अपने अजनवी' और 'शेखर -एक जीवनी' उपन्यासों में अज्ञेय ने मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का परिचय दिया है। फ्रायड और एडलर के मनोवैज्ञानिक सिन्द्धान्तों का 'शेखर एक जीवनी' उपन्यासों में भरपूर प्रयोग किया गया है। इधर निर्मल वर्मा 'एक चिथड़ा सुख' जैसे उपन्यास में वातावरण के व्यवहारवादी सिन्द्धान्त का प्रश्रय लेकर आत्मा का मुखरता का एक अभिनव आयाम वुन सके । 'मै' पात्र का यह कथन विचारणीय है................मैं सचमुच वच कर निकल गया। वे वाते कर रहे थे,मुझे भूल गये थें। मैं अकेला छूट गया था मै धीरे-धीरे सरकता हुआ कमरे के दूसरे छोर तक चला आया। एक दरवाजा दिखाई दिया-आधा खुला हुआ। भीतर झांका, तो कोई नहीं था.............कोठरी से सटा वाथरूम था। वत्ती खुली थी-और उसकी रोशनी में टव की सफेद चिकनी तह चमक रही थी। एक कमोड और कुछ वाल्टियां-हॉ,पीछे एक खिड़की खुली थी, जहाँ से कनाट प्लेस के पिछवाड़े की गलियां दिखाई देती थी ।''[5]

इलाचन्द्र जोशी जैसे समर्थ मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार ने 'परदे के रानी', 'सन्यासी','प्रेत और छाया'आदि उपन्यासों में मानवीय सुगम सहज इतिहास को काम क्रीड़ा पर आधारित करके अनुशीलित किया है। उपन्यासों के पात्र वाह्य रूप से साध ारण किन्तु मानसिक रूप से असाधारण व्यक्ति वाले है। इन उपन्यासों के अतिरिक्त कथा साहित्य में जोशी ने मनोविज्ञान के विविध रंग वड़ी सतर्कता के विविध पात्रों में भरे है। 'फिडनेटड' जैसी कहानी में मातृस्नेह वचिंता मनमोहनी का विचित्र व्यवहार,फायडन भाई बहिन की छाप लिये हुए हैं। सैक्स सम्वन्धी कुंठा और घुटन,और विक्षिप्तियॉ उनके विविध पात्रों में कदम कदम पर मिलेगी ।

भाव तत्व और चरित्र विश्लेषण की कहानी जोशी जी की निजी शर्त है मध य वर्ग ह्रासोन्मुख जीवन से सम्बन्धित आचार-विचारों पर उन्होने चिन्तन किया है। डा० लक्ष्मी नारायण लाल ने दो वाक्यों में ही उनके कथा का समॉकलन करते

हुए लिखा है...................जोशी जी की कला में अपना एक स्वतन्त्र छन्द है, गति है। इनकी अपनी विशिष्ठ धारा है जिसे कभी भुलाया नही जा सकता।''-१निर्मल वर्मा मनो विशलेषण वादी कहानीकारों में से तो नही है फिर भी हिन्दी कहानी को कथ्य के क्षेत्र में प्रौढ़ता दी है वह चेतन, अचेतन और अवचेतन के मन की प्रकियाओं से सम्प्रक्त है। 'तीसरा गवाह' कहानी में रोहतगी साहव गिरजा से विवाह न हो पाने की पीड़ा को जीवन भर शराव पी-पीकर भुलाते रहते है।''-२

''लवर्स'' हिन्दी प्रेम में हताश हो अर्धनग्न चित्रों वाली पत्रिका खरीदता है धागे का कैदी अतीत को भुलाने के लिये मधपान करता है। इन नायको के अतिरिक्त ,नायिकाओं की मनः स्थिति का चित्रण भी वर्मा जी ने मनोयोग से किया है लवर्स कहानी की नायिका का अहम वहुत ही प्रवल है अहम रक्षण हेतु वह निन्दी से मैत्री तो रख सकती है किन्तु पत्नी के रूप में भोग्या बनकर उसे रहना स्वीकार नही ''-३

अधेरे में कहानी में वच्चों के स्वपन अचेतन मन की अभिव्यक्ति है।इस प्रकार मनोविश्लेषण वादी कथाकारो की पंक्ति में निर्मल जी का अपना स्थान है उपेन्द्र नाथ अश्क जैसे गम्भीर कथाकारो रा भी निर्मल वर्मा प्रभाव सृष्टि एंव दृष्टि को समायोजित जहां अश्क की कथा विधान रेखा कटु आलोचना व्यंग्य के लिये सपाट है।

वहा निर्मल वर्मा भी व्यंग्य के कुशल कलाकार है । 'वीक एण्ड' की माथीपात्र अपने मंगेंतर से वौद्धिक प्यार की अपेक्षा करती हे माया दर्पण पहाड, जलती झाड़ी आदि कहानियों इन अपेक्षाओं की प्रतीकात्मक वुनियाद है। तत्वता दोनो ही कथाकार मूल संवेदना का बिम्व लिये हुए हैं।.

कथाकार यशपाल भी शिल्प प्रयोग में विचार धारा के अग्रणी है उनके कथा साहित्य में परिष्कृत विचारो, चिन्तन प्रधान दृष्टिकोणों की अभिव्यंजना है इधर निर्मल मार्क्सवादी विचार धारा के अग्रणी तो नही लेकिन राजनीति के प्रवाह को नकार नही पाते लन्दन की रात कहानी में अनेक राजनैतिक स्तरीय चित्रण है आर्थिक सन्दर्भो में उन्होने वेकारी, भुखमरी, को कहानी का विन्दु का उदाहरण देखिये............''हम सवके हाथो में एक एक थैला था जिसमें हमने रात की ड्युटी के कपड़े और खाने का सामान वांध रखा था हम में से किसी के लिये भी यह विश्वास करना कठिन था कि हमे अगले ट्यूव से वापस लौट जाना होगा........ ....उस क्षण भूख और निराशा के वावजूद हमारे मन में कही भी कोई खीज या कटुता नहीं थी,''-१

यशपाल मात्र समस्या ही नही देते उनका समाधान भी करते है। 'कर्म फल' और 'फूल की चोरी' कहानियों में आर्थिक वैषम्य भी समस्या है।''-२ स्वतांत्रयोत्तर कथाकारों में मुख्य कथाकार है--राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, मोहन राकेश

१-जलती झाड़ी, पृष्ठ ६
२-जलती झाड़ी, पृष्ठ ९८
३-फूलों का कुरता, पृष्ठ ३६
४-उखड़े हुए लोग, पृष्ठ ३२

कमलेश्वर, नागार्जुन, धर्मवीर भारती, कृष्णवलदेव वैध, भीष्म साहनी, रमेश बक्सी, जया प्रियंबन्दा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोवती, अमरकान्त, फडीश्वर नाथ रेणू, शिवप्रसादसिंह, मार्कण्डेय, शैलेश मटियानी, हरीशंकर पारसाई, महीपसिंह, दूधनाथसिंह, रविन्द्र कालिया, श्रीकान्तवर्मा, नरेश मेहता, सुधा अरोड़ा, प्रयाग शुक्ला आदि राजेन्द्र यादव स्वतांत्रयोत्तर कथाकारो में मध्यवर्गीय स्त्री पुरुषों के सम्बंधो को उखडे हुए लोग उपन्यास में वखूवी वर्णित करते है कि आधुनिक सामाजिक चेतना के सशक्त कथाकार है ।

इस उपन्यास में छूटे हुए थके हारे लोग है वे निराशा और कुंठा से ग्रसित है । प्रासंगिक कथा सूत्रो में भली भाँति देखा जा सकता है स्वदेश महल लाते समय रिक्शा वाला शरद नेता भैया से कहता है "...हां जी वो कोठी रही नेता भैया की वो जिस पर झण्डा लगा है वो जिनका वड़ा लम्वा चौड़ा सा कारोवार है सव आदमी बहुत शरीफ है हमेशा मुस्कराते ही रहते है और विना हाथ जोड़े वात नही करते तभी तो उनकी इतनी वरवकत है।"

वस्तुतः क्या नेता भैया मानवीय संवेदना से रहित है भयंकर स्वार्थी, कामी और धूर्त है माया देवी के प्रेम का इन्होनें अपने लाभ के लिए शोषण किया उसे रखैल रखा और यही नही उसकी लड़की पदमा को भी अपनी वासना का शिकार बनाने की चेष्टा की । इस प्रकार स्वतांत्रयोत्तर समाज के एकाकीपन और व्यक्तिगत मूल्यो का जिक यादव ने वहुत किया है। जहां लक्ष्मी कैद है कहानी में सैक्स की अदम्य इच्छा का वर्णन करते हुए यादव कहते है कि "........वे तूने मुझे अपने लिए रखा है, मूझे खा, मूझे चवा, मुझे भोग ।"-२

पिता से पुत्री का यह कथन भोग की प्रवल इच्छा का उदाहरण है निर्मलवर्मा ने सैक्स सम्वंधी पुरानी धारणाओं का परित्याग करके अनेक प्रकार के यौन सम्बंध स्थापित करने की वात कही है। प्रेम, सेक्स, घुटन, उदासी, चीख, भय, आतंक आदि विभिन्न आयाम निर्मल वर्मा की कहानियों के पाठ है। पिछली गर्मियों में 'पिता और प्रेमी' उनके कमरे आदि कहानियां इस कथन की पुष्टि करते है। मोहन राकेश द्वारा रचित उपन्यास और कहानियां मानवीय संबंधो की अर्थहीनता को उजागर करते है। 'अंधेरे बन्द कमरे' उपन्यास में मधुसूदन पात्र के दस बर्षो की कथा है। इस कथा सूत्र के विस्तार को उपन्यासकार ने जहां एक ओर महानगरीय परिवेश दिया है वहां दूसरी ओर स्त्री पुरुष के सहज सम्बंधों का उल्लेख किया है। नीलिमा के वृत्त होकर हरवंश इंग्लैण्ड गया और लन्दन पहुंचने पर एक पत्र में उसने अकेलेपन को इस प्रकार व्यक्त किया.......मैं अपने को वहुत अकेला महसूस करता हूँ क्यूँ ? यह अकेलापन पांच हजार मील की दूरी के कारण नही है

१- जहाँ लक्षमी कैद है, पृष्ठ ३३   २- अंधेरे बन्द कमरे, पृष्ठ १४४

और न ही शारीरिक प्राप्ति के अभाव के कारण ही है यह अकेलापन वर्षो से मुझे अन्दर ही अन्दर कीड़े की तरह खा रहा है, ओर खाता जायेगा। जव तक कि तुम सच मुच ही मेरी मित्र न वन सको। समझकर ही लिख रहा हूँ हालांकि वह कौन हो सकता है इस प्रश्न का मुझे कोई उत्तर नही मिलता?

निर्मल वर्मा ने परिन्दे कहानी को इसी सूक्ष्म वेदना के तार से वुना है 'परिन्दे' कहानी में पियानो के संगीत के स्वर में रूई की छुई मुई रेशों से अव तक मस्तिष्क की थकी मांदी नसो पर फड़फड़ा रहे है। इस रिक्तता और पारस्परिक अलगाव में डूवी हुयी कालगत सत्य का निरूपण लेखक ने किया है। ....."ललिता ओर आर्म चेयर पर ऊघने लगी है"। डा० मुखर्जी का सिगार अंधेरे में चुपचाप जल रहा था। .... ललिता के समूचे शरीर में झुर-झुरी-सी दौड़ गयी, मानो अनजाने में किसी गलीज वस्तू को छू लिया हो। उसे याद आया कुछ महीने पहले उसे ह्यूवर्ट का प्रेम पत्र मिला था भावुक याचना से भरा हुआ पत्र, जिसमें उसने न जाने क्या जो कभी उसकी समझ में नही आया।...... उसकी उम्र अभी वीती नही है अव भी वह अपनी और दूसरो को आकर्षित कर सकती है।'-१

कमलेश्वर स्वतांत्रयोत्तर कथासाहित्य के सशक्त हस्ताक्षर है । "मांस का दरिया" कहानी में उन्होने वैश्या जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है इस नंगे जीवन का नंगा चित्र कहा जाये या नंगे जीवन पर झीना पर्दा"-२

जिन्दगी की सच्ची तश्वीरें को उतारने का काम कमलेश्वर ने किया है । उन्होने जीवन पर किसी प्रकार का पर्दा नही डाला है चाहे वह खोई दिशाये है, या राजा निरवंशिया । उनके उपन्यास साहित्य में वैयक्तिक सौन्दर्य चेतना का चित्रण विल्कुल खुले आयामो को लेकर हुआ है। धर्मवीर भारती आधुनिक सामाजिक संवेदना के नये कहानीकार है। "गुनाहो का देवता", "सूरज का सातवा घोड़ा", जैसे उपन्यासो में जहां एक ओर मानवीय भावनाओं को छूआ है।

वहां दूसरी ओर अपनी कहानियों में मानवीय आस्था, विश्वास, संघर्ष तथा क्षमता को प्रदर्शित किया है कथाकार इतना अधिक भावुक मन लेकर कथासूत्र को पकड़ता है। "गुनाहो का देवता" इस उपन्यास दृष्टि से दृस्टव्य है। सुधा, चन्दर के प्रति समर्पिता है वह अपने मानस में और किसी दूसरे को हल्की सी छाया के रूप में भी वरदाश्त नही कर पाती। वह वार वार यही कहती है........चन्दर सचमुच मुझे अपने आश्रय से निकालकर ही मानेंगे"-१

१- परिन्दे, पृष्ठ १२६   २- मांस का दरिया, पृष्ठ ११५

३- गुनाहो का देवता, पृष्ठ १३१   ४- परिन्दे, पृष्ठ १११

निर्मल वर्मा "सितम्बर की एक शाम" कहानी में बड़ी खामोशी के साथ बातावरण में स्वच्छ पहलू के साथ जीवन की मार्मिक गांठ को खोलते हुए कहते है.........जैसे वह अभी जन्मा है उसकी जिन्दगी की गांठ अतीत के किसी प्रेत से नही जुड़ी है. ....सारी दुनियां उसकी प्रतीक्षा कर रही है कि वह उसे अर्थ दें।-२

अभिप्राय यह है कि जहां भारती की सुधा विवाह मण्डप के नीचे बैठकर अतीत की गोद में वर्तमान को जन्म देकर दुनियां की निर्मल प्रतीक्षा के लिए व्यग्र हो उठती है उसी प्रकार वर्मा की पागलपन मनःस्थिति हर काल के बदलते परिप्रेक्ष्य में पुर्नजन्म जैसी अभिनव माला करने की ओर उन्मुख होती है।

भीष्म साहनी जैसे कथाकर ने एक ओर पारम्परिक मान्यताओ को झंझोरा हे तो दूसरी ओर मानवीय सम्बंधो की सहजता को नये अर्थ प्रदान किये है। चीफ की दावत कहानी में साहनी की मौजूदा हालत वहुत ही बिसंगत पूर्ण है । पदोन्नति के लिए चीफ की दावत दिंगात्मक है बड़े आदमी के कंधे पर हाथ रखकर वतियाना त्रिलोकी पात्र को वहुत वड़ी घटना लगता है। और इसे पति-पत्नी के नीरस जीवन में नये जीवन का संचार होने लगता है। कुन्ती पात्र चीफ साहव से मिलकर नये सपने सजोंने लगती है। निर्मलवर्मा की कहानी इतनी वड़ी आकांक्षा में फौजी युवक और एक महिला विशेष के सहज सम्वंधो की कहानी है।

कुछ योगी उसने धीरे से कहा इतने धीरे से नही कि महिला नही सुन सके। इतने ऊंचे में भी नही कि उसके साथी को पता चल सके औरत ने सिर हिलाया, मुस्कराई लेकिन कहा कुछ नही फौजी को आशा वंधी । -२

रमेश वक्सी ने नागरीय वोध को लेकर व्यंग्य भरी कहानियां लिखी है किस्सा एक शुतुरमुर्ग को व्यंग भरी कहानी है। इस कहानी में अविवाहित लड़की की भीरुता और प्रवृत्ति का चित्रण अनूठा है। आज भी हर लड़की शुतुरमुर्ग होती है। उसकी उम्र २७ वर्ष है, उसके पंख देखने भर के होते है वे डरपोंक और कायर होती है। लेकिन जव शुतुरमुर्ग का पोस्ट मार्टम होता है, तो कई कठोर चीजें उसके पेट से निकलती है आज भी यह शुतुरमुर्ग लड़की पत्थर सी भारी भरकम और कठोर चीज विवाह को ही पचा गयी है-३

निर्मल वर्मा के उपन्यास साहित्य में महिला जगत के विभिन्न आयाम दर्शाये गये है देखे.........तुम स्वार्थी लड़की हो, काया हो, तुम हमेशा से स्वार्थी रही हो। -----नही-नहीं। यह नही यह बिल्कुल नही क्या यही वही चीजे है जिसे वह आत्मा कहती थी, लहुलुहान देह पर चमड़े के कालर से लिपटी हुयी आत्मा। उषा प्रियवदा ने स्वतांत्रयोत्तर भारतीय समाज में संयुक्त परिवारों के विघटन की वात कही है। पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के वैचारिक स्तर की विभिन्नता की वात कही है।

१- भीष्म साहनी की प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ ८३   २- पिछली गर्मियो में, पृष्ठ १०४

३- मेरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ २०   ३- लाल टीन की छत, पृष्ठ १४२

-वापसी कहानी का नामक गजाधर वावू एक रिटायर्ड अफसर है वह रिटायरमेन्ट के वाद सव कुछ होने के है वावजूद भी अपने परिवार में समायोजित नही हो पाता है। आश्चर्य है कि अनेक घर के किसी भी पात्र को उनके प्रति प्रेम और आदर नही है। उनके घर से जाने पर किसी को दुःख नही। आपत्ति नही, आंसू नही, रूदन नही केवल एक दृष्टि है जो उनके चले जाने के वाद भी चारपाई को वाहर निकाल देती है। प्रियंवदा ने पारिवारिक, आर्थिक ओर सामाजिक मूल्यों पर मानवीय करूणा के स्वर फूंके है कि निर्मलवर्मा ने उपन्यासों और कहानियों में वापसी भावना को भी कथ्य नही वनाया है फिर भी अकेलेपन के अहसास और परिवार के अल्पभाव के भित्ति पर चित्र वनाये है। जैसे पीछे मूड़ा तो विट्टी वैठी थी चीज ....न्यूज को कुतर रही थी गिलहरी की तरह .....सुनो उसने कहा मैं आज ही तुम्हे इलाहावाद भेज दूंगा..........क्यो ऐसे ही मैं अकेला रहना चाहती हूँ, तुमसे तंग भी आ गयी हूं-३

स्वतांत्रयोत्तर हिन्दी कथा साहित्य में अनेक आने वाले परिवर्तन विकास को निर्मलवर्मा जैसे समर्थ कथाकारो की भाँति अन्य कथाकारो ने संवेद स्वर में स्वीकार किया। नयी कहानी का कथ्य और शिल्प का आज हर कथाकार जिस प्रकार ताने वाने के साथ वुन रहा है वेसे ही उपन्यास का ढांचा ही बदलते मानव मूल्यों की उभरती रेखाये इस प्रकार कर रही है साठोत्तरी कथा साहित्य के मूल कथ्य और संवेदना का अध्ययन करे तो यह वात स्पष्ट प्रतीत होती है, कि व्यक्तिगत नकारात्मक, अनुभव से टूट चुका है वह झटपटा रहा है। सम्वंधो की टूटन से सम्वंधहीन होकर जीने के लिए विवश कर रही है। वे सम्वंध सामान्य धरातल के भी है और सेक्स परक भी आज का व्यक्ति दोहरे अलगाव को झेल रहा है। एक ओर वह अपनेपन से अलगाव महसूसता है दूसरी ओर समाज से अकेलापन, अजनबीपन धरोहर वन रहे है। डा० शिव प्रसाद आज के कथा कथ्य पर परिवेशात्मक टिप्पणी इस प्रकार की है..........''लाश की अवस्था'' में समाज कहानी योग्य वह सारा जगत जो व्यक्तिगत अस्तित्व से निर्मित था यहां आदमी सुरक्षित घरेलूपन का अनुभव करता था एकाएक नीरसता में डूब गया है वह पोल जिस पर व्यक्ति सवार होकर यात्रा तय कर रहा था अन्तर ध्यान हो गया है और पहली बार उसे समुद्र के जल का खारा स्वाद मिलने लगा है।''-४

सचमुच आज के कथानकों में व्यक्ति अभिशप्त है, बौना है, कुंठित है, ठण्डा है, सिनिक है, सपरिणाम स्वरूप व्यक्ति की विद्रूपता की झलक कथा साहित्य में उभरकर आयी है।

कथा साहित्य का शिल्प पक्ष जिसमें भाषा शैली साधन हुआ करती है उसे आज की कथा वस्तु में वहुत ही गुथे रूप में देखा जा सकता है इसी विषय पर जितेन्द्र भाटिया न सारिका पत्रिका में एक लेख दिय है............कथाकार अवसर

१- मरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ ११८ २- एक चिथड़ा सुख,पृष्ठ ११
३- आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद, पृष्ठ ८६ ४- सारिका, सितम्बर १६७१

विशिष्ट भाषा और शिल्प के कारण ही कहानिरों की भीड़ में अपनीआइडेन्टिटी बनाने में सफल होते है । कथाकार के लिए कुशल होना आवश्यक है। पर शिल्प अपने आप में एक आर्ट फार्म रही है। रचनाकार के सामने शिल्प के मुकाबले में संवेदनाये प्रमुख होती है, कहानी के क्षेत्र में पिछले वर्षो में शिल्प की आढ में कथ्यहीनता को छिपाने की जितनी कोशिशें की गयी वे अन्ततः असफल रही क्योंकि शिल्प और भाषागत चालाकियां कथ्य को प्रभावशाली बनाने में सहायक तो हो सकती है, उसका सबस्टीट्यूट नही बन सकती है। वास्तव में किसी भी जैनुइन लेखक के सामने भाषा और शिल्प को लेकर कोई गम्भीर समस्या नही होती। कथ्य अपनी भाषा खुद ही तलाश कर लेता है।''-१

तत्वतः शिल्पगत चेतना के पीछे एक मानसिक संवेदना अन्तर निहित रहती है लेखक वैयक्तिक चेतना के तहत कथ्य और शिल्प को अभिनव दिशा प्रदान करता है निर्मल वर्मा ने भले ही प्रवासीय जीवन की रंगात्मक कहानी उपन्यासो और कहानियों में प्रदर्शित की हो फिर भी परिवेशात्मक सौन्दर्य, मान्सलन, सहानुभूति चित्रात्मक वृत्ति तथा रागात्मक संत्रप्ति का विश्लेषण यथा स्थान किया है। इस अभिनव प्रयोग से कथाकार ने अभीष्ट प्रभाव की श्रृष्टि की है। राजेन्द्र यादव ने साठोत्तरी कथा साहित्य में इसी प्रकार के कथ्यगत विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए कहा है..........वह अपने कथ्य को सीधा भोगने, जीने और प्रस्तुत कर देने का यथार्थ परक प्रयत्न नये कथाकारो का ही है''-२

मूलतः आज के कथा साहित्य में शिल्प, वातावरण और संवेदना को सम्मिलित इकाई के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। कथा समीक्षक से बहुत ही तेजी से अपेक्षा की जा रही है कि वह इस सम्मिलित प्रभाव सृष्टि को समझे और समीक्षा के नये प्रतिमान घोषित करे । किसी भी पारम्परित प्रतिमान के द्वारा यहीं आज के कथा साहित्य को रिहा किया गया हो । उसके साथ न्याय न हो सकेगा। सचमुच आज परम्परा की धरोहर नही है और न किसी की बापौती। आज को समझने के लिए आपके ही विकास हमे गणना होगा। साहित्य मे कथा विधा ने इस दृष्टि से पर्याप्त विकास किया है।

आधुनिक युग चेतना के परिक्षेप में साहित्यक वर्ग दिशा हीन होकर दौड़ लगाना हुआ भी गन्तव्य को नही छू पा रहा है। कारण बहुत ही स्पष्ट है कि पुराने कथाकार शास्त्रीय मानो के लिए उलझे हुए है, युवा पीढ़ी नये नये प्रयोगों की लालसा में भटक रहे है। कथा समीक्षक दावतों पर आंख गढ़ाये हुए है। और रही बात पाठक की वह तो बात बेहद ही लेकर की घर वापस आता है लगता है कि अब कुछ चूक गया है बुझ गया है और भयवश थोड़ी बहुत रोशनी टिमटिमाने की है भी तो उसे निगलने के लिए बॉह फैलाये हुए मठाधीशों की कमी नही है। ऐसी परिस्थिति में भी निर्मल वर्मा ने वस्तु चयन और भाव गुम्फन को एक ही दिशा दी है। उनके कथन रूपी बंध की संश्लिष्टता काटनी है शिल्पगत पहलू से आंख मूंद

लेना भी उचित नही है। सहज कथ्यात्मक और शिल्पात्मक रूप वंधो को देखकर

डॉ० भगवानदास वर्मा ने उचित ही तो कहा है ....''शिल्प कोई कृत्रिम प्रक्रिया नही वह एक सजग आंतरिक प्रकिया है शिल्प संयोजक केवल चौकाने का काम करता है जव लेखक से विभिन्न साहित्यक विधाओ का एक दूसरे से अनिवार्य मिश्रण मानकर किसी भी विधा विशेष का हुलिया सुरक्षित रहना आवश्यक है। विधागत प्रयोग रचना का जीवन्तता: का लक्षण है और शिल्प बोध ा की अनिवार्यता रचनाकार की अंगमूल शर्त है''?

वस्तुतः निर्मल वर्मा की कथा साहित्य का गत्यात्मक स्वरूप उनके निजी सोंच और संवेदना से जुड़ा हुआ है उन्होंने देशी विदेशी भावात्मक जगत का अन्तर मूल्य पड़ा गहनता के साथ आत्मसात किया है, जोर ऐसा कहने में भी संकोच नही है कि ऐसे कथाकार को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का कथाकार भी कहे तो उपयुक्त ही होगा फिर चाहे वह वस्तु दृष्टि से मान्य हो या शिल्प दृष्टि से। अवश्य मान्य है।

(ख) उपलब्धि एवं महत्व : -निर्मल वर्मा के समग्र कथा साहित्य का समांकलन आधुनिकता करने के वाद एक वात वहुत ही स्पष्ट होती है कि कथागत विदेशी प्रभाव प्रचुर मात्रा में उन पर है। उनकी यह उपलब्धि है और कथा साहित्य के प्रतिपादन भी है। उन्होंने कथागत विदेशी प्रभाव का स्वरूप अपने मन के अंनुरूप ग्रहण किया। विदेशी सौन्दर्य को उन्होंने मान्यता प्रदान नही की वल्कि उनके यथार्थ मानवीय आयाम खोला है। प्रेम के क्षेत्र में मोह भंग वौद्धिकता उस देहात में बोध ा मुक्त मिलन आदि स्थितियां उन पर विदेशी प्रभाव की परिचायक है। इन तमाम स्थितियो पर कथा साहित्य में विचार करते हुए वे पश्चिम में रंगीन और शराव घर का जिक्र अवश्य करते है। इन जिक्रों में भी एक ओर जहां अस्तित्ववादी विचारको की झलक है। वहां दूसरी ओर अकेले पन में जुड़े हुए सशक्त जीवन की झलक है उन्होने शराव के विविध भेद और विविध नाम कथासाहित्य में गिनाये है दरअसल उनके कथासाहित्य उस वातावरण और परिवेश की देन है जहां वियर होते है इतना ही नही झलकते मन को उठाकर के पीने वाले हमराही भी होते है। शराब की प्रतिक्रिया का जिक्र करते हुए निर्मल वर्मा ने जीवन के यथार्थ जीवन से एकाएक नाता स्थापित कर लिया है 'खोज' की लड़की की आवाज विस्की पीने के बाद तरल हो जाती है 'लन्दन की एक रात' का पात्र फड़फड़ाते पंख से उड़ने को आतुर हो जाता है। 'अमालिया', का अरव पीने के वाद लड़कियो को देखकर सीटी बजाता है।

इतनी वड़ी आकांक्षा का पति पीने के वाद कांप उठता है ये सब प्रतिक्रियाये कहानी साहित्य की कथ्यगत उपलब्धियां ही है । वर्मा के कथासाहित्य में जहां शराब के स्वाद पर जोर दिया जाता है वहां सिगरेट के धुंये को उड़ाने की दृष्टि भी दिखायी गयी है। प्रवास यात्रा में वर्मा ने पुरूषो की अपेक्षा स्त्रियो को अधिक सिगरेट पीते हुए देखा है। अंतर की नायिका को सिगरेट पीना वहुत पसंद है इतना ही नही लवर्स की निन्दी छुट्टियो के वाद की लड़की "वीक एण्ड" की मार्था ऐसे ही अनेक पात्र है जो सिगरेट से शिष्टाचार ही नही बल्कि साथियो की भूखी लालसा को भी तृप्त करते है यहां तक ही नही वर्मा ने सिगरेट के अनौचित्य एवं अपराध बोध से ग्रसित पात्रो की सजगता का कभी ख्याल किया है यदि सिगरेट वाली बात कथ्यगत अनुकूलता में शराब की भॉति नकार भी दी जाये लेकिन एक कथ्य जो वर्मा ने उजागर किया है वह आधुनिकता का बोध का सबसे प्रमुख लक्षण है। बीच बजार में दो प्रेमी प्रेमिकाओ का लिपटना चूमना सहलाना गुदगुदाना तब ही नही बल्कि प्लेटफार्म पर अपने मंगेतर से लिपट जाना एक विदेशी ही प्रभाव है। छुटिटयो के वाद कहानी का मार्था अपने प्रेमी से लिपटती ही नही है वल्कि परस्पर खूब कंसकर चूमने का प्रयास करती है। अमलिया का युवक दफ्तर में महिला से हाथ ही नही मिलाता बल्कि उसके कनपटियो के पास सटे हुए बालो को ओर होंठो के नजदीक उगले हुए भावो को पीने का प्रयास करता है। दो घर की नायिका ने तो कमाल ही कर दिया। उसने वीच वाजार में अपने प्रेमी को झकझोरा ही नही, बल्कि मुखर होकर उसे शयनकक्ष तक खींच ही लायी । अन्तर की नायक-नायिका खुले चौराहे पर दोस्तो के बीच मौज मस्ती करने में चूकते नही है। यह तो बात रही लिपटने, चिपटने ओर छूने तक की। उसके उपन्यास 'वे दिन' में और भी खासियत भी है लेखक ने कह दिया है कि चमकती धूप में उसे एकसा लग रहा था कि उसने अपने मन की धूप जैसी उजरी आभा मेरे मन पर उतार दी है और मेंरे होंठ अचानक ही उसके मुंह घिसटते चले गये। इतना ही नही वह मुझसे सटती ही चली गयी, पास आ गयी ओर मैं निर्वाक हो गया। निर्मल वर्मा की पिता ओर प्रेमी कहानी आधुनिकता की सबसे वड़ी पहचान है इसमें नायक नायिका की सादी नही होती किन्तु नायिका की गोंद में बच्चा है। इस प्रकार उसका प्रिय प्रेमी भी है और पिता भी है।

'पिछली गर्मियों में' और भी वात स्पष्ट हो जाती है कि महीप बिना शादी के ही एक उस लड़की के साथ रह रहा है। दो घर कहानी में बिना शादी के ग्रहस्थी बना दी गयी है। जिसमें पति-पत्नी, बाल-बच्चे सब कुछ तो है। इतना भी तो प्रभाव कह सकेंगे लेकिन इसमें भी ज्यादा पिछली गर्मियो में ।

भारतीय संस्कार के विरोध की बात है। इसमें नीता और नित्ती भाई-बहन होकर भी परस्पर नृत्य करते है , नृत्य ही नही अंग प्रदर्शन का भी सिलसिला जारी रहता है और लगता है कि भारत जिसे नैतिकता की संज्ञा देता है वह विदेशी नैतिकता मिलन ही खाती है।

अन्तर कहानी का नया आयाम खोलती हैं शारीरिक सम्बंध विदेशो में स्थापित विश्लेषण के बहुत बड़े मुद्दे नही होते फिर एक बात विदेशों में इस सम्बंध से अदभूत प्रकिया पर विचार करने योग्य है। अन्तर कहानी के अस्पताल को रिसेप्टनिष्ट जब यह जानती है कि लोग गर्भपात अपने सुख के लिए करते है तो उसे बड़ा आश्चर्य होता है और वह कहानी के प्रेमी से अजीव रूखे ढंग से विरक्ति से बात करती है वहाँ भी लोग गर्भपात को अपराध भाव देखते है। वर्मा ने इस दृष्टि से समूचे विश्व के संस्कार को नैतिकता की भिंची हुयी मुठ्ठी में भरकर देखने का हल्का सा प्रयास किया है। प्रवासी जीवन में कहानीकार के विचित्र अनुभव है। जीवनगत धोर बिडम्बनाओ को कहानीकार ने बारीकी से उकेरने का प्रयास किया है।

निर्मलवर्मा का कथा संसार रूमानियत और अस्तित्व बोध का अदभुत सामंजस्य लिये हुए है उनके कथापात्र पूर्व पश्चिम परम्परा और आधुनिकता दोनो ही छोरो से जुड़े हुए दृष्टिगत होते है इन जुड़ावों में सबसे प्रभावी कोई बात है तो आधुनिकता ही है जिसके कारण कथ्य तरल भी है और भावुकता से सराबोर भी है। सौन्दर्य बोध भी है ओर देहात्म बोध का नया परिचय भी है राग भी है और तनाव से मुक्ति का साधन भी है ऐसा प्रतीत होता है कि कथ्यकार का रूमानियत चिन्तर आधुनिकता मिश्रित रूमानियत है। उन्होने व्यक्ति की आस्थाओं पर परम्परा से उठकर कुछ नवीन से तरासने का प्रयास किया है, वहां मानसिक बेचैनी से मुक्ति पाने के लिये आत्म केन्द्रित स्थापना भी की है। वातावरण की खामोश आवाजे, पेड़ो के फड़फड़ाते पत्ते, इमारतो की चुप्पी साधे दीवारे, हवा की सांय-सांय करती हुयी ध्वनियां तथा व्यक्तियो के पथराये नेत्रों की विरलता उनके कथानक का सूत्रधार है । कथाकार ज्यों ही कथा पट को खोलने का प्रयास करता है उसमें एक जीव सी वातावरण की तन्द्रा सिमटकर उसके सामने खड़ी हो जाती है। इस भाव भी ने शन्त पहलू को प्रतीतात्मक ढंग से यदि सोचा जाये तो यह प्रतीत होता है कि अकेलेपन का घुटता हुआ मन चारो ओर अंधेरा ही अंधेरा उगल रहा है। और समालोचक को यह कहते देर नही लगेगी कि निर्मल वर्मा के मन के भीतर बैठी हुयी दो धारणाये जिनमें व्यक्ति का व्यक्ति से अटेचमेण्ट है और व्यक्ति का व्यक्ति से एलीनियेशन है -- यह सब कुछ कथा का सूत्र पकड़कर जूझ रहा है।

इसीलिए कथानक में रूमानियत होने के वावजूद भी कहीं कुछ खोया और कहीं कुछ पाया हुआ है। एक ओर लेखक मन से ग्रसित विडम्वना का शिकार होकर खुद ही पात्र बन जाता है तो दूसरी ओर सामाजिक सापेक्षता का ख्याल करता चलता है तीसरी गवाह कहानी इसका अन्त तक उदाहरण है। रोहतगी साहव पिछले दो--ढाई वर्ष से प्यार जताने वाली लड़की से कोर्ट में शादी करने के लिए तत्पर हो जाती है लेकिन तीसरे गवाह की तलाश में समय लग जाने पर ओर उसी अन्तराल में सामाजिक वतौर मुंशी तथा जज की गढ़ी हुयी अपलक दृष्टि से उस लड़की का पलायनवादी हो जाना यह सिद्ध करता है कि समूह में भी एक वर्चस्व है । निर्मलवर्मा ने विसंगतियो के संसार मे अकेले अभिशप्त मनुष्य का चित्रण किया है। मानसिक स्तर पर व्यक्ति फटे चिथडे पहनकर भी स्वर्णिम भव्यता की कामना करता रहता है। युद्ध की विभीषिका को समझते हुए भी रूमानियत के दरवाजे पर दस्तक देता रहता है। प्रवासी जीवन के इन विसंगतिपूर्ण झमेलो को कथाकार ने खूब गाया हैं सवसे वड़ा प्रश्न निर्मल वर्मा के समूचे कथा साहित्य में आदमी की जिंदगी से है कि वह इन विसंगतियो के वीच भी जी रहा है। वह एक ओर अलगाव भी सहन नहीं करता तो दूसरी ओर उसे प्रतिवद्धता भी वोझिल लगती है इन तात्विक विचारो के वीच लगता है कि लेखक यही मान लेता है कि आदमी अपनी जिंदगी में स्वेच्छा से कोई चुनाव करता है तो शराव का करता है फिर भी उन विदेशियो का व्यक्तित्व स्वतंत्र रहने के अभिशाप्त है। स्वतंत्रयोत्तर से अभिप्राय प्रतिवद्धता से ऊपर उठने से है कथाकार वार वार यही कहता है कि व्यक्ति को अपने स्तर से जरा ऊपर उठकर रहना चाहिये ओर अपने निर्णय पर किसी के निर्णय को हावी नही होने देना चाहिये। दरअसल जिंदगी वड़ी वेदर्दी से खिसकती है, उसे अपनी हथेलियो पर आराम से नही खिसकने देना चाहिये व्यक्ति के जीवन में स्वतंत्र निर्णय ही जिंदगी को वढ़ाने और घटाने में सहायक हो सकते है। मन का सच्चा व्यायाम निर्णय के अभ्यास से नही, चिन्तन से भी नही अगर है तो मन को सूक्ष्म प्रवृत्ति से है जिसे कथाकार ने हर कथा सूत्र में हर पात्र द्वारा अनिवार्यतः स्वीकारा है।

निर्मल वर्मा कथा साहित्य में वेकारी, वेरोजगारी, वुढ़ापा, रूग्णता तथा स्त्रैण समस्या को प्रधानता देते हुए मनोवैज्ञानिक जीवनपरक सत्यो का उदघाटन करते है। 'पराये शहर में' की वेश्या आदमियो की भीड़ में मकान की तरह खड़ी है अमालिया की आंखो के नीचे नीले नीले गड्ढे बन गये है। इतनी बड़ी आकांक्षा की जिप्सी लड़की लगातार सोयी नही है। 'डायरी का खेल' विट्टो विवाह की समस्या

को कर अनबूझ पहेली बन गयी है। 'लन्दन की एक रात' में मनुष्य-मनुष्य के बीच दीवार खड़ी कर दी गयी है। 'दो घर ' में एक व्यथा को लेकर विविध काया कल्प किये गये है इतना ही नही 'डेढ इंच ऊपर' में पुलिस के अमानवीय व्यवहार को दर्शाया गया है और कितनी ही ऐसी कहानियाँ है जिनमें बेरोजगारी बेकारी का लबादा पात्रो को पहनाया गया है। विदेश के अमानवीय सूत्र खतरे से खाली नही है।

"दो घर" कहानी के बच्चे और अन्य पड़ोसियो के बच्चों के साथ खेल नही सकते है क्योकि उनका पिता भारतीय है और मां अंग्रेज है। इतना ही नही लन्दन की एक रात और नीग्रो की ज्वलन्त समस्या बनी हुयी है। कथाकार ने जहां कहानियो में जीवन की घिसटती छाया को यत्र-तत्र छिटकाया है वहॉं झिपझिपाती आंखो की हल्की सी रोशनी को अर्न्तमन की परतो तक पहुंचाया है। 'एक चिथड़ा सुख' उपन्यास मे बिट्टी पात्र धीरे से हंसती है और सोचती है कि यह जिंदगी भी क्या जिंदगी है जिसे कभी नार्मल कभी अनार्मल कहा जाता है। बिट्टी के होंठ एक अजीब मुस्कान से खुल जाते है और सोचने लगती है कि उसने अपना घर छोड़ा ही क्यो था। धीरे-धीरे एक सन्नाटा हो जाता है और सारी चीजें डूबती सी जान पड़ती है फिर जिन्दगी की उजली परिभाषा जाने के लिए सिगरेट जलाना ही श्रेयकर समझती है उसे लगता है कि तीली की रोशनी से सहसा थमा और जमा हुआ जिंदगी का स्वरूप भभक उठा है और उसे ऐसा लगता है कि जिन्दगी जीने का सवाल आखिरकार दोहराया ही क्यूं जा रहा है। बेतहाशा होकर वह समूचे तनावपूर्ण जिन्दगी का प्रतिनिधित्व करती हुयी एक ही आवाज में रट लगाने लगती है-----गेट आउट,, गेट आउट ऑफ माई हाउस गेट आउट । "वर्मा ने इन शब्दों में केवल मकान से बाहर चले जाने की बात नही कही है, बल्कि उन्हे महसूसता है कि जिंदगी का सब कुछ बाहर चला गया है।

निर्मल का कथा साहित्य शिल्पगत को लिये हुए नही है, फिर भी इसमें संशलिष्ट शैल्पिक योजना है उनके कथा साहित्य को पढकर यह स्पष्ट होता है कि वह रूपवाद से मुक्त है। कमलेश्वर के शब्दो में ऐसी ही कथात्मक धारा को निराकार शैली कहा जाता है। वर्मा के प्रतीतात्मक, बिम्बात्मक शिल्प सौन्दर्य के अनोखे सत्य को उदघाटित करते है जिसमे पूर्व दीप्ति है। चेतन प्रवाह है और व्यक्ति से व्यक्ति का सम्प्रेषणीय स्वरूप है। कथाकार की भाषा ने कथ्यानुरूप चिंतन एवं भावुकता का वर्णन किया है। युग पुरुष कथाकार ने भाषा की गति को नये धरातल प्रदान किये है इसीलिए उनकी भाषा में अंग्रेजी का पुट अन्तर्राष्ट्रीयकरण की प्रवृत्ति का धोंतक है और जहां तक उर्दू का पुट हिन्दुस्तानी

शैली का स्मरण कराता है। तत्सम शब्द ऐतिहासिक परम्परा के वहाकाये वने है आधुनिकता के विभिन्न आयामो को छूने वाले शब्द विन्यास को पढ़कर यह बात सहसा ही सामने आ जाती है। निष्कर्षता निर्मल वर्मा ने जीवनगत सम्वेदित उन्ही आयामो को संस्पर्श किया है जिन्हे वे प्रवास काल में भोग सके है आज समूचा विश्व भौगोलिक इकाई होता जा रहा है ऐसी गत्यात्मक स्थिति में कथाकार की अन्तःतलाश उपयुक्त ही है। दरअसल आधुनिकता स्वयं एक विवादास्पद सवाल वनकर हर कथाकार के सामने खड़ा हुआ है। निर्मल वर्मा ने कभी इसे प्रकिया के रूप में देखा है तो कभी जीवन वोध को नये सिरे में। आधुनिकता वर्ग सापेक्ष एक कहानी भी है और सोंच संवेदना की संश्लिष्ट इकाई भी है। वर्मा ने इसे इसलिए वहु आयामी और वह अभिव्यंजित शैली से नाना रूपो में देखा है यदि वहुत ही स्पष्ट तरीके से फूल के पराग की भाँति आधुनिकता के सन्निवेश्चा को ग्रहण किया जाये तो वर्मा के कथा संसार में जटिल और दुरूह में पनपती स्वतंत्रता की ही दुहाई स्त्री पुरूष के मध्य एक विचित्र सृष्टि वनी हुयी है। व्यक्ति चाहे देशी या विदेशी उसका अपनी प्राथमिक आवश्यकतायें होती है जिन्हे वह पूरा न कर पाने पर अपूर्ण तथा अधूरा ही महसूस करता है व्यक्तियो की इसी खींझ, अतृप्ति, कुंठा तथा अन्य मानसिक रूग्णता का स्थान कथाकार ने उपन्यासो और कहानियो के कथ्य में अनवरतरूप से किया है आज नर - नारी का सह सम्वंध पुरातन मूल्यो को जहां झकणरिता है वहाँ विवश होकर सुविधा की दृष्टि से मान्य भी समझता है वर्मा ने वैदेशिक संस्कृति में यधपि इस मूल्यवता को अभिनव दिशा दी है फिर भी उनके मन की कठोर और उभयपक्षीय वढ़ती हुयी विचारधारा लौट फिर कभी इधर कभी उधर निकासो के कगारो से टकराती ही रही है। कथांकार सप्रेम, सौन्दर्य का उपासक है पोषक है किन्तु यह प्रेम देशत्व वोध का वर्चस्व लिये हुए है। प्रयास काल के दौरान विदेशियो के मध्य लेखकीय तटस्थता निर्विकार नही रह सकी है वह मैं पास होकर कहर पात्र के साथ सहपात्र का वन गया है। भारतीयता का यह सामंजस्य भले ही वैदेशिक संस्कृति में फीका लगे लेकिन लेखक ने दूसरे देशो में वनती बिगड़ती आधुनिकता के दरवाजो से निकलती हुयी ठण्डी गर्म हवा का अनुभव किया है हमारे देश की मानसिकता और विदेश के परिवेश से जुडी संशलिष्ट वैयक्तिकता की प्रभाव सृष्टि कथाकार की अभीष्ट का साध्य हो सकी है।

प्रस्तुतः आधुनिकता दुरूह, जटिल संग्रहित इकाई है कहा जा सकता है कि आज की हवा में सांस लेने वाला हर प्राणी प्रयोग धर्मिता की सह अस्तित्ववादी 'रूपरेखा से जितना जुड़ा हुआ है उतना ही पुराने से हटकर कुद नया है बहुत ही स्पष्ट है कि निर्मल वर्मा की कहानियां और उपन्यास समाधान के लिये

नहीं वल्कि यथार्थ के भोगे हुए क्षणो की सूचना है कथाकार ने मानव मन की लिप्सा और वातावरण में वुनी हुयी संवेदनात्मक अवधारणाओ को अपने कथा संसार में एक रूपता प्रदान की है। लगता है मन के भीतर भी मन परतों दर परतों कुछ कहता चल गया है जिसे सुलझाया तो नही जा सकता लेकिन ऐकान्तिक क्षणों में अनुभूतगम्य वनाया जा सकता है। इस सृष्टि से निर्मल वर्मा एक सजग, संवेदनशील जीवन और जगत के सूक्ष्म दृष्टा और आधुनिकता शब्दो में कुशल पर्यटेक्षक है।

परिशिष्ट

१. उपजीव्य ग्रंथ

१. वे दिन	निर्मल वर्मा,पहला संस्करण,१९८३ प्रकाशक- राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ।
२.एक चिथड़ा सुख	द्वितीय संस्करण-१९८२ राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली।
३.लाल टीन की छत	द्वितीय संस्करण-१९७७ राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
४.परिन्दे	चतुर्थावृति-१९८४ राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली।
५.जलती झाडी	चतुर्थ संस्करण -१९७९ राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
६.पिछली गर्मियो मे	द्वितीय संस्करण-१९७९ राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
७.मेरी प्रिय कहानियां	चौथा संस्करण -१९८१ राजपाल एण्ड सन्स,कश्मीरी गेट, दिल्ली।
८.वीच वहस में	तृतीय संस्करण -१९८४ संभावना प्रकाशन,रेवती कुंज,हापुड
९.कौवे और काला पानी	द्वितीय संस्करण-१९८५ राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

२. उपस्कारक ग्रंथ

१०.हिन्दी उपन्यास-आधुनिक विचारधाराऐं	डा० सुमित्रा त्यागी
११.समकालीन कहानी की पहचान	डा० नरेन्द्र मोहन
१२.स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी का समाज-सापेक्ष अध्ययन	डा० कीर्ति शेखर
१३.स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास	डा० राधेश्याम कौशिक
१४.स्वतंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी मे सामाजिक परिवर्तन	डा० भैरू लाल गर्ग
१५.आधुनिकता और मोहन राकेश	डा० उर्मिला मिश्र
१६.हिन्दी कहानी-बदलते प्रतिमान	डा० रघुवर दयाल वार्ष्णेय
१७.समकालीन कहानी -दिशा और दृष्टि	डा० धनंजय
१८.आधुनिक हिन्दी उपन्यास साहित्य मे प्रगति चेतना	डा० राजाराम
१९.नई कहानी - प्रकृति और पाठ	श्री सुरेन्द्र
२०.कहानीकार निर्मल वर्मा	डा० मधु संधू
२१.साहित्य का इतिहास दर्शन	डा० नलिन विलोचन शर्मा
२२.परम्परा बंधन नही	डा० विद्यानिवास मिश्र
२३.आधुनिकता के पहलू	डा० विपिन कुमार अग्रवाल
२४.आधुनिकता और हिन्दी साहित्य	डा० इन्द्र नाथ मदान
२५.आधुनिकता और समकालीन रचना संदर्भ	सं० नरेन्द्र मोहन
२६.आधुनिकता बोध और स्वतंत्र्योत्तर कहानी (अप्रकाशित शोध प्रवंध)	डा० सुरेन्द्रचंद्र शर्मा-मेरठ विश्व विद्यालय,मेरठ
२७.हस्तक्षेप	डा० धनंजय वर्मा
२८. नयी समीक्षा, नये संदर्भ	डा० नगेन्द्र
२९. जलते और उगलते प्रश्न	डा० विशम्भर नाथ उपाध्याय
३०. नये प्रतिमान पुराने निकष	डा० लक्ष्मी कान्त वर्मा
३१. नई कविता के प्रतिमान	ड० लक्ष्मी कान्त वर्मा
३२. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध	आलेख महादेवी वर्मा
३३.समकालीन साहित्य और आलोचना की चूनौती	डा० बच्चन सिंह
३४. बदलते परिवेश	नेमी चन्द्र जैन

३५.परम्परा आधुनिकता	आलेख हजारी प्रसाद द्विवेदी
३६नये साहित्य के संन्द्रभ शास्त्र	गजानन माधव मुक्ति बोध
३६ तार सप्तक	सं०अज्ञेय
३८ चाद का मुह ढेडा	गजानन माधव मुक्तिवोध
३९ एक और जिन्दगी	डा० विजय मोहन सिंह
४० मेरी प्रिय कहानिया	कमलेश्वर
४१ अमृत और विष	अमृत लाल नागर
४२ आधे-अधूरे	मोहन राकेश
४३ तीन अपाहिज	विपिन कुमार अग्रवाल
४४ नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर
४५ आधुनिकता वोध ओर आधुनिकीकरण	डा० रमेश कुन्तल मेध
४६ सह चिन्तन	अमृत राय
४७ कांग्रेस का इतिहास	पट्टाभीसीतारमैया
४८ प्रेम चर्तुर्थ	डा० रक्षा पुरी
४९ स्वान्त्रयोत्तर कथा साहित्य के सामान्य सन्तुलन	सीता राम शर्मा
५०.हरामी के वच्चे	माकण्डेय
५१.हंसा जायेअकेला	माकण्डेय
५२.कर्मनाशा की हार	शिव प्रसाद सिंह
५३खोई हुई दिशायें	कमलेश्वर
५४.समकालीन साहित्य	डा०वच्चन सिंह
५५.खेलखिलौन	राजेन्द यादव
५६.राजा निरवशिया	कमलेश्वर
५७.वापसी	उर्षा प्रियवदां
५८ मेरी प्रिय कहानी	मन्नू भण्डारी
५९.टट्टू सवार	विजय मोहन सिंह
६० वन्द गली का आखिरी मकान	धर्मवीर भारती
६१.मत छुओं	मनु भण्डारी
६२.आज का हिन्दी साहित्य सवेदना और दृष्टि	डा०राम दशरथ मिश्र
६३.आधुनिकता साहित्य के सदंर्भ में	डा० गंगा प्रसाद
६४ आधुनिकता और हिन्दी कहानी	डा० इन्द्रनाथ मदान
६५.हिप्दी कहानी दो दशक यात्रा	स०डा० राम दशरथ मिश्रा
६६ मनोविज्ञान की रूप रेखा	सीता राम जयसवाल

शीर्षक	लेखक
६७. कहानी के सवेदन शीलता-सिन्दान्त और प्रयोग	डा० भागवान दास वर्मा
६८.नईकहानी दशा और सन्दर्भ	राजेन्द यादव
६९.विपथगा	अज्ञेय
७० नई कहानी की मूल सवेदना	डा० सुरेश सिन्हा
७१ एक दुनिया समान्नातर	राजेन्द यादव
७२ कहानी-नई कहानी	डा० नामवर सिंह
७३हिन्दी कहानी एकअंगरग परिचय	महीप सिंह
७४उजाले के उल्लू	महीप सिंह
७५ कही नी रूप और संवेदना	राजेन्द्र यादव
७६.कहानी परिवेश और प्रभाव	डा० धनंजय
७७.समकालीन कथा साहित्य -समाज में संकृमण	सीता राम शर्मा
७८ समकालीन कहानी की पहचान	डा० निरंजन मोहन
७९ परिप्रेक्ष्य और पतिकियायें	डा० लक्ष्मी सागर वारूणेय
८०.गाधीवाद की शव परीक्षा	यशपाल
८१.आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद	डा० शिव प्रसाद सिंह
८२ आज की हिन्दी कहानी	डा० धनंजय वर्मा
८३.कहानी और कहानी	डा० इन्द्रनाथ मदान
८४.नई कहानी के विविध प्रयोग	डा० शितासु
८५.हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	डा० रमेश चन्द लवानिया
८६.आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान	डा० देवराज उपाध्याय
८७.आधुनिक हिन्दी कहानी का परिपार्श्व	डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
८८. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	डा० गणपति चन्द गगुप्त
८९. लेखक के वही खाते से	डा० देवी शंकर अवस्थी
९०. मानव मूल्य और साहित्य	धर्मवीर भारती
९१. हिन्दी कहानी उदभव औरविकास	डा० सुरेश सिन्हा
९२. हिन्दी कहानी साहित्य में प्रेम	डा० देव कथूरिया
९३. हिन्दी कहानी की पहचान और परख	स० डा० इन्द्रनाथ मदान
९४. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास	प्रकाश वाजपेयी
९५. प्रगतिशील साहित्य की समस्या	शिवदान सिंह चौहान
९६. उखड़े हुए लोग	राजेन्द्र यादव

९७. हिन्दी साहित्य की जनवादी परम्परा	प्रकाश चन्द्र गुप्त
९८. सती मैया का चौरा	भैरव प्रयाद गुप्त
९९. प्रेत बोलते हैं	राजेन्द्र यादव
१००. हिन्दी के समाजवादी उपन्यास	अम्रत राय
१०१. शैली विज्ञान और काव्य का अध्ययन	कृपा शंकर सिंह
१०२. कब तक पुकारू	रागेय राघव
१०३. दीवारें	उपेन्द्र नाथ अश्क
१०४. सत-सरोधज	प्रेम चन्द
१०५. आकाशदीप तथा अन्य कहानियॉ	जय शंकर प्रसाद
१०६. जानवर और जानवर	मोहन राकेश
१०७. पटरियॉ	फणीश्वर नाथ रेणु
१०८. काठ का सपना	राजेन्द्र प्रसाद
१०९. सेवा सदन	प्रेम चन्द
११०. कंकाल	प्रसाद
१११. त्याग पत्र	जैनेन्द्र
११२. परदे की रानी	इलाचन्द्र जोशी
११३. जहॉ लक्ष्मी कैद है	राजेन्द्र यादव
११४. अंधेरे बंद कमरे	मोहन राकेश
११५. मास का दरिया	राजेन्द्र यादव
११६. गुनाहों का देवता	धर्मवीर भारती
११७. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवादी	डा० त्रिभुवन सिंह
११८. आधुनिक भाव वोध की संज्ञा	अम्रत राय
११९. अस्तित्ववाद और द्वितीय समरोत्तर हिन्दी साहित्य	डा० श्याम सुन्दर मिश्रा
१२०. अपने-अपने अजनवी	अज्ञेय
१२१. अंधा युग	धर्मवीर भारती
१२२. बीसवीं-शताब्दी हिन्दी साहित्य नए संदर्भ	डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
१२३. देखा, सोचा, समझा	यशपाल
१२४. समीक्षा दर्शन	डा० नारायणदास समाधिया
१२५. आधुनिक साहित्य	नन्द दुलारे वाजपेयी
१२६. प्रगतिशील साहित्य के मानदण्ड	रागेय राघव

3. पत्र पत्रिकायें

1	क ख ग	जनवरी 1964
2	सारिका	मार्च 1973, सितम्बर 1971
3	आदेश	अंक 11, 1956
4	सचेतना	अक्टूबर 1964, अप्रैल 1966
5	ज्ञानोदय	मार्च 1970
6	कहानी	जनवरी 1955
7	लहर	जुलाई 1964
8	नई धारा	मार्च 1966
9	धर्मयुग	जून 1964, नवम्बर 1966
10	नई कहानियां	अप्रैल 1965, दिसम्बर 1968
11	विकल	नवम्बर 1968
12	नवभारत टाइम्स	नवम्बर 1986(साक्षात्कार)
13	साप्ताहिक हिन्दुस्तान, उत्तरार्ध, उत्तरगाथा, कादम्बिनी, आलोचना, जनयुग, ललास, नवनीत आदि	